Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाराह पुराण

(प्रथम खण्ड)

(सरल हिन्दी अनुवाद सहित जनोपयोगी संस्करण)

सम्पादक :

डॉ० चमनलाल गौतम

रचयिता : मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान, उपासना महाविज्ञान, मंत्र योग, वैदिक मंत्र विद्या, महाभारत, भागवत सप्ताह कथा, ओंकार सिद्धि, प्राणायाम के असाधारण प्रयोग, देव-रहस्य, विष्णु रहस्य, शिव रहस्य, मंत्र शक्ति के अद्‌भुत चमत्कार, मंत्र शक्ति से रोग निवारण—विपत्ति निवारण—कामना सिद्धि आदि।

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब, वेदनगर, बरेली—२४३००१ (उ०प्र०)

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाराह पुराण

(सरल भाषानुवाद सहित जनोपयोगी संस्करण)

सम्पादक :

डा० चमनलाल गौतम

पूर्व सम्पादक :—"जीवन-यज्ञ" व "युग - संस्कृति"

रचयिता : मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान, उपासना महाविज्ञान, मंत्र-योग, वैदिक मंत्र-विद्या, प्राणायाम के असाधारण प्रयोग, ओंकार सिद्धि, भागवत सप्ताह कथा, मन्त्र शक्ति से रोग निवारण— विपत्ति निवारण— कामना सिद्धि, विष्णु रहस्य, शिव-रहस्य, देव-रहस्य।

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब, वेद नगर, बरेली (उ. प्र.)

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रकाशक :

डा० चमनलाल गौतम

संस्कृति संस्थान,
ख्वाजा कुतुब, वेद नगर,
बरेली (उ. प्र.)

*

सम्पादक :

डा० चमनलाल गौतम

*

सर्वाधिकार सुरक्षित

*

प्रथम संस्करण
१९७३

*

मुद्रक :
शैलेन्द्र वी० माहेश्वरी
नव ज्योति प्रेस,
सेठ भीकचन्द मार्ग, मथुरा।

*

मूल्य : आठ रुपया मात्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भूमिका

पौराणिक साहित्य बहुत विशाल और विस्तृत है। वास्तव में यह धार्मिक साहित्य में एक विशेष शैली के रूप में है। इसको एक समय में, किसी विशेष व्यक्ति द्वारा रचा हुआ समझना ठीक नहीं। यह तो निश्चय है कि आरम्भ में किसी मनीषी ने—वे चाहे "व्यास" हों अथवा उनके शिष्य "रोमहर्षण" लोकरुचि समझ कर एक रचना प्रस्तुत की और फिर एक के पश्चात् दूसरे शौनक आदि विद्वान् उसी आदर्श पर इस साहित्य की वृद्धि करते चले गये। "वाराह पुराण" में पुराण-रचना का जो क्रम दिया गया है, समस्त ज्ञान और विद्याओं की तरह उसका मूल-स्रोत भी ब्रह्माजी को मान कर पुलस्त्य, श्रीराम, परशुराम, उग्र, मनु, कपिल आदि को क्रमशः उसका ज्ञाता बतलाया गया है। उसके पश्चात् व्यास, रोमहर्षण आदि का नाम आता है।

इसका आशय यह है कि इन पौराणिक व्यक्तियों ने इस कथात्मक शैली की स्थापना की। यह तो कोई कह ही नहीं सकता कि उन्होंने इन पुराणों को कलम, स्याही और कागज द्वारा वर्तमान पुस्तकों की तरह बना दिया क्योंकि सभी जानते हैं कि लिखने की कला दो-चार हजार वर्ष के भीतर ही चली है और कागज की बात तो दरकिनार ईंटों, लकड़ियों और चमड़े आदि पर लिखी हुई जो पुस्तकें मिली हैं वे भी इससे अधिक पुरानी नहीं हैं। इसलिये यह कहा जा सकता है कि पुराण-साहित्य की शैली और लक्ष्य तो अति प्राचीन काल से चले आये हैं, पर वर्तमान समय में जो ग्रंथ हमको प्राप्त हैं, उनका रचना काल ज्यादा पुराना नहीं है। वे प्राचीन कथानकों के आधार पर डेढ़-दो हजार वर्ष के भीतर ही रचे गये हैं और उसके पश्चात् भी विद्वान् कथा-वाचक सामयिक आवश्यकतानुसार उनकी वृद्धि करते रहे हैं। जब हम देखते हैं कि चार सौ वर्ष पुरानी तुलसीदास जी की रामायण में कथा वाचकों और लेखकों ने अपनी रुचि के अनुकूल पचासों क्षेपक मिला दिये, तो हजार-दो हजार वर्ष

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुरानी पुस्तकों में कितना परिवर्तन हो गया होगा इसका अनुमान सहज में ही किया जा सकता है।

फिर भी पुराणों में जगह-जगह उपयोगी बातों और कल्याणकारी शिक्षाओं का अभाव नहीं। इतिहास और प्राचीन समाज-संगठन की कुछ सामग्री भी मिल जाती है। यह अवश्य है कि अनपढ़ श्रोताओं के स्तर को समझ कर उनको रूपक और उपाख्यानों के ही रूप में वर्णन किया गया है, जिससे बहुत-सी बातें काल्पनिक और केवल कहानी जैसी लगती है। पर खोज करने वाले विद्वानों का कथन है कि उनके भीतर बहुत से ऐसे तथ्य मौजूद हैं, जिनसे आजकल भी लाभ उठाया जा सकता है।

अवतार वर्णन–

"वाराह पुराण" का कथानक एक अवतार के मुख से ही कहलाया गया है, जिससे उसमें इस बिषय का जिक्र कई जगह आया है। जिस प्रकार शिवजी का व्रत प्रत्येक महीने में त्रयोदशी-चतुर्दशी को किया जाता है और गणेश-व्रत के लिए चतुर्थी को प्रशस्त माना गया है, उसी प्रकार वाराह-पुराण में द्वादशी को अवतारों के निमित्त नियत कर दिया है उसमें मत्स्य-द्वादशी से लेकर कल्कि-द्वादशी तक के व्रतों का वर्णन एक-एक अध्याय में किया है और उनका विधि-विधान और उनसे सफलता प्राप्त करने वालों की कथाएँ भी लिखी हैं। मत्स्य द्वादशी व्रत अगहन शुक्लपक्ष में किया जाता है। फिर प्रत्येक मास की इसी तिथि को कूर्म, वाराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, श्रीराम, श्रीकृष्ण, बुद्ध और कल्कि का व्रत करने को कहा है। कल्कि का व्रत भाद्रपद शुक्ला द्वादशी को किया जाता है। इस प्रकार दश महीनों की द्वादशियाँ दश अवतारों के व्रतों के लिये नियत कर दी गई हैं। शेष रह गये दो महीने—इनमें आश्विन शुक्ला द्वादशी को "पद्मनाभ-व्रत" तथा कार्तिक में "धरणी व्रत" करने का विधान है।

इन कथाओं में कोई विशेषता नहीं है। सर्व साधारण की श्रद्धा को बढ़ाने के लिये सभी व्रतों को लोक-परलोक में परम कल्याणकारी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बतलाया गया है। पर एक खास बात हमको यह दृष्टिगोचर हुई कि यद्यपि दशावतारों में बुद्ध का नाम लिया गया है और श्रावण शुक्लपक्ष में "बुद्ध द्वादशी" का विधान हैं, पर उसमें बुद्ध भगवान के विषय मे कोई भी संकेत नहीं है। उस दिन दामोदर की मूर्ति की पूजा करने और उसी के सम्मुख समस्त धार्मिक क्रियाएें करने को बतलाया गया है। इसी प्रकार १५ वे अध्याय में जो "दशावतारस्तोत्र" दिया गया है उसमें भी बुद्ध का नाम नहीं लिया गया है। यही बात "भागवत" आदि अन्य प्रसिद्ध पुराणों में देखने में आती है कि अवतारों में कहीं बुद्ध का नाम लिया है और कहीं उसे हटा दिया गया है। इससे यही विदित होता है कि यद्यपि बौद्धमत वालों से संघर्ष होते समय कुछ विद्वानों ने एक युक्ति के रूप में बुद्धजीं को अवतारों को श्रेणी में रख दिया, और महाकवि जयदेव ने "गीतगोविन्द" के मंगला-चरण में एक जगह "केशव धृत बुद्ध शरीर, जय जगदीश हरे" का उल्लेख भी कर दिया, पर दिल से धर्मजीवी पंडित, पुरोहित उनके विरुद्ध ही रहे। इसका कारण उनकी साम्प्रदायिक संकीर्णता को ही कह सकते हैं। अन्यथा भारतीय संस्कृति और हिन्दू जाति पर बुद्ध भगवान के उपकार कम नहीं है। उन्होंने वाममार्गियों द्वारा यज्ञों के नाम पर पतित और भ्रष्ट किये जाते धर्म को एक नई दिशा दी और उसके कसाईपन को मिटाकर उसे सभ्य जातियों में मुंह दिखाने लायक बनाया। भगवान बुद्ध की महत्ता को स्वीकार करते हुए एक महाराष्ट्रीय विद्वान् ने हाल में ही कहा था—

"बुद्ध भगवान ने धर्म प्रचार की बड़ी सुन्दर कल्पना उपस्थित की है। उन्होंने धर्म-संघ की स्थापना करके, धर्म का समाज में किस प्रकार प्रसार करना इसका भी बड़ा उत्तम रास्ता दिखलाया है। उनके समय में भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय अपना-अपना राग अलग ही अलापते रहते थे। पाँचरात्र एक बात कहे तो पाशुपत दूसरी ही कहे और वे यही गिनती करते रहें कि हमने अपनी सम्प्रदाय में कितने बकरों का वलिदान कर डाला। ऐसी स्थिति में धर्म-संघ की स्थापना अत्यावश्यक थी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बुद्ध ने भारतीय सम्प्रदायों को हीं एक नहीं बनाया, वरन् जिन देशों में वेदों की मान्यता नहीं है, उन देशों में भी (जैसे चीन और जापान) उन्होंने सरल और सुबोध नैतिक सिद्धान्तों के रूप में अपने उपदेशों को पहुँचाया। यह एक बड़ी दिव्य भावना है। बुद्ध ने यह प्रमाणित कर दिया कि भगवान केवल भारत निवासियों के लिये ही नहीं है, वह केवल शिखा-सूत्र धारण करने वालों के लिये ही अवतार नहीं लेता, वरन् वह प्रत्येक के लिए है। प्रत्येक जीव को दिव्य बनना चाहिये। अगर सब दिव्य न बन सकें, तो भी उनको नीतिवान तो बनना ही चाहिये। इसलिए उन्होंने लोगों को सरल भाषा में समझाया—"परोपकार करो, दया रखो, प्रेम रखो, यदि समस्त समाज आध्यात्मिक न बन सके तो कोई बात नहीं, पर उसको नीतिवान तो अवश्य बनाओ अन्यथा समाज में न आध्यात्मिकता स्थिर रह सकेगी, न दिव्य विचार टिक सकेंगे। अगर पड़ोस में अनीतिमान समाज होगा तो आध्यात्मिक समाज भी स्थिर न रह सकेगा, उपनिषदों के इस सत्य सिद्धान्त का बुद्ध ने खूब प्रचार किया।"

यही अवतारों का वास्तविक उद्देश्य होता है। पतन के मार्ग पर अग्रसर होते हुए समाज को अपनी शक्ति से रोककर सद्मार्ग पर लगाना ही समय-समय पर प्रकट होने वाले देव-मानवों का कर्त्तव्य कहा जा सकता है। बुद्ध भगवान ने इसको बहुत उच्च रूप में पूरा किया है और इसलिये आज समस्त ससार उनकी पूजा कर रहा है। संकीर्ण मतवादी तो उनके सामने नगण्य हैं।

सत्य-धर्म का पालन—

ऐसी बात नहीं है कि इस प्रकार के सदुपदेश पुराणों में न दिये गये हों। "वाराह-पुराण" में ही विविध वर्णों के मनुष्यों के पालनार्थ जो नियम बताये हैं यदि उनका वास्तविक रूप में पालन किया जाय तो संसार के दोष-दुर्गुणों को मिटते देर न लगे। इस सम्बन्ध में ११५ वें अध्याय में कहा गया है—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"ब्राह्मण को अहंकार से रहित और लाभ-हानि की चिन्ता न करने वाला होना चाहिये। वह जितेन्द्रिय भी हो और किसी विषय में अनुचित आसक्ति न रखे। क्षत्रिय भी अहंकार से रहित और बड़ों का आदर-सम्मान करनेवाला हो। वह छल-कपट से भी रहित हो। वैश्य भगवान् का भक्ति-परायण हो और लाभ-हानि का विचार न करके कर्तव्य-पालन को ही मुख्यता देने वाला हो। शूद्र को उचित है कि जो कर्म करे वह भगवान को निमित्त मानकर ही करे। वह अहङ्कार से रहित, शुद्धात्मा अतिथि सत्कार करने वाला, विनयशील, श्रद्धावान, पवित्र आत्मा तथा लोभ और मोह से रहित हो। ऐसे कर्तव्यशील शूद्र को मैं हजारों ऋषियों से बढकर मानता हूँ और उसकी सेवा के लिये स्वयं तत्पर रहता हूँ।"

इस उद्धरण की शब्दावली प्राचीन ढङ्ग की होने से, चाहे इससे आध्यात्मिकता का भाव ही अधिक प्रकट होता हो, पर नैतिकता की दृष्टि से भी इसमें कोई कमी नहीं है। अहंकार का त्याग करने वाले की दृष्टि में कोई छोटा-बड़ा या ऊँच-नीच हो ही नहीं सकता, और जो लाभ-अलाभ की चिन्ता न करेगा वह किसी के प्रति मन में अन्याय-अत्याचार की भावना क्यों लायेगा? जिसने इन्द्रियों को जीत लिया हो, ऐसा ही व्यक्ति परोपकार और परसेवा में समर्थ हो सकता है। जो व्यक्ति इन आदेशों का पालन करेगा वह कभी अनैतिकता का दोषी नहीं बन सकता।

शूद्र के विषय में तो जो कुछ कहा गया है, वह उनकी स्थिति को बहुत स्पृहणीय बना देता है। शूद्र के जो कुछ कर्तव्य-कर्म बताये गये हैं, वे ब्राह्मण-क्षत्रियों के कर्तव्यों से सहज हैं, तो भी उनके लिये भगवान का कहना है कि सेवा-धर्म में निरत शूद्र मुझको हजारों ऋषियों से बढ़कर हैं। हम जानते हैं कि इस प्रकार के उच्च भावों से युक्त कथन पुराणों तथा अन्य धर्म ग्रन्थों में बहुत स्थानों पर पर मिलते, है उनको कार्य रूप में कदाचित् ही परिणित किया गया है। तो भी इतना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तो मानना पड़ेगा कि हमारे देश में ऐसी न्याय और समतामूलक नैतिक विचारधारा सदा से चली आई है, चाहे वह अल्प संख्यक व्यक्तियों तक ही सीमित क्यों न रही हो। हम यह भी कह सकते हैं कि इस प्रकार के वक्तव्यों में से अधिकांश भगवान बुद्ध के उपदेशों के ही परिणाम हैं, क्योंकि वर्तमान समय में हमको पुराण तथा अन्य धर्मग्रन्थ के जो संस्करण प्राप्त हैं,उनका रचना-काल प्राय: दो हजार वर्ष के भीतर का ही माना गया है।

ब्राह्मणों के पतन का कारण–

पर इतने उच्च होते हुए भी ब्राह्मणों का पतन क्यों हो गया ? प्राय: सभी पौराणिक ग्रन्थों में कलियुग में धर्म के ह्रास और अधर्म की वृद्धि का वर्णन पाया जाता है। साथ ही यह भी कहा गया है कि उस समय धर्म के ज्ञाता और रक्षक समझे जाने वाले ब्राह्मण ही सबसे अधिक पतन को प्राप्त होंगे और उनका उदाहरण देख समाज के अन्य समुदाय भी कर्तव्य च्युत हो जायेंगे। "शिवपुराण" का तो आरंभ इसी प्रश्न से किया गया है कि जिस समय चारों वर्णों में मूर्धन्य माने जाने वाले ब्राह्मण अपने धर्म से पतित हो जायेंगे तब सामान्य प्राणियों के उद्धार का क्या उपाय होगा ?—

"इस घोर काल में पुण्यहीन मनुष्य ही प्रकट हुए हैं। सबकी प्रीति दुराचार में है तथा वे सत्य और पुण्य कर्मों से रहित है। वे परनिन्दा में रत, पराये द्रव्य के अभिलाषी, पर नारियों में चित्त लगाने वाले और हिंसा में तत्पर बन गये हैं। ब्राह्मण लोभ में फँस रहे हैं, वेदों के विक्रय से आजीविका चलाते हैं, धन के लिए विद्याध्ययन करते हैं। वे दूसरों, को ठगने वाले, त्रिकाल संध्या से रहित तथा ब्रह्मज्ञान से शून्य हैं स्वयं को पंडित समझने वाले, दया रहित, आचार और व्रत से हीन, क्रूर स्वभाव और मलीन चित्त वाले हैं।"

"वाराह पुराण" में भी ब्राह्मणों के पतन का वर्णन है, पर उसके साथ एक कथा जोड़ दी गई है। कहा है कि एक समय बहुत भयंकर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अकाल पड़ा। तब बहुत से ऋषि, मुनि, ब्राह्मण गौतमजी के पास पहुँचे जिनके पास अन्न का भंडार था। उन्होंने जब तक अकाल रहा उन सबके खाने-पीने की अच्छी तरह व्यवस्था की। जब अकाल मिट गया तो उन लोगों ने वहाँ से जाने का विचार किया। पर सीधी तरह आश्रम का त्याग करने की बजाय उन्होंने एक चाल चली कि एक माया की गाय बनाई और उसको यज्ञशाला में छोड़ दिया। गौतम ने उसे हटाने को जैसे ही जल का छींटा दिया कि वह गिर पड़ी। इस पर उन ऋषियों ने कहा कि "हे गौतम आपके हाथ से गौ का वध हो गया है, इसलिये हम अब आपका अन्न नहीं खा सकते और यहाँ से कहीं अन्यत्र चले जायेंगे। इस पर गौतम तपस्या द्वारा गंगा को अपने आश्रम में लाये और वह गौ पुनः जीवित होकर खड़ी हो गई। इस पर सब ऋषि-मुनि बहुत लज्जित हुए।

"जब उन ऋषि-मुनियों का छल गौतम को विदित हुआ तो उन्होंने शाप दिया कि तुम त्रयी (तीनों वेदों) से बहिष्कृत हो जाओगे। गौतम के शाप से ही कलियुग के ब्राह्मण अपने कर्तव्य-कर्म और धर्म से बिमुख होकर पापों में लीन, सुरा-मांस से प्रीति रखने वाले, स्त्रीलोलुप और कुकर्म करने वाले बन गये। केवल वे ही सद्गति के अधिकारी हो सकेंगे जो भगवान की शरण जाकर पाप कर्मों से छुटकारा पाने की प्रार्थना करेंगे। पर जो झूँठे वेदान्ती अर्थात् ब्रह्मज्ञान का नाम लेकर पाप का समर्थन करने वाले होंगे वे अवश्य नरक में जायेंगे।'

इस कथा का तात्पर्य यह है कि धर्म-कर्म को एक जीविका अथवा पेशे की तरह ग्रहण कर लेने वाले ब्राह्मण नाम धारी व्यक्ति मध्य-काल से ही स्वार्थी और दम्भी हो गये थे। वे धर्म के सच्चे और सीधे नियमों पर चल कर परोपकार और लोक कल्याण का जीवन व्यतीत करने के बजाय दूसरों को ठगने और नीच कार्य करने पर भी ढोंग और छल के जोर से अपने को बड़ा और श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयत्न करते थे। नतीजा यह हुआ कि दिन पर दिन उनका पतन होता गया और अन्त में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"शील-सदाचार से रहित, कुमार्गगामी, महापातकों में ग्रस्त पापियों की अत्यन्त दुर्गति होती है। वे शासन द्वारा दण्ड के भागी होते हैं, बड़े लोगों की निगाह से गिर जाते हैं, सर्वसाधारण द्वारा निन्दित और अपमानित हो जाते हैं। उनके साथ कोई बातचीत भी करना नहीं चाहता। वे केवल अपना पेट भरने वाले स्वार्थी होते हैं। ऐसे लोगों को नरक में अनेक प्रकार के कष्ट भोगने पड़ते हैं।"

'झूँठी बकवाद करने वाले, कर्कश और छल-कपटयुक्त वाणी बोलने वाले, घमण्ड की बात कहने वाले, स्त्रियों के साथ निरर्थक बातें करने वाले—इन चारों की वाणी मिथ्या हो जाती है। जो लोग विनोद और हास्य का बहाना करके व्यंगपूर्ण वचनों से किसी का अपमान करते हैं, दूसरों की हानि हो ऐसी गुप्त बातों का प्रचार करते हैं, झूँठीं अफवाह फैला कर किसी की मानहानि करते हैं, मन में संताप पैदा करने वाली कड़वी बात कहते हैं, स्नेह का नाश करने वाले नीचता पूर्ण वचन बोलते हैं, नमक-मिर्च लगाकर बात का बतंगड़ बना देते हैं, जिस प्रकार केला के स्तम्भ में एक के बाद दूसरा पर्त उखाड़ते जाने से अन्त में कुछ भी नहीं बचता, इसी प्रकार की निस्सार बातें कहा करते हैं, किसी को बुरा लगे या भला, इसका विचार रखे बिना मुँहफट होकर चाहे जो बोल देते हैं, जो गाली देकर ही बात करते हैं—ऐसे समस्त नीच स्वभाव के व्यक्ति नरक के अधिकारी होते हैं।"

इसी अध्याय में आगे चलकर यह भी कहा गया है कि "जो सोना-चाँदी जैसी मूल्यवान धातुओं में घटिया धातु मिलाकर लोगों को ठगते हैं, वे भी नरक गामी होते हैं।" यदि यह ठीक हो तो आजकल के जो व्यवसायी केवल सोना-चाँदी ही नहीं, घी, तेल, दूध, मिर्च, मसाला, औषधियाँ, समस्त खाद्य पदार्थों में मिलावट करके दुनियाँ को ठगते हैं और जनसाधारण के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाते हैं, उनकी क्या गति होगी? देखने में तो ऐसे धोखेबाज व्यवसायी लखपती बनकर और थोड़ा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ऐसा समय आया कि सभी लोग उनको दूषित और पतित समझने लग गये। धर्म के क्षेत्र में भी ढोंग और दम्भ सदा नहीं चला करता। यह बात दूसरी है कि कुछ मूर्ख लोग उसमें फँसते रहें और उनके सहारे ऐसे नीच कर्मा व्यक्ति किसी प्रकार पापी पेट को भरते रहें, पर कोई उनको सम्मान की दृष्टि से नहीं देख सकता। क्या इसका प्रमाण हम स्पष्ट रूप में अपनी आंखों नहीं देख रहे हैं कि जिन विद्वान् और तपस्वी ब्राह्मणों को देखते ही समाज के छोटे-बड़े सभी व्यक्ति दूर से ही वन्दना और प्रणाम करने लगते थे आज वे ही सभी वर्ण वालों की खुशामद करते फिरते हैं और उनकी वही दशा हो गई है जिसको किसी चुटकले में "पीर-बवर्ची-भिश्ती-खर" की उपमा दी गई।

असामाजिक तत्वों की निन्दा—

पुराणों में नरकों का वर्णन जगह-जगह पाया जाता है। उनमें पापियों को कष्ट दिये जाने का वर्णन ऐसे विस्तार से और अलंकार की भाषा में किया गया है, कि पाठक उसे एक काल्पनिक कथा ही समझ लेते हैं। यद्यपि इस बात की संभावना तो बहुत कम है कि आकाश या पाताल में कोई ऐसा अलग स्थान बना हो, जैसे पृथ्वी पर जेलखाने देखने में आते हैं, पर इन कथाओं के बहाने पुराण-लेखकों ने उन व्यक्तियों का बहुत प्रभावशाली वर्णन किया है जो समाज में रहते हुए समाज-विरोधी कार्यों में संलग्न रहते हैं। सामान्यतया लोग चोरी, डकैती, हत्या, लूट-मार को ही पाप समझते हैं, पर हमको जान लेना चाहिये कि पाप का क्षेत्र इससे बहुत अधिक विस्तृत होता है। यद्यपि पुराणों में ऐसे असामाजिक तत्वों की उस तरह आलोचना करके वर्णन नहीं किया गया है, जैसे आजकल हम समाचार पत्रों के लेखों में पढ़ते हैं, पर यदि उनकी बातों का विश्लेषण किया जाय तो उनका तात्पर्य स्पष्टतया यही निकलता है। "वाराह पुराण" के "पापों का अनुक्रम" वाले अध्याय में कहा गया है—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बहुत रुपया दान-पुण्य, मंदिर, धर्मशाला, तथा अन्य धार्मिक संस्थाओं को देकर "धर्म-मूरत" और आदरणीय बन जाते हैं, पर क्या उनकी यह चालाकी परलोक में भी चल सकती है। क्या वे यमदूतों द्वारा नरक में ले जाये जाने से बच सकते हैं ?

"वाराह पुराण" की एक विशेषता यह है कि इसको एक योजना और क्रम पूर्वक तरीके से लिखा गया है। यद्यपि इसकी कथाओं का उद्देश्य भी अन्य पुराणों की तरह तीर्थों की महिमा का प्रचार और पण्डे-पुरोहितों को अधिक से अधिक दान-दक्षिणा दिलाने का है, तो भी इसे किसी हद तक बुद्धि-संगत बनाने का ध्यान रखा गया है। यद्यपि नियत पृष्ठ संख्या की अपेक्षा काफी बड़ा होने के कारण हमने इसके कम महत्त्व के या बार-बार दुहराये गये वर्णनों में कमी कर दी है, तो भी इसके अध्यायों की संख्या ज्यों की त्यों रखी है। आशा है यह योजना पाठकों को अधिक सुविधा जनक प्रतीत होगी।

—चमनलाल गौतम

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाराह पुराण (प्रथम खण्ड) की

विषय-सूची

१—वाराह भगवान से पृथ्वीं का प्रश्न	१७
२—सृष्टि की स्थिति और युग-माहात्म्य	२३
३—नारद के पूर्व जन्म का वृतान्त	३७
४—नारायण का सर्व व्यापकत्व	४२
५—कर्म द्वारा मोक्ष प्राप्ति वर्णन	५०
६—पुण्डरीकाक्ष पार-स्तोत्र से मोक्ष	६१
७—गदाधर स्तोत्र से मोक्ष प्राप्ति	६८
८—धर्म-व्याध चरित्र	७८
९—मत्स्यावतार वर्णन	८८
१०—सृष्टि रचना और दुर्जय-चरित्र	९५
११—दुर्जय का गौरमुख ऋषि से संघर्ष	१०९
१२—दुर्जय को नारायण का वर प्रदान	१२१
१३—श्राद्ध-कल्प	१२५
१४—श्राद्ध के योग्य और अयोग्य ब्राह्मण	१२७
१५—दशावतार स्तोत्र से गौरमुख मुनि की मुक्ति	१३६
१६—सरमोपाख्यान	१४०
१७—महातपा उपाख्यान	१४७
१८—अग्नि उत्पत्ति वर्णन	१५७
१९—अग्नि की श्रेष्ठता और प्रशंसा	१६२
२०—आश्विनीकुमारों की उत्पत्ति	१६४
२१—गौरी की उत्पत्ति	१६९
२२—गौरी और शिव का विवाह	१८१
२३—गणपति जन्म	१९२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

२४—सर्पों की उत्पत्ति १९९
२५—कार्त्तिकेय उत्पत्ति २०५
२६—आदित्य की उत्पत्ति २११
२७—अष्ट माताओं की उत्पत्ति २१४
२८—दुर्गा की उत्पत्ति २२१
२९—दश दिशाओं की उत्पत्ति २२९
३०—कुबेर कीं उत्पत्ति २३१
३१—विष्णु की उत्पत्ति २३३
३२—धर्म की उत्पत्ति २३७
३३—रुद्र की उत्पत्ति २४१
३४—पितृों की सृष्टि और स्थिति २४५
३५—सोम की उत्पत्ति २४६
३६—प्राचीन इतिहास वर्णन २४९
३७—दीर्घबाहु चरित्र २५१
३८—सत्यतपा का आख्यान २५७
३९—मत्स्य द्वादशी व्रत २६१
४०—कूर्म द्वादशी व्रत २६६
४१—वाराह द्वादशी व्रत २६८
४२—नरसिंह द्वादशी व्रत २७०
४३—वामन द्वादशी व्रत २७२
४४—परशुराम द्वादशी व्रत २७२
४५—श्रीराम द्वादशी व्रत २७५
४६—श्रीकृष्ण द्वादशी व्रत २७६
४७—बुद्ध द्वादशी व्रत २७९
४८—कल्कि द्वादशी व्रत २७९
४९—पद्मनाभ द्वादशी २८२
५०—धरणी व्रत २८६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

५१---अगस्त्य-गीता (१)	२८८
५२—अगस्त्य-गीता (२)	२९२
५३—पशुपाल आख्यान	२९४
५४--उत्तम पति प्राप्त होने का व्रत	२९८
५५—शुभ व्रत कथन	३०१
५६—धन्य व्रत कथन	३०५
५७—६०—क्राति व्रत, सौभाग्य व्रत, अविघ्न व्रत, शांति व्रत	३०६
६१—६५ --काम व्रत, आरोग्य व्रत, पुत्र प्राप्ति व्रत, शौर्य व्रत, सार्वभौभ व्रत	३१०
६६--नारदीय पांच रात्रि	३१६
६७—त्रिष्णु भगवान के आश्चर्य	३१९
६८—युग-धर्म कथन	३२१
६९— नारायण आश्चर्य वर्णन	३२२
७०—चारों युग का बर्णन	३२५
७१— कलियुग में ब्राह्मणों की अधोगति	३३३
७२—प्रकृति पुरुष निर्णय	३४१
७३—विराट पुरुष वर्णन	३४४
७४—भुवनकोष वर्णन	३५१
७५—जम्बू द्वीप और मेरु निरूपण	३५५
७६— आठ दिक्पालों की नगरिया	३६१
७७—मेरु पर्वत वर्णन	३६४
७८—७९--मन्दराचल आदि पर्वतों का वर्णन	३६८
८०—मेरु पर्वत की घाटियाँ	३७२
८१—पर्वतों पर रहने वाले देवों का स्थान	३७६
८२—८३—नदियों का वर्णन	३७९
८४—८५—अरम्यक और जम्बूद्वीप वर्णन	३८२
८६—८७—शाक और कुशद्वीप वर्णन	३८७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

८८—८९—क्रौंच और शालमली द्वीप ३६०
९०—९१—त्रिशक्तिगत सृष्टि माहात्म्य ३९२
९२—वैष्णवी माहात्म्य ४००
९३—९४—महिषासुर द्वारा स्वर्ग विजय ४०५
९५—महिषासुर वध ४१०
९६—त्रिशक्ति रहस्य में रौद्री चरित्र ४२०
९७—रूद्र माहात्म्य ४२६
९८—पर्वाध्याय ४३१
९९—तिलधेनु माहात्म्य ४३७
१००—१०४—जलधेनु, रसधेनु, गुड़धेनु, शर्कराधेनु और मधुधेनु दान माहात्म्य ४४८
१०५—११०—क्षीरधेनु, दधिधेनु, नवनीतधेनु, लवणधेनु, कपासधेनु, धान्यधेनु दान माहात्म्य ४५४
१११—कपिला धेनु माहात्म्य ४६०
११२—गोदान, कुम्भदान और पुराण प्रशंसा ४६२
११३—पृथ्वी द्वारा विष्णु-भगवान की स्तुति ४६८
११४—श्रीवाराहावतार वर्णन ४७६
११५—बिविध धर्मोत्पत्ति ४८१
११६—सुख-दु:ख निरूपण ४८६
११७—बत्तीस प्रकार के अपराध ४९१
११८—देवोपचार विधि ४९६

★

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाराह पुराण

१–वराह भगवान् से पृथ्वी का प्रश्न

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरश्चतीं चैव ततो जय मुदीरयेत् ।।
नमस्तस्मै वराहाय लीलयोद्धरते महीम् ।
खुर मध्यगतो यस्य मेरुः खणखणायते ।।१
दष्ट्राग्रेणोऽद्धृता गौरुदधि परिवृता पर्वतैर्निनम्गाभिः,
साकं मृत्पिण्डवत् प्राग्बृहदुरुवपुषाऽनन्त रूपेण येन ।
सोऽयं कंसासुरारिर्मुरनरकदशा स्यान्त कृतसर्वसंस्थः,
कृष्णो विष्णुः सुरेशो नुदतु मम रिपूनादि देवो वराहः ।।२
यस्मिन्काले क्षितिः पूर्वं वराहवपुषा तु सा ।
उदधृता विभुना शक्त्या पप्रच्छ परमेश्वरम् ।।३
कल्पे कल्पे भवानेवं मां समुद्धरति प्रभो ।
न चाहं वेद ते मूर्तिमादिसर्गे च केशव ।।४
वेदेषु चैव नष्टेषु मत्स्यो भूत्वा रसातलात ।
प्रविश्य तानथोत्कृष्य ब्रह्मणे दत्तवानसि ।।५
अन्यत्सुरासुरमिते त्वं समुद्रस्य मंथ ने ।
धृतवानसि कौर्येण मन्दरं मधुसूदन ।।६
पुनश्च गां जगन्नाथ निमज्जन्तीं रसतलात् ।
उज्जहारैकदष्ट्रेण भगवन्वं महार्णवात् ।।७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भगवान् नारायण और नरों में उत्तम नर को नमस्कार करके तथा सरस्वती देवी की वन्दना करके फिर जय-शब्द को उदीरित करना चाहिये लीला से ही मही का उद्धार करते हुये भगवान् वराह की सेवा में प्रणाम है जिनके खुरों के मध्य में रहने वाला मेरु पर्वत खन खनाहट की ध्वनि किया करता है ।१। अनन्त स्वरूप वाले जिन वराह भगवान् ने पहिले अपने विशाल और समुच्च वपु के द्वारा दंष्ट्रा के अग्रभाग से पर्वतों से तथा नदियो एवं सागर से परिवृता भूमि को एक मिट्टी के पिण्ड के समान धारण कर लिया था वही यह कंस असुर के अरि अर्थात् विनाशक तथा मुर-नरक और रावण के विनाश करने वाले—सबके अन्दर अन्तर्यामी स्वरूप से विराजमान कृष्ण, सुरेश-विष्णु और आदि वराह भगवान् मेरे रिपुओं का विनाश करें ।२। जिस समय में पूर्व समय में वराह के वपु धारण करने वाले विभु ने अपनी शक्ति के द्वारा उस क्षिति को उद्धृत कर लिया था अर्थात् दाढ़ पर ऊपर उठा लिया था उस पृथ्वी ने परमेश्वर से पूछा था ।३। हे प्रभो ! प्रत्येक कल्प में आप इसी रीति से मेरा उद्धार किया करते हैं। हे केशव ! मैं आदि सर्ग में आपकी मूर्त्ति का ज्ञान नहीं रखती हूँ अर्थात् आप सर्ग के आदि काल में कैसे थे—यह मैं नहीं जानती हूँ ।४। वेदों के नष्ट हो जाने पर मत्स्य का स्वरूप धारण करके आपने रसातल में प्रवेश किया था और वहाँ से उन वेदों का उत्कर्षण करके आपने ब्रह्माजी को दे दिया था ।५। हे मधु सूदन ! सुरों और असुरों के द्वारा समुद्र के मन्थन किये जाने पर आपने कूर्म का स्वरूप धारण करके उसके द्वारा मन्दराचल को अपनी पीठ पर धारण किया था ।।६।। हे भगवन ! आप तो इस सम्पूर्ण जगत के स्वामी हैं अतएव फिर इस डूबती हुई पृथ्वी का रसातल के महासगार से अपनी एक ही दाढ़ से इसका उद्धार किया था अर्थात् अपनी एक ही दाढ़ पर रखकर इसको उठाकर ऊपर ले आये थे ।।७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्यद्धिरण्यकशिपुर्वरदानेन दर्पितः ।
आवाधमानः पृथिवीं स त्वया विनिपातितः ॥८
पुनः नि क्षत्रिया देव त्वया चापि पुरा कृता ।
जामदग्न्येन रामेण त्वया भूत्वा सकृत् प्रभो ॥६
पुनश्च रावणो रक्षः क्षपितं क्षात्रतेजसा ।
वलि प्रवद्धो भगवंस्त्वया वामन रूपिणा ॥१०
न च जानाम्यहं देव तव किंचिद् विचेष्टितम् ।
उद्धृत्य मां कथं सृष्टि सृजसे किंच कारणम् ॥११
सकृदध्रियेत् कृत्वा च पाल्यते चापि केन वा ।
केन वा सुलभो देवो भवेस्त्वं सतत विभो ॥१२
कथं च सृष्टेरादिः स्यादवसानं कथं भवेत् ।
कथं युगस्य गणना संख्याऽस्यानु चतुर्युगम् ॥१३
को वा विशेषस्तेष्वस्मिन्का वा वाञ्छा महेश्वर ।
यज्वान के च राजानः के च सिद्धि परां गताः ॥१४

यही नहीं और भी आपने इस पृथ्वी के लिये उद्धार का कार्य किया था। दैत्यराज हिरण्य कश्यप वरदान प्राप्त करके बड़ा भारी घमण्ड म भर गया था और इस पृथ्वी के लिये बहुत सी प्रकार की बाधायें दिया करता था। उस दुष्ट का आपने वध किया था ॥ ८ ॥ हे प्रभो ! हे देव ! पहिले आपने जमदग्नि ऋषि के यहाँ परशुराम के स्वरूप से समुत्पन्न होकर पुनः उस पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित बनाकर कई बार भूमि को क्षत्रियों से शून्य कर दिया था ॥ ६ ॥ इसके अनन्तर आपने श्रीराम का अवतार ग्रहण करके अपने क्षात्र तेज के द्वारा लंकेश्वर राक्षस रज रावण का वध किया था। हे भगवन् ! आपने वामन का स्वरूप धारण करके राजा बलि का बन्धन कर दिया था ॥ १० ॥ हे देव ! मैं आपके कुछ भी विचेष्टित को नहीं जानती हूँ अर्थात् आपके हार्दिक अभिप्राय का मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। आप मेरा उद्धार

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके किस प्रकार से सृष्टि का सृजन किया करते हैं और इसका क्या कारण है ।। ११ ।। एक बार आप धारण करते हैं और धारण करके किसके द्वारा मेरा पालन किया करते हैं । हे विभो ! आप किसके द्वारा निरन्तर सुलभ होते हैं ।। १२।। इस विशाल सृष्टि का आरम्भ कैसे होता है और किस रीति से इसका अवसान हुआ करता है । युग की गणना कैसे होती है और इसके पीछे चतुर्युग की संख्या किस प्रकार से हुआ है करती? ।।१३।। हे महेश्वर ! उन युगों में क्या 'विशेषता है और इसमें क्या आन्तरिक इच्छा विद्यमान है ? कौन से नृपगण यज्ञों का यजन करने वाले हैं और कौन परा सिद्धि को प्राप्त हुए हैं ।।१४।।

एतत्सर्वं समासेन कथयस्व प्रसीद मे ।
इत्युक्तः क्रोडरूपेण जहास परमेश्वरः ।।१५
ह्मतस्तस्य कुक्षौ तु जगद्धात्री ददर्शत ।
रुद्रान्देवान्सह वसून् सिद्धसंधान्महर्षिभिः ।।१६
स चन्द्र सूर्यग्रह सप्तलोकानन्तः स्थितांस्तत्र उपात्तधर्मान् ।
इतीदृशं पश्यति सा समस्तं यावत् क्षितिर्वेपित सर्वगात्रा ।।१७
उन्मीलितास्थस्तु यदा महात्मा दृष्टो धरण्याऽमल सर्वगात्र्या ।
तावत्स्वरूपेण चतुर्भुजेन महोदधौ सुप्तमथोऽन्व पश्यत् ।।१८
शेषपर्यङ्क शयने सुप्त देव जनार्दनम् ।
दृष्ट्वा तन्नाभिपङ्करुडन्तः स्थ तं चतुर्भुजम् ।
कृताञ्जलिपुट देवीं स्तुति धात्री जगादह ।।१९
नमः कमलपत्राक्ष नमस्ते पीतवाससे ।
नमः सुरारि विध्वंस कारिणे परमात्मने ।।२०
शेष पर्यंक शयने धृतवक्षः स्थल श्रिये ।
नमस्ते सर्वदेवेश नमस्ते मोक्षकारिणे ।।२१

यह सभी कुछ आप संक्षेप रूप से मुझे कहने की कृपा कीजिए और मेरे ऊपर प्रसन्न होइए । क्रोड़ रूप से इस प्रकार से कहे गये

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परमेश्वर वहुत हँसे थे ।। १५ ।। जिस समय में उनको हँसी आई थी तो हँसते हुए उनकी कुक्षि में जगत् की धात्री पृथ्वी ने महर्षियों के साथ रुद्रों को—देवों को—वसुगणों को और सिद्धो के समुदायों को देखा था ।।१६।। चन्द्र सूर्य-ग्रह और सात लोकों के सहित-अन्दर में स्थित और वहाँ पर उपान्त धर्मों वाले समस्तों का उस पृथ्वी ने देखा था और इस प्रकार के समस्तों को देखकर वह पृथ्वी अपने सब अङ्गों के काँपने वाली हो गई थी अर्थात् ऐसे स्वरूप को देखकर पृथ्वी कम्पित हो गई थी। ।।१७।। जिस समय में निर्मल समस्त अङ्गों वाली धरणी के द्वारा उन्मी-लितास्थभुज स्वरूप से महोदधि में शयन किये हुए उनको पीछे देखा था ।।१८।। शेष की शय्या पर शयन करने वाले सोते हुए देव जनार्दन का दर्शन करके उनकी नाभि में स्थित कमल में विराजमान चार भुजा वाले प्रभु की धरणीदेवी ने हाथों को जोड़ते हुए स्तवन किया था।१९। कमल के दलों के समान लोचनों वाले भगवन् ! आपकी सेवा में नमस्कार है। पीताम्वर धारी प्रभु आपके लिये नमस्कार है—सुरों के शत्रु दैत्यों के विध्वंस करने वाले परमात्मा के लिये नमस्कार है ।२०। शेष के पर्य्यङ्क पर घृत वक्षःस्थल की श्री वाले हे सब देवों के ईश ! आपके लिये नमस्कार है। मोक्ष के करने वाले प्रभु को प्रणाम है ।।२१।।

नमो शार्ङ्गासिचक्राय जन्ममृत्यु विवर्जित ।
नमो नाभ्युत्थित महाकमलासन जन्मने ।।२२
नमो विद्रुमरक्तोष्ठ पाणिपल्लव शोभिने ।
शरणं त्वाम् प्रपन्नास्मि त्राहि नारीमनागसम् ।।२३
पूर्णनीलाञ्जनाकारं वाराहं ते जनार्दन ।
दृष्ट्वा भीताऽस्मि भूयोऽपि जगत्त्वद्देह गोचरम् ।
इदानीं कुरु मे नाथ दयां त्राहि महाप्रभो ।।२४
केशवः पातु मे पादौ जंघे नारायणो तम ।
माधवो मे कटिं पातु गोविन्दो गुह्य मेव च ।।२५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नाभिं विष्णुस्तु मे पातु उदरं मधुसूदनः ।
उरस्त्रिविक्रमः पातु हृदयं पातु वामनः ॥२६
श्रीधटः पातु मे कण्ठं हृषीकेशो मुखं मम ।
पद्नामस्तु नयने शिरो दामोदरो मम ॥२७
एवं न्यस्य हरेर्न्यासं नामानि जगती तदा ।
नमस्ते भगवन् विष्णो इत्युक्त्वा विरराम ह ॥२८

हे भगवन् ! आप तो जन्म धारण करने और मृत्यु के मुख में जाने से रहित हैं। शार्ङ्ग धनुष-खड्ग और चक्र के आयुधों वाले आपके लिये नमस्कार है । अपनी नाभि में समुत्पन्न महान् कमल के आसन वाले ब्रह्माजी के जन्म देने वाले आपके लिये नमस्कार है ॥२२॥ हे विद्रूम के समान ओष्ठों वाले ! पाणि पल्लवों की शोभा से समन्वित आपके लिये नमस्कार है । मैं रक्षक आपकी शरणागति में प्राप्त हुई हूँ मुझ निरपराधनारी की आप रक्षा कीजिए ॥२३॥ हे जनार्दन ! पूर्ण नील अञ्जन के आकार वाले आपके वराह स्वरूप को हे जनार्दन ! देख कर मैं भयोभीत हो रही हूं फिर उस वराह देह दिखलाई देने वाले इस जगत् को देखकर और भी अधिक डर गयी हूँ। हे महा प्रभो ! हे नाथ ! इस समय में मुझ पर आप दया कीजिए और मेरा परित्राण कीजिए ॥२४॥ भगवान् केशव मेरे पैरों की रक्षा करें—नारायण मेरी कटि की रक्षा करे—गोविन्द मेरे गुह्य की रक्षा करें ॥२५॥ विष्णु मेरी नाभि की रक्षा करें मधुसूदन प्रभु मेरे उदर की रक्षा करे। त्रिविक्रम मेरे वक्षः स्थल की रक्षा करें—वामन देव मेरे हृदय की रक्षा करें ॥२६॥ श्री धर प्रभु मेरे कण्ठ की रक्षा करें और हृषींकेश मेरे मुख की रक्षा करें—पद्म नाभ प्रभु मेरे नयनों की रक्षा करे—दामोदर मेरे शिर की रक्षा करें ॥२७॥ उस समय में धरणी देवी ने इस प्रकार से भगवान् हरि के शुभ नामों का न्यास करके फिर वह हे विष्णो ! आपकी सेवा पें मेरा नमस्कार है—इतना कहकर वही पृथ्वी विराम को प्राप्त हो गई थी ॥२८॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

।। सृष्टि की स्थिति और युग-माहात्म्य ।।

ततस्तुष्टो हरिर्भक्त्या धरण्यात्म शरीरगः ।
मायां प्रकाश्य तेनैव स्थितो वाराहमूर्ति ना ।।१
जगाद किं ते सुश्रोणि प्रश्नमेत सुदुर्लभम् ।
कथयामि पुराणस्य विषयं सर्व शास्त्रतः ।।२
पुराणानां हि सर्वेषामयं साधारणः स्मृतः ।
श्लोकं धरणि निश्चित्य निःशेषं त्वमतः श्रणु ।।३
सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणिच ।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पंच लक्षणम् ।।४
आदिसर्ग मह्ं तावत्कथयामि वरानने ।
यस्मादारभ्य देवानां राज्ञां चरितमेव च ।।५
ज्ञायते चतुरंशश्च परमात्मा सनातनः । ६
आदा वहं व्योम महत्ततोऽणुरेकैव मत्तः प्रबभूव बुद्धि ।
त्रिधा तु सा सत्त्वरजस्तमोभिः पृथक् पृथक् सत्त्वरुपैरुपेता ।।७

अब सृष्टि की स्थिति और युग माहात्म्य बतलाया जाता है-- इसके अनन्तर भगवान् हरि जो कि धरणी के आत्म शरीर में गत थे धरणी की भक्ति की भावना से बहुत ही अधिक प्रसन्न हुए और माया का प्रकाश करके फिर उस ही वारा मूर्त्ति से स्थित हो गये थे ।। १ ।। और वराह प्रभु ने धरणी से कहा—हे सुश्रोणि ! यह तेरा सुदुर्लभ प्रश्न क्या है—मैं सभी शास्त्रों से पुराण का विषय कहता हूँ ।। २ ।। समस्त पुराणों में यह साधारण कहा गया है। हे धरणी ! श्लोक का निश्चय करके अतएव अब आप निःशेष का श्रवण करिए ।। ३ ।। पुराण के पाँच लक्षण होते हैं—पुराण में सर्ग का और अविसर्ग का वर्णन होता है तथा वंश—मन्वन्तर और वंशानुधारित का वर्णन हुआ करता है। इन्हीं पाँचों लक्षणों वाला पुराण कहा जाया करता है ।।४।। हे वरनने ! मैं तब तक आदि सर्ग को बतलाता हूँ जिससे आरम्भ करके देवों का

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

राज्यों का चरित ही कहा जाता है जिसमें चतुर्दश सभातभ परमात्मा का ज्ञान किया जाता है ।। ५ ।। ६ ।। आदि में मैं—व्योम—महत् फिर अणु और मुझसे एक ही बुद्धि प्रभूत हुई थी । वह सत्त्व— रज— तम से पृथक्-पृथक् सत्त्व रूपों से उपेत थी । इस प्रकार से वह तीन प्रकार की थी ।। ७ ।।

तस्मिस्त्रिकेऽहं तमसो महान्स सदोच्यते सर्वविदां प्रधानः ।
तस्मादपि क्षेत्र विदूर्जितो यो बभूव बुद्धिस्तु ततो वभूव ।।८
तस्मात्तु तेभ्यः श्रवणादि हेतवस्ततोऽक्षमाला जगतो व्यवस्थिताः ।
भूतैर्गतैरेव च पिण्डमूर्तिर्मया भद्रे विहिता त्वात्मनैव ।।९
शून्यं त्वासीत्तत्र शब्दस्तु खं च तस्माद्वायुस्तत एवानु तेजः ।
तस्मादापस्तत एवानु देवि मया सृष्टा भवती भूमधात्री ।।१०
योगे पृथिव्वां जलवत्ततोऽपि सबुद्बुद कललं त्वण्डमेव ।
तस्मिन् प्रवृद्धि च गतेऽहमासीदापोमयश्चात्मनात्मानमादौ ।।११
सृष्ट्वा नारस्ता अथो तत्र चाहं ये नैत्र स्यान्नाम नारायणेति ।
कल्पे कल्पे तत्र शयामि भूयः सुप्तस्य मे नाभिजः स्याद्यथाद्य ।।१२
एवं भूतस्य मे देवि देवि नाभिपद्मे चतुर्मुखः ।
उत्तस्थौ स मया प्रोक्तः प्रजाः सृज महामते ।।१३
एवमुक्त्वा तिरोभावं गतोऽहं सोऽपि चिन्तयन् ।
आस्ते यावज्जगद्धात्रि नाध्यगच्छत्तु किंचन ।।१४।।

उस त्रिकमें मैं तप से महान् हुआ । वह सदा सर्व वेत्ताओं का प्रधान कहा जाता है उससे भी ऊर्जित जो क्षेत्र विद हुआ था फिर उससे बुद्धि हुई थी ।। १८ ।। उससे श्रवणादि हेतु हुए फिर उनसे जगत् की अक्षमाला व्यवस्थित हुई थी । हे भद्रे ! सत्व स्वरूप वाले मेरे द्वारा गतभूतों से ही पिण्ड मूर्त्ति विहित की गयी है ।। ९ ।। वहां पर शून्य था अर्थात् आकाश था । वहां पर शब्द और ख हुआ । उससे वायु और उससे पीछे तेज हुआ था उस तेज से आप अर्थात् जल समुत्पन्न हुए ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे देवि ! उसके पश्चात् मैंने भूतों की धात्री आपका सृजन किया था ॥ १० ॥ योग में पृथिवी में जल के ही समान था । उससे भी कुछ के सहित कलल अण्ड ही हुआ था । उसको प्रवृद्धि प्राप्त होने पर मैं आदि में अपने ही से अपने आपको जलमय हुआ था ॥ ११ ॥ उन नारों का सृजन करके इसके अनन्तर वहां पर जिस रूप से था इसी कारण से मेरा नाम नारायण हुआ था । अर्थात् नार हो जिसका अपना निवास स्थल है वही नारायण है । कल्प-कल्प में अर्थात् प्रत्येक कल्प में मैं पुनः वहां पर शयन किया करता हूँ और सोये हुए मुझसे मेरी नाभि में समुत्पन्न आद्य होता है जिस प्रकार से पहिले हुआ था ॥ १२ ॥ हे देवि ! इस प्रकार के मुझसे नाभि में समुत्पन्न पद्म में चार मुखों वाले ब्रह्मा उठकर खड़े हुए थे । उस ब्रह्मा से मेरे द्वारा कहा गया था—हे महामति वाले । अवनुय प्रजाओं का सृजन करो ॥१३॥ इस प्रकार से इतना ही कहकर मैं तिरोभूत हो गया था अर्थात् छिप गया था । वह ब्रह्मा भी चिन्तन करते रहे थे । हे जगत् की धात्रि ! किन्तु नहीं समझा सके । अर्थात् मुझे किस तरह से क्या करना है--यह कुछ भी ज्ञान उनको नहीं हुआ था ॥ १४ ॥

तावत्तस्य महारोषो ब्रह्मणोऽव्यक्त जन्मनः ।
संभूय तेन बालः स्यादेको रोषात्म संभवः ॥१५
यो रूदन्वारितस्तेन ब्रह्मणाव्यक्त मूर्तिना ।
ब्रवीति नाम मे देहि तस्य रुद्रेत्य सौ ददौ ॥१६
सोऽपि तेन सृत्तस्वेति प्रोक्तो लोकमिम शुभे ।
अशक्तः सोऽय सलिले ममञ्ज तपसे धृतः ॥१७
तस्मिन्सलिलमग्ने तु पुनरन्यं प्रजापतिम् ।
ब्रह्मा ससर्ज्ज भूतेषु दक्षिणांगुष्ठतः परम् ॥१८
वामे चैव तथांगुष्ठे तस्य पत्नीमथासृजत् ॥१९
स तस्यां जनयामास मनुं स्वायंभुवं प्रभुः ।
तस्मात्संभाविता बुद्धि प्रजानां ब्रह्मणा पुरा ॥२०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विस्तरेण समाचक्ष्व आदिसर्गं सुरेश्वर ।
ब्रह्मा नारायणाख्योऽयं कल्पादौ चाभवद्यथा ॥२१

जब ब्रह्माजी की समझ में कुछ भी नहीं आया तो ब्रह्माजी को अपने जन्म से महान् क्रोध उत्पन्न हो गया था । उससे एक शेष के रूप से होने वाला एक बालक ने जन्म ग्रहण किया था ॥ १५ ॥ वह बालक रुदन कर रहा था । अव्यक्त मूर्त्ति को ले ब्रह्माजी ने उसके रुदन का निवारण किया था । उस बालक ने बोला—मेरा नाम बताओ । ब्रह्मा जी ने उनका नाम 'रुद्र—यह ही रक्खा था ॥ १६ ॥ हे शुभे ! ब्रह्माजी ने उससे भी यही कहा था कि तुम प्रजा का सृजन करो और इस लोक का निर्माण करो । वह इस कार्य के करने में असमर्थ हुआ था और तपश्चार्या करने के लिये उसी जल में निमग्न हो गया था ॥१७॥ उसके जल में डूब जाने पर ब्रह्माजी ने भूतों में फिर एक अन्य प्रजापति का सृजन दिया था । इस प्रजापति का सृजन् अपने दाहिने अँगूठे से किया था और अपने बाँये अंगूठे से उसकी पत्नी का सृजन किया था ॥ १८ ॥ ॥१९॥ उस प्रजापति ने जो अयोनिज था अपनी पत्नी में प्रभु ने योनिज सृष्टि में स्वायम्भुव मनु को समुत्पन्न किया था । उससे अर्थात् स्वायम्भुव मनु से ब्रह्माजी ने पहिले ही प्रजाओं के समुत्पन्न करने की बुद्धि की सम्भावना की थी ॥ २० ॥ धरणी ने कहा—सुरेश्वर ! आदि में जो सर्ग रचना हुई थी उसका आप विस्तार के साथ वर्णन कीजिए जिस प्रकार से नारायण नाम वाले यह ब्रह्मा कल्प के आदि काल में हुए थे ॥२१॥

ससर्ज सर्वभूतानि यथा नारायणात्मकः ।
कथ्यमानं मया देवि तदशेषं क्षिते शृणु ॥२२
गतकल्पावसाने तु निशि सुप्तः स्थितः शुभे ।
सत्त्वोद्रिक्तस्तथा ब्रह्मा शून्यं लोकमवैक्षत ॥२३
नारायणः परोऽचिन्त्यः पराणामपि पूर्वजः ।
ब्रह्म स्वरूपो भगवाननादिः सर्वसम्भवः ॥२४॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इदं चोदाहरन्त्यत्र श्लोकं नारायणं प्रति ।
ब्रह्मस्वरूपिणं देवं जगतः प्रभवाप्ययम् ॥२५
आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसून वः ।
अय नं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥२६
सृष्टिं चिन्तयतस्तस्य कल्पादिषु यथा पुरा ।
अबुद्धिपूर्वकस्तस्य प्रादुर्भूतस्तमोमयः ॥२७
नमो मोहो महामोहस्तामिस्रो ह्यन्धसंज्ञितः ।
अविद्या पंच पर्वैषा प्रादुर्भूता महात्मनः ॥२८

हे देवि ! नारायण स्वरूप वाले ने जिस तरह से समस्त भूतों का सृजन किया था हे पृथ्वी ! मेरे द्वारा कहे जाने वाले इस सबका आप अब श्रवण कीजिए ॥ २२ ॥ हे शुभे ! गत कल्प के अवसान में रात्रि में सोये हुए ही ब्रह्मा स्थित थे । जब वे सत्त्व से उद्रिक्त हुए तो उन्होंने ब्रह्माजी ने इस लोक को शून्य के ही स्वरूप में देखा था ॥२३॥ परों से भी पूर्व में जन्मधारी पर नारायण चिन्तन के पर थे अर्थात् ध्यान करने में नहीं आने वाले थे । ब्रह्म के स्वरूप वाला भगवान् सबके आदि और सभी के समुत्पन्न करने वाले हैं ॥ २४ ॥ भगवान् नारायण के विषय में यहाँ पर एक श्लोक का उदाहरण देते हैं जो ब्रह्म के स्वरूप वाले और इस जगत् के प्रभव के आश्रय देव हैं ॥ २५ ॥ आपो अर्थात् जलों को ही नार कहा गया है । आप ही नरों के सूनु हैं पूर्व में वे ही जल उनके अयन अर्थात् निवास स्थान कहे गये हैं । इसी कारण से उनको नारायण नाम से कहा गया है ॥ २६ ॥ जिस प्रकार से कल्पों के आदि काल में सृष्टि की रचना करने के विषय में चिन्तन करते हुए उनको असुद्धि पूर्वक तमोमय प्रादुर्भूत हुआ था ॥ २७ ॥ तम—मोह—महामोह—तामिस्र—अन्य संज्ञा वाले यह पञ्चपर्वा अविद्या है जो कि महात्मा को प्रादुर्भूत हुई थी ॥२८॥

पंचधावस्थितः सर्गो ध्यायतः प्रति बोधवान् ।
स मुख्यसर्गो विज्ञेयः सर्गविद् भिर्विचक्षणैः ॥२९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुनरन्यमभूतस्य ध्ययातः सर्गमुत्तमम् ।
त्रिर्यक्स्तोतस्तु ते यस्मात्तिर्यक्स्रोतस्तु वै स्मृतः ॥३०
पश्चादयस्ते विख्याता उत्पथग्राहिणः कृताः ।
तमप्यसाधनं मत्वा तिर्यक्स्रोतश्चतुर्मुखः ॥३१
ऊर्द्धस्रोतस्त्रिधा यस्तु सात्त्विको धर्मवर्त्तनः ।
तथोर्द्ध्व चारिणो देवो सर्वे गर्भ समुद्भवाः ॥३२
तथा सृष्ट्वान्यसर्गं तु तदा दध्यौ प्रजापतिः ।
असाधकांस्तु तान्मत्वा मुख्यसर्गादिसम्भवान् ॥३३
ततः स चिन्तयामास अर्वाक् स्रोतस्तु स प्रभुः ।
अर्वाकस्रोतसि चोत्पन्ना मनुष्याः साधका मताः ॥३४
ते च प्रकाश बहुलास्त मोद्रिक्ता रजोऽधिकाः ।
तस्मात्ते दुःखबहुला भूयोभूयश्च कारिणः ॥३५

ध्यान करते हुए उनका प्रति बोधवान् पाँच प्रकार का सर्ग हुआ था । सर्ग के ज्ञान रखने वाले विचक्षण पुरुषों के द्वारा वह मुख्य सर्ग समझना चाहिए ॥ २९ ॥ फिर उत्तम सर्ग के ध्यान करने वाले उनका एक अन्य हुआ था । वे तिर्यक् स्रोत हैं इसीलिये तिर्यक् स्रोत कहा गया है ॥ ३० ॥ वे पश्वादि विख्यात हुए और उत्पथ के ग्रहण करने वाले हुए थे जो ऐसे किये गये हैं । उसको भी साधन न मानकर चतुर्मुख ने तिर्यक् स्रोत और ऊर्ध्व स्रोत जो तीन प्रकार का है ऊर्ध्व स्रोत जो तीन प्रकार है और सात्त्विक धर्म वर्तन है । ऊर्ध्वचारी का देव है । ये सब गर्भा से समुद्भव वाले हैं ॥ ३१—३२ ॥ उस समय में अन्य सर्ग का सृजन करके तब प्रजापति ने चिन्तन किया था । मुख्य सर्ग आदि से समुद्भूत हुए उनको साधक न मानकर, इसके अनन्तर फिर उसने ध्यान किया था और उस प्रभु ने अर्वाक् स्रोत का चिन्तन किया । अर्वाक् स्रोत में उद्भूत मनुष्य साधक माने गये थे । ॥ ३३—३४ ॥ वे अत्यधिक प्रकाश वाले तमोद्रिक और अधिक रजो-

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गुण वाले थे। इसी कारण से वे बहुत अधिक दुःखों वाले हुए थे और पुनः पुनःकारी थे ।। ३५ ।।

इत्येते कथिताः सर्गाः षडेते सुभगे तव ।
प्रथमे महतः सर्गस्तन्मात्राख्यो द्वितीयिकः ।।३६
वैकारिकस्तृतीयस्तु सर्गश्चैन्द्रियकः स्मृतः ।
इत्येष प्राकृतः सर्गः संभतो बुद्धिपूर्वकः ।।३७
मुख्यसर्गश्चतुर्थस्तु मुख्या वै स्थावरा स्मृताः ।
तिर्यक् स्रोतश्च यः प्रोक्तस्तैर्यक्स्रोता स उच्यते ।।३८
तथोर्द्धस्रोतसां श्रेष्ठः सप्तमः स तु मानवः ।
अष्टमोऽनुग्रहः सर्गः सात्त्विक स्तामसश्व सः ।।३६
पंचैते वैकृताः सर्वाः प्राकृतास्तु त्रयः स्मृताः ।
प्राकृतो वैकृतश्चैव कौमारौ नवमः स्मृतः ।।४०
इत्येते वै समाख्याता नव सर्गाः प्रजापतेः ।
प्राकृता वैकृताश्चैव जगतो मूल हेतवः ।।
इत्येते कथिताः सर्गाः किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।।४१
नवधा सृष्टिरुत्पन्न ब्रह्मणोऽव्यक्त जन्मनः ।
कथं ज वबृधे देव एतन्मे कथयश्च्युत ।।४२।।

हे सुभगे ! ये छै सर्ग मैंने आपको कहकर बतला दिये हैं। प्रथम में महत् का सर्ग है जौर तन्मात्रा नामक द्वितीय सर्ग हुआ था ।। ३६ ।। तृतीय सर्ग वैकारिक है जो सर्ग ऐन्द्रियक कहा गया है। यही प्राकृत सर्ग हैं जो बुद्धिपूर्वक समुद्भूत हुआ था ।। ३७ ।। चतुर्थ सर्ग मुख्य सर्ग है और स्थावर ही मुख्य कहे गये हैं। जो तिर्यक् स्रोत कहा गया है उनके द्वारा वह तिर्यक् स्रोता कहा जाया करता है ।। ३८ ।। उसी भाँति ऊर्ध्व स्रोतो में श्रेष्ठ सातवाँ है और वह मानव है। आठवाँ अनुग्रह सर्ग होता है और वह सात्त्विक और तामकस होता है ।। ३९ ।। ये पाँच वैकृत सर्ग होते हैं और जो प्राकृत हैं वे तीन कहे गये हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राकृत—वैंकृत और कौमार खवय कहा गया है ।। ४० ।। ये सब प्रजा-पति के नौ सर्ग समाख्यात किये गये हैं । प्राकृत और वैंकृत ये सब जगत् के भूल हेतु होने हैं । ये सब तो मैंने आपको कह कर सुना दिये हैं । अब और तुम क्या श्रवण करना चाहती हो ? ।। ४१ ।। अव्यक्त जन्म वाले ब्रह्मा की नौ प्रकार की सृष्टि समुत्पन्न हुई थी । धरणी ने कहा—यह सृष्टि हे देव ! किस प्रकार से वृद्धि को प्राप्त हुई थी । हे अच्युत ! यह अब आप कृपा करके मुझे बतलाइये ।। ४२ ।।

प्रथमं ब्रह्मणा सृष्टा रुद्राद्यास्तु तपोधनाः ।
सनकादयस्ततः सृष्टा मरीच्यादय एव च ।।४३
मरीचिरत्रिश्च तथा अङ्गिराः पुलहः क्रतुः ।
पुलस्त्यश्च महातेजाः प्रचेता भृगुरेव च ।।
नारदो दशमश्चैव वसिष्ठश्च महातपाः ।।४४
सनकादयो निवृत्त्याख्पे तेन धर्म्मे प्रयोजिताः ।
प्रवृत्त्याख्ये मरीच्यान्ना मुक्त्वैकं नारदं मुनिम् ।।४५
योऽसौ प्रजापतिस्त्वाद्यो दक्षिणांगुष्ठ सम्भवः ।
तस्मादो तत्र वंशे तु जगदेतच्चराचरम् ।।४६
देवाश्च दानवाश्चैव गन्धर्वोरुगपक्षिणः ।
सर्वे दक्षस्य कन्या सु जाताः परम धार्मिकाः ।।४७
योऽसौ रुद्रेति विख्यातः पुत्रः क्रोध समुद्भवः ।
भ्रुकुटी कुटिलात्तस्य ललाटात् परमेष्ठिनः ।।४८
अर्द्धनारनिवपुः प्रचण्डोऽति भयंकरः ।
विभजात्मानमित्युक्त्वा ब्रह्मा चान्तर्दधे पुनः ।।४९।।

सबसे प्रथम ब्रह्माजी ने रुद्र आदि तपोधनों की सृष्टि की थी । इसके अनन्तर सनक-समन्दन सनातन—सनत्कुमारों की सृष्टि की थी और मरीचि आदि की रचना की थी ।।४३।। मरीचि—अत्रि—अङ्गिरा—पुलह—क्रतु—पुलस्त्य—महान् तेज वाले प्रचेता और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भृगु—दशवें नारद और महान् तपस्वी वसिष्ठ की रचना की थी सन-कादि सब निवृत्ति नामक मार्ग में उनके द्वारा धर्म में प्रयोजित किया था। प्रवृत्ति नामक मार्ग में मरीचि आदि को प्रयोजित किया था केवल नारद मुनि को छोड़ दिया था ॥४४॥४५॥ जो सबके आदि में होने वाला था वह ब्रह्माजी के दाहिने अँगूठे से समुत्पन्न होने वाले थे। आदि में उसके ही वंश में यह चराचर अर्थात् जङ्गम और स्थावर जगत् हुआ था ॥४६॥ देव और दानव—गन्धर्व—उरग—पक्षीगण—ये सब और परम धार्मिक दश प्रजापति की कन्यायें समुत्पन्न हुई थीं ॥४७॥ जो यह रुद्र—इस नाम से विख्यात हुआ था वह क्रोध से समुद्भूत पुत्र था। यह परमेष्ठी (ब्रह्मा) के कुटिल भृकुटियों वाले ललाट से ही उत्पन्न हुआ था। अर्धनार निर्वपु—प्रचण्ड और अत्यन्त भयङ्कर था। अपने आपका विभाजन करो—यह कह कर फिर ब्रह्माजी अन्तर्हित हो गये थे ॥४८॥४०॥

तथोक्तोऽसौ द्विधा स्त्रीत्वं पुरुषत्वं चकार सः।
विभेद पुरुषत्वं च दशधा चैकधा च सः ॥५०
ततस्त्वेकादश ख्याता रुद्रा ब्रह्म समुद्‌वाः ॥५१
अयमुद्देशतः प्रोक्तो रुद्रसर्गो मयाऽनघे।
इदानीं युगमाहात्म्यं कथयाति समासतः ॥५२
कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।५३
एतस्मिन्ये महासत्वा राजानो भूरिदक्षिणाः।
देवासुराश्च ये छक्रुर्धर्मं कर्म च तच्छृणु ॥५४
असीत् प्रथम कल्पेतु मनु स्वायम्भुवः पुरा।
तस्य पुत्रद्वयंजज्ञे अतिमानुष चेष्टितम् ॥५५
प्रियव्रतोत्तानपाद नामानं धर्मवत्सलम्।
तत्र प्रियव्रतो राजा महयज्वा तपोबलः ॥५६

इस प्रकार से कहे गये यह थे और उसने दो प्रकार से पुरुषत्व

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और स्त्रीत्व की रचना की थीं। उसने पुरुषत्व ग्यारह भेदों में विभक्त कर दिया था ॥५०॥ इसके अनन्तर ब्रह्माजी से समुत्पन्न हुए ग्यारह रुद्र ख्यात हुऐ थे ॥५१। हे अनद्य ! मैंने उद्देश से यह रुद्र सर्ग कह दिया है। इस समय में मैं अति संक्षेप में युग-माहात्म्य को कहता हूँ। ॥ ५२ ॥ सत्ययुग—त्रेता—द्वापर और कलियुग—ये हीं चार युग होते हैं ॥ ५३ ॥ इसमें जो महान् सत्व वाले—बहुत दक्षिणा देवे वाले नृप-गण थे तथा देव और असुर थे जिन्होंने धर्म कर्म किये थे उसका अय श्रवण करिए ॥५४॥ पुराने समय में प्रथम कल्प में स्वायम्भुव मनु थे। उन स्वायम्भुव मनु के दो पुत्रों ने जन्म ग्रहण किया था जो कि मानवों को अतिक्रमण करने वाली चेष्टा से समन्वित थे ॥५५॥ उनके शुभ नाम प्रिय व्रत और उकान पाद थे। ये दोनों ही धर्म्म पहै प्रेम रखने याले हुए थे। उन में जो प्रिय व्रत नामक राजा था वह महान् यज्वा अर्थात् यज्ञों के करने वाले और तपस्या के बल से समन्वित थे ॥५६॥

स चेष्ट्वा विविधैर्यज्ञैर्विपुलैः घूरिदक्षिणैः।
सप्तद्वीयेषु संस्थाप्य भरतादीन्सुतान् निजान्।
स्वयं विशालां वरदां गत्वातेपे महातपः ॥५७
तस्मिन स्थितस्य तपसि राज्ञो वै चक्रवर्तिनः।
उपेयान्नापदस्तत्र दिदृक्षुर्द्धर्मचारिणम् ॥५८
स दृष्ट्वा नारदं व्योम्नि ज्वलद् भास्करतेजसम्।
अभ्युत्यानेन राजेन्द्र उत्तस्थौ हर्षितस्तदा ॥५९
तस्यासनं च पाद्यं च सम्यक् कृत्वा निवेद्यवै।
स्वागतादिभिरालापैः परस्परमवोचताम् ॥६०
कथांते नारदं राजा पप्रच्छ ब्रह्मवादिनम् ॥६१
भगवन् किंचिदाश्चर्यमेतस्मिन् कृत संज्ञिते।
युगे दृष्टं श्रुतं चापितन्मे कथय नारद ॥६२
आश्चर्यमेकं दृष्टंमे तच्छृणुष्व प्रियव्रत।
ह्यस्तनेऽहनि राजेन्द्र श्वेताख्यं गतवानहम् ॥६३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसने विपुल दक्षिणा वाले—अनेक प्रकार के बहुत-से यज्ञों को करके सातों द्वीपों में भरत आदि अपने पुत्रों को संस्थापित किया था। और स्वयं विशाला वरदा पर जाकर महान् तप किया था ॥ ५७ ॥ उस तपश्चर्या में संस्थित चक्रवर्त्ती राजा के समीप में धर्म के समाचरण करने वाले को देखने की इच्छा रखने वाले देवर्षि नारदजी वहाँ पर समागत हुए थे ॥ ५८ ॥ उस राजा ने आकाश में जाज्वल्यमान भुवन भास्कर के समान तेज वाले देवर्षि नारदजी का दर्शन करके वह राजेन्द्र उस समय में बहुत हर्षित हुआ था और अभ्युत्थान देने के लिये वह राजा खडा हो गया था ॥ ५९ ॥ उन देवर्षि नारदजी के लिये आसन—पाद्य भली भाँति निवेदन करके स्वागत आदि आलापों के द्वारा ये दोनों ही परस्पर में बोलने लगे थे ॥ ६० ॥ इस कथोपकथन के अन्त में राजा ने ब्रह्मवादी नारदजी से पूछा था ॥ ६१ ॥ हे भगवन् ! इस कृत नाम वाले युग में मुझे कुछ आश्चर्य होता है। इस युग में जो भी कुछ देखा हो और श्रवण किया हो हे नारदजी ! वह मुझे कृपा करके कहिए ॥ ६२ ॥ श्री नारदजी ने कहा—हे प्रिय व्रत ? मैंने एक आश्चर्य देखा है। उसका अत्र आप श्रवण कीजिए। हे राजेन्द्र ? गतकाल में मैं श्वेत नामक द्वीप में गया था ॥ ६३ ॥

द्वीपं तत्र सरो दृष्टं फुल्लपङ्कजमालिनम् ।
सरसस्तस्य तीरे तु कुमारीं पृथुलोचनाम् ॥६४
दृष्ट्वाहं विस्मयापन्नस्तां कन्यामायतेक्षणाम् ।
पृष्टवानस्मि राजेन्द्र तदा मधुरभाषिणीम् ॥६५
कासि भद्रेकथं वासि किंवा कार्यमिह त्वया ।
कर्तव्यं चारुसर्वाङ्गि तन्ममाचक्ष्व शोभने ॥६६
एवमुक्ता मया सा हि मां दृष्ट्वाऽनिमिषेक्षणा ।
स्मृत्वा तूष्णीं स्थिता यावत्तावन्मे ज्ञानमुत्तमम् ॥६७
विस्मृतं सर्ववेदाश्च सर्वशास्त्राणि चैव हि ।
योगशास्त्राणि शिक्षाश्च वेदानां स्मृतयस्तथा ॥६८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सर्वं दृष्टैव मे राजन्कुमार्याऽपहृतं क्षणात् ।
ततोऽहं विस्मयाविष्टः चिन्ता शोक समन्वितः ॥६९
तामेव शरणं गत्वा यावत्पश्यामि पार्थिव ।
तावद्दिव्यः पुमांस्तस्याः शरीरे समदृश्यत ॥७०

वहाँ पर उस द्वीप में से मैंने एक सरोवर देखा था जिसमें खिलेहुए कमलों की मालाऐं थीं । उस सरोवर के तट पर एक कुमारी को देखा था जिसके बड़े २ लोचन थे ॥ ६४ ॥ उस आयव (विशाल) लोचनों वाली कन्या का दर्शन करके मैं अत्यधिक विस्मय को प्राप्त हो गया था । हे राजेन्द्र ! उस समय में मैंने उस परम मधुर भाषिणी से पूछा था ॥ ६५ ॥ हे भद्रे ! आप कौन हैं ? और यहाँ पर क्यों आई हैं अथवा यहाँ पर क्या कार्य है ? हे परम सुन्दर अङ्गों वाली आपका यहाँ क्या कर्त्तव्य है ? हे शोभने ! यह सभी कुछ आप मुझे वतलाइए ॥ ६६ ॥ मेरे द्वारा इस प्रकार से कही गयी उसने मुझको देखकर वह निर्निमेषा हो गई अर्थात् मुझे एक टक होकर उसने देखा था । और वह कुछ स्मरण करके चुप चाप स्थित हो गयी थी और तब तक वह इसी तरह से देखती रही जब तक मेरा उत्तम ज्ञान विस्मृत हुआ था ॥६७॥ मुझे सभी वेद—समस्त शास्त्र—योग शास्त्र—वेदों की शिक्षा और स्मृतियाँ ये सभी विस्मृत हो गये थे ॥६८॥ हे राजन् ! मेरे द्वारा देखी हुई उस कुमारी ने एक ही क्षण में मेरा सभी कुछ ज्ञान अपहृत कर दिया था । इसके अनन्तर मैं परम विस्मय से आविष्ट हो गया था और चिन्ता तथा शोक से समन्वित हो गया था ॥६९॥ हे राजन् ! उस समय में मेरे पास कुछ भी चारा नहीं था और मैं उसी की शरण में जाकर ज्यो ही मैं देखता हूँ तब तक एक परम दिव्य पुमान् उसके शरीर में मुझे दिखलाई दिया था ॥७०॥

तस्यापि पुंसो हृदये त्वपरस्तस्य चोरसि ।
अन्यो रक्तेक्षणः श्रीमान्द्वादशादित्य सन्निभः ॥७१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवं दृष्ट्वा पुतांसोऽत्र त्रयः कन्या शरीरगाः ।
क्षणेनतत्र कन्यैका न मान्पश्यामि सुव्रत ।।७२
ततः पृष्टा मयादेवी सा कुमारी कथं मम ।
वेदा नष्टा ममाचक्ष्व भद्रे तन्नाशकारणम् ।।७३
माताहं सर्व वेदानां सावित्री नाम नामतः ।
मां न जानासि येन त्व ततो वेदा हतस्तव ।।७४
एवमुक्ते तपा राजन्विस्मयेन तपोधन ।
पृष्टा त एते पुरुषा एतत्कथय शोभने ।।७५
य एष मच्छरीरस्थः सर्वाङ्गश्चारुशोभनः ।
एष ऋग्वेदनामा तु वेदो नारायणः स्वयम् ।
वह्निभूतो दहत्याशु पापान्युच्चारणादनु ।।७६
एतस्य हृदये योऽयं दृष्ट आसीत्वयात्मजः ।
स यजुर्वेदरूपी स्थितो ब्रह्मा महाबलः ।।७७

जो पुमान् मुझे उस कुमारी के शरीर में दिखलाई दिया था उस पुरुष के भी हृदय में एक दूसरा पुरुष दिखलाई दिया था और दूसरे के भी वक्षःस्थल में एक अन्य पुरुष दिखाई दिया था जिसके रक्त वर्ण वाले नेत्र थे और वह द्वादश आदित्यों के समान श्रीमान् था । ।।७१।। इस प्रकार से कन्या के शरीर में रहने वाले तीन पुमानों को देखकर फिर हे सुव्रती एक ही क्षण में वहाँ पर एक ही कन्या देखी गयी और फिर उन पुमानों को नहीं देखा था ।।७२।। इसके अनन्तर मैंने उस देवी से पूछा था जो कि कुमारी के रूप में मेरे समक्ष में थी-- हे भद्रे ! मेरे वेद कैसे नष्ट हो गये हैं और उनके नाश का क्या कारण हैं—यही कृपा करके मुझे बतलाइए। ७३।। उस देवी ने कहा—मैं सभी वेदो की माता हूँ और नाम से मुझे सावित्री कहा जाता है । तुम मुझ को नहीं जानते हो इसी कारण से तुम्हारे समस्त वेद हत हो गये हैं । ।।७४।। हे राजन् ! उसके द्वारा इस प्रकार से कहे जाने पर हे तपोधन ! विस्मय के साथ फिर उससे पूछा था—हे शोभने ! ये पुरुष कौन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

थे जो—तुम्हारे अन्दर दिखाई दिये थे—यह कृपा कर के मुझे बतलाइए। उस देवी ने उत्तर दिया था कि जो सभी अङ्गों के द्वारा परम शोभा वाला मेरे शरीर के अन्दर स्थित था वह ऋग्वेद नाम वाला था। और वेद तो स्वयं ही नारायण हैं ।।७५।।७६।। यह वह्निभूत होकर उच्चारण करने के ही पश्चात् शीघ्र ही पापों को दग्ध कर दिया करता है। इसके भी हृदय में जो आपने देखा था वह आत्मज यजुर्वेद स्वरूप वाला स्थित है जो महा बलवान् ब्रह्मा है ।।७७।।

तस्याप्युरसि संविष्टो य एष शुचि रूज्ज्वलः।
स सामवेदनामा तु रुद्ररूपी व्यवस्थितः ।।७८
एष आदित्यवत् पापान्याशु नाशयते स्मताः ।।७९
एते त्रयो महावेदा ब्रह्मन् देवास्त्रयः स्मृताः।
एते वर्णा अकाराद्याः सवनान्यत्र वै द्विज ।।८०
एतत्सर्वं समासेन कथितं ते द्विजोत्तम।
गृहाण वेदान् शास्त्राणि सर्वज्ञत्व च नारद ।।८१
एतस्मिन्वेदसरसि स्नानं कुरु महाद्विज।
कृते स्नानेऽन्यजन्मीयं येन स्मरसि सत्तम ।।८२
एवमुक्त्वा तिरौभावं गता कन्या नराधिप।
अहं तत्र कृतस्नानस्त्वां दिदृक्षुरिहागतः ।।८३

उसके भी वक्षःस्थल में संविष्ट जो परम शुचि और उज्ज्वल है वह सामवेद नामक है जो कि रुद्र के रूप वाला व्यवस्थित है ।।७८।। इसका स्मरण किये जाने पर यह सूर्य के ही समान शीघ्र ही पापों का विनाश कर दिया करता है ।।७९।। ये तीनों हे ब्रह्मन्! महावेद हैं और ये तीनों देव कहे गये हैं। हे द्विज! ये अकार आदि वर्ण इसमें सवन हैं ।।८०।। हे द्विजों में परम श्रेष्ठ! यह सब आपके सामने मैंने बहुत ही संक्षेप में कह कर सुना दिया है। हे नारद! अब आप वेदों को—शास्त्रों को और सर्वज्ञता को पुनः ग्रहण कर लीजिए ।।८१।। हे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

महाद्विज ! इस वेदों के सरोवर में आप स्नान कीजिए। हे सत्तम ! सत्पुरुषों में परम श्रेष्ठ ! इस सरोवर में स्नान करने पर आप अन्य जन्म में होने वाले का भी स्मरण करेंगे। यही इस सरोवर का महत्त्व है ॥८२॥ हे नरों के स्वाभिन् ! इस रीति से यह सब कहकर वह कुमारी तिरोभाव को प्राप्त हो गयी थी अर्थात् अन्तर्धान हो गई थी। फिर मैंने उस सरोवर में स्नान किया और स्तवन करके ही मैं आपके दर्शन करने की इच्छा वाला होकर इस समय में यहां पर समागत हो गया हूं ॥८३॥

३—नारद के पूर्वजन्म का वृतान्त

अन्यस्मिन् भगवञ्जन्म, न्यासीद्यत्वद्विचेष्टितम्।
सर्वं कथय देवर्षे महत्कौतहलं हि मे ॥१
स्नातस्य मम राजेन्द्र तस्मिन्वेद सरस्यथ।
सावित्र्याश्च वचः श्रुत्वा तस्मिन् जन्मसहस्रिकम्।
स्मरणं तत्क्षणाज्जातं शृणु जन्मान्तरं मम ॥२
अस्त्यवन्तीपुरं राजंस्तत्रातं प्राग्द्विजोत्तमः।
नाम्ना सारस्वतः पूर्वं वेदवेदाङ्ग पारगः ॥३
बहु भृत्यपरीवारो बहुधान्यश्च पार्थिव।
अन्यस्मिन् कृतसंज्ञे तु युगे परम बुद्धिमान् ॥४
ततोध्यातं म यैकान्ते किं मनेन करोम्यहम्।
द्वन्द्वेन सर्वमेतद्धि न्यस्य पुत्रेषु यास्यहम्।
तपसे धृतसंकल्पः सरः सारस्वतं द्रुतम् ॥५
एवं चिन्त्य मया पृष्टः कर्मकाण्डेन केशवः।
श्राद्धैश्च पितरो देवा यज्ञैश्चान्ये तथा जनाः ॥६
ततोऽहं निर्गतो राजंस्तपसे धृतमानसः।
सारस्वतं नाम सरो यदेतत्पुष्करं स्मृतम् ॥७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

राजाने श्री नारद जी से कहा—हे भगवन् ! अन्य जन्म में जो भी आपका विचेष्टित होता था हे देवर्षि ! वह सभी आप कृपा करके मुझे बतलाइए। मेरे हृदय में इसके श्रवण करने का बड़ा भारी कौतूहल हो रहा है ॥१॥ श्री नारदजी ने कहा—हे राजेन्द्र ! उस वेदों के सरोवर में मेरे स्नान किये जाने पर और भगवती सावित्री देवी के वचन का श्रवण करके उसी समय में एक ही क्षण में सहस्र जन्मों का स्मरण मुझे हो गया था। अब आप मेरे अन्य जन्म के विषय में सुनिये। एक अवन्ती पुर है। हे राजन् ! वहीं पर मैं पहिले एक द्विज श्रेष्ठ होकर समुत्पन्न हुआ था। उस समय में मेरा नाम सारस्वत था और मैं पूर्व में वेदों और वेदों के अङ्ग शास्त्रों में पारगामी विद्वान् हुआ था ॥३॥ हे राजन् ! मेरा बहुत भृत्यों का समुदाय था और परिवार भी मेरा बहुत बड़ा था तथा बहुत अधिक धान्य से भी समन्वित था। अन्य कृत युग नामक युग में मैं परम बुद्धिमान था। इसके अनन्तर मैंने एकान्त में बैठ कर ध्यान किया था कि इस सबसे मैं क्या करूँ। यह सभी कुछ द्वन्द युक्त है अतः एव इस सबको पुत्रों को देकर मैं चला जाऊँ—यही उत्तम है। इस तरह से तपश्चर्या करने के लिये मैंने अपने हृदय में सुदृढ़ सङ्कल्प कर लिया था और शीघ्र ही सारस्वत सरोवर पर जाने का विचार किया था ॥४॥५॥ इस प्रकार से चिन्तन करके कर्मकाण्ड के द्वारा मैंने केशव से पूछा था। और श्राद्धों के द्वारा पितृगणों को तथा यज्ञों के द्वारा देवों को तथा अन्य जनों को सन्तुष्ट करके मैं फिर वहाँ से निकल दिया था। हे राजन् ! मैंने तपस्या के लिये अपने मन में निश्चय कर लिया था। सारस्वत सरोवर वही है जो यह पुष्कर कहा गया है ॥६॥७॥

तत्र गत्वा मया विष्णुः पुराणः पुरुषः शिवः ।
आराधितो मया भक्त्या जपं नारायणात्मकं ॥८
ब्रह्मपारमयं राजन् जयता परमस्तवम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ततो मे भगवांस्तुष: प्रत्यक्षत्वं जगामह ।।६
की दृशं ब्रह्मपारं तु श्रोतुमिच्छामि सत्तम ।
कथयस्य प्रसादेन देवर्षे सुप्रसन्नधीः ।।१०
परं पराणाममृतं पुराणं पारं परं विष्णुमनन्तवीर्यम् ।
नमामि नित्यं पुरुषं पुराणं परायणं पारगतं पराणाम् ।।११
पुरातनं त्वप्रतिमं पुराणं परात्परं पारगमुग्रतेजसम् ।
गम्भीर गम्भीरधियां प्रधानं नतोऽस्मि देवं हरिमीशितारम् ।।१२
परात्परं चायरमं प्रधानं परास्पदं शुद्धपदं विशालम् ।
परात्परेशं पूरुषं पूराणं नारायणं स्तौमि विशुद्धभाव ।।१३
पुरा पुरं शून्यमिदं ससर्ज तदा स्थितत्वात् पुरुषः प्रधानम् ।
जने प्रसिद्धः शरणं ममास्तु नारायणो वीतमलः पूराणः ।।१४

वहाँ पर पहुँच कर मैंने भगवान् विष्णु पुराण पुरुष शिव की समाराधना की थी और नारायण के स्वरूप वाला होकर भक्ति की भावना से मैंने जाप किया था ।।८।। हे राजन् ! ब्रह्मपार मय परम स्तव का जाप करते हुए मुझ पर भगवान् परम प्रसन्न हुये थे और भगवान् परम प्रसन्न होकर मेरे सामने प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हो गये ।।६।। हे श्रेष्ठतम ! ब्रह्मचार किस प्रकार का होता है ? मैं उसको सुनना चाहता हूँ । हे देवर्षे ! आप तो परम प्रसन्न धी वाले है । कृपा करके ही इसे आप बतलाइए ।।१०।। परों का पर अमृत—पुराण पार—अनन्त वीर्य वाले पर विष्णु की सेवा में मैं प्रणाम करता हूँ । जो नित्य-पुराण पुरुष और परों का भी पर है तथा परायण पारगत है ।।११।। जो पुरातन-अप्रतिम अर्थात् अनुपम है—जो पुराण—पर से भी पर—पारग और उग्र तेज वाला है । गम्भीर से भी गम्भीर बुद्धि वालों में प्रधान ऐसे ईशिला भगवान् हरि की सेवा में मैं प्रणत होता हूँ ।।१२।। जो पर से भी पर—परम—प्रधान—परास्पद् अर्थात् परों का निवास स्थान—शुद्ध पद वाले और विशाल है । पर से भी परेश--पुराण पुरुष=

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विशुद्ध भाव वाले नारायण का मैं स्तवन करता हूँ ।।१३।। सबसे पूर्व इस शून्य पुर का सृजन किया था। उस समय में स्थित होने से पुरुष प्रधान है। जो जन में प्रसिद्ध है वे बीतमल पुराण भगवान् नारायण मेरे शरण अर्थात् रक्षक होवें ।।१४।।

पारं परं विष्णुमपाररूपं पुरातनं नीतिमतां प्रधानम् ।
धृतक्षमं शान्तिधरं क्षितीशं शुभं सदा स्तौमि महानुभावम् ।।१५
सहस्रमूर्धानमनन्त पादमनन्त बाहुं शशि सूर्यनेत्रम् ।।१६
तमक्षरं क्षीरसमुद्रनिद्रं नारायणं स्तौम्यमृतं परेशम् ।।१७
त्रिवेदगम्यं त्रिनवैकमूर्तिं त्रिशुक्लसंस्थं त्रिहुताशभेदम् ।
त्रितत्वलक्ष्य त्रियुगं त्रिनेत्रं नमामि नारायणमप्रेयम् ।।१८
कृते सितं रक्ततनुं तथा च त्रेमायुगे पीततनुं पुराणम् ।
तथा हरिं द्वापरतः कलौ कृष्णीकृतात्मानमथो नमामि ।।१९
परात्परं पारगतं प्रमेयं युधाम्पति कार्यत एव कृष्णम् ।
गदासिचर्मण्यभृतोत्थपाणिं नमामि नारायणमप्रमेयम् ।।२०
इति स्तुतो देववरः प्रसन्नो जगाद मां नीरदतुल्य घोषः ।
वरं वृणीष्वेत्य सकृन्ततोऽहं तस्मैव देहे लयमिष्टवांश्च ।।२१

पर पार--अपार रूप वाले--पुरातन और नीति वालों में प्रधान-क्षमाधारी—शान्ति को धारण करने वाले इस भूमि के स्वामी—सदा शुभ और महानुभाव भगवान् विष्णु का मैं स्तवन करता हूँ ।।१५।। सहस्रों अर्थात् प्रचुर मूर्द्धा वाले—अनन्त पार—असंख्य बाहुओं वाले—चन्द्र और सूर्य जिनके नेत्र हैं—अक्षर—और क्षीर सागर में निद्रासुख का उपभोग करने वाले—अमृत—परेश भगवान् नारायण की मैं स्तुति करता हूँ ।।१६।।१७।। तीनों वेदों के द्वारा जानने के योग्य—त्रिनव की एक मूर्त्ति—तीन शुक्लों में सस्थित—तीनों अग्नियों के नेत्र स्वरूप—तीन तत्त्वों के द्वारा लक्षित—तीन युग स्वरूप—तीन नेत्रों से समन्वित और अप्रमेय भगवान् नारायण को मैं प्रणाम करता हूँ ।।१८।। कृत युग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में सित स्वरूप—त्रेतायुग में रक्त वर्ण के तनु वाले द्वापर युग में पीत वर्ण के तनु से युक्त और कलियुग में अपने आपके स्वरूप को कृष्ण करने वाले के लिये मैं प्रणाम करता हूँ ॥१६॥ पर से भी पर—पारगत—प्रमेय—युद्ध करने वाले योधाओं के पति--कार्य से कृष्ण—गदा—खड्ग--चर्म अनभृत से उत्थित करने वाले—अप्रमेय भगवान् नारायण की सेवा में मैं प्रणाम करता हूँ ॥२०॥ इस प्रकार से स्तुति किये जाने पर देवों में श्रेष्ठ परम प्रसन्न होकर मेघ के समान ध्वनि वाले मुझसे बोले—भगवान् ने कहा—अपना अभीष्ट वरदान माँग लो एक बार आकर वरदान प्राप्त कर लो। इसके अनन्तर मैंने उन्हीं के देह में लय होने की इच्छा की थी ॥२१॥

इति श्रुत्वा वचो म्यहं देव देवः सनातनः ।
उवाच प्रकृति गच्छ विप्रैतत्तु प्रयोजनम् ॥२२
नारं पानीयमि त्युक्तं पितृणां तद्ददौ भवान् ।
तदा प्रभृति ते नाम नार देति भविष्यति ॥२३
एव मुक्त्वा गतो देवः सद्योऽदर्शनमुच्चकः ।
अहं कलेवरं त्यक्त्वा कालेन तपसा तदा ।
ब्रह्मलोके लयं प्राप्त स्तदोत्पत्ति च पार्थिव ॥२४
दिवसैश्च पुनः सृष्टो दशभिस्तनयैः सह ।
दिनानिर्यो हि देवस्य ब्रह्मणोऽव्यक्त जन्मनः ॥२५
स सृष्टचादिः समस्तानां देवादीनां न संशयः ।
सर्वस्य जगतः सृष्टिरेषैव प्रभुधर्मतः ॥२६
एन्तमे प्राकृतं जन्म यन्मां पृच्छसि पार्थिव ।
यस्मान्नारायणं ध्यात्वा प्राप्तोऽस्मि गुरुतां नृप ॥२७
तस्मात्वमपि राजेन्द्र भव विष्णु परायणः ॥२८

6884

मेरे इस वचन का श्रवण करके सनातन देवों के देव मुझसे बोले—हे विप्र! प्रकृति को प्राप्त होओ। यह ही तुम्हारा प्रयोजन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है ॥२२॥ नार पानी को कहा है। आपने उसको पितृगणों के लिये दिया था। तभी से लेकर आपका नाम नारद हो जायगा ॥ २३ ॥ इस प्रकार से यही कहकर वे देव तुरन्त ही अदर्शन को प्राप्त हो गये थे। अर्थात् अन्तर्धान हो गये थे और मैंने अपने शरीर का परित्याग करके कुछ काल पर्यन्त तपश्चर्या करके हे राजन्! मैंने ब्रह्म लोक में लय की प्राप्ति की थी और उत्पत्ति की भी प्राप्ति की थी ॥ २४ ॥ फिर दिनों से मैं दश पुत्रों के सहित सृष्ट हुआ था। जो अव्यक्त जन्म वाले देव ब्रह्माजी का दिन का आदि था। ॥२५॥ वह समस्त देव आदि की सृष्टि का आदि था—इसमें कुछ भी संशय नहीं है। धर्म से यह ही प्रभु सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि है ॥२६॥ हे पार्थिव! यह ही मेरा प्राकृत जन्म है जिसके विषय में आप मुझसे पूछ रहे हैं ॥२७॥ हे राजेन्द्र! इस कारण से आप भी भगवान् विष्णु की सेवा-भक्ति में परायण हो जाइये ॥२८॥

४—नारायण का सर्व व्याकपत्व

योऽसौ नारायणो देवः परमात्मा सनातनः।
भगवान्सर्वभावेन उताहो नेति शंस मे ॥१
मत्स्य कूर्मो वराहंश्च नरसिंहोऽथ वामनः।
रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्वी च ते दश ॥२
इत्येताः कथितास्तस्य मूर्तयो भूतधारिणि।
दर्शनं प्राप्तुमिच्छूनां सोपानानि च शोभने ॥३
यत्तस्य परमं रूपं तन्न पश्यन्ति देवताः।
अस्मदादिरूपेण पूरयन्ति ततो धृतिम् ॥४
ब्रह्मा भगवतो मूर्ती राजसस्तामसस्तथा।
याभिः संस्थाप्यते विश्वं स्थितौ संचाल्यते चह ॥५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

त्वमेका तस्य देवस्य मूर्तिराद्या धरा धरे ।
द्वितीया सलिलं मूर्तिस्तृतीय तैजसी स्मृता ।।६
चतुर्थी वायुमूर्तिः स्यादाकाशाख्या तु पंचमी ।
एतास्तु मूर्तयस्तस्य क्षेत्रज्ञस्त्वं हि मद्धियाम् ।
मूर्ति त्रय तथा तस्य इत्येताचाष्ट मूर्तयः ।।७

जो यह सनातन परमात्मा देवनारायण हैं वे ही सर्व भाव से भगवान् हैं अथवा नहीं हैं- यही आप मेरे सामने वर्णन करके बतलाइए ।।।१।। मत्स्य—कूर्म—वराह—नृसिंह—वामन—राम—परशुराम या वलराम—कृष्ण—बुद्ध और कल्की ये जिनकी दश मूर्त्तियाँ हे भूत धारिणि ! कही गयी है । हे शोभने ! इन मूर्त्तियों के दर्शन प्राप्त करने की इच्छा वालों के लिए सोपान भी कहे गए हैं ।।३।। जो उन प्रभु का परम स्वरूप है उसको तो देवगण भी नहीं देख पाते हैं । हम जैसों के स्वरूप के द्वारा ही फिर धृति की मूर्त्तियां हैं और वे राजस तथा तामस दो प्रकार की हैं जिनके द्वारा यह विश्व संस्थापित किया जाता है और इस विश्व का सञ्चालन किया जाया करता है ।।५।। हे धरे ! उसी देवकी आप भी एक आद्या धरा स्वरूपिणी मूर्त्ति हैं । उन्हीं देवकी दूसरी मूर्त्ति जल है । और तीसरी मूर्त्ति उन देव की तैजसी कही गयी है ।।६।। चौथी वायु के स्वरूप वाली उनकी मूर्त्ति है । आकाश नाम वाली उन देवकी पाँचवीं मूर्त्ति है । ये उसकी मूर्त्तियाँ हैं । क्षेत्रज्ञ—तुश और मेरी धियों की ये तीन मूर्त्तियाँ उसी की हैं—अतएव ये आठ मूर्त्तियां उसीं की हैं—अतएव ये आठ मूर्त्तियाँ देव की होती हैं ।।७।।

अभिव्याप्तमिदं सर्वं जगन्नारायणे न ह ।
इत्येत्कथितं देवि किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।।८
नारदे नैवयुकस्तु तदा राजा प्रियव्रतः ।
कृतवान् किं ममाचक्ष्व प्रसादात्परमेश्वर ।।९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भवती सप्तधा कृत्वा पुत्राणां च प्रदाय स ।
प्रियव्रत तपस्तेपे नारदाच्छ्रुतविस्मयः ॥१०
नारायणात्मकं ब्रह्म परं जप्त्वा स्वयम्भुवः ।
ततः स तद्गतमनाः परं निर्वाणमाप्तवान् ॥११
श्रृणु चान्यद्वरारोहे यद्वृन्तं परमेष्ठिनः ।
आराधनाय च यतः पुराकाले नृपस्य ह ॥१२
आसीदश्वशिरा नाम राजा परम धार्मिकः ।
सोऽश्वमेधेन यज्ञेन यष्ट्वा सुबहुदक्षिणाः ॥१३
स्नातश्चावभृथे सोऽथ ब्राह्मणैः परिवारितः ।
यावदास्ते स राजर्षिस्तावद्योगिवरो मुनिः ॥१४

यह सम्पूर्ण जगत् भगवान् नारायण के द्वारा अभि व्याप्त है—यह सब कह दिया है अब हे देवि ! अन्य क्या श्रवण करने की इच्छा है ॥ ८ ॥ धरणी ने कहा—जिस समय में राजा प्रिय व्रत से देवर्षि नारदजी ने ऐसा कहा था तब राजा प्रिय व्रत ने क्या किया था ? हे परमेश्वर ! यही अव आप प्रसन्नता से मुझे वतलाइए ॥ ९ ॥ देवर्षि ने कहा—आपका सात भागों में विभाजन करके पुत्रों को उसने प्रदान कर दिया था और नारद जी से सुनकर विस्मय को प्राप्त होने वाले प्रिय व्रत ने तपस्या का तप न किया था ॥ १० ॥ स्वयम्भुव ने नारायण के स्वरूप वाले पर ब्रह्म का जायकर के इसके अनन्तर भगवान् नारायण में ही अपना मन लगाने वाले उसने परम निर्वाण पद प्राप्ति करली थी ॥ ११ ॥ हे वरा रोहे ! परमेष्ठी को जो हुआ था वह और भी सुनिए। क्योंकि नृप के पुण्य काल में आराधना करने के लिये अश्वशिरा नाम वाला परम धार्मिक राजा था। उसने बहुत दक्षिणा वाले अश्वमेघ यज्ञ के द्वारा यजन करके इसके अनन्तर वह अवभूय में वह ब्राह्मणों के द्वारा परिवारित रहते हुए जब तक राजा रहा था

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तब तक वह राजर्षि योगियों में परम श्रेष्ठ मुनि की भांति रहा था ।। १२—१४ ।।

आययौ कपिल: श्रीमान् जैगीषव्यश्च योगिराट्।
ततस्त्वरितमुत्थाय स राजा स्वागत क्रियाम् ।
चकार परया युक्त स मुदा राजसन्तमः ।।१५
तस्या च्चिंतावासनगौ दृष्ट्वा देवं महावलः ।
पप्रच्छ तौ तिग्मधियौ योगज्ञौ स्वेच्छयागतौ ।।१६
भवन्तौ संशयं विप्रौ पृच्छामि पुरुषोत्तमौ ।
कथमाराधये देवं हरिं नारायण परम् ।।१७
क एष प्रोच्यते राजन्त्वया नारायणो गुरुः ।
आवां नारायणौ द्वौ तु त्वत्प्रत्यक्षगतौ नृप ।।१८
भवन्तौ ब्राह्मणौ सिद्धौ तपसा दग्धकिल्विषौ ।
कथं नारायणावा वामिति वाक्यमथेरितम् ।।१९
शख चक्र गदापाणि पीतवासा जनार्दनः ।
गरूडस्थो महादेवः कस्तस्य सदृशो भुवि ।।२०
तस्य राज्ञो वचः श्रुत्वा तौ विप्रौ संशित व्रतौ ।
जहसतुः पश्य विष्णु राजन्निति जजल्पतुः ।।२१

उसी समय में जैगी षव्य योगियों के राजा श्रीमान् कपिल मुनि आये थे । इनके आने पर शीघ्रता से उठकर उस राजा ने उन मुनिवर श्री स्वागत की क्रिया का समाचरण किया था और वह राजाओं में परम श्रेष्ठ परमाधिक भक्ति से युक्त होकर बहुत ही आनन्द पूर्ण होगया था ।१५। महा वलवान् देव ने उनकी अर्चना करके प्रदआसन पर स्थित हुए जब उनको देखा था उन तीक्ष्ण बुद्धि वाले और योग के ज्ञाताओं और अपकी इच्छा से वहां पर समागत हुए उन दोनों से पूछा था—आप तो पुरुषों में परम उत्तम हैं आप दोनों ही विप्र वरों से मैं एक अपने संशय के विषय में पूछता हूँ । भगवान् देव हरि नारायण की आराधना किस प्रकार से करूं ।। १६ ।। १७ ।। इसके अनन्तर उन्होंने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहा—हे राजन् ! आपके द्वारा यह क्या पूछा जावा है। नारायण तो गुरु हैं। हे नृप ! हम दोनों तो नारायण हैं जो इस समय मे आपके सामने ही प्रत्यक्षता को प्राप्त हो गये हैं ॥ १८ ॥ राजा ने कहा—आप दोनों तो ब्राह्मण हैं और सिद्ध हैं, आपने कठिन तपश्चर्या के द्वारा अपने समस्त पापों को दग्ध कर दिया है। हम दोनों नारायण हैं—यह वाक्य आपने कैसे कह दिया है ॥ १६ ॥ भगवान् जनार्दन तो अपने कर कमलों में शंख—चक्र और गदा—इन आयुधों को धारण करने वाले तथा पीताश्वर का परिधान करने वाले हैं। वे महान् देव सर्वदा गरुड़ वाहन पर विराजमान रहा करते है और उनके समान इस भू मण्डल में कौन हो सकता है ? ॥ २० ॥ उस राजा के इस वचन का श्रवण करके संशित व्रत वाले वे दोनों विप्र वहुत ही हँसे थे और उन्होंने कहा था हे राजन् ! विष्णु को देखो ॥ २१ ॥

एवमुक्त्वा स कपिलः स्वयं विष्णुर्वभूव सः।
जैगोषव्यश्च गरुडस्तत्क्षणं समजायत ॥२२
ततो हाहा कृतं त्वासीत्तत्क्षणाद्राजमण्डलम्।
दृष्ट्वा नारायणं देवं गरुडस्थं सनातनम् ॥२३
कृताञ्जलि पुटो भूत्वा ततो राजा महायशाः।
उवाच शम्यतां विप्रौ नायं विष्णुरथेदृशः ॥२४
यस्य ब्रह्मा समुत्पन्नो नाभिपङ्कज मध्यगः।
तस्माच्च ब्रह्मणो रूढः स विष्णुः परमेश्वरः ॥२५
इति राजवचः श्रुत्वा तदा तौ मुनिपुङ्गवौ।
चक्रतुः परमां मायां योगमायां विशेषतः ॥२६
कपिलः पद्मनामस्तु जैगीषव्यः प्रजापतिः।
कमलास्थौ वभौ ब्रह्मा तस्माद्रुद्रः प्रभाकरः ॥२७
ददर्श राजा रक्ताक्षं कालानल सम द्युतिम्।
नेश्यो भवति विश्वेशौ मायैषा योगिनां सदा ॥२८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस प्रकार से राजा से कहकर के कपिल मुनि स्वयं ही विष्णु हो गये थे। और जो जैगी षव्य थे उसी क्षण में गरुड़ हो गये थे ॥ २२ ॥ इसके अनन्तर उसी क्षण में वह राज मण्डल हाहाकार करने वाला होगया था अर्थात् वहाँ पर हाहाकार होने लग गया था। जब कि उन सब ने यह देखा था कि सनातन नारायण देव गरुड़ पर विराजमान वहाँ पर समुपस्थित हो गये हैं ॥ २३ ॥ इसके अनन्तर राजा कृताञ्जलि प्रगट होकर अर्थात् दोनों हाथों को जोड़कर बोला था जोकि महान् यश वाला था—राजा ने कहा—हे विप्र वारो ! आप मुझे क्षमा कीजिए—यह विष्णु नहीं है और न वे इस तरह के ही हैं ॥ २४ ॥ जिसकी नाभि के कमल के मध्य में गत ब्रह्मा समुत्पन्न हुआ था और उससे ब्रह्म से रूढ़ होने वाले विष्णु परमेश्वर है ॥ २५ ॥ यह राजा के वचनों का श्रवण करके वे दोनों मुनियों में परम श्रेष्ठों वे परम माया और विशेष रूप से योग माया को किया था ॥ २६ ॥ कपिल पद्म नाभ और जैगी ष्ठव्य प्रजापति कमल में स्थित हुए ब्रह्मा शोभित हुए और उनसे प्रभाकर रुद्र हुए थे ॥ २७ ॥ राजा ने रक्त नेत्रों वाले का दर्शन प्राप्त किया था जो कालानल के समान द्युति वाले थे। विश्व का स्वामी कभी भी देखने योग्य नहीं हुआ करते हैं। यह योगियों की सदा माया हुआ करती है ॥२८॥

सर्वव्यापी हरिः श्रीमानिति राजा जगाद ह ।
ततो वाक्यावसाने तु तस्य राज्ञो हि संसदि ॥२९
मत्कुणा मशका यूका भ्रमरा पक्षिणोरगाः ॥३०
अश्वा गावो द्विपाः सिंहा व्याघ्रा गोमायवो मृगाः ।
अन्येऽपि पशवः कीटा ग्राम्यारण्याश्च सर्वशः ।
दृश्यन्ते राजभवने कोटिशो भूतधारिणि ॥३१
तद्दृष्ट्वा भूतसंघातं राजा विस्मित मानसजं ।
यावच्चिन्तयते किं स्यादेतदित्यवगम्य च ।
जैगीषव्यस्य माहात्स्यं कपिलस्य च धीमतः ॥३२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कृताञ्जलि पुरो भुत्वा स राजाश्वशिरास्तदा ।
पप्रच्छ तावृषी भक्त्या किमिदं द्विजसत्तमौ ।।३३
आवा पृष्टो त्वया राजन् कथं विष्णुरिहेज्यते ।
प्राप्यते च महाराज तेनेदं दर्शितं तव ।।३४
सर्वज्ञस्य गुणा ह्येते ये राजस्तव दर्शिताः ।
सच नारायणो देवः सर्वज्ञः कामरूपवान् ।।३५

राजा ने कहा था कि भगवान् श्री हरि सब में व्याप्त रहने वाले श्रीमान् होते हैं । इसके अनन्तर उसके वाक्य के अवसान में उस राजा की सभायें यत्कुण (खटमल)—मशक (मच्छर)—थूका (जूआँ)—भ्रमर (भौंरे)—पक्षिगण—उरगा—अश्व—गौ—हाथी—सिंह—व्याघ्र—गोमायु—मृग और अन्य सब पशुगण कीट और सभी ग्रामीण और जंगली करोड़ों जीवधारी हे भूतों के धारण करने वाली ! उस राजा के भवन में दिखलाई दे रहे थे ।। २६ ।। ३० ।। ३१ ।। उस भूतों के समुदाय को देखकर राजा के मन में बड़ा भारी विसत्य समुत्पन्न होगया था । जब तक उसने चिन्तन किया था कि यह क्या हो गया है । फिर उस राजा ने जैगीषव्य का माहात्म्य और श्रीमान् कपिल का महत्त्व को जान लिया था ।। ३२ ।। फिर इसके पश्चात् उस राजा ने अपने दोनों हाथों को जोड़कर वह उस समय में अश्व का शिर वाला होकर उसमें उन दोनों द्विज श्रेष्ठ ऋषियों से पूछा था और भक्ति की भावना से प्रश्न किया था कि यह क्या है ? ।। ३३ ।। हे राजन् ! आपने हम दोनों ले पूछा था कि भगवान् विष्णु किस प्रकार से पूजित किये जाया करते हैं और कैसे उनकी प्राप्ति की जाया करती है । हे महाराज ! इसी कारण से यह आपको दिखाया गया है ।। ३४ ।। हे राजन् ! सब कुछ के ज्ञान रखने वाले के ये ही गुण हुआ करते हैं जो कि यहाँ आपको दिखलाये गये हैं । और वह देव नारायण सर्वज्ञ तथा अपनी इच्छा से रच रूप धारण करने वाले हैं ।। ३५ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सौम्यस्तु सस्थितः क्वापि प्राप्यते मनुजैः किल ।
आराधनं न चैतस्य परमार्थं भविष्यति ॥३६
किन्तु सर्व शरीरस्थः परमात्मा जगत्पतिः ।
स्वदेहे दृश्यते भक्त्या नैकस्थानगतस्तु सः ॥३७
अतोऽर्थं दर्शितं रूपं देवस्य परमात्मनः ।
आवयोस्तव राजेन्द्र प्रतीतिः स्याद्यथा तव ॥३८
एवं सर्वगतो विष्णुस्तव देहे जनेश्वर
मन्त्रिणां भृत्य संघस्य सुराद्या ये प्रदर्शिताः ॥३९
पशवः कीटसंघाश्च तेऽपि विष्णुमया नृप ।
भावनां तु दृढां कुर्याद्यतः सर्वमयो हरिः ॥४०
नान्यत्तत्सदृशं भूतमिति भावेन सेव्यताम् ।
एष ते ज्ञान सद्भावस्तव राजन्प्रकीर्तितः ॥४१
परिपूर्णेन भावेन स्मर नारायणं गुरुम् ।
पूजोपहारैर्धूपैश्च ब्राह्मणानां च तर्पणैः ।
ध्यानेन सुस्थितेनाशु सुप्राप्यः परमेश्वरः ॥४२

सौम्य स्वरूप वाले वे देव कहीं पर संस्थित रहा करते हैं जो कि मनुजों के द्वारा प्राप्त किये जाया करते हैं। इनका आराधन परमार्थ नहीं होगा ॥ ३६ ॥ किन्तु वह जगत् का स्वामी परमात्मा सभी के शरीरों में वर्त्तमान रहने वाला है। भक्ति की भावना से वह अपने शरीर में दिखलाई दिया करता है। वह किसी भी एक स्थान में स्थित रहने वाला नहीं है ॥ ३७ ॥ इसीलिये देव परमात्मा का रूप आपको दिखाया गया है। हे राजेन्द्र ! जिससे हम दोनों की प्रतीति हो जावे ॥ ३८ ॥ हे जनेश्वर। इस प्रकार से भगवान् विष्णु सब में स्थित रहने वाले हैं आपके भी देह में वे विद्यमान रहते हैं। मन्त्रियों में ओर भृत्यों के समुदाय और जो सुरादिक आपको प्रदर्शित किये गये हैं—समस्त पशुगण और कीटों के समुदाय हैं, हे नृप ! ये सब ही विष्णुमय अर्थात् भगवान् विष्णु के स्वरूप से परिपूर्ण हैं। अतएव यह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दृढ़ भावना करनी चाहिए कि भगवान् हरि सर्वमय हैं ।। ३९ ।। ४० ।। अन्य कोई भी प्राणी उनके समान नहीं है—इसी भावना से उनका सेवन करना चाहिए । हे राजन् ! यह ही ज्ञान का सत् भाव होता है जिसको आपके समक्ष में कीर्त्तित किया गया है ।। ४१ ।। परिपूर्ण भाव के द्वारा गुरुदेव नारायण का स्मरण करिए। पूजा के उपहारों के द्वारा—और धूपों के द्वारा तथा ब्राह्मणों की तृप्ति करने के द्वारा और सुस्थित ध्यान के द्वारा परमेश्वर बहुत ही शीघ्र सुप्राया हो जाया करते हैं अर्थात् उनको प्राप्त कर लिया करता है ।। ४२ ।।

५—कर्म द्वारा मोक्ष प्राप्ति वर्णन

भवन्तौ मम संदेह मेकं छेत्तुमिहार्हतः ।
येनच्छिन्नेन जयेत मम संसार विच्युतिः ।।१
एवमुक्तो नृपतिना तदा योगिवरो मुनिः ।
कपिलः प्राह धर्मात्मा राजानं यजतां वरम् ।।२
कस्ते मनसि सन्देहो राजन् परम धार्मिक ।
छिनद्मि येन तत् श्रुत्वा ब्रूहि यत्तेऽभिवाञ्चितम् ।।३
कर्मिणा प्राप्यते मोक्ष उताहो ज्ञानिना मुने ।
एतन्मे संशयं छिन्धि यदि मेऽनुग्रहः कृतः ।।४
इमं प्रश्नो महाराज पुरा पृष्टो बृहस्पतिः ।
रैम्येण ब्रह्मपुत्रेण राज्ञा च वसुना तथा ।।५
वसुरासीन्नृपश्रेष्ठौ विद्वन्दानपतिः पुरा ।
चाक्षुषस्य मनोकाले ब्रह्मणोऽन्वयवर्द्धनः ।।६
वसुः स ब्रह्मणः सद्म गतवांस्तद्दिदृक्षया ।
पथिचैत्ररथ दृष्ट्वा विद्याधरवरं नृप ।
आपृच्छच्च वसुः प्रीत्या ब्रह्मणोऽवसरं प्रभो ।।७

राजा ने कहा—आप दोनों परम विज्ञ हैं अत एव आप दोनों ही मेरे हृदय में उठे हुए एक सन्देह विच्छिन्न करने के योग्य होते हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जिसके छिन्न होने से मेरी इस संसार से निच्युति हो जायगी अर्थात् सांसारिक माया—मोह का बन्धन छूट जायगा ॥ १ ॥ राजा के द्वारा जब उन योगियों में परम श्रेष्ठ मुनिवर से इस प्रकार से कहा गया था तो धर्मात्मा कपिल मुनि ने यजन करने वालों में श्रेष्ठ राजा से कहा था ॥ २ ॥ हे राजन् ! आप तो परम धार्म्मिक अर्थात् धर्म्म के मानने वाले हैं आपके मनमें कौन-सा सन्देह है ? आपका जो भी अभिवाञ्छित हो उसे आप बतलाइये जिससे मैं उसको श्रवण करके छिन्न कर दूं ॥ ३ ॥ राजा ने कहा—हे मुनिवर ! कर्म्म करने वाले के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति की जाया करती है अथवा ज्ञानी के द्वारा मोक्ष का लाभ किया जाया करता है ! वही मेरे मनमें संशय है। यदि आपका मेरे ऊपर परम अनुग्रह है तो मेरे संशय का छेदन करने की कृपा कीजिए ॥ ४ ॥ हे महाराज ! राजा से मुनिवर ने कहा—यह प्रश्न पुराने समय में ब्रह्मा के पुत्र रैभ्य राजा ने तथा वसु ने देवगुरु वृहस्पति से पूछा था ॥ ५ ॥ प्राचीन समय में हे विद्वन् ! वसु नृपों में परम श्रेष्ठ और दानपति हुआ था। यह राजा चाक्षुष मन्वन्तर में हुआ था और यह ब्रह्माजी के वंश की वृद्धि करने वाला था ॥ ६ ॥ वह वसु राजा ब्रह्माजी के दर्शन करने की इच्छा से ब्रह्माजी के सद्म (गृह) में गया था। हे नृप ! मार्ग में विद्याधरों में परम श्रेष्ठ चैत्ररथ को देखकर हे प्रभो ! राजा वसु ने बड़े ही प्रेम से उस विद्याधर से ब्रह्माजी के दर्शन प्राप्त होने का अवसर पूछा था ॥ ७ ॥

सोऽब्रवीद्देवसमितिर्वर्त्तते ब्रह्मणो गृहे।
एवं श्रुत्वा वसुस्तस्थौ द्वारि ब्रह्मौकसस्तदा ॥८
तावत्तत्रैव रैभ्यस्तु आजगाम महातपाः।
स राजा प्रीतिमानासीद्वसुः सम्पूर्ण मानसः ॥९
उवाच पूजयित्वाग्रे क्व प्रयातोऽसि वै मुने ॥१०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अहं बृहस्पतेः पार्श्वादागतोऽस्मि महानृप ।
किंचित् कार्यान्तरं प्रष्टुमगाद्देव पुरोहितम् ।।११
एवं ब्रुवति रैभ्ये तु ब्रह्मणस्तन्महत्सदः ।
उत्तस्थौ स्वानि धिष्ण्यानि गता देवगणाः प्रभो ।।१२
तावद्बृहस्पतिस्तत्र रैभ्येण सह संविदम् ।
कृत्वा स्वधिष्ण्यमगमद्वसुना चानुपूजितः ।।१३
रैभ्य आंगिरसो राजा वसुश्चोपविवेशह ।
उपविष्टेषु राजेन्द्र तेषु त्रिष्वपि सोऽब्रवीत् ।।१४

उसने (चैत्र रथ में) कहा था कि इस समय में ब्रह्माजी के गृह में देवों की समिति हो रही है । यह श्रवण करके वसु ब्रह्माजी के द्वार पर स्थित हो गया था ॥ ८ ॥ उतने ही समय में महान् तपस्वी रैम्य भी वहीं पर समागत होगया था राजा वह वसु सम्पूर्ण मनवाला प्रीतिमान् था। उस वसु ने उनका पूजन करके उनके आगे पूछा था—हे मुनिवर ! आपने कहाँ पहुँचने के लिये गमन किया है ? ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ रैम्य मुनि ने कहा हे महान् नृप ! मैं देव गुरु वृहस्पति जी के पार्श्व से आया हूं। मैं वहां कुछ दूसरे कार्य के विषय में पूछने के लिये देव पुरोहित जी के समीप में गया था ॥ ११ ॥ हे प्रभो ! रैम्य मुनि के इस प्रकार से बोलने पर ब्रह्मा जी की वह महती सभा उठ गयीं थी और सब देवगण अपने—अपने गृहों को चले गये थे ॥ १२ ॥ तब तक वहाँ पर वृहस्पति जी ने रैम्य मुनि के साथ सम्बिद करके अपने निवास स्थान में चले गये थे और वहाँ पर वसुराजा के द्वारा अनुपूजित हुए थे ॥ १३ ॥ आङ्गिरस रौम्य मुनि और राजा वसु दोनों ही वहाँ पर उपविष्ट हो गये थे। हे राजेन्द्र ! उन तीनों के समुपविष्ट हो जाने पर वह बोले ॥ १४ ॥

बृहस्पतिर्देवगुरू रैभ्यं वचनमन्तिके ।
किं करोमि महाभाग वेदवेदाङ्गपारग ।।१५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बृहस्पते कर्मिणा किं प्राप्यते ज्ञानिनाऽथवा ।
मोक्ष एतन्ममाचक्ष्व पृच्छतः संशयं प्रभो ।।१६
यत् किंचत् कुरुते कर्म पुरुषः सध्वसाधु वा ।
सर्वं नारायणे न्यस्य कुर्वन्नपि न लिप्यते ।।१७
श्रूयते च द्विजश्रेष्ठ संवादो विप्रलुब्धयोः ।
अत्रेयो ब्राह्मणः कश्चिद्वेदाभ्यासरतो मुनिः ।।१८
तपस्यभिरतः प्रातः स्नायी त्रिषवणे रतः ।
नाम्ना संयमनः पूर्वमेकस्मिन्दिवसे नदीम् ।
धर्मारण्ते स्नतुं धन्यां भागीरथीं शुभाम् ।।१६
तत्रासीनं महायूथं हरिणानां विचक्षणः ।
लुब्धो निष्ठुर को नाम धनुः पाणिः कृतान्तवत् ।
आययौ तं जिघांसुः सन्सज्यं संयुज्य सायकम् ।।२०
ततः संयमनो विप्रो दृष्ट्वा तं मृगयारतम् ।
वारयामास मा भद्र जीवघातमिमं कुरु ।।२१

देव गुरु वृहस्पति जी ने रैम्य के वचनों को सुनकर फिर कहा था--हे वेदों और वेदों के अङ्ग शास्त्रों के पारङ्गत ! आप तो महान् भाग वाले हैं—आज्ञा कीजिए—मैं आपकी क्या सेवा करूँ ? ।।१५।। इस पर उसने उत्तर दिया—हे वृहस्पते ! मोक्ष की प्राप्ति कर्म करने वाले के द्वारा की जाती है अथवा ज्ञानी के द्वारा प्राप्त की जाया करती है ? हे प्रभो ! इसी संशय के पूछने वाले मुझे आप स्पष्टतया बतलाइए। ।।१६।। बृहस्पति ने उत्तर दिया था—पुरुष जो कुछ भी कर्म किया करता है चाहे वह कर्म साधु हो अथवा असाधु हो सबको नारायण में न्यस्त करके कर्म करता हुआ भी कर्म से लिप्त नहीं हुआ करता है ।।१७।। हे द्विज श्रेष्ठ ! एक विप्र और लुब्धक का सम्वाद सुना जाया करता है आत्रेम कोई ब्राह्मण था जो वेदों के अभ्यास में निरत मुनि थे ।।१८।। वह तपश्चर्या में निरत और प्रातः काल में स्नान करने वाला तथा त्रिकाल में सन्ध्या वन्दना करने वाला था। इनका नाम संयमन था ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यह पूर्व में एक दिन धर्मारण्य में परम धन्य और शुभ भागीरथी नदी में स्नान करने के लिए गया था ।।१६।। वहाँ पर बैठे हुए हरिणों के महान् यूथ को विचक्षण ने देखा था । वहाँ पर निष्टुरक नाम वाला लुब्ध अर्थात् व्याध हाथ में धनुष लेकर कृतान्त (यम) के ही समान वहाँ आ गया था जिसने अपने धनुष को सज्जित कर लिया था और तीर चढ़ाकर उनके हनन करने की इच्छा वाला हो रहा था ।।२०।। इसके अनन्तर उस संयमन नामक विप्र ने उसको मृगया में रत देखकर उसको वारित किया था । उस विप्र ने उस व्याध से कहा था—हे भद्र ! इस जीवों की हिंसा को मत करो ।।२१।।

एतत् श्रुत्वा वचो व्याधः स्मितपूर्वमिदं वचः ।
उवाच नाहं हिंसामि पृथग् जीवान् द्विजोत्तम ।।२२
परमात्मा त्वयं भूतैः क्रीडते भगवान्स्वयम् ।
कृता मायावली मन्त्रौस्तद्वदेतन्न संशयः ।।२३
गहं भावः सदा ब्रह्मन्नन विधेयो मुमुक्षिभिः ।
प्राणयात्रारतं सर्वं जगदेतद्विचेष्टिताप ।
तत्राहमिति यः शब्दः स साधुत्वं न गच्छति ।।२४
इत्याकर्ण्य स विप्रेन्द्रो द्विजः संयमनस्तदा ।
विस्मयेनाब्रवीद्वाक्यं लुब्धं निष्ठुरकं द्विजः ।।२५
किमेतदुच्यते भद्र प्रत्यक्षं हेतुमद्वचः ।।२६
ततः श्रुत्वा पुनर्विप्र लुब्धकः प्राह धर्मवित् ।
कृत्वा लोहमयं जालं तस्याधो ज्वलनं ददौ ।।२७
दत्तवह्निं द्विजं प्राह ज्वाल्यतां काष्ठसंचयः ।
ततो विप्रो मुखेनाग्नि प्रज्वाल्य विरराम ह ।।२८

व्याध ने बिप्र के इस वचन का श्रवण करके मुस्कराते हुए यह वचन कहा था—उसने कहा—हे द्विजोत्तम ! मैं पृथक् जीवों की हिंसा नहीं किया करता हूँ । भगवान् परमात्मा स्वयं ही भूतों के द्वारा क्रीड़ा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किया करता है। मन्त्रों के द्वारा यह माया की बनी की है। उसी के समान यह है—इसमें कुछ भी संशय नही है ॥२२॥२३॥ हे ब्रह्मन् ! मुक्ति की इच्छा रखने वालों को सदा ही अहंभाव नहीं करना चाहिए यह सम्पूर्ण जगत् का विचेष्टित प्राणों की यात्रा करने में निरत रहा करता है। वहां पर 'अहम्' यह शब्द साधुता को प्राप्त नहीं हुआ करता है। मैं कहता हूं—यह मैं पने की कभी अच्छी नहीं होती है ॥२४॥ उस विप्र शिरोमणि संयमन ने उस समय में यह लूब्धक (व्याध) के वचन का श्रवण करके बहुत ही विस्मित हो गया था और वह द्विज आश्चर्य में भर कर निष्ठुरक व्याध से यह वाक्य बोला था ॥२५॥ द्विज ने कहा—हे भद्र ! प्रत्यक्ष हेतुमत् यह क्या वचन आपके द्वारा कहा जा रहा है ? ॥२६॥ इसके अनन्तर फिर द्विज के वचन को सुनकर वह धर्म का ज्ञाता व्याध उस विप्र से कहने लगा था। और उसने एक लोह से परिपूर्ण जाल की रचना करके उसके नीचे अग्नि लगा दी थी। आग लगाने वाले द्विज से वह बोला—इस काष्ठों के ढेर को भी जला दीजिए। इसके अनन्तर विप्र ने मुख से अग्नि को प्रज्वलित किया था और फिर स्वयं विरत हो गया था ॥२८॥

ज्वलिते तु पुनर्वह्नौ तं जालं लोहसंभवम् ।
गवाक्षैर्निर्गतज्वालं बभौ कादंविगोलवत् ॥२६
पृथक् पृथक् सहस्राथि निश्चेलुर्ज्वल नार्चिष ।
एक स्थानगतस्यापि वह्नेरायस जालकैः ॥३०
ततो लुब्धोऽब्रवीद्विप्रमेका ज्वालां महामुने ।
ग्रहाण येन शेषाणां करिष्यामीह नाशनम् ॥३१
एवमुक्त्वा हुताशे तु तोयपूर्णघटं द्रुतम् ।
चिक्षेप सहसा वह्निः प्रशशामाथ पूर्ववत् ॥३२
ततोऽब्रवील्लुब्धकस्तु ब्राह्मणं तां तपोधनम् ।
भगवन्या त्वया ज्वाला गृहीतासाद्धुताशनात् ।
प्रयच्छ येन मार्गेण मांसान्यानाप्य भक्षये ॥३३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवमुक्तस्तदा विप्रो यावदायसजालकम् ।
पश्यत्मेव न तत्राग्नि मूल नाशे गतः क्षयम् ॥३४
ततो विलक्ष्य भावेन ब्रह्मणा शंसितव्रतः ।
तूष्टगिंभूतः स्थितस्तावल्लुब्धको वाक्यमब्रवीत् ॥३५

फिर वह्नि के ज्वलित हो जाने पर लोह से निर्मित वह जाल जिसके गवाक्षों से ज्वालाऐं निकल रहीं थी कादवी के गोल के समान ही दीप्तिमान् हो गया था ॥२६॥ पृथक्-पृथक् सहस्रों ही अग्नि की अर्चियाँ निकल रहीं थीं। यद्यपि एक ही स्थान में गत वह्नि था तो भी लोहे के जालों से ज्वालायें निकल रही थीं ॥३०॥ इसके अनन्तर वह व्याध विप्र से बोला—हे महामुने ! इन बहुत सी ज्वालाओं में से आप एक ज्वाला का ग्रहण करो जिससे मैं फिर शेष ज्वालाओं का विनाश यहाँ पर ही कर दूँगा ॥३१॥ इस प्रकार से कह कर उस अग्नि पर जल से भरा हुआ एक घट शीघ्र डाल दिया था और वह वह्नि पूर्व की ही भाँति [सहसा प्रशान्त हो गयी थी ॥३२॥ इसके अनन्तर वह लुब्धक उस तपोधन ब्राह्मण से बोला था। व्याध ने कहा—हे भगवन् ! आपने जो ज्वाला हुताशन से ग्रसह की थी उसे आप मुझ को दे दीजिए। जिस मार्ग के द्वारा मैं मांसों को लाकर मैं भक्षण कर लूँगा ॥३३॥ उस समय में इस प्रकार से कहे हुए विप्र ने जैसे ही लोहे के जाल को जाकर देखता है तो वहाँ पर अग्नि नहीं थी क्योंकि मूल के नाश हो जाने पर वह क्षींण हो गई थी ॥३४॥ इसके अनन्तर विलक्ष्य भाव वाले ब्रह्म से शंशित व्रत बाला विप्र मौन होकर स्थित हो गया था वैसे ही उस व्याध ने कहा था ॥३५॥

एतस्मिन् ज्वलितो वह्निर्बहुशाखश्च सत्तम ।
मूलनाशे भवेन्नाशस्तद्वदेतदपि द्विज ॥३६
आत्मा स प्रकृतिस्थश्च भूतानां संश्रयो भवेत् ।
विकृतादुद्भास्तस्य एषा वै जगतः स्थितिः ॥३७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पिण्डग्रहण धर्मेण यदस्य विहितं व्रतम् ।
तत्तदात्मनि संयोज्य कुर्वाणो नावसीदति ।।३८
एवमुक्ते तु व्याधेन ब्राह्मणो राजसत्तम ।
पुष्पवृष्टिरथाकाशान्तस्योपरि पपात ह ।।३९
विमानानि च दिव्यानि कामगानि महान्ति च ।
बहुरत्नानि मुख्यानि ददृशे ब्राह्मणोत्तमः ।।४०
तेषु निष्ठुरकं लुब्धं सर्वेषु समवस्थितम् ।
ददृशे ब्राह्मणस्तत्र कामरूपिरणमुत्तमम् ।।४१
अद्वैत वासनासिद्धं योगाद् बहुशरीरकम् ।
दृष्ट्वा विप्रो मुदा युक्तः प्रययौ निजमाश्रमम् ।।४२

हे श्रेष्ठतम ! इस जाल में बहुत शाखाओं वाला अग्नि ज्वलित हुआ था। किन्तु मूल के विनाश होने पर उस सबका नाश हो गया है। हे द्विज ! उसी भाँति यह भी है ।।३६।। वह आत्मा तो अपनी प्रकृति में स्थित है और वह भूतों का संश्रय होता है। विकृत से उसका उद्भव हुआ करता है। यही इस जगत् की स्थिति हुआ करती है ।।३७।। पिण्ड ग्रहण के धर्म से जो इसका व्रत निहित है उसको उसकी आत्मा में संयोजित करके करता हुआ पुरुष कभी भी अवसाद को प्राप्त नहीं हुआ करता है ।।३८।। व्याध के द्वारा इस प्रकार से ब्राह्मण कहे गये थे। हे राजश्रेष्ठ ! इसके अनन्तर आकाश से उसके ऊपर पुष्पों की वृष्टि का पात हुआ था ।।३९।। फिर उस ब्राह्मणों में उत्तम ने बहुत से दिव्य विमानों को देखा था जो विशाल थे और इच्छा के अनुसार ही गमन करने वाले थे—उनमें वेश की मती बहुत से रत्न जटिल हो रहे थे और वे मुख्य बिमान थे ।।४०।। उन दिव्य विमानों में सवों में निष्ठुरक नामक व्याध को संस्थित हुआ देखा था। वहाँ पर ब्राह्मण ने उत्तम काम रूपी को देखा था। अपनी ही इच्छा के अनुसार रूप धारण कर लेने वाले को काम रूपी कहा जाता है ।।४१।। अद्वैत वासना सिद्ध

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और योग बल से बहुय रूप युक्त शरीर को देखकर वह ब्राह्मण आनन्द से युक्त होता हुआ अपने आश्रम से चला गया था ।।४२।।

एवं ज्ञानं भवेत् कर्म कुर्वतोऽपि स्वजातिकम् ।
भवेन्मुक्तिः द्विजश्रेष्ठ रैभ्य राजन्वसो ध्रुवम् ।।४३
एवं तौ संशयच्छेदे प्राप्तौ रैभ्य वसून्नृप ।
बृहस्पतेस्ततो धिष्ण्याज्जग्मतुर्निजमाश्रमम् ।।४४
तस्मात्तमपि राजेन्द्र देवं नारायणं प्रभुम् ।
अभेदेन स्वदेहे तु पश्य त्वाराधयन् प्रभुम् ।।४५
कपिलस्य वचनं श्रुत्वा स राजाश्वशिरा विभुः ।
ज्तेष्ठं पुत्रं समाहूय धन्यं स्थूल शिरा ह्वयम्
अभिषिक्तोनिजे राज्ये स राजा प्रपयौवनम् ।।४६
नेमिषाख्यं वरारोहे तत्र यज्ञ तनुं हरिम् ।
तपसाराधयामास यज्ञमूर्तिं स्तवेन च ।।४७
कथं यज्ञतनोः स्तोत्रं राज्ञा नारायणस्य ह ।
स्तुतिः कृता महाभाग पुनरेतच्च शंस मे ।।४८
नमामि नित्यं त्रिदशाधिपस्य भवस्य सूर्यस्य हुताशनस्य ।
सोमस्य राज्ञो मरुतामनेकरूपं हरिं यज्ञतनुं नमस्ते ।।४९

इस रीति से अपनी जातिगत कर्म को करते हुए भी ज्ञान हो जाया करता है। हे द्विजों में श्रेष्ठ रैम्य ! हे राजन् वसो ! उसकी निश्चित रूप से मुक्ति हो जाया करती है ।।४३।. इस प्रकार से वे दोनों रैम्य और वसू नृप अपने संशय के छेदत प्राप्त करने वाले हो गये थे और इसके अनन्तर वे दोनों देव गुरु बृहस्पति के निवास स्थान से अपने-अपने आश्रमों को चले गये थे ।।४४।। इस कारण से हे राजेन्द्र ! आप भी देव प्रभु नारायण को अभेद के द्वारा अपने ही देह में देखिये और प्रभु की आराधना करते रहिए ।।४५।। कपिल मुनि के इस वचन का श्रवण करके वह विभु अश्वशिरा ने अपने स्थूल शिर नामक ज्येष्ठ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुत्र को बुला कर अपने राज्यासन पर उसको अभिषिक्त कर दिया था और वह राजा वन में चला गया था ।।४६।। हे वरारोहे ! अर्थात् सुन्दर शरीर के अङ्गों के उतार चढ़ाव वाली ! नैमिष नामक वन है वहाँ पर यज्ञ तम श्री हरि का तपश्चर्या के द्वारा आराधना की थी और यज्ञ मूर्त्ति प्रभु के स्तवन के द्वारा उनकी समाराधित किया था ।।४७।। यज्ञ के शरीर वाले भगवान् नारायण का स्तोत्र कैसा है जिसके द्वारा राजा ने स्तुति की थी। हे महाभाग ! आप कृपा करके पुनः यह मुझसे कहिए ।।४८।। त्रिदशाधिप अर्थात् देवों के स्वामी—भव (महादेव)—सूर्य—हुताशन (अग्नि) राजा सोम—और मरुतों के अनेक रूप वाले यज्ञ तनु हरि को प्रणाम करता हूँ ।।४९।।

सुमीमदंष्ट्रं शशिसूर्यनेत्रं संवत्सरद्वयायन युग्मकुक्षिम् ।
दर्भाङ्गऐमाणमथोग्रशक्ति सनातनं यज्ञनरं नमामि ।।५०
द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं शरीरेण दिशश्च सर्वाः ।
तमीड्यमीशं जगतां प्रसूतिं जनार्दनं तं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ।५१
सुरासुराणामजयोजयाय युगे युगे यत्स्वशरीरमाद्यम् ।
सृजत्यनादिः परमेश्वरो यस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ।५२
दधारे मायामयमुग्रतेजा जयाय चक्रं त्वमलं सुशुभ्रम् ।
सारङ्गशंखादिचतुर्भुजो यस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ।।५३
क्वचितसहस्रं शिरसां दधानः क्वचिन्महापर्वततुल्य कायः ।
क्वचित्स एव त्रसरेणु तुल्यो यस्तं सदा यज्ञनरं नमामि ।।५४
चतुर्मुखो यः सृजते समग्रं रथाङ्गपाणिः प्रतिपालनाय ।
क्षायाय कालानलसन्निमो यस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ।५५
संसारचक्रक्रमणक्रियार्थं य इज्यते सर्वगतः पुराणः ।
यो योगिनां ध्यानगतोऽप्रमेयस्तं यज्ञमूर्तिं प्रणतोऽस्मि नित्यम् ।५६
सम्यङ् मनस्यर्पितवान्हते यदा सुदृश्यं स्वतनौ तु तत्वम् ।
न चान्यदस्तीति मतिः स्थिरा मे यतस्ततोयाति विशुद्धभावम्
।।५७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इतीरितस्तस्य हुताशनार्चिः प्रख्यं तु तेजः पुरतोवभूव ।
तस्मिन्स राजा प्रविवेश बुद्धि कृत्वालयं प्राप्तवान्यज्ञमूर्तौ ॥५८

सुमीम दंष्ट्रा से युक्त—चन्द्र और सूर्य के नेत्रों वाले—सवत्सर और दोनों अपनों (दक्षिणायन—उत्तरायण) की दो कुक्षियों वाले—दर्भों के अङ्ग रोमों से पुरुष को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ५० ॥ द्यावा पृथिवी का अन्तर अर्थात् दिषलोक और भूमि का मध्य भाग और समस्त दिशाऐं शरीर के द्वारा व्याप्त हैं उन स्तुति करने के योग्य—जगत् को प्रसूत करने वाले—ईश—जनार्दन—उस प्रभु के चरणार विन्दों में मैं नित्य ही प्रणत होता हूँ ॥ ५१ ॥ अजय—सुरो असुरों के जय के लिये युग-युग में अर्थात् सभी युगों में आद्य अपने शरीर का अनादि होते हुए भी जो सृजन किया करता है जो परमेश्वर है उन यज्ञ की मूर्त्ति वाले प्रभु को मैं नित्य ही प्रणाम करता हूँ ॥ ५२ ॥ यह उग्र तेज से संयुत ने जय के लिये सुदर्शन चक्र जो अमल और शुभ्र है—शंख और शार्ङ्ग धनुष को तथा माया को धारण करने वाले हुए थे, उन चार भुजाओं वाले यज्ञ मूर्त्ति प्रभु को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ ॥ ५३ ॥ किसी अवसर पर सहस्रों शिरों को धारण करने वाले हैं—और किसो समय में महान् गिरि के समान शरीर से समन्तित हैं—किसी अवसर पर त्रसरेणु के सदृश होते हैं जो इस प्रकार के अनेक स्वरूप वाले हैं उन महान् यज्ञ वर को मैं सदा प्रणाम करता हूँ ॥ ५४ ॥ जो चार मुखों वाला अर्थात् ब्रह्मा होकर इस सम्पूर्ण विश्च का सृजन किया करते हैं—जो सुदर्शन चक्र के धारण करने वाले विष्णु होकर जगत् का परिपालन किया करते हैं—जो इस संसार का संहार करने के लिये कामामल के समान महेश्वर रूप वाले हैं उन्हीं यज्ञ मूर्त्ति भगवान् के चक्र के क्रमण की क्रिया के लिये सबमें अन्तर्या भी के रूप से रहने वाले—पुराण पुरुष जिसका यजन किया जाया करता है । जो योगियों के ध्यान किया जाया करता है । जो योगियों के ध्यान में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समागत होता है उस अप्रमेय यज्ञ मूर्त्ति को मैं नित्य ही प्रणाम करता हूँ ।। ५५ ।। ५६ ।। मैंने भली भाँति मनमें अर्पित किया था जिस समय में अपने तत्र में उस तत्त्व को सुदृश्य किया था। जिससे अन्य नहीं है— ऐसी मेरी मत्ति स्थिर हो जाती है और फिर विशुद्ध भाव को प्राप्त हो जाती है। हुता शवार्चि ने यह कहा था उसको मुखानेन आगे हुआ था उसमें राजा के का प्रवेश किया था। और बुद्धि का प्रवेश करके यज्ञमूर्त्ति में लय को प्राप्त हो गया था ।।५८।।

६—पुण्डरीकाक्ष पार स्तोत्र से मोक्ष

स वसुः संशयच्छेदं प्राप्य रैभ्यश्च सत्तमः ।
उभौ किं चक्रतुर्देव श्रुत्वा चाङ्गिरसं वचः ।।१
स वसु सर्वधर्मज्ञ स्वराज्यं प्रत्यपालयत् ।
अयजद्बहुभिर्यज्ञैः महद्भिएभूरिदक्षिणैः ।।२
कर्मकाण्डेन देवेशं हरिं नारायण प्रभुम् ।
तोषयामास राजेन्द्रस्तमभेदेन चिन्तयन् ।।३
ततः कालेन महता तस्य राज्ञो मतिः किल ।
निवृत्तराज्यभोगेच्छा द्वन्द्वस्यान्तमुपेयुषः ।।४
ततः पुत्रं विवस्वन्तं श्रेष्ठं भ्रातृशतस्य ह ।
अभिषिच्य स्वके राज्ये तपोवन मुपागतः ।।५
पुष्करं नाम तीर्थानां प्रवरं यत्र केशवः ।
पुण्डरीकाक्षनामा तु पूज्यते तत्परायणैः ।।६
तत्र गत्वा स राजर्षिः काश्मीराधिपतिर्वसुः ।
अतितीव्रेण तपसा स्वशरीरम् शोषयत् ।।७

उस राजा वसु ने और रैभ्य श्रेष्ठ तप ने अपने समस्त संशयों का छेदन प्राप्त करके हे देव ! फिर आङ्गिरस के वचन का श्रवण करके

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उन दोनों में क्या किया था ।। १ ।। हे सब धर्मों के ज्ञान रखने वाले ! उस राजा वसु ने अपने राज्य का भली भाँति प्रति पालन किया था। राजा ने विपुल दक्षिणा वाले वहुत से महान् यज्ञों के द्वारा यजन किया था ।। २ ।। कर्म काण्ड के द्वारा उस राजा ने देवेश्वर हरि नारायण प्रभु को सन्तुष्ट किया । उस राज शिरोमणि ने अभेद भाव के द्वारा प्रभु का चिन्तन किया था ।। ३ ।। इसके अनन्तर बहुत काल के पश्चात् उस राजा की बुद्धि ऐसी हो गई थी कि द्वन्द्व के अन्त में प्राप्त होने वाले उस राजा की राज्य के उपभोगों की इच्छा निवृत्त हो गयी थी ।। ४ ।। सैकड़ों भाइयों में परम श्रेष्ठ विवस्वान् नाम वाले पुत्र को अपने राज्यासन पर अभिषिक्त करके वह फिर तपोवन में चला गया था ।। ५ ।। समस्त तीर्थों में पुष्कर नाम वाला तीर्थ परम श्रेष्ठ है जहाँ पर पुण्डरीकाक्ष नाम वाले भगवान् में परायणों के द्वारा पूजित हुआ करते हैं ।। ६ ।। काश्मीर देश का अधिपति राजर्षि वसु ने वहाँ पर पहूँच कर अत्यन्त तीव्र तपश्चार्या के द्वारा अपने शरीर का शोषण कर दिया था ।। ७ ।।

पुण्डरीकाक्षपारं तु स्तवं भक्त्या जपन् बुधः ।
आरिराधयिषुर्देवं नारायणमकल्मषम् ।
स्तोत्रान्ते तल्लयं प्राप्तः स राजा राजसत्तमः ।।८
पुण्डरीकाक्ष पारं तु स्तोत्रं देव कथं स्मृतम् ।
कीदृशं तन्ममाव चक्ष्व परमेश्वर तत्वतः ।।६
नमस्ते पुण्डपीकाक्ष नमस्ते मधुसूदन ।
नमस्ते सर्वलोकेश नमस्ते तिग्म चक्रिणे ।।१०
विश्वमूर्तिं महाबाहुं वरदं सर्वतेजसम् ।
नमामि पुण्डरीकाक्षं विद्याविद्यात्मकं विभुम् ।।११
आदिदेवं महादेवं वेदवेदाङ्गपारगम् ।
गंभीरं सर्वदेवानां नमस्ये वारिजेक्षणम् ।।१२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सहस्रशीर्षिणं देवं सहस्राक्षं महाभुजम् ।
जगत्संवाप्य तिष्ठन्तं नमस्ये रमेश्वरम् ॥१३
शरण्यं शरणं देवं विष्णुं जिष्णुं सनातनम् ।
नीलमेघप्रतीकाशं नमस्ये चक्रपाणिनम् ॥१४

उस बुध ने परमाधिक भक्ति की भावना से पुण्डरीकाक्ष पार स्तोत्र का जप करते हुए कल्मष रहित देवेश्वर नारायण की आराधना करने की इच्छा वाला हुआ था ॥ ८ ॥ हे राजा शिरोमणे ! वह राजा स्तोत्र के जाप के अन्त में उसी प्रभु में तप को प्राप्त हो गया था अर्थात् उसका मोक्ष हो गया था । हे देव ! पुण्डरी काक्ष पार स्तोत्र कैसा कहा गया है ? वह किस तरह का है ? हे परमेश्वर ! यह तात्विक रूप से मुझे बतलाइये ॥ ९ ॥ अब पुण्डरी काक्ष पार स्तोत्र को बतलाया जाता है—हे पुण्डरीक के सदृश लोचनों वाले ! आपके लिये मेरा नमस्कार है । हे मधु नापक दैत्य के सूध्न करने वाले ! आपकी सेवा में मेरा प्रणाम है । हे समस्त लोकों के स्वामिन् ! आपको मेरा प्रणाम है । परम तीक्ष्ण चक्र धारी भगवान् के लिये मेरा नमस्कार है ॥ १० ॥ विश्व की मूर्त्ति वाले—महान् बाहुओं वाले—सबमें तेज स्वरूप से समचरियत—विद्या और अविद्या के स्वरूप धारी—विभु (व्यापक) पुण्डरी काक्ष प्रभु के लिये मेरा नमस्कार है ॥ ११ ॥ आदि देव—महादेव—वेदों और वेदों के अङ्ग शास्त्रों के पारगामी—समस्त देवों में अति गम्भीर और कपल के समान लोचनों वाले आपको मेरा नमस्कार सर्मपित है ॥ १२ ॥ सहस्रों शीषों वाले—सहस्रों नेत्रों से संयुत—महान् भुजाओं वाले देव को जो इस जगत् की संस्थापना करके स्थित रहते हैं ऐसे परमेश्वर को मैं प्रणाम करूँगा ॥ १३ ॥ शरण्य—शरण अर्थात् रक्षक—विष्णु—विष्णु—देव—सनातन—नीले मेघ के समान—चक्र हाथ में धारण करने वाले प्रभु के लिये मेरा नस्मकार है ॥ १४ ॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शुद्धं सर्वगतं नित्यं व्योमरूपं सनातनम् ।
भावाभाव विनिर्मुक्तं नमस्ये सर्वगं हरिम् ॥१५
नान्यत्किंचित् प्रपश्यामि व्यतिरिक्तं त्वताऽच्युत ।
त्वन्मयं च प्रपश्यामि सर्वमेतच्चराचरम् ॥१६
एवं तु वदतस्तस्य मूर्तिमान्पुरुषः किल ।
निर्गत्य देहान्नीलाभो घनचण्डो भयङ्करः ॥१७
रक्ताक्षो ह्रस्वकायस्तु दग्धस्थूणासमप्रभः ।
उवाच प्राञ्जलिर्भूत्वा किं करोमि नराधिप ॥१८
कोऽसि किं कार्यमिह ते कस्मादागतवानसि ।
एतन्मे कथय व्याध एतदिच्छामि वेदितुम् ॥१९
पूर्वं कलियुगे राजंस्त्वं राजा दक्षिणापथे ।
पूर्ण धर्मोद्भवः श्रीमान् जनस्थाने विचक्षणः ॥२०
स कदाचिद्भवान् वीर तुरगैः परिवारितः ।
अरण्यमागतो सन्तुं श्वापदानि विशेषतः ॥२१

परम शुद्ध—सबमें विद्यमान—नित्य—व्योम के रूप वाले—समातम—भाव और अभाव से विनिर्युक्त सबमें गमन करने वाले भगवान् हरि की सेवा में मेरा नमस्कार है ॥ १५ ॥ हे अच्युत ! आपसे व्वतिरिक्त मैं अन्य किसी को भी नहीं देखता हूँ । इस सम्पूर्ण चराचर को आपके ही स्वरूप से परिपूर्ण मैं देखता हूँ । अर्थात् जड़—चेतन सभी में आप ही का स्वरूप दिखलाई दिया करता है ॥ १६ ॥ इस रीति से कहते हुए उसके समक्ष में मूर्त्ति मान् पुरुष देह से निकला था जो नीली आभा से युक्त थे और घन के समान चण्ड तथा भयङ्कर था ॥ १७ ॥ लाल वर्ण के उसके नेत्र थे—बहुत ही छोटा शरीर था और जले हुए स्थूल के समान प्रभा वाला था । वह दोनों हाथों को जोड़ते हुए मुझसे बोला था—हे नराधिप आप कौन हैं और आपका यहाँ पर क्या कार्य है ? आप यहां किस कारण से समागत हुए हैं ? हे व्याध ! यह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सभी बातें आप मुझ बतलाइए। मैं यह जानने की इच्छा रखता हूँ ॥ १९ ॥ उस व्याध ने कहा था—हे राजन् ! पहले कलियुग में आप दक्षिण पथ में राजा थे! आप पूर्ण धर्म से उद्भूत थे—और आप जन स्थान में विचक्षण श्रीमान् थे ॥ २० ॥ वह आप किसी समय में हे वीर ! तुरगों से परिवारित होकर वन में श्वापदों का हनन करने के लिये विशेष रूप से समागत हुए थे ॥ २१ ॥

तत्र त्वया त्वकामेन मृगवेषधरो मुनिः ।
दण्ड युग्मेन दूरे तु पातितो धरणी तले ॥२२
सद्यो मृतश्च विप्रेन्द्रस्त्वं च राजन्मुदा युतः ।
हरिणोऽयं हत इति यावत्पश्यसि पार्थिव ।
तावन्मृगवर्युर्विप्रो मृतः प्रस्रवणे गिरौ ॥२३
तं दृष्ट्वा त्वं महाराज क्षुभितेन्द्रियमानसः ।
गृहागतस्ततोऽन्यस्य कस्यचित्कथितं त्वया ॥२४
ततः कतिपयहस्य त्वया रात्रौ नरेश्वर ।
ब्रह्महत्या भयाद्भीतचित्तेनैतद विचिन्तितम् ।
कृत्यं करोमि शान्त्यर्थं मुच्येयं येन पातकात् ॥२५
ततस्त्वया महाराज सकृन्नारायणं प्रभुम् ।
संचिन्त्य द्वादशी शुद्धा त्वया राजन्नुपोषिता ॥२६
नारायणो मे सुप्रीत इति प्रोक्त्वा शुभेऽहनि ।
गौर्दत्ता विधिना सद्यो मृतोऽस्पुदर शूलतः ॥२७
अमुक्तो द्वादशी धर्मो यन्तत्रापि च कारणम् ।
कथयामि भवत्पत्नी नाम्ना नारायणी शुभा ॥२८

वहाँ पर आपने बिना ही कामना के एक मृग के वेप को धारण करने वाले मुनि को दण्ड युग्म से दूर में ही धरणी तल में पालित कर दिया था ॥ २२ ॥ वह मृग रूप धारी विप्रेन्द्र तुरन्त मर गया था और हे राजन्! आपतो बड़ी प्रसन्नता युक्त होकर हेपार्थिव! यह समझते

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुए थे कि यह हरिण मर गया है। जब तक तुम यही देख रहे थे कि तभी तक पर्वत में मृग के शरीर वाला विप्रिन्दु मर गया है वह श्रवण किया गया था। हे महाराज ! आपने उसको देखकर अपनी इन्द्रियों में और मनमें बड़ा क्षोभ किया था। आप क्षुब्ध होकर गृह में आ गये थे। आपने अन्य किसी के विषय में कहा था ॥ २३ ॥ २ ॥ इसके अनन्तर हे नरेश्वर ! आप रात्रि के समय में ब्रह्म हत्या से भयभीत हो गये थे और आपने चित्त के द्वारा यह सोचा था कि मै कोई शान्ति के लिये कृत्य करूँ जिसके द्वारा मैं पातक से छुटकारा पा जाऊँ ॥ २५ ॥ इसके उपरान्त हे महाराज ! आपको एक बार नारायण प्रभु का भली भाँति चिन्तन करके हे राजन् ! आपने शुद्धा द्वादशी का उपवास किया था ॥ २६ ॥ भगवान् नारायण मेरे ऊपर परम प्रीति वाले है यह कहकर किसी शुभ दिन में तुरन्त ही विधि के साथ जो का दान दिया था और उदर शूल से मृत हो गये थे ॥ २७ ॥ जो द्वादशी धर्म अयुक्त रहा उसमें भी कारण है उसको मैं कहता हूँ। आपकी पत्नी नाम से नारायणी परम शुभा है ॥ २८ ॥

सा कण्ठगेन प्राणेन व्याहृता तेन ते गतिः ॥२९
कल्पमेक महाराज जातो विष्णुपुरे तव ।
अहं च तत्र देहस्थः सर्वं जानामि चाक्षयम् ॥३०
ब्रह्मग्रहो महाघोरः पीडयामीति मे मतिः ।
तावद्विष्णोस्तु पुरुषैः किङ्करैर्मुसलैरहम् ॥३१
प्रहतः संक्षयं यातश्च्युतस्ते रोमकूपतः ।
स्वर्गस्थ स्यापि राजेन्द्र स्थितोऽहं स्वेन तेजसा ॥३२
ततोऽहः कल्पे निवृत्ते रात्रि कल्पेन सत्तत ।
इदानीमादिसृष्टौ तु कृते नृपति सत्तम ।
सम्भूतस्त्वं महाराज राज्ञः सुमनसो गृहे ॥३३
कश्मीरदेशधिपते रहं चाङ्गरुहैस्तव ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यज्ञैरिष्टं त्वयनिकैः वहुभिश्चाप्त दक्षिणैः ।।३४
न चाहं तैरपहतो विष्णुस्मरण वर्जितैः ।
इदानीं यत्त्वया स्तोत्रं पुण्डरीकाक्षपारगम्। ।३५

कण्ठगत प्राण वाले उसने अपनी पत्नी से आपकी गति वतलादी थी। एक कल्प पर्यन्त हे महाराज ! आप विष्णुपुर में उत्पन्न हुए थे। मैं तो आपके देह में ही स्थित था और मैं सम्पूर्ण अक्षय जानता हूँ।। २६ ।। ३० ।। ब्रह्म ग्रह महान् घोर है पीड़ित करूंगा—यही मेरी मति है। तभी तक भगवान् विष्णु ने पुरुषों के द्वारा तथा किङ्करों के द्वारा मेरे ऊपर भूसलों से प्रहार किया गया था और मैं संक्षम को प्राप्त हा गया था और आपके रोमकूप से मैं च्युत हो गया था। हे राजेन्द्र ! स्वर्ग में संस्थित के भी साथ मैं अपने तेज के द्वारा स्थित रहता हूँ।। ३१—३२ ।। इसके अनन्तर दिन के कल्प के निवृत्त होने पर हे सत्तम ! रात्रि कल्प से इस समय में आदि सृष्टि में कृत युग में नृपतियों में श्रेष्ठतम ! हे महाराज ! आप राजा सुमतत्य के गृह में हुए थे।। ३३ ।। जो राजा काश्मीर देश का स्वामी था मैं आपके अङ्ग रुद्रों के साथ था। उस समय में आपने विपुल दक्षिणा वाले अभेद यज्ञों के द्वारा यजन किया था। क्योंकि वे सभी यज्ञादिक भगवान् विष्णु के स्मरण से रहित थे इसीलिये मैं उनके द्वारा अपहत नहीं हुआ था। इस समय में आपने पुण्डरो काक्ष पारग स्तोत्र का पाठ किया है।। ३४ ।। ३५ ।।

पठितं तत्प्रभावेण विहायाङ्गरुहाण्यहम् ।
एकीभूतः पुनर्जातो व्याधरूपी नृपोत्तम ।।३६
अहं भगवतः स्तोत्रं श्रुत्वा प्राक्यायम तिना ।
मुक्तोऽस्मि धर्मबुद्धिर्मे वर्तते साम्प्रतं विभो ।।३७
एतच्छ्रुत्वा वचो राजा परं विस्मयमागतः ।
वरेण छन्दयामास तं व्याधं राजसत्तमः ।।३८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्मारितोऽस्मि यथा व्याध त्वया जन्मान्तरं गतम् ।
तथा त्वं मत्प्रभावेण धर्मव्याधो भविष्यति ।।३६
यश्चैतत् पुण्डरीकाक्ष पारगं श्रृणुयात्परम् ।
तस्य पुष्करयात्रायां विधिस्नानफलं भवेत् ।।४०
एवमुक्त्वा ततो राजा विमानवरमास्थितः ।
परेण तेजसा योगमवापा शेषधारिणि ।।४१

आपने स्तोत्र का पाठ किया था इसी कारण से उस स्तोत्र के प्रभाव से मैंने आपके अङ्गरुद्रों को त्याग कर दिया है। अब हे नृपोत्तम ! मैं उन अङ्गरुद्रों में रहने वाला एकीभूत होकर फिर व्याध के रूप वाला समुत्पन्ना हुआ हूँ ।। ३६ ।। मैंने भगवान के स्तोत्र का श्रवण करके पूर्व में जो मेरी पापमूर्त्ति थी उससे अब मैं मुक्त हो गया हूँ। अब ये ही धर्म में बुद्धि है। हे विभो ! अब मैं धर्म में रुचि रखता हूं ।। ३७ ।। राजा उसके इस वचन का श्रवण करके बहुत ही अधिक विस्मय में पड़ गया था। उस श्रेष्ठतम राजा ने उस व्याध को वरदान के द्वारा सन्तुष्ट किया था ।। ३८ ।। हे व्याध ! आपने जिस प्रकार से मुझे अन्य जन्म में गुजरी हुई बातों का स्मरणकरा दिया है तथा आप मेरे प्रभाव से अब धर्म व्याध हो जायेंगे ।। ३९ ।। जो पुरुष इस पुण्डरीकाक्ष पराग स्तोत्र का श्रवण किया करता है उसको पुष्कर तीर्थ की यात्रा में विधि पूर्वक स्नान करने का फल हुआ करता है ।। ४० ।। इस प्रकार से कहकर फिर वह राजा श्रेष्ठ विमान में आस्थित हो गया था। हे शेष धारिणी ! वह परम तेज से योग को प्राप्त हो गया था ।। ४१ ।।

७—गदाधर स्तोत्र से मोक्ष प्राप्ति

रैभ्योऽसौ मुनिशार्दूल श्रुत्वा सिद्धं वसुं तद ।
स्वयं किमकरोद्देवं संशयो मे महानयम् ।।१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स रैभ्यो मुनिशार्दूल श्रुत्वासिद्धं वसुं तदा ।
आजगाम गयां पुण्यां पितृतीर्थे तपोधनः ॥२
तत्र गत्वा पितृभक्त्या पिण्डदानेन तर्पयन् ।
तताप सुमहत्तीव्रं तपः परमदुश्चरम् ॥३
चरतस्तस्य तत्तीव्रंतपो रैभस्य धीमतः ।
अजगाम महायोगी विमानस्थोऽतिदीप्तिमानं ॥४
त्रसरेणुसमे शुद्धे विमोन सूर्यसन्निभे ।
परमाणु प्रमाणेन पुरुषस्तत्र दीप्तिमान् ॥५
सोऽब्रवीत रैभ्य किं कार्यं तपश्चरसि सुव्रत ।
एवमुक्त्वा दिवो भूनेरन्तरास च वं पुमान् ॥६
तत्रापि रोदसीव्याप्तं निमानं सूर्यसन्निभम् ।
युगपद्विष्णुभवनं व्याप्नुवन्तं ददर्श सः ॥७
ततः स विस्मयाविष्टो रैभ्यः प्रणतिपूर्वकम् ।
पप्रच्छ तं महायोगिन् को भवान् प्रब्रवीतु मे ॥८

हे मुनि शार्दूल ! इस रैम्य ने उस समय में राज्य वसु को सिद्ध हुआ सुनकर इसने स्वयं क्या किया था—यह मुझे बड़ा संशय हो रहा है। उस रैम्य ने जब यह सुना था कि वसु तो अपने कार्य में सफल हो गया है तो वह हे तपोधन ! स्त्रयं पितृ तीर्थं पुण्य गया में आ गया था ॥ १ ॥ २ वहां पर जाकर पितृगण की भक्ति से पिण्ड दान के द्वारा पितरों का तृप्त करते हुए उस रैम्य ने महान् तीव्र और परम दुष्कर तपस्या का तपन किया था ॥ ३ ॥ उस परम श्रीमान् रैम्य के परम दुष्कर तप का समाचरण करते हुए के समीप में विमान स्थित और अत्यधिक दीप्ति से समावित महायोगी वहाँ पर समागत हुए थे। वह विमान त्रसरेणु के समान शुद्ध और सूर्य के तुल्य था। उस में परमाणु के प्रमाण से बहुत ही ह्रस्त्र और परम दीप्तिमान् पुरुष विराजमान था ॥ ४ ॥ ५ ॥ उस महायोगी ने कहा—हे रैम्य ! आप

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तो सुन्दर व्रतों वाले हैं। फिर क्या ऐसा कार्य है कि जिस के लिये आप ऐसी तपश्चर्या कर रहे हैं? इस प्रकार से रैम्य से कहकर वह पुपान् दिन लोक और भूमि के अन्तर में आ गया था ।। ६ ।। वहाँ पर भी वह विमान सूर्य के सदृश रोदसी में व्याप्त था। और उसने एक ही साथ भवन में व्याप्त होते हुए उसको देखा था ।। ७ ।।

अहं रुद्रावर जो ब्रह्मणो मानसः सुतः ।
नाम्ना सनतकुमारेति जनोलोके वसाम्यहम् ।।६
भवतः पार्श्वभायातः प्रणयेन तपोधन ।
धन्योऽसि सर्वदा वत्स ब्रह्मणः कुलवर्द्धनः ।।१०
नमोस्तु ते योगिवर प्रसीद दयां मह्यं कुरूषे विश्वरूप ।
किमत्र कृत्यं वद योगिर्सिह धन्योऽहमुक्तो हि कथं त्वयाद्य ।।११
धन्यस्त्वमेव द्विजवर्यमुख्य यद्वेदवादाभिरतः पितृंश्च ।
प्रीणासि मन्त्रव्रतजप्यहोमैर्गयां समासाद्य च सर्वपिण्डैः ।।१२
श्रणुष्य चान्यो नृपतिर्बभूवविशालनामास पुरं विशालम् ।
उवास धन्यो धृतिमान्सपुत्रः स्वय विशालाधिपतिः द्विजाग्र्यान्
।।१३
पप्रच्छ पुत्रार्थममित्रहा सते ब्राह्मणाः प्रोचुरदीन सत्वाः ।
राजन् पितृंस्तर्पय पुत्रहेतोर्गत्वा गयामन्नदानैरनेकैः ।।१४

इनके अनन्तर वह रैम्य बहुत अधिक विस्मय में आविष्ट हो गया था और उसने प्रणाम करने के साथ ही उस महायोगी से पूछा था—हे महायोगिन् ! आप कौन हैं—यह मुझे कृपा कर केवल बतलाइए। ८ ।। उसने उत्तर दिया था कि—मैं रुद्रावरज हूँ जो कि ब्रह्माजी का मानस पुत्र था। नाम से मैं सनत्कुमार हूँ और मैं जन लोक में निवास किया करता हूँ ।। ६ ।। हे तपोधन ! मैं आपके समीप में प्रेम के ही कारण से समणांत हूँ। हे वत्स ! आप परम धन्य हैं और सर्वदा ब्रह्माजी के कुल की वृद्धि करने वाले है ।। १० ।। रैम्य ने कहा—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे योगिवर ! आपकी सेवा में मेरा सादर प्रणाम समर्पित है हे विश्व रूप ! आप मुझ पर प्रसन्न हो जाइये और मुझ पर दया कीजिए । हे योगिसिंह ! आप अब मुझे यही बतलाइए कि मुझे यहाँ पर क्या करना चाहिए। आपने आज मुझे धन्य कैसे कहा है ।। ११ ।। उस योगिराज ने कहा था—हे द्विज वर्यों में मुख्य ! आप ही धन्य हैं क्योंकि आप वेद वाह में अभिरत हैं और अपने पितृगण को प्रीणित कर रहे हैं और मन्त्र—व्रत—जाप तथा होम के द्वारा गया में प्राप्त होकर सबको पिण्ड दान से तृप्त कर रहे हैं । आप अब श्रवण कीजिए—एक अन्य नृपति हुआ था । उसका विशाल नाम था और उसका विशाल पुर था । वह वृतिमान् था और उसने भी इस परम धन्य गया में निवास किया था । उस विशालाधिपति ने श्रेष्ठ द्विजों से पूछा था कि शत्रुओं का नाशक पुत्र होवे । तब अदीन सत्त्व वाले ब्राह्मणों ने उससे कहा था—हे राजन् ! आप गया में जाकर अनेक अन्न दानादि के द्वारा अपने पितृगण का तर्पण करिए । इससे पुत्र की प्राप्ति होगी ।। ११ ।।—।। १४ ।।

ध्रुवं सुतस्ते भविता नृपेश सुसम्प्रदाता सकलक्षितीशः ।।१५
इतीरते ब्राह्मणैः स प्रहृषो राजा विशालाधिपति प्रयत्नात् ।
आगत्य तेन प्रवरेण तीर्थे मघासु भक्त्याथ कृतं पितृणाम् ।।१६
पिण्ड प्रदानं विधिना प्रयत्नात् तावद्वियत्युत्तममूर्तिकांस्त्रीन् ।
पश्यन् स पुंसः सितपतिकृष्णानुवाच राजा किमिदं भवद्भिः ।।
उपेक्ष्यते शंसत सर्वमेव कौतूहलं मे मनसि प्रवृत्तम् ।।१७
अहं सितस्ते जनकोस्मि तात नाम्ना च वृत्तेन कुलेन कर्मणा ।
अयं च मे जनको रक्तवर्णो नृशंसकृद्ब्रह्महापापकारी ।।१८
अधीश्वरो नाम परः पिताऽस्य कृष्णो वृत्त्या कर्मणा चापि कृष्णः ।
एतेन कृष्णेन हताः पुरा वै जन्मन्यनेके सृषयः पुराणाः ।।१९
तौ मृतौ द्वावपि पुत्र रौद्रमवीचिसंज्ञं नरके प्रपन्नौ ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अधीश्वरो मे जनकः परोऽस्य कृष्णः पिता द्वावीपि दीर्घकालम् ।२०
अहं च शुद्धेन निजेन कर्मणा शक्रसनं प्रापितो दुर्लभं तत् ।
त्वया पुनर्मन्त्रविदा गयायां पिण्डप्रदानेन वलादिमौ च ।
संयोजितौ तीर्थपिण्ड प्रदान प्रभावतो यौ नरकश्रितावपि ।।२१

हे नृपेश ! निश्चित रूप से आपको पुत्र होगा जो समस्त नृपों को सुसम्प्रदान करने वाला होगा ।। १५ ।। ब्राह्मणों के द्वारा ऐसे कहे जाने पर वह बहुत ही प्रहृष्ठ होकर विशालाधिपति प्रयत्न पूर्वक गया में आगत हुआ और प्रवर ने गया में पितृगणों के लिये विधि के साथ पिण्ड प्रदान किया था और उसने आकाश में उत्तम मूर्त्ति वाले तीन पुरुषों को देखा था जो सित—पीत और कृष्ण वर्ण वाले थे । राजा ने उनसे कहा—आपके द्वारा यहाँ पर क्या अपेक्षित है—यह सब मुझे बतलाइए । मेरे हृदय में इसका बड़ा कौतूहल हो रहा है ।।१५।।१६।।१७।। उन में जो सित वर्ण का था उसने कहा—मैं हेतात ! तुम्हारा पिता हूँ । नाम से—कुल से वृत्त (चरित्र) से और कर्म से यह जो रक्त वर्ण के हैं । यह मेरे जनक हैं । यह क्रूर कर्म करने वाले और महान पाप कर्म करने वाले है ।। १८ ।। यह अधीश्वर नाम वाले इसके पर पिता हैं यह वृत्ति से कृष्ण और कर्म के द्वारा भी कृष्ण इन कृष्ण वर्ण वालों ने पहले जन्म में अनेक पुराने ऋषियों का हनन किया था ।। १६ ।। हे पुत्र ! ये दोनों मृत हो गये थे और ये दोनों परम रौद्र अवी चिनामक नरक में प्रयत्त हो गये हैं । अधीश्वर मेरे जनक हैं ! इनका पर पिता है जो कृष्ण वर्ण वाले हैं ये दोनों ही दीर्घ काल तक नरक में रहे हैं । और मैं अपने विशुद्ध कर्मो के द्वारा इन्द्र पद को प्राप्त हुआ हूँ जो परम दुर्लभ होता है । फिर मन्त्रों के ज्ञाता आपने गया में पिण्ड प्रदान के द्वारा बलपूर्वक इनको सम्मानित किया है । तीर्थ में पिण्ड प्रदान के द्वारा इसके ही प्रभाव से नरक में समाश्रित होते हुए भी थे ।।२०।।२१।।

पितृन् पितामहांस्तत्र तथैव प्रपितामहान् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रीयायामीति तत्तोयं त्वया दत्त मरिन्दम ।।२२
तेनास्मद्युगपद्योगो जातो वाक्येक सत्तम ।
तीर्थ प्रभावाद्गच्छामि पितृलोकं न संशयः ।।२३
अत्र पिण्डप्रदानेन एतौ तव पितामहौ ।
दुर्गतावपि संसिद्धौ पापकृद्विकृतिङ्गतौ ।।२४
तीर्थ प्रभाव एषोऽस्मिन् ब्रह्मघ्नस्यापि तत्सुतः ।
पितुः पिण्ड प्रदानेन कुर्यादुद्धरणं पुनः ।।२५
एतस्मात् कारणात्पुत्र अहमेतौ विगृह्य वै ।
आगतोऽस्मि भवन्तं वैद्रष्टुं यास्यामि साम्प्रतम् ।।२६
एतस्मात् कारणाद् रैभ्य भवान्धन्यो मयोच्यते ।
सकृद्गयाभिगमने सकृत् पिण्डप्रदायनम् ।।२७
दुर्लभं त्वं पुर्नानित्यमस्मिन्नेव व्यवस्थितः ।
किमनु प्रोच्यते रैभ्य तव पुण्यमिदं प्रभो ।।२८

पितृगण—पितामह और उसी भाँति प्रपितामहों को प्रीणित करता हूँ। हे अरिन्दन ! वह जल आपके द्वारा दिया गया था ।। २२ ।। हे सज्ञान ! उससे हम सबको एक ही साथ वाक्य से योग हो गया है। यह तीर्थ का ही प्रभाव है। इसके ही द्वारा से अब मैं पितृलोक में गमन कर रहा हूँ—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।। २३ ।। यहाँ पर पिण्डों के प्रदान से ये दोनों पितामह पापों के करने से निकृति को प्राप्त हुए भी और दुर्गति वाले की संसिद्ध हो गये हैं ।। २४ ।। हे सुत ! इसमें यह तीर्थ का ही प्रभाव है। यह तीर्थ ब्राह्मणों के वध करने वाले का भी पितृ—पिण्ड प्रदान के द्वारा पुनः उद्धार कर दिया करता है ।। २५ ।। इसी कारण से हे पुत्र ! मैं और ये दोनों विगृहीत होकर यहाँ आपको देखने के लिये मैं यहाँ पर आया हूँ अब मैं चला जाऊँगा ।। २६ ।। इसी कारण से हे रैभ्य ! आपको मेरे द्वारा धन्य कहा जाता है। एक बार गया में अभि गमन में और एक ही बार पिण्डों का प्रदान करना बहुत दुर्लभ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

होता है और आप तो नित्य ही इसी में पिण्ड प्रदान करने में व्यवस्थित हो रहे हैं। हे प्रभो ! हे रैभ्य ! आपके इस किये हुए पुण्य के विषय में क्या कहा जा सकता है। अर्थात् आपका तो बहुत ही महान् यह पुण्य कार्य है ॥ २७ ॥ २८ ॥

येन साक्षाद्गदापाणिः दृष्टो नारायणः स्वयम् ।
ततो गदाधरः साक्षादस्मिन् क्षेत्रे व्यवस्थितः
अतोऽति विख्याततमं तीर्थमेतद्द्विजोत्तम ॥२९
एवमुक्त्वा महायोगी तत्रैवान्तरधीयत ।
रैभ्योऽपि च गदापाणेर्हरेः स्तोत्रमथा करोत् ॥३०
गदाधरं विबुधजनैरभिष्टुतं धृतक्षमं क्षुधितजनार्त्तिनाशनम् ।
शिवं विशालासुर सैन्यमर्दनं पमाम्यहम् हृतसकलशुभं स्मृतो ।३१
पुराण पूर्वपुरुषं पुरुष्टुतं पुरातनं विमलमलं नृणां गतिम् ।
त्रिविक्रमं हृत धरणि बलोर्जितं गदाधरं रहसि नमामि केशवम् ॥३२
विशुद्धभावं विभवैरुपावृत्तं विगतमलं नृणां गतिम् ।
त्रिविक्रमं हृतधरणिं बलोर्जितं गदाधरं प्रथमतियः सुख वसेत् ॥३३
सुरासुरैरच्चित पादपंकजं केयूरहाराङ्गदमौलिधारिणम् ।
अब्धौ शयानं च रथाङ्गपाणिनं गदाधरं प्रणमतियः सुखं वसेत् ॥३४
सितंकृते त्रैतयुगेऽरुणं विभुं तथा तृतीये नीलसुवर्णमच्युतम् ।
कलौ युगेऽलि प्रतिभं महेश्वरं गदाधरं प्रणमतियः सुखं वसेत् ।३५

उसी कारण से गया पाणि भगवान् नारायण ने स्वयं आकर साक्षात् दर्शन दिया है। इससे गदाधर भगवान् साक्षात् स्वरूप से इस क्षेत्र में व्यवस्थित रहा करते हैं। इसी लिये हे द्विजोत्तम ! यह तीर्थ परमाधिक विख्यात है ॥२९॥ इतना कहकर वह महा योगी वहीं पर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्तर्धान हो गये थे। और रैम्य ने भी गदा हाथ में धारण करने वाले भगवान् हरि के स्तोत्र को किया था ॥२०॥ विबुध जनों के द्वारा स्तवन किये गये—क्षमा धारण करने वाले—क्षुधित जनों की पीड़ा के विनाश करने वाले—विशालपुर की सेना के मर्दन करने वाले—शिव-- स्मरण करने में ही सकल अशुयों के नाशक भगवान् गदाधर के लिये मैं नमस्कार करता हूँ।.३१॥ पुराण पूर्व पुरुष—पुरुष्टुत—पुरातन—विगत मल वाले--मानवों की गति—धरणी का हरण करने वाले—वर्लोजित—त्रिविक्रम—गदाधर भगवान् के शव के लिये एकान्त में मैं प्रणाम करता हूं ॥३२॥ विशुद्ध भाव से संयुत—विभवों से उपावृत—श्री से वृत्त—विगत मल वाले—नरों की गति—वर्लोजित—धरणी के हरण करने वाले त्रिविक्रम गदा धर को मैं प्रणाम करता हूँ जो सुख पूर्वक वास किया करते हैं ॥३३॥ सुरों और असुरों के द्वारा जिनके चरण कमलों को समर्चित किया गया है—केयूर, अङ्गद और मौलिमुकट के धारण करने बाले—क्षीर सागर में शयन करने वाले—रथाङ्गपाणि भगवान् गदाधर को मैं नमस्कार करता हूँ जो सुख पूर्वक यहां पर निवास किया करते हैं ॥३४॥ जो कृत युग में सित वर्ण से संयुत हैं—त्रेता में अरुण वर्ण वाले हैं—तथा विभु तीसरे द्वापर युग में नील वर्ण से समन्वित अच्युत हैं—कलियुग में अलि (भौंरा) के सदृश कृष्ण वर्ण वाले हैं—ऐसे महेश्वर भगवान् गदाधर को प्रणाम करता है वह सुख पूर्वक वास किया करते हैं ॥३५॥

वीजोद्भवो यः सृजते चतुर्मुखं तथैव नारायण रूपतो जगत्।
प्रपालयेद्रुद्रव पुस्तथान्त कृदृगदाधरो जयतु षडर्द्ध मूर्तिमान् ।३६
सत्त्वं रजश्चैव तमो गुणास्त्रय स्त्वेतेषु विश्वस्य समुद्भवः किल।
स चैक एव त्रिविधो गदाधरो दधातु धैर्यं मम धर्ममोक्षयोः ।३७
संसारतोयार्णव दुःखतन्तुभिर्वियोग नक्रक्रमणैः सुभीषणैः।
मज्जन्तमुच्चैः सुतरां महाप्लवो गदाधरो मामुदधौ तु योऽतरत्
॥३८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्वयं त्रिमूर्तिः खमिवात्मनात्मनि स्वशक्तिश्चाण्डमिदं ससर्ज्ज ह।
तस्मिन् जलोत्थासनमाय तैजसं ससर्ज्ज यस्तं प्रणतोऽस्मि भूधरम
॥३६

मत्स्यादिनामामि जगत्सृचाश्नुते सुरादि संरक्षणतो वृषाकपिः।
मखस्वरूपेण स सन्तो विभुर्गदाधरो मे विदधातु सद्गतिम् ॥४०

एवं स्तुतस्तदा विष्णुर्भक्त्या रैभ्येण धीमता।
प्रादुर्बभूव सहसा पीतवासा जनार्दनः ॥४१

शंखचक्रगदापाणिः गरुडस्थो वियद्गतः।
उवाच मेघगम्भीर घोरवाक्पुरुषोत्तमः। ४२

जो वीजोद्भव चतुर्मुख (ब्रह्मा) का सृजन किया करते हैं और उसी भाँति नारायण के स्वरूप से इस जगत् का सृजन किया करते हैं तथा प्रतिपालन किया करते हैं और रुद्र के शरीर धारी इस जगत् का अन्त किया करते हैं अर्थात् संहार करते हैं एसे षउर्ध मूर्त्तिमान भगवान् गदाधर की जय होवे ॥३६॥ सत्त्व—रजः और तमः—ये तीन गुण हैं। इन्हीं तीनों गुणों में इस सम्पूर्ण विश्व का समुद्भव हुआ करता है। और वह एक ही तीन प्रकारों वाला है। ऐसे भगवान् गदाधर मेरे धर्म और मोक्ष के लिये धैर्य को धारण करें ॥३७॥ इस संसार रूपी महा सागर से दुःखों के तन्तुओं के द्वारा सुभीषण विभोग वक्र क्रमणों से डूबते हुए के लिये परमोच्च सुतरां गदा धर प्रभु महा प्लव हैं अर्थात् तारने वाले हैं जिन्होंने मुझे इस उदधि में तार दिया था ॥३८॥ आत्मा से आत्मा में आकाश की ही भाँति स्वयं तीन मूर्त्तियों से युक्त हैं और अपनी शक्ति से ही इस परम प्रचण्ड का सृजन किया था। उसमें जल के आसन को प्राप्त किया था और जिसने जल और तेज का सृजन किया था उन भू धर प्रभु को मैं प्रणाम करता हूँ ॥३६॥ सुरादिक के संरक्षण से वृषा कपि जगत् में मत्स्य आदि नामों को प्राप्त किया करता है। वह मख केस्वरूप से निरन्तर विभु हैं वे गदाधर प्रभु मेरी सद्गति

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करें ॥४०॥ इस प्रकार से धीमान् रैम्य के द्वारा भक्ति की भावना से उस समय में भगवान् विष्णु का स्तवन किया गया था और पीत वस्त्र धारी भगवान् जनार्दन सहसा प्रादुर्भूत हो गये थे ॥४१॥ शंख—चक्र और गदा को धारण करने वाले—गरुड़ पर समारूढ़—आकाश में संस्थित पुरुषोत्तम प्रभु मेघ के समान गम्भीर बचन वाले धीर वाणी बोले थे ॥४२॥

तुष्टोऽस्मि रैभ्य भक्त्या ते स्तुत्या चापि द्विजोत्तम ।
तीर्थ स्नानेन च विभो ब्रूहि यत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥४३
गतिं मे देहि देवेश यत्र ते सनकादयः ।
वसेयं तत्र ये नाहं त्वात्प्रासादाज्जनार्दन ॥४४
एवमस्त्वति ते ब्रह्मनी नित्युक्त्वाऽन्तरधीयत ।
भगवानपि रैभ्यस्तु दिव्यज्ञान समन्वितः ॥४५
क्षणाद्वभूव देवेन परितुष्टेन चक्रिणा ।
जगाम यत्र ते सिद्धाः सनकाद्या महर्षयः ॥४६
एतच्च रैभ्यनिर्दिषं स्तोत्रं विष्णोर्गदाभृतः ।
यः पठेत्स गयां गत्वा पिण्डदानाद्विशिष्यते ॥४७

हे रैम्य ! मैं आपकी भक्ति-भावना से और स्तुति से हे द्विजोत्तम ! परम प्रसन्न हो गया हूँ । आपने जो तीर्थ में स्नान किया है—इससे भी मुझे प्रसन्नता हुई है । हे विभो ! अब अपना जो भी मनोवाञ्छित हो उसे बतलाइये ।४३। रैम्य ने कहा— हे देवेश्वर—मुझे गति दीजिए । हे जनार्दन ! जहाँ पर सनकादिक हैं वहीं पर मैं निवास करूं—यह आपके ही प्रसाद से होगा ॥४४॥ भगवान् भी ऐसा ही होगा—यह कह कर वहीं पर अन्तर्धान हो गये थे और रैम्य दिव्य ज्ञान से समन्वित हो गया था ॥४५॥ एक ही क्षण में परम प्रसन्न देव के द्वारा जो चक्रधारी हैं वह रैम्य ऐसा हो गया था और वहाँ पर चला गया था जहाँ पर सनकादि महर्षिगण विद्यमान रहा करते हैं ॥४६॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यह रैभ्य के द्वारा निर्दिष्ट स्तोत्र हैं जो भगवान् गदाधरी का है। जो इसका गया में जाकर पाठ किया करता है उसको इसका फल पिण्ड दान से भी विशेष होता है ।।४७।।

८—धर्म व्याध-चरित्र

योऽसौ वसोः शरीरे तु व्याधो भूत्वा नृपस्य ह।
स स्ववृत्त्या स्थितः कालं चतुर्वर्षसहस्रकम् ।।१
एकैकं स्वकुटुम्बार्थे हत्वा वनचरं मृगम्।
भृत्यातिथिहुताशानां प्रीणनं कुरूते सदा ।।२
मिथिलायां वाराऐहे सदा पर्वणि पर्वणि।
पितृणां कुरूते श्राद्धं स्वाचारेण विचक्षणः ।।३
अग्नि परिचरन्नित्यं वदन् सत्यं सुभाषितम्।
प्राणयात्रानुषक्तस्तु योऽसौ जीवन पातयेत् ।।४
एवं तु वसतस्तस्य धर्मबुद्धिर्म्महातपाः।
पुत्रस्त्वर्ज्जुनको नाम वभूव मुनिवद्वशी ।।५
तस्य कालेन महता चारित्रेण च धीमतः।
वभूववार्ज्जुन का नाम कन्या च वरवर्णिनी ।।६
तस्या यौवनकाले तु चिन्तयामास धर्मवित्।
कस्येयं दीयते कन्या को वा योग्यश्च वै पुमान् ।।७

जो यह व्याध होकर वसु राजा के शरीर में अपनी वृत्ति से स्थित हुआ था वह चार सहस्र वर्षों तक रहा था ।।१।। वह अपने कुटुम्ब के लिये एक-एक वन में चरण करने वाले मृग का हनन करके सदा ही भृत्य—अतिथि और दुताशन का प्रीणन किया करता था ।।२।। हे वरारोहे ! मिथिला में सदा ही पर्व-पर्व पर विचक्षण अपने आचार के द्वारा पितृगण का श्राद्ध किया करता था ।।३।। नित्य ही अग्नि की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परिचर्या करते हुए और सदा सत्य एवं सुभाषित बोलते हुए वह अपने प्राणों की यात्रा पे अनुषक्त होकर भी यह कभी भी किसी जीव का पातन नहीं किया करता था ॥४॥ इस रीति से निवास करते हुए उनके महान् तपस्वी धर्म बुद्धि--मुनि की ही भाँति वश में रहने वाला अर्जुन नाम वाला पुत्र हुआ था ॥५॥ उस धीमान् के यहाँ बहुत समय में और चरित्र से अर्जुन का नाम वाली वर वर्णिनी कन्या हुई थी अर्थात् कन्या ने जन्म ग्रहण किया था ॥६॥ वह धर्म के ज्ञान रखने वाले ने यौवन काल में चिन्ता की थी यह कन्या किसको दी जावे और इसके योग्य वर कौन पुरुष है ॥७॥

इति चिन्तयतस्तस्य मतङ्गस्य सुतं प्रति ।
धर्मव्याधस्य सुव्यक्तं प्रसन्नाख्यं प्रतिब्रूवन् ॥८
एवं संचिन्त्य मातङ्गः प्रसन्नं प्रति सोद्यतः ।
उवाच तस्य पितरं प्रसन्नायाज्जुर्नीं भवान् ।
गृहाण तपतां श्रेष्ठ स्वयन्दत्तां महात्मने ॥६
प्रसन्नोऽयं मम सुतः सर्वशास्त्र विशरदः ।
गृह्णाम्यज्जुर्कां कन्यां तत्सुतां व्याधसत्तम ॥१०
एव मुक्ते तद कन्यां धर्मव्याधो महातपाः ।
मतङ्गपुत्राय ददौ प्रसन्नाय च धीमते ॥११
धर्मव्याधस्तदा कन्यां दत्त्वा स्वगृहमीयिवान् ।
सापि श्वसुरयोर्भर्त्तुः शुश्रूषणपरा भवत् ॥१२
अथ कालेन महता सा कन्याऽज्जुर्नकाऽशुभाः ।
उक्ता श्वश्र्वा सुता पुत्री जीवहन्तुस्त्वमीहशो
न जानासि तपः कर्त्तुं भर्त्तुरराधनं तथा ॥१३
साऽपि स्वल्पापराधेन भर्त्सिता तनुमध्यमा ।
पितुर्वेश्मागता वाला रोदमाना मुल्मुहुः ॥१४

इस प्रकार से अपनी कन्या के लिये वर के विषय में चिन्ता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करते हुए उसने धर्म व्याध मतङ्ग के प्रसन्न नामक सुत के प्रति कहा था ॥८॥ इस प्रकार से भली भाँति चिन्तन करके वह मतङ्ग के पुत्र प्रसन्न के प्रति वह उद्यत हुआ था। और उसने उस प्रसन्न के पिता से प्रसन्न के लिये आप आर्जुनी कन्या को ग्रहण कीजिए—यह कहा था। हे तपस्वियों में श्रेष्ठ! महातमा के लिये स्वयं ही दी हुए कन्या को ग्रहण कीजिए ॥९॥ प्रसन्न के पिता ने कहा—यह मेरा पुत्र प्रसन्न सभी शास्त्रों का विशारद अर्थात् मनीषी है। हे व्याधों में परम श्रेष्ठ! उसकी पुत्री अर्जुन का कन्या को ग्रहण करता हूँ ॥१०॥ इस रीति से कहने पर महान् तपस्वी धर्म व्याध ने अपनी कन्या को परम बुद्धिमान् मतङ्ग के पुत्र प्रसन्न के लिये प्रदान कर दिया था ॥११॥ उस समय में धर्म व्याध अपनी कन्या का दान करके अपने घर में चला गया था। वह कन्या भी अपने श्वशुर और स्वामी की सेवा—शुशूषा में तत्पर हो गई थी ॥१२॥ इसके अनन्तर बहुत काल के व्यतीत होने पर उस अर्जुन की नाम वाली परम शभ कन्या से उसकी सास ने कहा था कि तू जीवों के मारने वाले की पुत्री ऐसी ही है कि तू तपश्र्चर्या करना जानतीं ही नहीं है तथा अपने भर्त्ता की आराधना करना भी नहीं जानती है ॥१३॥ और वह भी तनुमध्यमा थोड़े हों से अपराध पर खूब डारी फटकारी जाया करती थी। वह विचारी बारम्बार रुदन करती हुई अपने पिता के घर में आ गई थी ॥१४॥

पित्रा पृष्टा किमेतत्ते पुत्रि रोदनकारणम् ।
एवमुक्ता तदा सा तु कथयामास भामिनी ॥१५
श्वश्र्वाऽहमुक्ता तीव्रे थ कोपेन महता पितः ।
जीवहन्तुः सुतेत्युच्चं सकृद्व्याधजेति च ॥१६
एवच्छ्रुत्वा स धर्मात्मा धर्मव्याधो रुषान्वितः ।
मतङ्गस्य गृहं सोऽथ गत्वा जनपदं वृतम् ॥१७
तस्यागतस्य सम्बन्धी मतङ्गो जयतां वरः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आसनद्यार्ध्यपाद्येन पूजयित्वेदमब्रवीत् ॥१८
किमागमन कृत्यं ते किं करोभ्यागताक्रियाम् ॥१९
भोजनं किंचिदिच्छामि भोक्तुं चैतन्य वर्जितम् ।
कौतूहलेन येनाऽहमागतो भवतो गृहे ॥२०
गोधूमा ब्रीहयश्चैव संस्कृता मम वेश्मनि ।
भुज्यतां धर्मविद श्रेष्ठ यथाकामं तपोधन ॥२१

उसके पिता के द्वारा उससे पूछा गया था—हे पुत्रि ! तेरे रुदन करने का क्या कारण है ? जब पिता ने इस रीति से पूछा था तो उस भामिनी ने उस समय में सभी बातें कह दीं थीं ॥१५॥ हे पिताजी ! मेरी सास ने बड़े भारी तीव्र क्रोध पूर्वक मुझसे यह कहा था कि तू तो जीवों के हनन करने वाले व्याध की पुत्री है और बहुत बड़े व्याध से समुत्पन्न हुई है ॥१६॥ यह बात सुनकर वह धर्मात्मा धर्मव्याध बहुत ही क्रोधित हुआ था और इसके अनन्तर वह जन पदों के सहित उस मतङ्ग के घर में गया था ॥१७॥ जप वालों में श्रेष्ठ सम्बन्धी मतङ्ग ने आये हुए, उनकी आसन—अर्घ्य—पाद्य आदि के द्वारा पूजन करके अपनी सम्बन्धी धर्म व्याध से यह कहा था ॥१८॥ आपके यहाँ पर आगमन करने का क्या प्रयोजन है ? मैं आपका स्वागत किस प्रकार से करूँ ? ॥१९॥ उस धर्म व्याध ने कहा—मैं कुछ भोजन करना चाहता हूँ किन्तु वह भोजन चैतन्य से वर्जित होना चाहिए। मैं किसी कौतूहल से ही आज आपके घर में समागत हो गया हूँ ॥२०॥ उस सम्बन्धी मतङ्ग ने कहा—मेरे गृह में गेहूँ—जौ और ब्रीहि संस्कार की हुई हैं हे धर्म के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ ! आप तो तप के ही धन वाले हैं। आप अपनी इच्छा के अनुसार ही भोजन कीजिए ॥२१॥

पश्यामि कीदृशास्ते हि गोधूमा व्रहियो वाः ।
स्वरूपेण च सन्त्येते येन वो वेद्मि सत्तम ॥२२
एवमुक्ते मतङ्गेन सूर्यं गोधूमपूरितम् ।
अपरं तत्र ब्रीहीणां धर्मव्याधाय दर्शितम् ॥२३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दृष्ट्वा व्रीहीन् स गोधूमान धर्मव्याधो वरासनात् ।
उत्थाय गन्तुमारेभे मतङ्गेन निवारितः ।।२४
किमर्थं गन्तुमारब्धं त्वया वद महामते ।
अभुक्ते नैव संसिद्धं मद्गृहे चान्नमुत्तमम् ।
पाचयित्वा स्वयं चैव कस्मात्वं नाद्य भुंजति ।।२५
सहस्रशः कोटिशश्च जीवान् हंसि दिने दिने ।
अथेदृशस्य पापस्य कोऽन्नं भुंजति सत्पुमान् ।।२६
अचैतन्यं यदि गृहे विद्यतेऽन्न सुसंस्कृतम् ।
तदानीमस्मि संभोक्ता मत्वा तु स्वजनं तव ।।२७
अहमेकं कुटुम्बार्थे हन्म्यरण्ये पशुं दिने ।
तं चेत्पितृभ्यः सत्कृत्य दत्वा भुंजामि साऽनुगः ।:२८

धर्म व्याध ने कहा—मैं देखना चाहता हूँ कि आपके गेहूँ—व्रीहि और धान किस प्रकार के हैं । हे श्रेष्ठतम ! ये स्वरूप से तो ये हैं जिसको मैं जानता हूँ ।। २२ ।। इस प्रकार से कहने पर मतङ्ग ने गेहूँ से भरे हुए शूर्प को और दूसरा व्रीहियों से पूरित को धर्म व्याध के लिये दिखा दिया था ।। २३ ।। उस धर्म व्याध ने उन व्रीहियों को तथा गेहुँओं को देखकर वह वरासन से उठकर गमन करना आरम्भ कर दिया था अर्थात् वह चलने लगा था । मतङ्ग ने विचार किया था ।। २४ ।। हे महापते ! आप यह बतलाइये कि किसलिये आपने गमन करना आरम्भ किया है और आपने कुछ भी नहीं खाया है मेरे गृह मे तो अति उत्तर अन्न संन्निद्ध है मैंने स्वयं ही पाचन करके तैयार किया है फिर भी आप आज भोजन क्यों नहीं कर रहे हैं ।। २५ ।। धर्म व्याध ने कहा—आप तो आये दिन सहस्रों और करोड़ों जीवों की हिंसा किया करते हैं । ऐसे पापात्मा के अन्न को कौन सत्पुरुष खाया करता है अर्थात् कोई भी नहीं खाता है ।। २६ ।। यदि अचैतन्य सुन्दर रीति से संस्कार किया हुआ अन्न ग्रह में है तब तो मैं भी आपको आपके अपना ही जन मान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कर खालूंगा ।। २७ ।। मैं अपने कुटुम्ब के लिये दिन में जंगल में पशु का हनन किया करता हूं। उसको भी यदि पितृगण का सत्कार करके और देकह मैं अनुजों के सहित भोजन किया करता हूँ ।। २८ ।।

त्वं तु जीवान्बहून् हत्वा स्वकुटम्बेन सानुगः ।
भुञ्जसे तेन सततमभोज्यं तन्मतं मम ।।२६
ब्रह्मणा तु पुरा सृष्टा औषध्यः सर्ववीरुधः ।
यज्ञार्थं तत्तु भूतानां भक्ष्यमित्येव वै श्रुतिः ।।३०
दिव्यो भौमस्तथा पैत्रो मानुषो ब्राह्म एव च ।
एते पंच महायज्ञा ब्रह्मणा निर्मिताः पुरा ।।३१
ब्राह्मणानां हितार्थाय इतरेषां च तन्मखाः ।
इतरेषां तु वर्णानां ब्राह्मणैः कारितः शुभाः ।।३२
एवं कृत्वा नरो भुक्त्वा तस्माद्वान्नं वि शुध्यति ।
अन्यथा व्रीहयोऽप्येते एकैकं मृगपक्षिणः ।
मन्तव्या दातृभोक्तॄणां महामासं तु तत्स्मृतम् ।।३३
मया ते दुहिता दत्ता पुत्रार्थे वरवर्णिनी ।
सा च त्वद् भार्यया प्रोक्ता दुहिता जन्तुघातिनः ।
अतोऽर्थमागतोऽहं ते गृहं प्रति समीक्षितुम् ।।३४
आचारं देवपूजां च अतिथीनां च तर्पणम् ।
एतेषामेकमप्यत्र कुर्वन्नपि न दृश्यसे ।।३५

और आप तो बहुत से जीवों का हनन करके अपने कुटुम्ब के सहित अनुजों के साथ भोजन किया करते हैं इसी कारण से वह मत में निरन्त भोजन करनेके योग्य नहीं है ।।२६।। ब्रह्माजी ने पहिले ओषधियों और सब वीरुधो का सृजन किया था। इनकी सृष्टि यज्ञों के लिये की थी और वह ही भूतों का भक्ष्य होता है यह ही मेरी श्रुति है ।।३०।। ब्रह्माजी ने पहिले ही पाँच प्रकार के महायज्ञों की रचना की थी। वे दिव्य-भौम-पैत्र-मानुष और ब्राह्म ये होते हैं ।३१। ब्राह्मणों के और अन्यों के हित के ही

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लिये वे मख हैं। इतरवर्णों का शुभ तो ब्राह्मणों के ही द्वारा कराया गया है ।। ३२ ।। इस प्रकार से करके मनुष्य भोजन करे। अथवा उसी से अन्न विशुद्ध होता हैं। अन्यथा ये व्रीह भी एक पशु और पक्षी हैं। ऐसा ही दाता और भोक्ताओं को मानना चाहिए। यह तो महा मांस कहा गया है ।।३३।। मैंने आपके पुत्र के लिये वर वर्णिनी पुत्री दी है और उससे आपकी भार्या ने काह है कि वह एक जीव घाती का बेटी है। इसीलिये मैं आपके घर । समीक्षा करने के ही लिये आयी हूँ ।।३४।। आपका आचार--देव पूजा और अतिथियों कर तर्पण--इनमें से एक भी यहाँ पर करते हुए भी नहीं दिखलाई देते हो ।।३५।।

तदहं गन्ततुमिच्छामि पितृणां श्राद्धकाम्यया।
स्वगृहे नैव भुञ्जामि पितृणां कार्यमित्युत ।।३६
अहं व्याधो जीवघाती न तु त्व लोकहिंसकः।
मत्सुता जीवघातस्य यदोढा त्वत्सुतेन च ।।३७
तन्महत्वं न सम्प्राप्तं प्रायश्चित्त तपोधन।
एवमुक्त्वा स चोत्थाय शप्त्वा नारीं तदाम्बरे ।।३८
मा स्नुषाभि समं श्वश्र्वा विश्वासो भवतु क्वचित्।
मा च स्नुषा कदाचित् स्याद्वा श्वाश्रूं जीवतीमिषेत् ।।३९
एवमुक्त्वा गतो व्याधः स्वगृहं प्रति भामिनि।
ततो देवान्पितृन् भक्त्या पूजयित्वा विचक्षणः ।।४०
पुत्रं चाजर्जुनक स्थाप्य स्वसन्तानं महातपाः।
धर्मव्याधो जगामाशु तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।।४१
पुरुषोत्तमाख्यं च परं तत्र गत्वा समाहितः।
तपश्चचार नियमान्पाठन् स्तोत्रमिदं धरे ।।४२

अत एव मैं अब जाना चाहता हूँ और पितृगणों के श्राद्ध करने की कामना से ही जा रहा हूँ। जब तक पितृगणों का कार्य सम्पन्न नहीं होता है मैं अपने गृह में भी नहीं भोजन करता हूँ।। ३६ ।। मैं तो व्याध

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हूँ और जीवों का घात करने वाला हूं । और आप तो लोक हिंसक नहीं हैं । जीवों के घात करने वाले मेरी सुता को जिस समय में आपके पुत्र ने विवाह किया था हे तपोधन ! यह महत्त्व प्राप्त नहीं किया और प्रायश्चित्त भी नहीं किया है । इस प्रकार से कहकर वह उठ खड़ा हुआ था और उस समय में अम्बर में नारी का शपन किया था ।। ३८ ।। स्नुषाओं के साथ श्वश्रू का कभी विश्वास कहीं पर भी नहीं होवे । और स्नुषा कभी भी अपनी श्वश्रु को जीवित नहीं चाहे ।। ३९ ।। हे भामिनि ! इस रीति से कहकर वह व्याध अपने घर की ओर चला गया था और फिर उस विचक्षण ने भक्ति पूर्वक देवों का और पितृगणों का पूजन किया था । फिर वह महान् तपस्वी अपनी सन्तति पुत्र अर्जुनक को गृह में स्थापित करके धर्म व्याध शीघ्र ही त्रैलोक्य में प्रसिद्ध तीर्थ को चला गया था ।। ४० ।। ४१ ।। हे धरे ! वहाँ पर परम समाहित होकर परम पुरुषोत्तम नामक प्रभु का नियमों को तथा स्तोत्र का पाठ करते हुए तपश्चर्या का समाकरण किया था ।। ४२ ।।

नमामि विष्णुं त्रिदशारिनाशनं विशाल वक्षःस्थल संश्रित श्रियम् ।
सुशासनं नीतिमतां परांगतिं त्रिविक्रमं मन्दरधारिणं सदा ।।४३
दामोदरं निर्जित भूतलं धिया यशोन्शुशुभ्रं भ्रमराङ्गसप्रभम् ।
भवे भवं दैत्यरिपु पुरुष्टुतं नमामि विष्णुं शरणं जनार्दनम् ।।४४
त्रिधा स्थितं तिग्मरथाङ्गपाणिनं नयस्थितं युक्तमनुत्तमैर्गुणैः ।
निश्रेयसाख्यं क्षयितेतरं गुरुं नमामि विष्णुं पुरुषोत्तमं त्वहम् ।।४५
महावराहो हविषां भुजो जनो जनार्दनो मे हितकृच्चतुर्मुखः ।
महीधरो मामुदधिल्पवे महान्सपातु विष्णुः शराणार्थिनं तु माम् ।४६
मायातत येन जगत्त्रयं कृतं यथाग्निनैकेन ततं चराचरम् ।
चराचरस्य स्वयमेव सर्वतः समेऽस्तु विष्णुः शरणं जगत्पतिः ।।४७
भवे भवे यश्च ससर्ज कं ततो जगत्प्रसूतं सचराचरं त्विदम् ।
ततश्च रुद्रात्मवति प्रलीयते ततो हरिर्विष्णुहरस्तथोच्यते ।।४८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

रवीन्दु पृथ्वी पवनादि भास्करा जलं चयस्य प्रभवन्ति मूर्त्तयः ।
स सर्वदा मे भगवान सनातनो ददातुशं विष्णुरचिन्त्यरूप धृक् ।।४६

अब उस स्तोत्र को बताया जाता है—मैं देवगणों के शत्रुओं के विनाश करने वाले—विशाल वक्षः स्थल में श्री को संश्रय देने वाले—नीति धारण करने वालों के लिये सुशासन सम्पन्न—परागति स्वरूप—मन्दर के धारण करने वाले भगवान् त्रिविक्रम को मैं सदा प्रणाम करता हूँ ।। ४३ ।। इस भूतल को धीसे जीतने वाले—दामोदर—यज्ञ से शुभ्र—भ्रमर के समान प्रभा युक्त अङ्गों वाले—ससार में अवतार धारण करने वाले—देवगणों द्वारा स्तुति किये गये रक्षक—जनार्दन विष्णु की सेवा में मैं प्रणाम करता हूँ ।। ४४ ।। तीन स्वरूपों में विद्यमान—परमतीक्ष्ण चक्र के धारण करने वाले—नभ में स्थित—अत्युत्तम गुणों से संयुत—निः श्रेयस नामक—क्षपित से इन अर्थात् अविनाशी—गुरु—पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु को मैं नमस्कार करता हूँ ।। ४५ ।। महान् वराह—हवियों का सेवन करने वाले—जनार्दन—मेरे हित का सम्पादन करने वाले—सागर के प्लव में महीधर—महान चतुर्मुख महान् विष्णु—शरण में समागत मेरी रक्षा करें ।।४६।। जिसने अपनी ही माया से इन तीनों लोकों का बिस्तार किया है जिस प्रकार से एक ही अग्नि ने चराचर के अन्दर विस्तार किया है उसी भाँति इस चराचर में सब ओर जो विद्यमान हैं वे ही इस जगत् के स्वामी भगवान् विष्णु मेरे रक्षक होवें ।। ४७ ।। भव—भव में जिसने ब्रह्मा का सृजन किया था और उनसे यह चराचर सम्पूर्ण जगत् प्रसूत हुआ है और उनसे रुद्रदेव हुए जिनसे यह जगत् प्रलीन होता है। तभी से हरि विष्णु और हर—इन शुभ नामों के द्वारा कहे जाया करते हैं ।। ४८ ।। सूर्य—चन्द्र—भूमि—पवन भास्कर और जल ये मूर्त्तियाँ जिसकी समुद्भूत होती हैं वही भगवान् सनातन—अचिन्तनीय स्वरूप के धारण करने वाले विष्णु सर्वदा मेरा कल्याण प्रदान करें ।। ४६ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इतीरिते तस्य सनातनः स्वयं पुरोवभूवाद्भुत रूप दर्शनः ।
वरं वृणोष्वेति सनातनोऽब्रवीदनन्त पादोदर बाहु वक्रः ॥५०
इतीरितो व्याधवरो जगद प्रदीय तामेष वरः सुतेष्वपि ।
क्रियाकलापेन तथात्मविद्यया कुलप्रसूतावपि तेऽनुगामिनः ॥५१
ज्ञानोदयस्त्वस्य कुलस्य सर्वदा लयस्तथा ब्रह्मणि मे सनातन ॥५२
इतीरिते तं भगवानुवाच ह प्रसन्नबुद्धिर्भवते मया त्वयम् ।
वरो विसृष्टश्च कुलस्य ते मय लयस्तथा ब्रह्मणि शाश्वते तव ॥५३
इतीरिते देववरेण स क्षणात् स्वदेहतस्तेज उदीर्णमैक्षत ॥५४
विसर्जयामास कविं सनातनं लयं च तत्र प्रतिपेदिवानसौ ।
इतीरितं स्तोत्रवरं धरे नरः पठिष्यते यश्च शृणोति मानवः ॥५५
हरिं समभ्यर्च्य सदा ह्युपोषितो विशेषतो विष्णुदिन च मानवः ।
स याति यत्र स्वयमेव केशवो वसेत मन्वन्तरसप्तति सुखम् ॥५६

उस व्याध के द्वारा ऐसा कहने पर अद्भुत स्वरूप के दर्शन वाले सनातन प्रभु स्वयं उसके समक्ष में प्रादुर्भूत हुए थे। उन अनन्त बाहु, पाद और उदर वाले सनातन प्रभु ने उस व्याध से कहा—वर का वरण करलो ॥ ५० ॥ जब उस धर्म व्याध से भगवान् ने प्रत्यक्ष होकर यह कहा था तो उस समय में श्रेष्ठ व्याध ने यही प्रार्थना की थी—हे भगवन् ! आप मुझे यहीं वरदान दीजिए कि मेरे सुतों में भी क्रिया कलाप के द्वारा तथा आत्म विद्या से कुल की प्रसूति में भी सब आपके ही चरणार विन्दों के अनुगामी रहें ॥५१॥ सर्वदा इस कुल में ज्ञान का उदय होवे और आप ब्रह्म में ही हे सनातन ! सबका अन्त में लय हो जावे ॥५२॥ जब व्याध ने इस प्रकार से भगवान् की प्रार्थना की थी तब उसके यह कहने पर-भगवान् ने कहा-प्रसन्न बुद्धि वाले मैंने आपके लिये यह वर दान दे दिया है और आपके कुल का लय भी शाश्वत मुझ ब्रह्म में ही होगा ॥ ५३ ॥ देववर भगवान् के इस प्रकार से कहने पर उन भगवान् ने अपने देह से क्षण भर में ही तेज को

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उदीरित करके देखा था ॥ ५४ ॥ भगवान् ने उस तेज का विसर्जन किया था और उस व्याध ने सनातन लय को उनमें प्रतिपादित कर लिया था। हे धरे इस श्रेष्ठ स्तोत्र को जो मानव पढ़ेगा या इसका श्रवण किया करता है और भगवान् हरि का समभ्यर्चनं करके सदा उष वास किया करता है और विशेष रूप से विष्णु दिन में करता है वह वहाँ पर ही गमन किया करता है जहाँ पर भगवान् केशव स्वयं निवास किया करते हैं और वह क्षत्तर मन्वन्तर पर्यन्त नहीं पर रहा करता हैं ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

६—मत्स्यावतार वर्णन

आदौ कृतयुगे नाथ किं कृतं विश्वमूर्तिना ।
नारायणेन तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥१
पूर्वं नारायणस्त्वेको नासीत् किंचिद्धरे परम् ।
सैकएव रतिं लेभे नैव स्वच्छन्द कर्म कृत् ॥२
तस्य द्वितीयमिच्छातश्चिन्ता बुद्धयात्मिका बभौ ।
अभावेत्येव संज्ञा या क्षणं भास्कर सन्निभा ॥३
तस्यापि द्विविधा भूता चिन्ताभूद ब्रह्मवादिनः ।
उमेति संज्ञया यत्तत्सदा मर्त्ये व्यवस्थिता ॥४
ओमित्येकाक्षरीभूता चसर्जेमां महींन्तदा ।
भूः ससर्ज भुवं सोऽपि ससर्ज च ततो महः ॥५
ततश्च जन इत्येव ततश्चात्मा प्रलीयते ।
एतदोतं तथा प्रोतं सूत्रे मणिगणाइव ॥६
जगत प्रणवतो भूतं शून्यमेतत्स्थिते तदा ।
येयं मूर्तिर्भगवतः शङ्करः स स्वयं हरिः ॥७

हे नाथ ! आदि काल में कृत युग में विश्व मूर्त्ति भगवान् ने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

क्या किया था ? नारायण प्रभु ने जो भी कुछ किया था उस सबका मैं श्रवण करना तात्त्विक रूप से चाहती हूं ॥ १ ॥ हे धरे ! पूर्व काल में एक ही भगवान् नारायण थे और उनके अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। वह एक ही रति का लाभ किया करते थे और स्वच्छन्द कर्म करने वाले थे ॥ २ ॥ उनकीं द्वितीय होने की बुद्धि स्वरूपिणी इच्छा हुई थी वह अभावा—इसी संज्ञा वाली हुई थी जो सूर्य के सदृश हुई थीं ॥ ३ ॥ उन ब्रह्म वादी की दो प्रकार की चिन्ता उत्पन्न हुई थी जो उमा—इस संज्ञा वाली थी और उस समय में मति के लिये व्यवस्थित हुई थी ॥४॥ उस समय में ओम्—इस एक अक्षर के स्वरूप वाली महीं का सृजन किया था। भू का सृजन करके फिर भुव का सृजन किया था और इसके अनन्तर यह का सृजन किया था ॥५॥ इसके अनन्तरजन—इसको सृष्टि की थी और इसके उपरान्त आत्मा हो प्रलीन जाता है। यह सब धागे के सूत में मणियों के समुदाय की ही भांतिओत्व—प्रोत है ॥ ६ ॥ यह जगत् प्रणव से हुआ है। उस समय में यह शून्य ही स्थिर था। जो यह भागान् की मूर्ति है वह भगवान् शङ्कर और स्वयं हरि हैं ॥ ७ ॥

शून्याँल्लोकानिमान्सृष्ट्वा सिसृक्षुः मूर्तिमुत्तमाम् ।
क्षोभोयित्वा मनोधाम तत्राकारः स्वमात्रतः ।
स्थितस्तस्मिन् यदा क्षुब्धे ब्रह्माण्डमभवत्तदा ॥८
तस्मिन्स्तु शकलीभूते भूर्लोकं व्यवस्थितम् ।
अपरं भुवनं प्रायान्मध्ये भास्करसन्निभम् ॥९
पुरा नवृकसंस्थो यः पद्मकोशो व्यवस्थितः ।
स हि नारायणो देवः प्राजापत्येन तेजसा ॥१०
अकाराद्यं स्वरं ताभ्यां हलं च विससर्ज ह ।
अभूर्तसृष्टौ शास्त्राणि उदगायत्तदा हि सः ॥११
सृष्ट्वा पुनरमेयात्मा चिन्तयामास धारणम् ।
तस्य चिन्तयतो नेत्रात्तेजः समभवन्महत् ॥१२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दक्षिणं वह्निसंकाशं वामं तुहिनसन्निभम् ।
तदृष्ट्वा चन्द्र सूर्यौ तु कल्पितौ परमेष्ठिना । १३
ततः प्राणः समुत्तस्थौ वायुश्च परमेष्ठिनः ।
स एव वायुर्भगवान्योऽद्यापि हृदि नो विभुः ।।१४

उत्तम मूर्त्ति की सृष्टि करने के इच्छा वाले ने इन लोकों को शून्यों का सृजन करके मनो धाम को क्षुभित करके वहाँ पर स्वमात्र से आकार स्थित था। उस समय में उसके क्षुब्ध हो जाने पर ब्रह्माण्ड समुत्पन्न हुआ था ।। ८ ।। उस ब्रह्माण्ड के खण्ड स्वरूप में हो जाने पर भूलोक व्यवस्थित हुआ था । दसरा भुवन प्रयात हुआ जो मध्य में भुवन भास्कर के तुल्य था ।। ६ ।। पहिले नृवृरू संस्थित जो पद्म कोश था वह व्यवस्थित हुआ । वही नारायण देव थे जो तेज के द्वारा प्रजापत्य के स्वरूप वाले थे ।।१०।। अकार आदि स्वर और उन दोनों से हल का विशेष रूप सृजन किया था । अमूर्त्त सृष्टि में उन्होंने उस अवसर में शास्त्रों का उद्गान किया था ।। ११ ।। इसका सृजन करके फिर अप्रमेय स्वरूप वाले ने धारण का चिन्तन किया था । चिन्तन करते हुए उनके नेत्र से एक महान् तेज समुद्भूत हुआ था ।। १२ ।। दाहिना तो वह्नि के सदृश था और वाया तुहिन के समान था । उनको देखकर परमेष्ठी प्रभु ने उनको सूर्य और चन्द्र कल्पित किया था ।। १३ ।। इसके अनन्तर परमेष्ठी का प्राण वायु समुत्थित हुआ था । वह ही भगवान् वायु आज तक भी विभ्र हमारे हृदय में स्थित है ।। १४ ।।

तस्माद्वह्निः समुत्तस्थौ तस्मादग्नेर्जलं महत् ।
य एवाग्निः स वै तेजा ब्राह्मं परम कारणम् ।।१५
बाहुभ्यामप्यसौ तेजः क्षात्रं तेज ससर्ज ह ।
अरुभ्यामपि वैश्यांश्च पद्भ्यां शूद्रांस्तथा विभुः ।।१६
ततस्तु ससृजे यक्षान् राक्षसांश्च तथा विभुः ।
चतुर्विधैस्तु भूर्लोकं भुवो लोकं वियच्चरैः ।।१७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भूतैः स्वमार्गगैरन्यैः स्वर्लोकं समपूरयत् ।
महर्लोकं तथा तैस्तैर्भूतैश्च सनकादिभिः ॥१८
जनलोकं ततश्चैव वैराजैः समपूरयत् ।
तपोलोकं ततो देवैस्तपोनिष्ठैरपूरयत् ॥१९
अपुनर्मारकैः देवैः सत्यलोकमपूरयत् ।
सृष्टिं सृष्ट्वा तथा देवो भगवान्भूतभावनः ॥
कल्पसंज्ञां तदामोघां जगन्ति परमेश्वरः ॥२०
तस्मिन् जगति भूर्लोको भुवोलोकश्च जायते ।
स्वर्लोकश्च त्रयोऽप्येते जायन्ते नात्र संशयः ॥२१

उससे वह्नि समुत्थित हुआ और उस अग्नि से महान् जल उत्पन्न हुआ था। वह ही अग्नि और वही तेज है जो परम कारण ब्राह्म है ॥१५॥ इस तेज ने वाहुओं से क्षात्र तेज का सृजन किया था। विभु ने अपने ऊरुओं से वैश्यों को और पादों से शूद्रों की सृष्टि की थी। ॥१६॥ इसके अनन्तर विभु ने यक्षों को और राक्षसों को समुत्पन्न किया था। चार प्रकार के विपन् (आकाश) में चरण करने वाले प्राणियों से भूर्लोक और भुवोलोक को यथा स्वमार्ग से गमन करने वाले अन्यों से स्वर्ग को सम्पूरित कर दिया था। उसी भाँति उन सनक आदि भूतों के द्वारा महर्लोक को पूरित कर दिया था ॥ १७—१८ ॥ इसके अनन्तर वैराज्ञों के द्वारा भर दिया था। इसके पश्चात् तपोलोक को तपश्चर्या में निष्ठा रखने वाले देवों के द्वारा पूरित किया था और अपुनमरक देवों से सत्यलोक को पूरित कर दिया था। भूतों पर दया करने वाले भगवान् देव ने इस प्रकार से सृष्टि का सृजन करके उस समय में अमोघ कल्प संज्ञा को किया था और परमेश्वर ने जगतों की रचना की थी ॥ १९—२० ॥ उस जगत् में भूर्लोक और भुवोलोक होता है। और स्वलोक भी होता है ये तीनों लोक समुद्भूत हो जाते हैं—इसमें लेश मात्र भी संशय का अवसर नहीं है ॥२१॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुप्ते तु देवे कल्पान्ते तावती रात्रिरिष्यते ।
त्रैलोक्यमेतत् सुप्तं स्यत्तथोपल्पवताङ्गतम् ॥२२
ततो रात्र्यां व्यतीतायासमुत्थिः कमलेक्षणः ।
चिन्तयामास तान्वेदान्मातंर च चतुर्ष्वपि ॥२३
चिंतयानः स देवेशस्तान् वेदान्नाध्यगच्छत् ।
लोकमार्ग स्थिति कर्तुं निद्राज्ञानेन मोहितः ।
चिन्तयामास देवेशो नात्र देवो व्यवस्थितः ॥२४
ततः स्वमूर्तौ तोयाख्ये लीनान् दृष्ट्वा महेश्वरः ।
जिघृक्षुश्चिन्तयामास मत्स्यो भूत्वाऽऽविशञ्जलम् ॥२५
एवं ध्यात्वा महामत्स्यस्तक्षणात् समजायत ।
विवेश च जलं देवः समन्तात् क्षोभयन्निव ॥२६
तस्मिन् प्रविष्टे सहसा जलतु महमहीधृग्वपुषि प्रकाशम् ।
मात्स्यं गते देववरे महोदधिं हरिं स्तवैस्तुष्टुवुरुद्धृत क्षितिम् ॥२७
नमोऽस्तु वेदान्तरगाप्रतर्क्यो नमोऽस्तु नारायण मत्स्यरूप ।
नमोऽस्तु ते सुरेश्वर विश्वमूर्ते नमोऽस्तु विद्याद्वय रूपधारिन् ॥२८

कल्प के अन्त में देवेश्वर के सुप्त हो जाने पर उतनी रात्रि मानी जाया करती है। यह त्रैलोक्य उपप्लवता को प्राप्त हुआ सुप्त हो जाया करता है ॥ २२ ॥ इसके अनन्तर रात्रि के व्यतीत हो जाने पर कमल के समान नेत्रों वाले प्रभु समुत्थित होते हैं। तब वे उन चार वेदों का और उन चारों में वेद माता का चिन्तन किया करते हैं।२३। चिन्तन करते हुए भी वह देवेश्वर ने उन वेदों का ज्ञान नहीं प्राप्त किया था। क्योंकि निद्रा के ज्ञान से मोहित होते हुए वे लोक मार्ग की स्थिति करने के लिये असमर्थ ही रहे थे। इस विषय में देवेश्वर ने चिंतन किया था इसमें वह देवेश्वर व्यवस्थित नहीं हुए थे ॥ २४ ॥ इसके उपरान्त जल नामक अपनी मूर्ति में उनको लीन हुए देखकर महेश्वर जानने की इच्छा वाले होकर चिन्तन करने लगे थे। तथा स्वयं मत्स्य स्वरूप धारण करके जल के अन्दर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रवेश कर गये थे ।। २५ ।। ज्योंही उस प्रकार से ध्यान किया था वैसे ही वे मत्स्य बन गये थे और उसी क्षण में मत्स्य देहधारी होकर समुद्भूत हो गये थे। देवेश्वर ने जल में अन्दर प्रवेश किया था और चारों ओर मे क्षोभ सा कर दिया था ।। २६ ।। उनके सहसा जल के अन्दर प्रवेश करने पर प्रकाश में महीधृक् के वपु में देव के मत्स्य स्वरूप में प्राप्त होने पर और महोदधि मे गत हो जाने पर क्षिति के उद्धृत करने वाले श्री हरि की सबने स्तवों के द्वारा स्तुति की थी ।। २७ ।। हे वेदान्तों के द्वारा भी अप्रतर्क्य ! आपके लिये नमस्कार है। हे मत्स्य स्वरूप धारी नारायण ! आपकी सेवा में मेरा प्रणाम है। हे सुरों के स्वामिन् ! हे विश्वमूर्ति ! आपको मेरा नमस्कार है। हे दो विद्याओं के स्वरूप को धारण करने वाले ! आपको मेरा प्रणाम है ।। २८ ।।

नमोऽस्तु चन्द्रार्क अनेकरूप जलान्त विश्वस्थित चारुनेत्र ।
नमोऽस्तु विष्णो शरणं व्रजामः प्रपाहि नो मत्स्यतनुं विहाय ।।२९
त्वया ततं विश्वमनन्तमूर्ते पृथङ्न ते किंचिदिहास्ति देव ।
भवान्नचास्य व्यतिरिक्तमूर्तिः त्वत्तो वयं ते शरणं प्रपन्नाः ।३०
खात्मेन्दुवह्निश्च मनश्च रूपं पुराणमूर्तेस्तव चाब्जनेत्र ।
क्षमस्व शंभोयदि भक्तिहीनं त्वाजद्भासति देवदेव ।।३१
विरुद्धमेतत्तव देवरूपं सुभाषणं सुस्वनमद्रितुल्यम् ।
पुराण देवेश जगन्निवास शमं प्रयाह्यच्युत तीव्र भानो ।।३२
नमाम सर्वे शरणं प्रपन्ना भयाच्च ते रूपमिहं च दृष्ट्वा ।
लोके समस्तं भवता विनाऽद्य न विद्यते देहगतं पुराणम् ।।३३
एवं स्तुतस्तदा देवो जलस्थाञ्जगृहे च सः ।
वेदान्सोपनिषाच्छस्त्राण्यतः स्वं रूपमास्थितः ।।३४
यावत्स्वमूर्तिः भगवान्तावदेव जगत्विदम् ।
कूटस्थे तल्लयं याति विकृतस्थे विवर्द्धते ।।३५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे चन्द्र और सूर्य के अनेक रूप धारिन् ! आपको नमस्कार है। हे जल के अन्दर विश्व स्थित चारु नेत्रों वाले ! आपके लिए नमस्कार है। हे विष्णो ! आपकी सेवा में मेरा प्रणाम है। अपने अपने मत्स्य के शरीर को त्याग कर आप उपारित हुए हैं हम आपकी शरणागति में जाते हैं ।। २६ ।। हे अनन्त मूर्त्ति वाले ! आपने ही इस विश्व को विस्तृत किया है। हे देव ! आपसे पृथक् यहाँ पर कुछ भी नहीं है। यहाँ पर आप ही हैं और आपसे जतिरिक्त मूर्त्ति कुछ भी नहीं है। हम सब आपके शरण में प्रसन्न हैं ।। ३० ।। हे अब्ज नेत्र ! आकाश— आत्मा—इन्दु—वह्नि - मन और रूप पुराण मूर्त्ति आपके ही हैं अर्थात् इन सबमें आपका ही स्वरूप विद्यमान रहता है। हे देवों के भी देव ! हे शम्भो ! यह सब आपके द्वारा भासमात्र हैं। यदि मैं भक्ति से हीन हूँ तो आप मुझे क्षमा कीजिये ।। ३१ ।। हे देव ! यह आपका रूप विरुद्ध है। यह सुभाषण—सुस्वन और अद्रि के तुल्य है। हे पुराण ! हे देवेश्वर ! हे जगन्निवास। हे अच्युत ! हे तीव्र भानो ! अब आप शमन को प्राप्त हो जाइए ।। ३२ ।। आपके इस रूप का दर्शन करके भय से हम सब आपके शरणागति में प्रपन्न होते हैं और नमस्कार करते हैं। इस समय लोक में आपके बिना समस्त देहगत पुराण विद्यमान नहीं है ।। ३३ ।। उस समय में इस प्रकार से स्तवन किये गये उनने जल में स्थित उनका ग्रहण कर लिया था। सभी वेदों को—शास्त्रों को—उपनिषदों को ग्रहण कर लिया था जो जल के अन्दर स्थित थे और फिर अपने रूप में समास्थित हो गये थे ।।३४।। जब तक अपनी मूर्त्ति में स्थित भगवान् हैं तभी तक यह जगत् स्थित है। कूटस्थ उनके लय में प्राप्त होने पर यह भी लय को प्राप्त हो जाता है। और जब विकृतस्थ रहते हैं तभी वह विवर्धित रहा करता है ।।३५।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

१०–सृष्टि रचना और दुर्जय चरित्र

एवं सृष्ट्वा जगत्सर्वं भगवान् भूतभावनः ।
विरराम ततः सृष्टिर्व्यवर्द्धत धरे तदा ।।१
वृद्धायामथ सृष्टौ तु सर्वे देवाः पुरातनम् ।
नारायणाख्य पुरुषं यजन्तो विविधैर्मखैः ।।२
द्वीपेषु चैव सर्वेषु वर्षेषु च यखैर्हरिम् ।
देवाः स त्रेर्महद्भिस्ते यजन्तः श्रद्धयान्विताः ।।३
तोषयामासुरत्यर्थं स्वं पूज्यं कर्त्तुमीप्सवः ।
एवं तोषयतां तेषां वहुवर्ष सहस्रकः ।
कालोदेवस्तदा तुष्टः प्रत्यक्ष त्व जगाम ह ।।४
अनेकवाहूदखक्तृनेत्रो महागिरेः शंगमिवोल्लिखंस्तदा ।
उवाच किं कार्यमथो सुरेशः प्रब्रूत तं देववरा वरेवः ।।५
जयस्व गोविन्द महानुभाव त्वया वरं नाथ वरेण देवाः ।
मनुष्य लोकेऽपि भवन्तमाद्यं विहाय नास्मान्भवतेह कश्चित् ।।६
चन्द्रादित्यौ वसवो ये च साध्या विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मयाश्च !
सर्वे भवन्तं शरणागताः स्म कुरुष्व पूज्यानिह विश्वमूर्ते ।।७

हे धरे ! प्राणियों पर दया करने वाले भगवान् इस प्रकार से इस सम्पूर्ण जगत् का सृजन करके विराम को प्राप्त हो गये थे और फिर यह सृष्टि वृद्धि को प्राप्त हुई थी ।।१।। इस सृष्टि के वृद्धि को प्राप्त हो जाने पर सभी देवगण अनेक मखों के द्वारा पुरातन पुरुष नारायण नाम वाले का यजन किया करते थे ।।२।। सब देव गण बड़ी भारी श्रद्धा से समन्वित होकर समस्त द्वीपों में और सब वर्षों में मखों के तथा महान् सत्रों के द्वारा हरि का यजन किया करते थे ।।३।। अपने कार्य को करने की इच्छा वालों ने अपने पूज्य देव को परम सन्तुष्ट किया था । इस रीति से तोषण करने वाले उनको बहुत से सहस्र वर्षों का काल हो गया था । तब वे देवेश्वर प्रसन्न हुए और प्रत्यक्ष रूप में प्रकट हुए थे ।।४।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उनका स्वरूप उस समय में ऐसा था कि उनके अनेक बाहु—उदर—मुख और नेत्र थे मानों वे किसी महान् पर्वत के शिखर की ही भाँति लिख रहे होवें। उन्होंने प्रत्यक्ष में प्रादुर्भूत होकर कहा था—हे सुरेश! तुम्हारा क्या प्रयोजन है उसे बतलाओ आप लोग तो देवों में परम श्रेष्ठ हैं। देवों ने कहा—हे गोविन्द! आप का जय होवे। हे महानुभाव! हे नाथ! आपने देवों को वरदान के द्वारा श्रेष्ठ बनाया है। अब तो मनुष्य लोक भी सब के आद्य आपको छोड़ कर कोई भी हमारा अब यजन नहीं किया करता है। तात्पर्य यही है कि हमको छोड़कर सभी लोग आपका ही अभ्यर्चन किया करते हैं और हमको कोई भी नहीं पूछता है ॥ ५॥ ६॥ चन्द्र—सूर्य—वसुगण—साध्य—विश्वेदेवा—अश्विनी कुमार—मरुद्‌गण—उष्मय जो भी हैं सब अब आपकी शरण में प्राप्त हुए हैं। हे विश्वमूर्त्ते! अब आप ही इन सबको मानवों का पूज्य बनाइए ॥ ७॥

एवमुक्तस्तदा तैस्तु मद्योगीश्वरो हरिः।
करोमि सर्वान्वः पूज्यनित्युक्त्वाऽन्तरधीयत ॥८
देवा अपि निजौकांसि गतवन्तः सनातनाः।
स्तुवन्तः परमेशोऽपि त्रिविधं भावमास्थितः ॥९
एवं त्रिधा जगद्धाता भूत्वा देवान्महेश्वरः।
आराध्य सात्विकं राजस्तामसं च त्रिधा स्थितम् ॥१०
सात्विकेन पठेद्वेदान्यजन्यज्ञेन देवतः।
आत्मनोऽव्ययवो भूत्वा राजसेनापि केशवः ॥११
स कालरूपिणं रौद्रं प्रकृत्या शूलपाणिनम्।
आत्मनो राजसीं मूर्तिं पूजयामास भक्तितः ॥१२
तामसेनापि भावेन आसुरेषु व्यवस्थितः ॥१३
एवं त्रिधा जगद्धावता भूत्वा देवान्महेश्वरः।
आराधौयामास ततो लोकोऽपि विविधोभवत् ॥१४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस रीति से जब उन देवों के द्वारा प्रार्थना की गयी तो महान् योगीश्वर श्री हरि भगवान् ने कहा था कि आप सबको मैं पूजा के योग्य कर दूंगा—यह इतना ही कहकर भगवान् वहाँ पर ही अन्तर्धान हो गये थे ॥ ८ ॥ फिर देवगण भी सब अपने अपने निवास स्थानों को चले गये थे जो कि सनातन थे। वे सब भगवान् का स्तवन करते हुए ही वहाँ से गये थे। और परमेश प्रभु की तीन प्रकार के भाव में समास्थित होगये थे ॥ ९ ॥ इस प्रकार से महेश्वर जगत् के धाता तीन स्वरूपों में होकर देवों की आराधना करके सात्त्विक—राजस और तामस तीन स्वरूपों में स्थित हो गये थे ॥ १० ॥ सात्त्विक रूप से वेदों का पाठ करते थे। और यज्ञ के द्वारा देवताओं का यजन किया करते थे। भगवान् केशव आत्मा का अनयव होकर राजस रूप से भी यजन किया करते थे ॥ ११ ॥ वह काल रूपी—प्रकृति से रौद्र—शूल पाणि की जो अपनी ही राजसी मूर्त्ति थी बहुत ही अधिक भक्ति की भावना से पूजा की थी ॥ १२ ॥ तामस भाग से भी आप असुरों में व्यवस्थित हुए थे ॥ १३ ॥ इस रीति से महेश्वर प्रभु जो इस सम्पूर्ण जगत् के धाता है तीन रूपों में होकर उन्होंने देवों की समाराधना की थी। इसके उपरान्त लोक भी अनेक प्रकार का हो गया था ॥ १४ ॥

एवं विष्णु महेशानां नाम गृह्णन्व्यवस्थितः।
स च नारायणो देवः कृते युगवरे प्रभुः ॥१५
त्रेतायां रुद्ररुपस्तु द्वापरे यज्ञमूर्तिमान्।
कलौ नारायणो देवो बहुरूपो व्यजायत ॥१६
तस्यादिकर्तुर्वै विष्णोश्चरितं भूरितेजसः।
श्रणुष्व सर्वं सुश्रोणि गदतो मम भामिनि ॥१७
असीत्कृतयुगे राजा सुप्रतीको महाबलः।
तस्य भार्याद्वयं चासीदविशिष्टं मनोरमम् ॥१८
वित्द्युप्रभा कान्तिमती तयोरेते तु नामनी।
तयोः पुत्रं समं राजा न लेभे वलवानापि ॥१९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यदा तदा मुनिश्रेष्ठमात्रेयं वीतकल्मषम् ।
तोषयामास विधिना चित्रकूटे नगोत्तमे ॥२०
स ऋषिस्तोषितस्तेन दीर्घकालं वर्णार्थिनाम् ।
वरं दित्सुतया यावदब्रवीदत्रिजो मुनिः ॥२१
तावदिन्द्रोऽपि करिणा गतः पार्श्वेन तस्य ह ।
देवसैन्यैः परिवृतस्तूष्णीमेव महाबलः ॥२२

इस रीति से भगवान् विष्णु महेशों के नाम को ग्रहण करते हुए व्यवस्थित हुए थे । वह प्रभु युगों में परम श्रेष्ठ सत्य युग में वह देव नारायण हुए थे ॥ १५ ॥ वही प्रभु त्रेता युग में रुद्र रूप वाले हुए थे । और द्वापर युग में यज्ञ मूर्त्ति बाले हुए थे । कलियुग में नारायण देव हुए थे । इस तरह से बहुत रूप वाले हुए थे ॥ १६ ॥ हे भामिनि ! उन आदि कर्त्ता विपुल तेज वाले भगवान् विष्णु के चरित को हे सुश्रोणि ! कहने के उद्यत मुझसे आप श्रवण कीजिए ॥ १७ ॥ कृतयुग में एक महान् बल वाला सुप्रतीक नामक राजा हुआ था । उस राजा की दो भार्याएें थी और दोनों ही परम सुन्दर समान स्वरूप वाली थीं ॥ १८ ॥ उन दोनों के शुभ नाम विद्युत्प्रभा और कान्तिमती—ये थे । वह राजा बलवान् भी था किन्तु उन दोनों भार्याओं के उदर से कोई भी पुत्र प्राप्त नहीं किया था ॥ १६ ॥ जब उसके कोई भी पुत्र नहीं हुआ तो उस समय में उसने मुनियों में परम श्रेष्ठ—निष्णय आत्रेय मुनि को प्रसन्न किया था । और बड़ी ही विधि के साथ पर्वतों में उत्तम चित्रकूट में मुनि को सन्तुष्ट किया था ॥२०॥ उस राजाने बहुत लम्बे समय में वरदान प्राप्त करने की अभिलाषा से उस मुनिको अर्थात् अनिज मुनि को प्रसन्न किया था । जब तक वरदान देनेकी इच्छासे वह मुनि आत्त्रेय उससे बोला था उसी समय में उसके पास में हाथी के द्वारा देवराज इन्द्रभी वहाँ पर समागत हो गया था । वह देवों की सेना से परिवृत था और महावल चुपचाप ही स्थित हो गया था ॥२१॥२२॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तं दृष्ट्वा तद्गतप्रीतिरप्रीतिं प्रतिवान्मुनि ।
चुक्रोय देवराजाय शापमुग्रं ससर्जह ॥२३
यस्मात्त्वया ममावज्ञा कृता मूढ दिवस्यते ।
ततस्त्वं चालितो राज्यादन्य लोके वसिष्यसि ॥२४
एवमुक्त्वाऽपि कोपेन सुप्रतीके च भूपितिम् ।
उवाच राजन्पुत्रस्ते भाविता दृढ विक्रमः ॥२५
इन्द्ररूपोपमः श्रीमानुद्यच्छस्त्रः प्रतापवान् ।
विद्या प्रभाव तत्त्वज्ञः क्रूरकर्मा भविष्यति ॥२६
दुर्जयोऽतिवली राजा एवमुक्त्वा गतो मुनिः ।
सोऽपि राजा सुप्रतीको भार्यायां गर्भमावहत् ॥२७
विद्युत्प्रभायां धर्मज्ञः साऽपि काले त्वसूयत ।
तस्याः पुत्रः समभवद्दुर्जपाख्यो महावलः ॥२८

उस देवराज को देखकर राजा में प्रीति रखने वाले मुनि इन्द्र में प्रीति करने वाला नहीं था वह मुनि देवराज पर बहुत कुपित हुए थे और परम उग्र शाप उसको दे दिया था ॥२३॥ आत्रेत मुनि ने कहा— हे मूढ दिवस्पते ! क्योंकि तूने मेरी अब ज्ञाकी थी इसलिये तू राज्य से अर्थात् इन्द्रासन से चालित होकर किसी अन्य लोक में निवास करेगा। ॥५४॥ इस प्रकार से कोप के द्वारा कह कर भी सुप्रतीक राजा से फिर कहा—हे राजन् ! तुम्हारे पुत्र होगा और ऐसा होगा जो दृढ़ विक्रम वाला हो ॥२५॥ तेरा पुत्र इन्द्र के समान रूप वाला—श्रीमान्—उद्यत शस्त्र वाला और प्रताप वाला होगा। वह विद्या के प्रभाव के तत्त्व का ज्ञाता होगा और क्रूर कर्मों वाला होगा ॥२६॥ वह अत्यन्त बलवान् दुर्जय होगा—यह कहकर मुनि वहाँ से चले गये थे। और राजा सुप्रतीक ने भी अपनी भार्या के उदर में गर्भ धारण कर दिया था ॥२७॥ धर्मज्ञ राजा ने विद्युत्प्रभा नाम वाली रानी में गर्भ धारण कराया था और उस रानी ने भी समय सम्प्राप्त होने पर प्रसब किया था। उसका पुत्र महान् बलवान् दुर्जय नाम वाला समुत्पन्न हुआ था ॥२८॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जातकर्मादि संस्कारं तस्य चक्रे मुनिः स्वयम् ।
तस्य चेष्टेर्बलेनासौ मुनेः सौम्यो बभूव ह ॥२९
वेद शास्त्रार्थ विधायां पारगो धर्मवान शुचिः ।
या द्वितीयाऽभवत्पत्नी तस्य राज्ञो महात्मनः ॥३०
नाम्ना कान्तिमती धन्या तस्याः पुत्रो बभूव ह ।
नाम्ना सुद्युम्न इत्येवं वेदवेदाङ्ग पारगः ॥३१
अथ कालेन महता स राजा साजसत्तमः ।
सुप्रतीकः सुतं दृष्ट्वा दुर्जयं योग्यमन्तिके ॥३२
आत्मनो वृद्ध भावं च वाराणस्यधियो वली ।
चिन्तयामास राज्यार्थं दुर्जयं प्रति भामिनी ॥३३
एवं संचिन्त्या धर्मात्मा तस्य राज्यं ददौ नृपः ।
स्वयं च चित्रकूटाख्यं पर्वतं स जगाम ह ॥३४
दुर्जयोऽपि महद्राज्यं हस्त्यश्वरथ वाजिभिः ।
संयोज्य चिन्तयामास राज्यवृद्धि प्रति प्रभुः ॥३५

उस पुत्र का जात कर्म आदि संस्कार मुनि ने स्वयं ही किया था। उस मुनि के इष्टि के वल से यह सौम्य हुआ था ॥२९॥ यह वेदों और शास्त्रों कीं विद्या में पारगासी विद्वान्—धर्म वाला और परम शुचि था। जो राजा की एक महान् आत्मा वाला था दूसरी जो पत्नी थी जिसका नाम कान्तिमती था और यह परम धन्य थी इसके भी एक पुत्र हुआ था। इसका नाम सुद्युम्न था और यह भी वेद वेदाङ्गों में पारगामी विद्वान् था ॥ ३० ॥ ३१ ॥ इसके अनन्तर जब बहुत काल व्यतीत हो गया तो राजाओं में परमश्रेष्ठ राजा सुमुतीक ने अपने पुत्र को दुर्जय को योग्य देखकर और अपनी बृद्धता का विचार करके बलवान् वाराणसी के अधिप थे श्रयमी से दुर्जय के विषय में राज्यासन पर अभिषिक्त के लिये विचार किया था ॥ ३३ ॥ हे नृप ! राजा ने इस प्रकार से चिन्तन करके धर्मात्मा ने उसको राज्य दे दिया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था। और आप स्वयं वह चित्रकूट पर्वत पर चला गया था। अर्थात् राज्य का भार दुर्जय पुत्र को सुपुर्द करके स्वयं वह चित्रकूठ पर्वत पर चला गया था। अर्थात् राज्य का भार दुर्जय पुत्र के सुपुर्द करके स्वयं राजा तपश्चर्या करने के लिये चित्रकूट गिरि पर चला गया था ॥ ३४ ॥ उस प्रभु दुर्जय ने भी अपने महान् विशाल राज्य को हाथी—घोड़े आदि के द्वारा संयोजित करके उसने अपने राज्य की वृद्धि के विषय में चिन्तन किया था ॥ ३५ ॥

एवं संचिन्त्य मेधावी हस्त्यश्वरथपत्तिभिः ।
समेतां वाहिनीं कृत्वा उत्तरां दिशमाश्रितः ॥३६
तस्य चोत्तरतो देशाः सर्वो सिद्धा महात्मनः ।
भारतख्यमिदं वर्षं साधयित्वा सुदुर्जयः ॥३७
ततः किं पुरुषं नाम वर्षं तेनापि साधितम् ।
ततः परतरं चान्यद्धरिवर्षं जिगाम सः ॥३८
रम्यं रोमावतं वापि कुरुं भद्रश्वमेव च ।
इलावृत्तं मेरु मध्यमेतत्सर्वं जिगाय सः ॥३९
जि जम्बवाख्यमेतद्धि द्वीपं यावदसौ नृपः ।
जगाम देवराजानं जेतुं सर्वसुरान्वितम् ॥४०
मेरुपर्वतमारुह्य देव गन्धर्व दानवान् ।
गुह्यकान् किन्नरान्दैत्यांस्ततो ब्रह्मसुतो मुनिः ॥४१
नारदो दुर्जयजयं देवराजाय शंसते ।
तत इन्द्रस्त्वरायुक्तो लोकपालैः समन्वितः ॥४२
जगाम दुर्जयं हन्तुं सोऽचिरेणास्त्रनिर्जितम् ।
विहाय पर्वतं मेरुं मर्त्यलोकमिहागतः ॥४३

इस प्रकार से भली भाँति चिन्तन करके उस मेधावी राजा ने हाथीं—घोड़े और पदानि सैनिकों के द्वारा सम्पूर्णता करके सेना की रचना की थी और फिर वह उत्तर दिशा में समाश्रित हो गया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था ।। ३६ ।। उस महात्मा के अंत में रहने वाले सभी सिद्ध थे । उस सुदुर्जय ने भारत नाम वाले इसको साधित किया था ।। ३६ ।। इसके पश्चात् उसने किम्पुरुष नाम वाला वर्ष भी साधित किया था । उसके भी आगे उसने दुर्द वर्ष नामक एक अन्य वर्ष को जीत लिया था अर्थात् उस पर विजय प्राप्त करके अपना बना लिया था ।। ३९ ।। यह राजा विजम्त्राना नामक इस द्वीप तक गया था और वहाँ पर सब सुरों से समान्वित देवों के राजा की जीतने के ही गया लिये था ।।४०।। भेरु पर्वत पर आरोहण करके देव—गन्धर्व—दानव—गुह्यक—किन्नर और दैत्यों पर इस ब्रह्म सुत मुनि ने विजय प्राप्त की थी ।। ४१ ।। नारदजी ने देवराज के लिये दुर्जय के जप के विषय में कहा था । इसके अनन्तर इन्द्र देव समस्त लोक पालों से समान्वित होकर बड़ी ही शीघ्रता युक्त हुआ शीघ्र ही अस्त्र विर्जित दुर्जय को मारने के लिये गया था । वह मेरु पर्वत का त्याग करके यहाँ पर मर्त्य लोक में आ गया था ।। ४२ ।। ४३ ।।

पूर्वदेशो च देवेन्द्रो लोकपालैः समं प्रभुः ।
स्थिवांस्तस्य सुमहच्चरितं सम्भाविंष्यति ।।४४
दुर्जयश्च सुराञ्जित्वा यावत्प्रतिनिवर्त्तते ।
गन्धमादनपृष्ठे तु स्कन्धा वारनिवेशनम् ।।४५
कृत्वाऽवस्थितसंभारमागतौ तापसौ तुतम् ।
तावागतौ तथऽब्रूतां राजन् दुर्जय लोकयाः ।
निवारितास्त्वया सर्वो लोकपालैर्विना जगत् ।।४६
न प्रवर्त्तेततो देहि तत्परं सुखमुत्तमम् ।
एवमुक्ते ततस्तौ तु दुर्जयः प्राह धर्मवित् ।।४७
कौ भवन्ताविति ततस्तावूचतुररिन्दमौ ।
विद्युत् सुविद्यन्नामानावसुराविति नामतुः ।।४८
त्वया सम्प्रति चेच्छामामो धर्मं सत्सु सुसंस्कृतम् ।
लोकपानां सवंमावांकुर्म कुर्वंः स दुर्जय ।।४९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रभु देवेन्द्र लोक पालों के सहित पूर्व वेश में स्थित हो गया था कि उसका सुमहान् चरित्र की सम्भावना होगी ।। ४४ ।। राजा दुर्जय सब सुरों को जीत कर जय तक वापिस लौट आया था। उसने गन्ध मादन के पृष्ठ भाग पर स्कन्धा वार को निवेशित किया था ।।४५।। सम्पूर्ण सम्भार को अवस्थित करके दो ज्ञापस उसके समीप मे समागत हुए थे। आगत हुए उन दोनों ने यह कहा था—हे राजन् ! दुर्जय लोकों का पालक है। आपने सब लोक पालों को आगत् के बिना ही निवारित कर दिया है ।। ४६ ।। यदि आप प्रवृत्त नहीं होते हैं तो तत्पर उत्तम सुख दीजिए। इस तरह से कहने पर धर्म के ज्ञान दुर्जय ने उन दोनों से कहा—।। ४७ ।। आप दोनों कौन हैं ? इसके उपरान्त उन दोनों ने उत्तर दिया था कि हम अरियों के दमन करने वाले हैं। हम दोनों विद्युत् और सुवियुत् नाम हैं और हम दोनों असुर हैं ।। ४८ ।। हम आपके द्वारा सत्पुरुषों मे धर्म को सुसंस्कृत करना चाहते हैं। हे सुदुर्जय ! लोकपों में हम सब धर्म करते हैं ।। ४९ ।।

एवमुक्ते दुर्जयेन तौ स्वर्गे सन्निवेशितौ ।
लोकपालौ कृतौ सद्यस्ततोऽन्तर्द्धानमायतुः ।।५०
तयोरपि महत्कर्म चरितं च धराधरे ।
भविष्यति महाराजो दुर्जयो मन्दरोपरि ।।५१
धनदस्य वनं दिव्यं दृष्ट्वा नन्दन सन्निभम् ।
मुदा वभ्राम रम्येऽस्मिन्स यावद्राजसत्तमः ।।५२
तावत्सुवर्णवृक्षाधः कन्या द्वयमपश्यत ।
अतीव रूपसम्पन्नमतीवाद्भुतदर्शनम् ।।५३
दृष्ट्वा तु विस्मयाविष्टः क इमे शुभलोचने ।
एवं संचिन्त्य यावत्स क्षणमेकं व्यवस्थितः ।।५४
तस्मिन्वने तावदुभौ तापसौ सोऽवलोकयत् ।
तौ दृष्ट्वा सहसा राज ययौ प्रीत्या परां मुदम् ।।५५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अवतीर्य्य द्विपात्तूर्णं नमश्चक्रे तयोः स्वयम् ।
उपविष्टः स ताभ्यां तु कौशे दत्ते वरासने ।।५६

ऐसा कहने पर दुर्जय ने उन दोनों को स्वर्ग में निवेशित कर दिया था उनको तुरन्त ही लोक पाल बना दिया था और फिर उनसे अन्तर्दान प्राप्त किया था ।। ५० ।। धराधर पर उन दोनों का भी महान् कर्म और चरित था । महाराज दुर्जय मन्दर के ऊपर होंगे ।। ५१ ।। जब तक वह श्रेष्ठ राजा धनद (कुवेर) का जो परम दिव्य वन था उसको देखकर जो कि नन्दन वन के समान था इसरम्य वनमें बड़े ही आनन्द के साथ भ्रमण कर रहा था ।। ५२ ।। तभी तक उसने सुवर्ण वृक्ष के नीचे दो कन्याओं को देखा था । वे दोनो बहुत हो अधिक रूप लावण्य से सम्पन्न थीं और उनका दर्शन बहुत ही अद्भुत था ।। ५३ ।। उन दोनों कन्याओं को देखकर यह विस्मय से आविष्ट हो गया था अर्थात् इसको बहुत अधिक आश्चर्य हुआ था । इसने मनमें विचार किया था कि ये शुभ लोचनों वाली दोनों कन्याएं कौन हैं । इस तरह से भली भांति चिन्तन करके एक ही क्षण में वह व्यवस्थित हुआ था तब तक उसी में वन उसने उन दोनों तपस्वियों का अवलोकन किया था । उनको देखकर राजा सहसा बहुत आनन्द को परम प्रीति प्राप्त हो गया था ।। ५५ ।। राजा ने शीघ्र ही द्वीप से अवतीर्ण होकर उसने स्वयं ही उन दोनों को नमस्कार किया था और उनके द्वारा दिये हुए कुशा के वरासन पर उपविष्ट हो गया था ।। ५६ ।।

पृष्टः कस्त्वं कुतश्चासि कस्य व किमिहस्थितः ।
तौ प्रहस्याब्रवीद्राजा सुप्रतिकेति विश्रुतः ।।५७
तस्य पुत्र समुत्पन्नो दुर्जयो नाम नामतः ।
पृथिव्यां सर्वराजानो जिगीषन्निह सत्तमौ ।।५८
आगतोऽस्मि ध्रुवं चैव स्मर्त्तव्योऽहं तपोधनौ ।
भवन्तौ को समाख्यातं ममानुग्रहकांक्षया ।।५९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आवां हेतृप्रहेत्राख्यौ मनोः स्वायंभुवः सुतौ ।
आवां देवविनाशाय गतौ सौ मेरुपर्वतम् ॥६०
तत्रावयोर्महासैन्यं गजाश्वरथ संकुलम् ।
जिगाय सर्वदेवानां शतशोऽथ सहस्रशः ॥६१
ते च देवा महत्सैन्यं दृष्ट्वा सैन्यं निपातितम् ।
असुरैरुज्झित प्राणं ततस्ते शरणंगताः ॥६२
क्षीराब्धौ यत्र देवेशो हरिः शेते स्वयं प्रभुः ।
तत्र विज्ञापयामासुः सर्वे प्रणतिपूर्वकम् ॥६३

उनके द्वारा राजा से पूछा गया था—आप कौन हैं—कहां से आये हैं—किसके है—और यहाँ पर किसलिये आये हैं ? इसके उत्तर में राजा ने हँसकर उन दोनों से कहा था—मैं सुप्रतीक नाम से विश्रुत हूँ ॥ ५७ ॥ हे श्रेष्ठ तमो ! उसका पुत्र दुर्जय नाम वाला समुत्पन्न हुआ है । वही पृथिवी में समस्त राजाओं को जीतने की इच्छा रखता हुआ ही यहाँ पर समागत हो गया हूँ । हे तपोधनों ! निश्चित रूप से आपको स्मरण रखना चाहिए । फिर राजा ने उन दोनों से पूछा था—आप दोनों किस नाम से समाख्यात हैं—यह मेरे ऊपर अनुग्रह करने की इच्छा से ही मुझे बतालाइए ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ उन तपस्वियों ने राजा को उत्तर दिया था—हम दोनों हेता—अहेना नामों वाले हैं और स्वायम्भूव मनु के पुत्र हैं । हम तीनों देवों के विनाश करने के लिये सुमेरु पर्वत पर गये थे ॥ ६० ॥ वहाँ पर हमारी बहुत बड़ी सेना है जो हाथी और घोड़ों से संकुल है । वहाँ पर सैकड़ों और सहस्त्रों देवों को जीत लिया था । वहाँ पर देवों ने महाक्षैम्य को देखकर और सेना को नियातित हुई देखकर और असुरों के द्वारा त्यक्त प्राण वाली देखकर वे सभी देवगण भगवान् की शरणगति में प्राप्त हुए थे । क्षीर सागर में जहाँ पर देव हरि स्वयं प्रभु शयन किया करते हैं । वहाँ पर पहुँचकर सभी देवों ने प्रणाम पूर्वक भगवान् से निवेदन किया था ॥ ६१—६३ ॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

देवदेव हरे सर्वं सैन्य त्वसुरसत्तमैः ।
पराजितं परित्राहि भीतं विह्वललोचनम् ।।६४
त्वयादेवासुरा युद्ध पूर्वक्षत्राताः स्म केशव ।
सहस्रबाहोः क्रूरस्य समरे कालनेमिनः ।।६५
इदानीमयि देवेश असुरौ देव कष्टकौ ।
हेतृप्रहेतृ नामानौ बहुसैन्यपरिच्छदौ ।।६६
तौ हत्वा त्राहिनः सर्वान् देवदेव जगत्पते ।
एवमुक्तस्ततो देवो विष्णुर्नारायणः प्रभुः ।।६७
अहं यास्यामितौ हन्तुमित्युवाच जगत्पतिः ।
एवमुक्तास्ततो देवा मेरुपर्वत सन्निधौ ।।६८
प्रतस्थुस्तेऽथ मनसा चिन्तयन्तो जनार्दनम् ।
तैः संचिन्तितमात्रस्तु देवश्चक्रगदाधरः ।।६९
आवयोः सैन्यमाविश्य एक एव महाबलः ।
एकधा दशधात्मानं शतधा च सहस्रधा ।।७०

हे देववर ! असुरों के द्वारा हमारी सभी सेना पराजित करदी गयी है । आप पीत और विह्वल लोचन का परित्राण कीजिए ।।६४।। पूर्व में आपने देवासुरों के युद्ध में हे केशव ! हमारा परित्राण किया था और सहस्र बाहु महान् क्रूर काल नेमि से हम सबको बचाया था । ।। ६५ ।। इस समय में भी हे देवेश्वर ! देवों के कण्टक स्वरूप देता और प्रदेता नामों वाले दो असुर हैं जिनके पास बहुत सी सेना का परित्राण कीजिए । इस प्रकार से जब भगवान् से प्रार्थना की गयी थी तो प्रभु विष्णु नारायण ने कहा था—मैं उन दोनों का हनन करने के लिए अवश्य ही आऊँगा । इसके अनन्तर इस तरह से जब उन देवों से प्रभु ने कहा था तो वे सब देवगण मेरु पर्वत की सन्निधि में प्रस्थान कर गये थे और इसके अनन्तर वे भगवान् जनार्दन प्रभु का चिन्तन करने लगे थे । उनके द्वारा केवल चिन्तन किये गये भगवान् चक्र और गदा को

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

धारण करने वाले हम दोनों की सेना के विनाश करने के लिये वह एक ही महान् बलवान् थे। उन प्रभु ने एक प्रकार से और दश प्रकार से—सैकड़ों रूप से तथा सहस्रों रूप से अपने आपको उन्होंने कर लिया था ॥६६—७०॥

लक्षधा कोटिधा कृत्वा स्वभूत्या च जगत्पतिः ।
एवं स्थिते देववरेऽस्मत्सैन्ये महाबलः ॥७१
यः कश्चिदसुरो राजन्नावयोर्बलमाश्रितः ।
स हतः पतितौ भूमौ दृश्यते गतचेतनः ॥७२
एवं तत्सहस्रा सैन्यं मायया विश्वमूर्तिना ।
निहत्य मांसलकलं पत्तिध्वजसमाकुलम् ॥७३
चतुरङ्गं बलं सर्वं हत्वा देवो रथाङ्गधृक् ।
आवां शेषावथो दृष्टवा गतोऽन्तर्द्धानमीश्वरः ॥७४
आवयोरीदृशं कर्म दृष्टं देवस्य शार्ङ्गिणः ।
ततस्तमेव शरणं गतावाराधनाय वै ॥७५
त्वं चास्मन् मित्रतनयः सुप्रतीकात्मजो नृपः ।
इमे च आवयोः कन्ये गृहाण मनुजेश्वर ।
हेतृकन्या सुकेशी तु मिश्रकेशी प्रहेतृजा ॥७६
दुर्जयस्त्वेवमुक्तस्तु हेत्रा वै ते उभे शुभे ।
कन्ये जग्राह धर्मेण भार्यार्थं मनुजेश्वरः ॥७७

लाखों और करोड़ों रूपों में जगत्पति अपनी भूति से अपने आपको बना दिया था। देवेश्वर के इस प्रकार संस्थित होने पर हमारी सेना में महान् बलवान् हे राजन् ! जो कोई असुर था हम दोनों के बल में समाश्रित था। उसका हनन हो गया था और मूच्छित होकर भूमि पर पतित्व हो गया था ॥७१॥७२॥ इस रीति से निश्चमूर्त्ति ने अपनी माया से सहस्रा सेना को निहत करके मांसल—लल और प्रति ध्वज समाकुल सम्पूर्ण चतुरङ्गिणी सेना का हनन करके सुदर्शन चक्र धारी देवेश्वर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ने हम दोनों से शेष देखकर वे ईश्वर अन्तर्धान हो गये थे ।।७३।।७४।। हम दोनों ने जब शार्ङ्गधारी देवेश्वर का—इस तरह का कर्म देखा था तो इसके अनन्तर इन दोनों आराधना के लिये उन्हीं देवेश की शरण में प्राप्तहुए ।।७५।। और आप हमारे मित्र सुप्रतीक के आत्मज हैं और राजा हैं ये दोनों हम दोनों की कन्माऐं हैं। हे मनुनेश्वर। अब आप इनको ग्रहण कीजिए। हे तृकी जो कन्या है वह सुकेशी नाम वाली है और प्रहेन् की जो कन्या है उसका नाम मिश्र केशी है ।। ७६ ।। देतृ के द्वारा इस प्रकार से कहे जाने पर राजा दुर्जय ने उन दोनों परम शुभ कन्याओं को मनुनेश्वर ने अपनी भार्या बनाने के लिये धर्म के साथ ग्रहण कर लिया था ।। ७७ ।।

ते लब्धा सहसा राजा मुदा परमया युतः।
आजगाम स्वकं राष्ट्रं निजसैन्य समावतः ।।७८
ततः कालेन महता तस्य पुत्रद्वयं वभौ।
सुकेश्याः प्रभावः पुत्रो मित्रकेश्याः सुदर्शनः ।।७९
स राजा दुर्जयः श्रीमाँल्लब्ध्वा पुत्र द्वयं शुभम्।
स्वयं कालान्तरे श्रीमान् जगामारण्यमन्तिके ।।८०
तत्रस्थो वनजाञ्जन्तून् बन्धयन्वै भयङ्करान्।
ददर्शारण्यमाश्रित्य मुनिं स्थितमकल्मषम् ।।८१
तपन्यन्तं महाभागं नाम्ना गौरमुखं शुभम्।
ऋषिवृन्दस्य गोप्तांर त्रातारंपापिनां स्वयम् ।।८२
तस्याश्रमो विमलजलविलो मरुत्सुगन्धिवृक्ष प्रवरो द्विजन्मनः।
रराज जीमूत इवाम्बरान्महीमुपागतः प्रवर विमानवद्गृहः ।।८३
ज्वलन्मुखाग्नि प्रतिभासिताम्बरः सुशुद्धसंवासितवेश कुट्टकः।८४

उन दोनों परम सुन्दरी कन्याओं को पाकर राजा परमाधिक हर्ष से युक्त हो गया था और अपनी सेना से समावृत होकर वह अपने राष्ट्र में आ गया था ।। ७८ ।। इसके उपरान्त सुदीर्घ काल में उस राजा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के अन्तः पुर को दो पुत्रों ने जन्म ग्रहण करके सुशोभित किया था। सुकेशी का जो पुत्र था उसका नाम प्रभव था और मित्रकेशी के पुत्र का नाम सुदर्शन था ।। ७९ ।। उस राजा दुर्जय ने परम शुभ दो पुत्रों का लाभ करके श्रीमान् स्वयं कुछ काल के पश्चात् समीप में ही अरण्य में चला गया था ।। ८० ।। वहाँ पर स्थित होकर वन में समुत्पन्न परम भयङ्कर जन्तुओं को उसने बन्धन में डाल दिया था। वहाँ पर उस नृप ने वृत का समाश्रम लेकर संस्थित कल्मष रहित मुनि का दर्शन किया था ।। ८१ ।। वह मुनि तपश्चर्या किया करते थे और महान् भाग वाले थे। उनका शुभ नाम गौर मुख था। वहाँ मुनि समस्त ऋषियों के समुदाय को रक्षा करने वाले थे और स्वय पापियों के परित्राण करने वाले थे ।। ८२ ।। उस मुनि का आश्रम स्वच्छ जल के ही समान विमल था। और उस द्विजन्मा का आश्रम सुगन्धित वृक्षों की वायु से परिपूर्ण था। आश्रम अम्बर से भूमण्डल पर समागत मेघ की भाँति सुशोभित हो रहा था। वह गृह परमश्रेष्ठ विमान के ही तुल्य था। उनका मुख तेज से प्रज्वालित अग्नि के सदृश था और अग्नि के ही तुल्य प्रतिभाषित वस्त्रों का परिधान किये हुए थे और उनको वेश परम शुद्ध एवं वासित था ।। ८३ ।। ८४ ।।

११—दुर्जय का गौरमुख ऋषि से संघर्ष

ततस्तमीदृशं दृष्ट्वा तदा गौरमुखाश्रमम् ।
दुर्जयश्चिन्तयामास रम्यमाश्रममण्डलम् ।।१
प्रविशाम्यत्र पश्यामि ऋषीन् परम धार्मिकान् ।
चिन्तयित्वा तदा राजा प्रविवश तमाश्रमम् ।।२
तस्य प्रविष्टस्य ततो राज्ञः परम हर्षितः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चकार पूजां धर्मात्मा तदा गौरमुखो मुनिः ॥३
स्वागतादि क्रियाः कृत्वा कथान्ते तं महामुनिः ।
स्वशक्त्याहं नृपश्रेष्ठ सानुगस्य तु भोजनम्
करिष्यामि प्रमुच्यन्तां साधु वाहा इति द्विजः ॥४
एवमुक्ता स्थितस्तूष्णीं स मुनिः शंसित व्रतः ।
राजापि तस्थौ तद्भक्त्या स्वसहायैः समन्वितः ॥५
अक्षौहिण्यो वलस्यास्य पञ्चमात्रं तदा स्थिताः ।
अयं च तापसः किं मे दास्यते भोजनं त्विह ॥६
निमन्त्र्य दुर्जयं विप्रस्तदा गौरमुखो नृपम् ।
चिन्तयामास किं चास्य मया देयं तु भोजनम् ॥७

इसके अनन्तर राजा दुर्जय ने उस समय में इस प्रकार के परम रम्य गौर मुख के आश्रम का आव लोकन करके राजा ने अपने मनमें विचार किया था । मैं अब इस आश्रम में प्रवेश करूं और परम धार्मिक ऋषियों का दर्शन प्राप्त करूं । ऐसा ही विचार करके राजा ने उस अवसर में उस आश्रम में प्रवेश किया था ॥ १ ॥ २ ॥ जब राजा ने उस आश्रम में प्रवेश किया था तो उस राजा की परम हर्षित होकर धर्मात्मा गौर मुख मुनि ने पूजा की थी ॥ ३ ॥ स्वागत आदि की सम्पूर्ण क्रिया का सम्पादन करके वार्त्ता लाप के अब साथ में उस मुनि ने उस राजा से प्रार्थना की थी—हे नृप श्रेष्ठ ! मैं अपनी शक्ति से आपका समस्त अनुचरों के सहित भोजन कराऊँगा । द्विज ने कहा—आप साधुवादों का प्रमोचन कीजिए ॥४॥ इस रीति से निवेदन करके वह सांसित व्रत मुनि चुपचाप स्थित हो गया था । राजा की उस मुनि की भक्ति से अपने सहायकों के साथ ही वहाँ पर संस्थित हो गया था ॥ ५ ॥ इस राजा की अक्षौरिणी सेना के पञ्चमात्र वहाँ पर उस समय में स्थित हो गये थे । राजा ने मनमें विचार किया था कि यह तपस्वी यहाँ पर मुझे क्या भोजन देगा ॥ ६ ॥ उस विप्र और मुख ने राजा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दुर्जय को निमन्त्रित करके मनमें चिन्तन किया था कि इस राजा के लिये क्या भोजन देना चाहिए ॥ ७ ॥

एव चिन्तयतस्तस्य महर्षेः भावितात्मनः ।
स्थितो मनसि देवेशो ह रिर्नारायणः प्रभुः ॥८
ततः संस्मृत्य मनसा देवं नारायणं तदा ।
तोषयामास गंगायां प्रविश्य मुनि सत्तमः ॥६
कथं गौरमुखो विष्णु तोषयाभास भूधर ।
एतन्मे कौतुकं श्रोतुं सम्पगिच्छ प्रवर्त्तते ॥१०
नमोऽस्तु विष्णवे नित्यं नमस्ते पीतवाससे ।
नमस्ते चाद्यरुपाय नमस्ते जलरूपिणे ॥११
नमस्ते सर्व संस्थाय नमस्ते जलशायिने ।
नमस्ते क्षितिरुपाय नमस्ते तैजसामत्ने ॥१२
नमस्ते वायुरुपाय नमस्ते व्योमरूपिणे ।
त्वं देवः सर्वभूतानां प्रभुस्त्वमसि हृच्छयः ॥१३
त्वमोङ्कारों वषट्कारः सर्वत्रैव संस्थितः ।
त्वमादि सर्वदेवानां तव चादिर्न विद्यते ॥१४

उस महर्षि के इस प्रकार से चिन्तन करने पर जो कि बहुत ही भावित आत्मा वाला था उस मुनि के मन में देवेश्वर हरि नारायण प्रभु स्थित हो गये थे ॥ ८ ॥ इसके अनन्तर उस समय में मन के द्वारा देवेश्वर नारायण प्रभु का संस्मरण करके उस परम श्रेष्ठ मुनि ने गङ्गा भागीरथीं में प्रवेश कर प्रभु को सन्तोषित किया था ॥६॥ हे भूधर ! उस गौर मुख मुनि ने किस प्रकार से भगवान् विष्णु को सन्तुष्ट किया था— यह मेरे हृदय में बड़ा भारी कौतुक हो रहा है मुझे इसका श्रवण करने की इच्छा है। इसका भली भाँति छेदन करके ही आप आगे की कथा सुनाने प्रवृत्त होइए ॥ १० ॥ अब गौर मुख ने जिस स्तदन के द्वारा भगवान को प्रसन्न किया था—वही बतलाया जाता है—ऋषि ने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहा—भगवान् विष्णु के लिये नित्य नमस्कार है। पीताम्बर धारी प्रभु की सेवा में मेरा प्रणाम अर्पित है। जो आद्य स्वरूप वाले देवेश्वर हैं उनको मेरा नमस्कार है। जल के स्वरूप धारी प्रभु के लिये मेरा प्रणाम है ॥ ११ ॥ सभी में सर्वत्र संस्थिति रखने वाले प्रभ के लिये मेरा नमस्कार है। जल में शेष शय्या पर शयन करने वाले प्रभु के लिये नमस्कार है। जो क्षिति के स्वरूप वाले हैं उन को मेरा प्रणाम है—तेज स्वरूप देव के लिये मेरा प्रणाम है ॥ १२ ॥ वायु के रूप वाले तथा व्योम स्वरूप वाले देव के लिये मेरा नमस्कार है। आप समस्त प्राणियों के देव हैं और आप सबके हृदय में शयन करने वाले प्रभु हैं ॥ १३ ॥ आप ही ओङ्कार तथा वषट् कार हैं और आप सभी जगहों पर स्थित रहा करते हैं। आप सब देवों के आदि हैं और आपका आदि कोई भी नहीं है ॥ १४ ॥

त्वं भूस्त्वं च भुवो स्वस्त्वं जनस्त्वं च महः स्मृतः ।
त्वं तपस्त्वं च सत्यं च त्वयि देव चराचरम् ॥१५
त्वत्तो भूतमिदं सर्वं विश्वं त्वत्तो ऋगादयः ।
त्वत्तः शास्त्राणि जातानि त्वत्तो यज्ञः प्रतिष्ठिताः ॥१६
त्वत्तो वृक्ष वीरुधश्च त्वत्तः सर्वा वनौषधी ।
पशवः पक्षिणः सर्पास्त्वत्त एव जनार्दन ॥१७
ममापि देवदेवेश राजा दुर्जय संज्ञितः ।
आगतोऽभ्यागतस्तस्य चातिथ्य कर्तुं मुत्सहे ॥१८
तस्य मे निर्धनस्याद्य देवदेव जगत्पते ।
भक्ति नम्रस्य देवेश कुरुष्वान्नाद्य संचयम् ॥१९
यं यं स्पृशामि हस्त्वेन यं च पश्यामि चक्षुषा ।
काष्ठं वा तृणकन्दं वा तत्तदन्नं चतुर्विधम् ॥२०
तथा त्वभ्यतमं वापि यद्ध्यातां मनसर मया ।
तत्सर्वं सिद्ध्यतां मह्यं नमस्ते परमेश्वर ॥२१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आप ही भू: है—आप भुव: हैं और आप स्व: हैं। आप हीं जन: है और आप ही मह्द—कहे गये हैं आप तप है और आप ही सत्य हैं। हे देव ! आप में ही यह सम्पूर्ण चराचर वद्यमान रहा करता है ॥१५॥ यह सम्पूर्ण भूत आप से ही हुए हैं— यह समस्त विश्व और ऋगादिक भी आप से ही संजात हुए हैं। आप ही से ये सब शास्त्र समुद्भूत हुए हैं ओर आप ही से यज्ञ प्रतिष्ठित हुए हैं ॥१६॥ हे भगवन् ! आप ही से ये सब वृक्ष—वीरुध तथा सम्पूर्ण वनौषधियाँ उत्पन्न हुई हैं। हे जनार्दन ! ये सब पशु गण - पक्षी और सर्प गण भी आप ही से समुत्पन्न हुए हैं ॥१७॥ हे देवों के भी देव ! मेरे यहाँ पर भी आश्रम में दुर्जय संज्ञा वाला राजा समागत हुआ है उस राजा के लिये आप हे देवदेव ! हे जगत्पति ! भक्ति से नम्र मुझ को आप कृपा कर अन्नादि का सञ्चय कीजिए ॥१८॥१९॥ हे भगवन् ! मैं जिस-जिसका हाथ से स्पर्श करूँ और जिसका मैं चक्षु से अवलोकन करूँ चाहे वह काष्ठ हो—तृण हो अथवा कन्द हो वही-वही चार प्रकार का अन्न हो जावे। ॥२०॥ उसी भाँति अन्य तम का भी मैंने थोड़ा सा भी ध्यान किया मेरा सभी मेरे लिये सिद्ध हो जावे। हे परमेश्वर ! आपके लिये मेरा नमस्कार है ॥२१॥

इति स्तुत्या तु देवेशस्तुतोष जगता पतिः ।
मुनेस्तस्य स्वक रूपँ दर्शयामास केशवः ॥२२
उवाच सुप्रसन्नात्मा ब्रूहि विप्रवरं परम् ।
एवं श्रुत्वाक्षिणी यावदुन्मीलयति वँ मुनिः ॥२३
तदा शंखगदापाणि पीतवासा जनार्दनः ।
गरुडस्थोऽपि तेजस्वी द्वादशादित्य सुप्रभः ॥२४
दिवि सूर्य सहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थितिः ।
यदि भा सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः ॥२५
तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्त मनेकधा ।
ददर्श स मुनिर्देवि विस्मयोत्फुल्ल लोचनः ॥२६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ननाम शिरसर देवं कृताञ्जलिरथा ब्रवीत् ।
यदि मे वरदो देवो भूयाद्भक्तास्य केशवः ।।२७
इदानीमेष नृपतिर्यथा सबलवाहनः ।
ममाश्रये कृताहारः श्वः प्रयाता स्वकं गृहम् ।।२८

इस प्रकार की स्तुति के द्वारा जगतों के पति देवेश्वर भगवान् केशव परम प्रसन्न हो गये थे और फिर भगवान् ने उस मुनि को अपने स्वरूप का साक्षात् दर्शन दिया था ।। १२ ।। परम प्रसन्न आत्मा वाले प्रभु ने उस मुनि से कहा—विप्रवर ! आपका जो भी परम अभिलाषित हो उसे आप मुझे बतलाइए । भगवान् के इस तरह के वचन का श्रवण करके जब तक वह मुनि अपनी आँखों को उन्मीलित करते हैं उसी समय में चक्र शंख और गदा को हाथों में धारण किये हुए—पीताम्बर धारी जनार्दन गरुड़ पर स्थित की परम तेजस्वी द्वादश सूर्यों के समान प्रभा से—युक्त दिखाई दिये थे ।। २३ ।। २४ ।। दिन लोक में यदि सहस्रों सूर्यों की एक ही साथ उपस्थिति होवे और उनकी समानता वाली भी होवे वैसी ही दीप्ति उन महात्मा की थी उनमें एक ही में सम्पूर्ण जगत् स्थित था और अनेक भागों में विभक्त था । हे देवि ! उस गौर मुख मुनि ने इसी प्रकार का भगवान् का दर्शन प्राप्त किया था और दर्शन करते ही विस्मय से उनके नेत्र उत्फुल्ल हो गये थे ।।२५।। ।।२६।। उस मुनि ने शिर से प्रणाम किया था और दोनों करों की अञ्जलि बाँधकर उसने कहा था—यदि मुझ भक्त पर आप केशव प्रसन्न होकर वरदान देने वाले होवें तो यही प्रार्थना है कि इस समय में यह राजा बल और वहनों के साथ मेरे आश्रम में आहार करे और कल यह अपने गृह को गमन कर जावे ।। २७ ।। २८ ।।

इत्युक्तस्तस्य देवेशो वदतः संबभूव ह ।
चित्तसिद्धि ददौ तस्मै मणिं च सुमहाप्रभम् ।।२९
तं दत्त्वान्त दंधे देवः स च गौरमुखो मुनिः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जगाम चाश्रमं पुण्यं नाना ऋषिनिषेवितम् ।।३०
तत्र गत्वा स विप्रेन्द्रश्चिन्तयामास वै मुनिः ।
हिमवच्छिखराकार महाभ्रमिव चोन्नतम् ।
शशाङ्करश्मिसंकाशं गृहं वैशतभूमिकम् ।।३१
तादृशानां सहस्राणि लक्षकोटिश्च सर्वशः ।
गृहाणि निर्ममो विप्रो विष्णोर्लब्ध वरस्तदा ।।३२
प्राकाराणि तथोपान्ते तल्लग्नोद्यानकानि च ।
कोकिलाकुलघुष्टानि नानाद्विजवराणि च ।।३३
चम्पकाशोक पुन्नाग नाग केसरवन्ति च ।
नानाजात्यस्तथा वृक्षा गृहोद्यानेषु सर्वशः ।।३४
हस्तिनां हस्तिशालाश्च तुरगाणां च मन्दुराः ।
चकार सञ्चयान् विप्रो नाना भक्ष्यस्य सर्वशः ।।३५

इस प्रकार से जब कहा गया तो उसके कहते हुए के समक्ष में देवेश्वर प्रकट हो गये थे और उस मुनि के लिये चित्त की शुद्धि प्रदान की थी और एक बहुत सुन्दर प्रभा से युक्त मणि दी थी ।। २९ ।। उस मुनि को ये देकर भगवान् देव अन्तर्धान हो गये थे और वह गौर मुख मुनि अपने पुण्यमय आश्रम मे आ गया था जो अनेक ऋषिगणों के द्वारा सेवित था ।। ३० ।। वहाँ पर जाकर उस विप्रेन्द्र मुनि ने अपने मन में चिन्तन किया था अर्थात् उस मुनि ने जिसने भगवान् विष्णु से वर साप्त कर लिया था एक ऐसे गृह के निर्माण करते का ध्यान किया था जो हिमालय पर्वत के शिखर के आकार वाला हो और महान् मेघ के समान उन्नत होवे । चन्द्र की रश्मियों के ही तुल्य दी दीप्ति मान् होवे और शतभूमिक गृह होवें । ऐसे ही सहस्रों-लाखों और करोडों गृह होवें जो सभी ओर होंगे ऐसे ही गृहों का उस विप्र ने केवल चिन्तन मात्र से ही निर्माण कर दिया था ।। ३१ ।। ३२ ।। इतना ही नहीं, उन गृहों के चारों ओर आकार थे तथा उनके समीप में लगे हुए उद्यान भी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

थे जिअ उद्यानों में कोयलों की मधुर ध्वनि सुनाई दे रही थी और भी अनेक परम श्रेष्ठ पक्षिगण वहाँ पर थे। उन गृहोद्यानों में सभी ओर चम्पक—अशोक—पुन्नाग—और नाग केसर के वृक्ष थे तथा अनेक जाति के वृक्षों का समुदाय उनमें था। ऐसे वे गृहों को उद्यान थे ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ उस विप्र गौर मुख ने गजों की गज शालाऐं —तथा अश्वों की अश्व शालाऐं वना दी थी तथा अनेक तरह के भक्ष्यों का सञ्चय उनमें कर दिया था ॥ ३५ ॥

भक्ष्यं भोज्यं तथा लेह्यं चोष्य वहुविधं तथा।
चकारान्नाद्यविषयं हेमपात्राणि सर्वतः ॥३६
एवमुक्त्वा सु विप्रस्तु राजा न भूरितेजसम्।
उवाच सर्वसैन्यानि प्रविशन्तु गृहानिति ॥३७
एवमुक्तास्ततो राजा तद्ग्रहं पर्वतोयमम्।
प्रविलेशान्तरेष्वन्ये भत्या विविशुराशुवै ॥३८
चिन्तयामास राजेन्द्रो विस्मयाविष्टचेतनः।
किमिदं मुनि सामर्थ्यात्तपसो वाथवा मणेः ॥३९
एवं स्नात्वोत्तमं वस्त्रे पारिधाय नृपस्तथा।
विविधान्नं तु विधिना बुभुजे स नृपोत्तमः ॥४०
यथा च नृपतेः पूजा कृता तेन महर्षिणा।
तद्वद् भृत्यजनस्यापि चकार मुनिसत्तमः ॥४१
ततो रात्र्यां व्यतीतायां स राजाताः पुनः स्त्रियः।
अन्तर्द्धानं गतास्तत्र दृष्ट्वा तानि गृहाणि वा ॥४२
अदृश्यानि महार्हाणि वरासनगतानि च।
स राजा विस्मयाविष्टश्चिन्तयामास दुःखितः ॥४३

भक्ष्य—भोज्य—लेह्य—चोठय बहुत प्रकार के अन्न आदि का निर्माण कर दिया था तथा सभी जगह सुवर्ण के पात्रों की भी रचना करदी थी ॥ ३६ ॥ इस प्रकार से सबकी रचना करके उस विप्र ने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समाधिक तेजस्वी राजा से प्रार्थना की थी कि आपकी सभी सेनाऐं मेरा आतिथ्य स्वीकार करने के लिये इन गृहों में प्रवेश करें ।। ३७ ।। जब राजा से इस रीति से कहा गया तो वह राजा उस पर्वत के तुल्य विस्तृत तथा समुच्च गृह में प्रविष्ट हुआ था और उनके अन्दर अन्य भृत्य भी बहुत ही शीघ्र प्रविष्ठ हुए थे ।। ३८ ।। राजा बड़े भारी आश्चर्य से आविष्ट होकर विचार ने लगा कि क्या यह सभी कुछ मुनि की तपस्या की शक्ति से सम्पन्न हुआ है अथवा यह किसी मणि का प्रभाव है ।।३९।। फिर राजा ने वहाँ पर स्नान किया था और उत्तम वस्त्रों का परिधान किया। उस श्रेष्ठ नृप ने वहाँ पर समुपस्थित अनेक प्रकार के अन्नों का विधि पूर्वक भोजन किया था ।। ४० ।। उस महर्षि के द्वारा जिस प्रकार से उस राजा की पूजा की गयी थी ठीक उसी भाँति मुनिश्रेष्ठ ने उसके भृत्यजनों का भी समर्थन किया था ।। ४१ ।। इसके अनन्तर उस रात्रि के व्यतीत ही जाने पर राजा ने देखा था कि वे गृह तथा स्त्रियाँ सब अन्तर्धान हो गये थे वे वेश कीमती श्रेष्ठ आसन अदृश्य हो गये थे वह राजा परमाधिक विस्मय से भर कर बहुत दुःखित होते हुए चिन्तन करने लगा था ।। ४२ ।। ४३ ।।

कथमेवं मणिर्मह्यं भवतीति पुनः पुनः ।
चिन्तयन्नोधगम्याथ स राजा दुर्जस्तथा ।।४४
आश्रयस्य वहिर्गत्वा नातिदूरे स वाहनः ।
ततो विरोचनाख्यं वैं प्रेषयामास मंत्रिणम् ।।४५
ऋषेगर्गोरनुखस्यापि मणेर्याचनकर्मणि ।
ऋषि तं च समागत्य मणि याचितुमुद्यतः ।।४६
रत्नानां भाजनं राजा मणि तस्मै प्रदीपताम् ।
अमात्ये नैव मुक्तस्तु क्रुद्धो गौरमुखोऽब्रवीत् ।।४७
प्रतिग्राहीति विप्रस्तु राजा चैव ददाति च ।
त्व च राजा पुनर्भूत्वा याचसे दीनवत् कथम्।।४८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवमुक्तस्तदा देतो जगाम च नृपान्तिकम् ।
कथयामास तत्सर्वं यदुक्तं ब्राह्मणे न च ।।४६

उस राजा ने मनमें विचार किया था कि यह मणि मेरी किस प्रकार से हो सकती है । वार २ इसी तरह चिन्तन करते हुए राजा ने कुछ अधिगत करके वह राजा आश्रम के बाहर चला गया था वाहनों के सहित वह समीप में ही जाकर उसने अपने एक विरोचन नाम वाले मन्त्रीको भेजा थाकि वह गौर मुख ऋषि से इस मणि की याचना करे । और उसने ऋषि के समीप में जाकर उस मणि की याचना करने के लिये तयारी की थी ।। ४४ ।। ४५ ।। ४६ ।। उस मन्त्री ने कहा था कि राजा को रत्नो के प्राप्त का उचित पात्र होता है अतएव यह मणि आप राजा को दे दीजिए । क्योंकि वह तो अमात्य था इसीलिये उसको छोड़ दिया था किन्तु गौर मुख बहुत कुपित होकर बोला—विप्र प्रतिग्रह ग्रहण करने बाला हुआ करता है और राजा दान दाता होता है । तुम तो एक राजा हो और राजा होकर एक दीन-हीन के ही समान क्यों याचना कर रहा है ।। ४७ ।। ४८ ।। उस समय में इस तरह से मुनि ने दूत से कहा था तो वह लौटकर राजा के समीप में चला गया था और वह सभी वातें उसने राजा से कहदी थीं जो कुछ ब्राह्मण के द्वारा कही गयीं थीं ।। ४६ ।।

ततः क्रोधपरीतात्मा श्रुत्वा ब्राह्मण भाषितम् ।
दुर्जयः साह नीलाख्यं तामन्तं गच्छ माचिरम् ।
ब्राह्मणस्य मणिगृह्य तूर्णमेहि यदृच्छया ।।५०
एवमुक्तस्तदा नीलो बहुसेना परिच्छदः ।
जगाम स च विप्रस्य वन्यमाश्रम मण्डलम् ।।५१
तत्रग्निहोत्र शालायां दृष्ट्वा तं मणिमाहितम् ।
उत्तीर्य स्यन्दनान्नीलः सोऽवारोहत भूतले ।।५२
अवतीर्णे ततस्तस्मिन्नीले परम दारुणे ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

क्रूरधुद्धया मणेस्तस्मान् निर्जग्मुः शस्त्रपाणयः ॥५३
सरथाः सध्वजाः साश्वाः सवर्णाः सासिचर्मिणः ।
सधनुष्काः सतूणीरा योधाः परम दुर्जयाः ॥५४
तथा प्रवृत्ते तुमुले च युद्ध हतः स राज्ञः सचिवो विसंज्ञः ।
सहानुगः सर्वं बलेरुपेतो जगाम वैवस्वत मन्दिराय ॥५५
तस्मिन्हते दुर्जयराजमन्त्रिणि उपाययौ सेन बलेन राजा ।
स दुर्जयः साश्वरथोऽति तीव्रः प्रतापवांस्तैर्मणिजैर्युयोध ॥५६

ब्राह्मण के भाषित को सुनकर राजा क्रोध से भर गया था और उस दुर्जय राजा ने नील—नाम वाले को आदेश दिया था कि तुम बहुत ही शीघ्र उस ब्राह्मण के पास जाओ और ब्राह्मण की मणि को लेकर शीघ्र स्वच्छता मेरे पास वापिस आ जाओ। ५०॥ इस तरह से कहा नील बहुत-सी सेना के परिच्छद से युक्त होकर वन में जो मुनि का आश्रम था वहां पर वह नील गया था॥ ५१ ॥ वहाँ पर जो अग्नि होत्र की शाला थी उसी में वह मणि रक्खी हुई थी उसको देखकर नील अपने रथ से भूतल में उतरा था॥ ५२॥ इसके अनन्तर उस परम दारुण नील के अवतीर्ण होने पर उस मणि से क्रूर बुद्धि से शस्त्रों क हाथों में रखने वाले योधा निकल पड़े थे ॥ ५३ ॥ रथों से युक्त—सध्वज--अश्वों से समन्वित—खड्ग और ढाल लिये हुए—धनुषधारी और तूणीरों से युक्त परम दुर्जय योधा बाहिर निकल आ गये थे ॥५४॥ इसके उपरान्त बड़ा घोर युद्ध हुआ था और उस युद्ध में वह राजा का मन्त्री मूर्च्छित हो गया था वह मन्त्री अपने अनुचरों और समस्त सैनिकों के साथ यमराज के पुर में चले गये थे॥ ५५॥ अर्थात् सभी मृत हो गये थे उस दुर्जय राजा के मन्त्री के निहत होजाने पर फिर अपनी सेना को लेकर वह राजा स्वयं युद्ध करने के लिये वहाँ समागत हुआ था। और उस राजा ने अश्वों के सहित प्रतापवान् ने उन मणि से समुत्पन्न योधाओं के साथ उस तीव्र में युद्ध किया था ॥५६॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चिन्तयामास देवेशं हरिं गौरमुखो मुनिः ।
स देव पुरस्तस्य पीतवासाः खगासनः ।
किमत्र ते मया कार्यमिति वाणीमुदीरयन् ।।५७
स ऋषि प्राञ्जलिर्भूत्वा प्रोवाच पुरुषोत्तमम् ।
जहीमं दुर्जयं पापं सैन्टेन परिवारितम् ।।५८
एवं मुक्तं तदा तेन चक्रंज्वलनसन्निभम् ।
तेन चक्रेण तत्सैन्यमसुरैर्दुर्जयंबलात् ।।५९
निमेषान्तरमात्रेण समग्र भस्मसात् कृतम् ।
एवंकृत्वा ततो देवो मुनि गौरमुखे तदा ।।६०
उवाच निमिषेणेदं निहतं दानवं कुलम् ।
अरण्येऽस्मिन्स्ततस्त्वेवं नैमिषारण्य संज्ञितम् ।।६१
भविष्यति यथार्थं वै ब्राह्मणानां निवेशनम् ।
अहं च यज्ञपुरुष एतस्मिन्वनगोचरे ।।६२
एव मुक्ता ततो देवो गतोऽन्तर्द्धानमीश्वरः ।
द्विजोऽपि स्वाश्रमे तस्थौ मुदा परमया युतः ।।६३

उस समय में गौर मुख मुनि ने देवेश्वर भगवान् हरि का चिन्तन किया था। और पीताम्बर धारी गरुड़ पर समारूढ वे देवेश्वर उसके समक्ष में प्रादुर्भूत हुए थे। और उन्होंने मुनि से यह वाणी कही—यहाँ पर मुझे जो तूने स्मरण किया सो तेरा क्या कार्य है ? ।।५७।। वह ऋषि हाथ जोड़कर भगवान् पुरुषोत्तम से बोला था—हे भगवन् ! इस दुर्जय राजा का जो महान् पापी है सेना के सहित आप इसका वध कीजिए ।। ५८ ।। इस तरह से जब उस ऋषि ने भगवान् से प्रार्थना की थी तो अग्नि के समान उस सुदर्शन चक्र के द्वारा भगवान् ने असुरों से दुर्जय उस दुर्जय राजा को सेना के सहित एक निमेष मात्र में ही भस्म के समान कर दिया था। इस प्रकार से करके उस समय में देवेश्वर मुनि से बोले—मैंने इस दानवोंके कुल का एक ही निमेष मे निहनन कर दिया है। यह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उस अरण्य में ही युद्ध हुआ था जिसमें निभेष में ही सब दानवों का संहार हुआ था। तभी से वह अरण्य नैमिषारण्य—इस नाम से प्रसिद्ध हो गया था ॥ ५६ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ यह अरण्य यथार्थ रूप से ब्राह्मणों का ही निवेशन होगा। और इस वन में मैं ही यज्ञ पुरुष गोचर रहूँगा ॥ ६२ ॥ इस प्रकार से कहकर फिर वे देवेश्वर अन्तर्धान हो गये थे। और वह ब्राह्मण भी परम हर्ष के साथ उस आश्रम में स्थित हो गया था ॥ ६३ ॥

१२—दुर्जय को नारायण का वर प्रदान

ततस्तत्र रथाङ्गाग्नौ दग्धान् श्रुत्वा न ऐत्तमान् ।
महच्छोक परीतात्मा चिन्तयामास पार्थिवः ॥१
तस्य चिन्तयतस्त्वेवं तत्त्व बुद्धिर जायत ।
चित्रकूटे गिरौ विष्णू राघवश्च प्रकीर्त्यते ॥२
ततोऽहं नामसंज्ञाभिः हरिं स्तौमि जगत्पतिम् ।
इति संचित्य नृपतिर्जगाम गिरिमुत्तमम् ॥३
चित्रकूटं महापुण्यं नृपः स्तोत्रमुदीरय न ॥४
नमामि रामं नरानाथमच्युतं कविं पुराणं त्रिदशारिनाशनम् ।
शिवस्वरूपं प्रभवं महेश्वरं सदा प्रयन्नार्त्तिहरं धृत श्रियम् ॥५
भवान् सदा देव समस्ततेजसां करोपि तेजांसि समस्त रूप धिक् ।
क्षितौ भवान् पंचगुठास्तथा जले चतुप्रकारस्त्रिविधोऽथ तेजसि ॥६
द्विधाऽथ वायौ वियति प्रतिष्ठतो भवान् हरिः शब्दचारः पुमानसि
भवान्च्छशी सूर्यंहुताशनोऽसि त्वयि प्रलीनजगदेतदुच्यते ॥७

इसके अनन्तर जब राजा ने यह सुना था कि सुदर्शन चक्र की अग्नि में अच्छे नर दग्ध हो गये हैं तो राजा को बड़ा भारी शोक हुआ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था और उसने चिन्तन किया था। उसके इस तरह से चिन्तन करते हुए उसको तत्त्व बुद्धि उत्पन्न हुई थी कि चित्रकूट गिरि पर भगवान् विष्णु और श्री राघव का कीर्त्तन किया जाया करता है। तो मैं भी वहाँ पर नाम संज्ञाओं के द्वारा भगवान् जगत्पति का वहाँ पर स्तवन करूँ। यह सोचकर वह राजा उत्तम गिरि को चला गया था ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ३ ॥ उस राजा ने महा पुण्य चित्रकूट स्तोत्र को उद्दीरित किया था ॥ ४ ॥ मैं नरों के नाथ—अच्युत—कवि—पुराण और देवों के शत्रुओं के विनाश करने वाले श्रीराम को प्रणाम करता हूं। शिव स्वरूप—श्री को धारण करने वाले—महेश्वर—प्रभव और तुरन्त ही शरणागतों की पीड़ा के विनाश करने वाले को मैं प्रणाम करता हूँ। हे देव ! आप समस्त रूपों के धारण करने वाले हैं और आप ही सदा समस्त तेज स्त्रियों के तेज को किया करते हैं। पृथ्वी में आप पाँचों गुणों से युक्त होकर रहा करते हैं—जल में चार और तेज में तीन प्रकार के गुणों से युक्त निवास किया करते हैं। वायु में दो प्रकार के गुणों से तथा आकाश में आप शब्द चर पुमान् होकर सञ्चरण किया करते हैं। आप ही चन्द्र—सूर्य और अग्नि के स्वरूप धारी हैं और यह सम्पूर्ण जगत् आप ही में प्रलीन होता है—यह कहा जाता है ॥ ५—७ ॥

भवत्प्रतिष्ठं रमते जगद्यतः ततोऽसि रामेति जगत्प्रतिष्ठितः।
भवार्य वे दुःख तरोर्मिसंकुले तयाक्षमीनग्रहनक्रभीषणे ॥८
न मज्जति त्वत्स्मरणप्लावा नरा स्मृतोऽसि रामेति तथा तपोवने।
वेदेषु नष्टेषु भवांस्तथा हरे करोषि मात्स्यं वपुरात्मनः सदा ॥९
युगक्षपे रंजितसर्वदिङ्मुखे भवांस्तथाग्निः वहुरुपधृग्विभो।
कौर्म्मं तथा स्वं वपुरास्थितः सदा युगे युगे माधव सिन्धुमन्थने ॥ १०
न चान्यदस्तीति भवसत्मां क्वचित् जनार्दनाद्य प्रभूव चोत्तमम्।
त्वया ततं विश्वमिदं महात्मँल्लोकाखिला वेद दिशश्च सर्वाः ॥११

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कथं त्वमाद्यं परमे तु धाम विहाय चान्यं शरणं व्रजामि ।
भवानेकः पूर्वमासीत्ततश्च महानहं सलिलं वह्निरूपैः ।
वायुस्तथा खं च मनोऽपि बुद्धिस्ततो गुणास्त्वत्प्रभवंच सर्वम् ॥१२
त्वया ततं विश्वमिदं समस्तं सनातनस्त्वं पुरुषोमतोमे ।
समस्त विश्वेश्वर विश्वमूर्ते सहस्रवाहो जय देवदेव ॥१३
नमोऽस्तु रामाय महानुभाव इमि स्तुतो देव वरः प्रसन्नः ।
तदा तु राज्ञः सुप्रतीकाय मूर्ति सन्दर्शयामास ततोऽभ्युवाच ॥१४

आप ही में प्रतिष्ठित होकर यह जगत् रमण किया करता है—इसी कारण से आप राम—इस नाम से जगत में प्रतिष्ठित होते हैं। यह संसार रूपी महा सागर है इसमें अतीव दुःखों की ऊर्मियां हैं जिनसे यह संसार सागर महान् संकुल हो रहा है और यह भी न—ग्राहन कों से बहुत ही भीषण है ॥ ८ ॥ आपके नाम के स्मरण रूपी प्लव से मनुष्य इससे पार होता है और उसमें निमग्न नहीं हुआ करता है। आप तपो वन में इसी नाम से स्मृत किये जाते हैं। वेदों के नष्ट होने पर आपही ने मत्स्य का वपु धारण करके उनका उद्धार किया था ॥९॥ हे विभो ! युग के क्षय में जब कि सभी दिशाओं के मुख रञ्जित होगये थे उस समय में आप बहुत रूपों के धारण करने वाले अग्नि थे। हे माधव ! सिन्धु के मन्थन के समय में आपने अपना कर्म स्वरूप बना लिया था और सदा ही युग-युग में आप ऐसा किया करते हैं ॥ १० ॥ हे स्वामिन् ! आपके समान कहीं पर भी अन्य कोई भी नहीं हैं क्योंकि यह सभी भगवान् जनार्दन से ही प्रभूत होता है। हे महात्मन् ! आपने ही इस सम्पूर्ण विश्व का विस्तार किया है। ये समस्त लोक—दिशाऐं—वेद इन सबका विस्तार आपही से हुआ है ॥ ११ ॥ फिर क्यों परम और परषोत्तम धाम आपको त्याग कर मैं अन्य की शरण में जाऊँ। पूर्व में आप एक ही थे आपसे ही महान्—अहङ्कार—जल—वह्नि वायु—आकाश—मन—बुद्धि और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सब गुण हुए । यह सबका प्रथ व आप ही से हुआ है ।। १२ ।। इस समस्त विश्व को आपने ही बनाया है। आप सनातन पुरुष हैं समस्त विश्व का मरण करने वाले आप हैं और यह विश्व भी आपकी ही मूर्त्ति है। हे सहस्रों बाहुओं वाले देव ! आप देवों के भी देव हैं आपकी जय होवे ।। १३ ।। हे महानुमाव ! श्रीराम के लिये मेरा नमस्कार है— इस प्रकार से जब भगवान् का स्तवन किया गया तो देवेश्वर प्रसन्न हो गये थे। उस समय में प्रतीक राजा के लिये अपनी मूर्त्ति का दर्शन करा दिया था अर्थात् राजा के सामने प्रत्यक्ष होकर दर्शन दिया था। और उन्होंने उससे यह कहा था ।। १४ ।।

वरं वृणोष्वेति च सुप्रतीक एवं श्रुत्वा वचनं तस्य राजा ससम्भ्रम देववरं प्रणम्य । उवाच देवेश्वर मे प्रयच्छ लयं यदास्ते परमं वपुस्ते ।।१५

इतीरिते राजवरः क्षणेन लयं तथाऽगदासुरघ्न मूर्मौ ।
ध्यानेन युक्तः पुरुषं गृणन्तं स्थितस्तस्मिन् आत्मभूतो
विमुक्तः स भूमिपः कर्मकाण्डैर नेकैः ।।१६

हे सुप्रतीक ! तुम वरदान का वरण करलो—इस वचन का श्रवण करके राजा ने सम्भ्रय के साथ देव वर को प्रणाम किया था और उसने प्रार्थना की थी कि हे देवेश्वर ! मुझे लय प्रदान कीजिए जो यह आपका परषोत्तम वपु है इसी में मैं लय हो जाऊँ ।। १५ ।। इतना कहने पर वह श्रेष्ठ राजा उन असुरों के नाश करने वाले प्रभु की मूर्त्ति में एक ही क्षण में लय को प्राप्त हो गया था। ध्यान से युक्त होकर पुरुषोत्तम का ध्यान करके ग्रहण करते हुए आत्मभूत होकर उन्ही में स्थित हो गया था और वह राजा अनेक कर्म काण्डों से विमुक्त हो गया था ।। १६ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

१३—श्राद्ध कल्प

लोकाः सन्तानका नाम यत्र तिष्ठन्ति भास्वराः ।
देवानां पितरस्ते हि तान्य जन्तीह देवताः ।।१
एते वै लोक विभ्रष्टा लोकान् प्राप्य सनातनान् ।
पुनर्युगशतान्तेषु जायन्ते ब्रह्मवादिनः ।।२
तस्मात् श्राद्धानि देयानि योगिनां योगिसत्तम ।
एष वै प्रथमः सर्गः सोमपानामनुत्तमः ।।३
श्राद्धस्य कालान्वक्ष्यामि तच्छृणुष्व द्विजोत्तम ।
श्राद्धार्हमागतं द्रव्यं विशिष्टमथवा द्विजम् ।।४
श्राद्धं कुर्वीत विज्ञाय व्यतीपातेऽयने तथा ।
विषुवे चैव संप्रोप्त ग्रहणं शशिसूर्ययोः ।
समस्तेष्वेव विप्रेन्द्र राशिष्वर्केऽति गच्छति ।।५
नक्षत्र ग्रहपीडासु दुष्ट स्वप्नाव लोकने ।
इच्छ्याश्रद्धानि कुर्वीत नव सस्यागमे तथा ।।६
अमावस्या यदा आर्द्रा विशाखस्वातियोगिनी ।
श्राद्धै पितृगणस्तृप्ति तदाप्नोत्यष्ट वार्षिकी ।।७

जहाँ पर परम भास्वर सन्तानक लोक स्थित हुआ करते हैं वे देवों के पितर हैं ।। १ ।। यहाँ पर देवगण उनका यजन किया करते हैं। ये लोक विभ्रष्ट समातन लोकों को प्राप्त करके फिर सैंकड़ों युगों के अन्त में ब्रह्मवादी समुत्पन्न हुआ करते हैं ।। २ ।। हे योगियों मे परम श्रेष्ठ। इसी कारण से योगियों को श्राद्ध देने चाहिए। यह सोमयों का उत्तम प्रथम सर्ग है ।। ३ ।। हे द्विजोत्तम ! अब मैं श्राद्धों के कालों को बतलाता हूँ। इसका आप श्रवण कीजिए। श्रद्धा के योग्य आया हुआ द्रव्य अथवा विशिष्ट द्विज को जानकर ही व्यतीपात तथा अवन में श्राद्ध करो। विपुव के प्राप्त होने पर—शशि और सूर्य के ग्रहण की वेला में हे विप्रेन्द्र ! सभी राशियों सूर्य के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

संक्रमण करने के समय मे ।। ५ ।। नक्षत्र– ग्रह पीड़ाओं में तथा बुरे स्वप्नों के अवलोकन करने पर इच्छा श्राद्धों को करे तथा नूतन सस्थों के समागमन करो ।। ६ ।। जिस समय में अमावास्या तिथि आर्द्रा— विशाखा और स्वाती नक्षत्र के योग वाली होवे उस अवसर पर श्राद्ध करने से पितृगणों तृषि ऐसी होती है जो आठ वर्षों तक रहा करती है। अतएव ये अवसर श्राद्ध करने का वहुत ही उत्तम होता है ।। ७ ।।

अमावस्या यदापुष्ये रौद्रेऽर्क्षे च पुनर्वसौ ।
द्वादशाब्दं तथा तृप्ति प्रायान्ति पितरोऽर्च्चिताः । ८
रत्न वस्त्र महायानं सर्वं तोयादिकं वसु ।
विभवे सति विप्रेभ्यः अस्मानुद्दिश्य दास्यति ।।९
अन्नेन वा यथाशक्त्या कालेस्मिन् भक्ति नम्रधीः ।
भोजयिष्यति विप्राग्र्यांस्तन्मात्र विभवो नरः ।।१०
असमर्थोऽन्नदानस्य वन्यशाकं स्वशक्तितः ।
प्रदास्यदि द्विजाग्रेयेभ्यः स्वल्पांयो वापि दक्षिणाम् ।।११
तत्राप्यसामर्थ्ययुतः करगृंह्यसि तांस्तिलान् ।
प्रणम्य द्विजमुख्याय कस्मैचिदपि दास्यति ।।१२
तिलैः सप्ताष्टभिर्वापि समवतं जलांजलिम् ।
भक्तितम्रः समुद्दिश्नं योऽस्माकं सम्प्रदास्यति ।।१३
यतः कुतश्चित्सम्प्राप्य गोभ्यो वापि गवाह्निकम् ।
अभावे प्रगियेत्तस्माद् भक्त्या युक्तः प्रदास्यति ।।१४

जब अमावस्था में पुष्य—रौद्रादि और पुनर्व सू होवे तव श्राद्ध करने से तथा पितृगण का अर्चन करने से वारह वर्ष पर्यन्त के तृप्त हो जाया करते हैं ।। ८ ।। रत्न—वस्त्र—महापान—सब तोपादिक वसु विभव के होने पर जो हमारा उद्देश्य करके विश्री को देगा और इस काल में भक्ति वाला सुधी यथा शक्ति अन्न के द्वारा विप्रों को भोजन करावेगा वहनर उतने ही वैभव वाला रहेगा ।। ९ ।। १० ।। जो अन्नके दान करने में असमर्थ होवे वह अपनी शक्तिके अनुसार जंगली

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शाक को ही उत्तम विप्रों को देगा और स्वल्प दक्षिणा भी देगा और उसमे सामर्थ्य से रहित होवे तो करो के द्वारा उन तिलों का ग्रहण करके प्रणाम पूर्वक किसी भी द्विज श्रेष्ठ को देगा। सप्त—आठ तिलों से युक्त जल की अञ्जलि भक्ति से नम्र होकर हम लोगो के उद्देश्य करके देगा उससे भी हमारी तृति हो जाती है॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ जहाँ कहीं से भी गायों से अथवा गवादिक को प्राप्त करके अभाव में भक्ति से युक्त होकर प्रदान किया करता है वह भी हमको प्रीणित किया करता है॥ १४ ॥

सर्वाभावे वनं गत्वा कक्षमूलप्रदर्मकः ।
सूयादिलोकपाल नापिदिमुच्चैः पठिष्यति ॥१५
नमेऽस्ति वित्तनधनं न चान्यच्छ्राद्धस्य योग्यं स्वपितृन्नतोऽस्मि ।
तृप्यन्तु भक्त्या पितरो मयैतौ भुजौ ततौ वर्त्मनि मारुतस्य ॥१६

इस सभी के अभाव में वन में गमन करके कन्द मूल का प्रदर्शक होवे और सूर्यादि को तथा लोकपालों को देने की इच्छा वाला होते हुए ऊँचे स्वर से यह पढ़ेगा कि मेरे पास धन नहीं है और अन्य प्रकार का कोई विघ्न है जो श्राद्धके योग्य हो मेरे पास कुछ भी नहीं है अतएव मैं अपने पितृगण के लिये प्रणाम करता हूँ। मेरे पितृगण इसी से तृप्त हो जावें। मैं अपनी इन भुजाओं को मारुत के मार्ग मे ऊपर की ओर उठा रहा हूँ। इसी से मेरे पितृगण सब तृप्ति प्राप्त करें। इतना ही करने की मेरी शक्ति है ॥१५॥१६॥

१४—श्राद्ध के योग्य और अयोग्य ब्राह्मण

एतन्मे कथितं पूर्वं ब्रह्मपुत्रेण धीमता ।
सनकानुजेन विप्रर्षे ब्रह्मणा शृणु साम्प्रतम् ॥१
त्रिणाचिकेतस्त्रिमधुस्त्रि सुपर्ण षडङ्गवित् ।
ऋत्विजं भागिनेयं च दोहित्रं श्वशुरं तथा ॥२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जामातरं मातुलंच तपोनिष्ठ च ब्राह्मणम् ।
पंचाग्न्यभिरतं चौव शिष्यं सम्बन्धिनं तथा ।।३
मातापितृरतं चैव एतान् श्राद्धे नियोजयेत् ।
मित्रध्रुक्कुनखी चौव श्यावदन्तस्तथा द्विजः ।।४
कन्यादूषयिता चौव वह्निदा सोम विक्रयी ।
अभिशप्तस्तथा स्तेनः पिशुनो ग्रामयाजकः ।।५
भृतकाध्यापकश्चौव सूतकाध्यापकश्च यः ।
परपूर्वापतिश्चौव मातापित्रोस्त्वरक्षकः ।।६
वृषलीसूतिपोष्यश्च वृषली पतिरेव च ।
तथा देवलकश्चौव श्राद्धे नार्हन्ति केतनम् ।।७

हे विप्रर्षे ! यह सब आपको परम धीमान् ब्रह्माजी के पुत्र समक के अनुज ने कह दिया है अब आप श्राद्ध के योग्य ब्राह्मणों के विषय में श्रवण कीजिए ।। १ ।। त्रिणा चितेत—त्रिमधु—त्रिसुपर्ण और षडङ्गवित् ब्राह्मण होना चाहिए । ऋत्विज—भागि नेय—दौहित्र तथा भाशुर—जामाता—मातुल और तप में निष्ठा रखने वाला ब्राह्मण होना चाहिए । पाँचों अग्नियों में अभिरत हो शिष्य तथा कोई सम्बन्धी होवे ।। २ ।। ३ ।। जो अपने माता पिता में अभिरति रखने वाला होवे ऐसे ही ऊपर में बताये हुए ब्राह्मणों को श्राद्ध में नियोजित करना चाहिये । जो अपने मित्रों से द्रोह करने वाला हो—जिसके कुनख होवें—जो श्यावहन्त होवे—जो कन्या को दूषित करने वाला द्विज हो—जो अग्नि लगाने वाला हो तथा सोम का विक्रय करने वाला द्विज होवे । जो अभिशप्त हो—चोरी करने वाला हो—पिशुन हो और ग्राम याजक द्विज होवे—जो भृत का ध्यापक हो अर्थात् धन लेकर अध्यायन करने वाला हो तथा जो सूत का ध्यापक हो जो पर पूर्वा पति हो और जो अपने माता—पिता की रक्षा न करने वाला होवे ।। ४ ।। ५ ।। ६ ।। जो वृषली सूति हो तथा वृषर भी पोषित हुआ हो एवं वृषली का पतिहो तथा जो देवचक्र हो ये सभी श्राद्ध

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में रहने के योग्य नहीं होते हैं। अर्थात् ऐसे ब्राह्मणों को कभी भी श्राद्ध में आमन्त्रित नहीं करना चाहिए। वृषली का अर्थ शूद्राणी होता है ॥ ७ ॥

प्रथमेह्नि बुधः कुर्याद्विप्राग्रयाणां निमंत्रणम् ।
आनिमन्त्र्य द्विजान्पश्चादागतान्भोजयेद्यतीन ॥८
पादशौचादिना गेहमागतान् भोजयेद् द्विजान् ।
पवित्रपाणिराचान्तानासनेषूपवेशयेत् ॥९
पितृणामयुजो युग्मं देवानामपि योजयेत् ।
देवानामेकमपि वा पितृणां च निवेदयेत् ॥१०
तथा मातामह श्राद्धं वैश्वदेवसमन्वितम् ।
कुर्वीत भक्तिसम्पन्नास्तन्त्रं वा वैश्वदेविकम् ॥११
प्राङ्मुखं भोजयेद्विप्रं देवानामुभयात्मकम् ।
पितृपैतामहानां च भोजयेच्चाप्युदङ्मुखान् ॥१२
पृथक् तयोः केचिदाहुः श्राद्धस्य करणं द्विजः ।
एकवैकेन पात्रेण वदन्त्यन्ये महर्षयः ॥१३
विष्टरार्थं कुशान्दत्त्वा सम्पूज्यार्घविधानतः ।
कुर्यादावाहनं प्राज्ञो देवानां तदनुज्ञया ॥१४

जिस दिन श्राद्ध किया जावे उसके प्रथम दिन में बुध पुरुष को ब्राह्मण का निमन्त्रण कर देना चाहिए। द्विजों को आमन्त्रित करके पीछे आये हुए यतियों का भोजन करावे ॥ ८ ॥ गृह पर समागत द्विजों को पाद शौचादिक कृत्य करके उन्हें पीछे भोजन कराना चाहिए। पवित्र करों वाला होकर आचमन किये हुए ब्राह्मणों को परम श्रेष्ठ आसनों पर बिठाना चाहिए। पितृगणों का अयुज युग्म और देवों को भी ऐसा ही होना चाहिए। और देवों का तथा पितृगणों का एक भी निंदित करे ॥ १० ॥ उसी भाँति मातामह का श्राध वैश्वदेव से समन्वित ही करे। अथवा भक्ति से सम्पन्न होकर तन्त्र वैश्व देविक को करे ॥ ११ ॥ पूर्व

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की ओर मुख किये हुए विप्र को भोजन कराना चाहिए और देवों का उभयात्मक करे। पितृ पितामहों के निमित्त जो श्राद्ध करे उसमें विप्रों का मुख उत्तर की ओर कराके ही उन्हें भोजन करावे ॥ १२ ॥ कुछ मनीषीगण उन दोनों का पृथक कहते हैं। अर्थात् पृथक्-पृथक् श्राद्ध का करना बतलाते हैं। अन्य महर्षि गण एक का ही एक पात्र के द्वारा बतलाते हैं ॥ १३ ॥ विप्रों के लिये निष्टर के वास्ते कुशों को देवे अर्थात् पितृगण का आवाहन करके उनको ही विष्ठरार्थ दर्भों को देना चाहिए। और विधि-विधान से उनका भली भाँति पूजन करे। उनकी आज्ञा से प्राज्ञ पुरुष को देवों का आवाहन करना चाहिए ॥१४॥

यवाम्बुना च देवानां दद्यादर्घं विधानवित् ।
सुगन्धधूपदीपांश्च दत्त्वा तेभ्यो यथाविधि ॥१५
पितृणामयसव्येन सर्वमेवोप कल्पयेत् ।
अनुज्ञां च ततः प्राप्य दत्त्वा दर्भान्द्विधाकृतान् ॥१६
मन्त्रपूर्वं पितृणां तु कुर्यादावाहनं बुधः ।
तिलाम्बुना चापसव्यं दद्यादर्घादिकं बुधः ॥१७
काले तत्रातिथिं प्राप्तमन्नकामं द्वि जाध्वगम् ।
ब्राह्मणैरभ्यनुज्ञातः कामं तमपि पूजयेत् ॥१८
योगिनो विविधं रूपैर्नराणामुपकारिणः ।
भ्रमन्ति पृथिवीमेतामविज्ञात स्वरूपिणः ॥१९
तस्मादभ्यर्च्चयेत् प्राप्तं श्राद्धकालेऽतिथिं बुधः ।
श्राद्धक्रिया फलं हन्ति द्विजेन्द्रापूजितोऽतिथिः ॥२०
जुहुयाद् व्यंजन क्षीरेर्वर्ज्यमन्नं ततोऽनले ।
अनुज्ञातो द्विजैस्तैस्तु त्रिःकृत्वा पुरुषर्षभ ॥२१

विधि—विधान के ज्ञान रखने वाले बुद्ध पुरुष को जौ और जल के द्वारा देवों को अर्घ्य देना चाहिए। सुन्दर गन्ध से समाविन्त धूप और दीप का समर्पण कर उनका यथा विधि अभ्यर्चन करे। पितृगणो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को जो भी समर्पित किया जावे सर्भदा अप सव्य होकर ही कल्पित करना चाहिए। और फिर अनुज्ञा प्राप्त करके दो भागों मे विभक्त किये हुए दर्भों को देवें ॥ १५ ॥ १६ ॥ बुध पुरुष को चाहिए कि मन्त्रोच्चार के साथ ही पितृगणों का वहाँ पर आवाहन करे। बुध मिश्रित जल से अप सव्य होकर उनके अर्घादिक देवे ॥ १७ ॥ उस अवसर पर प्राप्त हुए अतिथि का तथा अन्न की कामना वाले मार्गं व्यमी द्विज को ब्राह्मणों द्वारा अनुज्ञात होकर अर्थात् आज्ञा प्राप्त करके इच्छा पूर्वक उसका भी पूजन करना चाहिए ॥ १८ ॥ योगिगण अनेक रूपों के नरों का उपकार करने वाले अविज्ञात स्वरूप को धारण करते हुए इस भू मण्डल में भ्रमण किया करते हैं ॥ १९ ॥ इसी कारण से बुध पुरुष को चाहिए कि श्राद्ध के अवसर पर प्राप्त हुए अतिथि का अवश्य ही अर्चन करे द्विजेन्द्र ! पूजित न हुआ अतिथि श्राद्ध के की क्रिया फल का हनन कर दिया करता है ॥ २० ॥ हे पुरुषों में परम श्रेष्ठ ! क्षारों से वर्ज्य व्यञ्जन अन्न का फिर अग्नि में हवन करना चाहिए। द्विजों के द्वारा अनुज्ञा प्राप्त करके तीन वार करे ॥ २१ ॥

अग्नये कव्य वाहनाय स्वाहेति प्रथमाहुतिः।
सोमाय वै पितृमते दातव्या तदनन्तरम् ॥२२
वैवस्वताय चैवान्या तृतीया दीयते तु सा।
हुतावशिष्टमल्पाल्पं विप्रपात्रेषु निर्वपेत् ॥२३
ततोऽन्नं मृष्टमत्यर्थमभीष्टमभिसंस्कृतम्।
दत्त्वा जुषध्वमिच्छातो वाच्यमेतदनिष्ठुरम् ॥२४
भोक्तव्यं तैश्च तद्चित्तैः मौनिभिः सुमुखैः स्थिरम्।
अक्रुध्यताप्यन्नवता देयं तेनापि भक्तितः ॥२५
रक्षोघ्न मन्त्र पठनं भूमेरास्तरणं तिलैः।
कृत्वाज्यपाश्च पितरस्त एव द्विजसत्तमाः ॥२६
पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मम तृप्तिं प्रयान्त्वद्य होमाध्यासितमूर्त्तयः ॥२७
पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
मम तृप्तिं प्रयान्त्वद्य विप्रदेहेषु संस्थिताः ॥२८

कव्य वाहन अग्नि के लिये स्वाहा—यह कहकर प्रथम आहुति देवे। पितृमान् सोम के लिये इसके अनन्तर दूसरी आहुति देनी चाहिए ॥ २२ ॥ तीसरी अन्य आहुति वैवस्वत के लिये देनी चाहिए। हनन करके जो भी अवशिष्ठ हो उसमें से थोड़ा-थोड़ा विप्रों के पात्रों में निर्वपन कर देने ॥ २३ ॥ इसके अनन्तर यष्ट और अत्यधिक अभीष्ट तथा सुसंस्कृत विप्रों को समर्पित करके उनसे अत्यन्त मधुर एवं विनम्र वाणी में निवेदन करे—आप सेवन करिए और इच्छा पूर्वक ग्रहण कीजिए ॥ २४ ॥ उसके विज्ञ—सुमुख और मौन व्रतधारी विप्रों के द्वारा स्थिर होकर उनको भी भोजन करना चाहिए उसको भी बिना क्रोध किये हुए अन्न को भक्ति की भावना के साथ ही परिवेषण करना चाहिए ॥ २५ ॥ राक्षसों के हनन करने वाले मन्त्रों का पाठ करे तथा तिलों के द्वारा भूमि का आस्तरण करे। आज्यय पितृगण वे दी द्विज श्रेष्ठ होते हैं ॥२६॥ ससय में निम्न पंक्तियों को कहना चाहिए—मेरे पिता—पितामह और प्रपिता यह होम के द्वारा अध्यासित मूर्त्तियों वाले मेरे समर्पित अन्नादि के द्वारा तृप्ति को प्राप्त होवें। जो कि इस समय में इन विप्रवरों के देहों में संस्थित होकर विराजमान हैं ॥ २८ ॥

पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
तृप्तिं प्रायान्तु पिण्डेषु मया दत्तेषु भूतले ॥२९
पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
तृप्तिं प्रयान्तु मे भक्त्या यन्मयैतदुदाहृतम् ॥३०
मातामहस्तृप्तिमुपैतु तस्य तथा पिता तृप्तिमुपैतु योऽन्यः ।
विश्वेऽथ देवाः परमां प्रयान्तु तृप्तिं प्रणश्यन्तु च यातुधानाः ॥३१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यज्ञेश्वरो यज्ञसमक्तनेता भोस्ताऽव्ययात्मा हरिरीश्वरोऽत्र।
तत्सन्निधानादपयान्तु सद्यो रक्षांस्यशेषाण्य सुराश्च सर्वो ॥३२
तृप्तेष्वेतेषु विप्रेषु किरेदन्नं महीतले।
दद्यादाचमनार्थाय तेभ्यो वारि सकृत् सकृत् ॥३३
सुतृप्तै स्तैरनुज्ञातः सर्वेणान्नेन भूतले।
सलिलेन ततः पिण्डान् सम्यग्गृह्य समासतः ॥३४
पितृतीर्थेन सलिल तथैव सलिलांजलिम्।
मातामहेभ्यस्तेनैव पिण्डांस्तीर्थेषु निर्वपेत् ॥३५

मेरे पिता—पितामह और प्रपिता यह मेरे द्वारा भूतल में प्रदत्त पिण्डों में तृप्ति करें अर्थात् सु तृप्त हो जावें ॥ २९ ॥ मेरे पिता श्री—पितामह तथा प्रपिता मह मेरी भक्ति से जो भी मेरे द्वारा उदाहृत है उससे तृप्ति की प्राप्ति करें ॥ ३० ॥ मातामह—प्रमातामह तथा वृद्ध प्रमाता मह भी तृप्ति को प्राप्त करें। इसके पश्चात् विश्वे देवा परम तृप्ति को प्राप्त करें और जो यातु धान हैं वे विनाश को प्राप्त हो जावें ॥ ३१ ॥ यज्ञों का ईश्वर समस्त यज्ञों के नेता—अव्यमात्मा—ईश्वर हरि यहाँ पर भोक्ता होवे। उन हरि के सन्निधान होने से अशेष राक्षस और सव सुरगण यहाँ से अपमान करें ॥ ३२ ॥ इन दिनों के सु तृप्त हो जाने पर अन्न को भूतल में विखेर देना चाहिए। इसके अनन्तर उन विप्रों के लिये एक-एक बार जल देना चाहिए। जिससे वे आचमन करे ॥ ३३ ॥ जब वे विप्रगण भली भाँति तृप्त हो जावें तो उनकी आज्ञा से सम्पूर्ण अन्न से भूतल में तथा जल से उन पिण्डों को संक्षेप से ग्रहण करे और पितृ तीर्थ से जल को तथा जलाञ्जलि को देवे तथा मातामह आदि के लिये भी उसी के द्वारा तीर्थों में पिण्डों का निर्वपन करना चाहिए ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

दक्षिणाग्रेषु दर्भेषु पुष्पधूपादि पूजितम्।
स्वपित्रे प्रथमं पिण्डं दद्यादुच्छिष्ट सन्निधौ ॥३६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पितमहाय चैवान्यं तत्पित्रे च तथा परम् ।
दर्भमूले लेपभुजां लेपयेल्लेपघर्षणात् ।।३७
पिण्डैर्मातामहांस्तद्वद्गन्ध माल्यादि संयुतैः ।
पूजयित्वा द्विजाग्रयाणां दद्यादाचमनं बुधः ।।३८
पितृभ्यः प्रथमं भक्त्या तन्मनस्कौ द्विजेश्वरः ।
स्वस्त्यादि वाचयित्वा तु दद्याच्छक्त्या दक्षिणाम् ।।३९
दत्त्वा च दक्षिणां तेभ्यो वाचयेद्वैश्व देविकम् ।
प्रीयन्तामिति ये विश्वे देवास्ते स इतीरयेत् ।।४०
तथेति चोक्ते तैर्विप्रैः प्रार्थनीयास्तथाशिषः ।
तथा विसर्ज्जयेद्देवान् पूर्वं पैत्र्यान् महामते ।।४१
मातामहानामप्येवं सह देवैः क्रमात् स्थितैः ।
भोजने च स्वशक्त्या च दाने तद्वद् विसर्जने ।
आपादशौचनात् पूर्वं कुर्यादेवं द्विजन्मसु ।।४२

जिनका अग्रभाग दक्षिण की ओर होवे उन दर्भों में पुष्प—धूपादि से पूजित प्रथम पिण्ड को अपने पिता श्री के लिये उच्छिष्ट की सन्निधि में देना चाहिए ।। ३६ ।। और अन्य पिण्ड को पितामह के लिये देवे और इसके अनन्तर अन्य पिण्ड को प्रपिता मह को देना चाहिए दर्भो के मूल में लेप को भोग करने वालों काले पके घर्षण से लेप करे ।। ३७ ।। इसी भाँति मातामह दिक को गन्ध—माल्य आदि से समन्वित पण्डों के द्वारा पूजित करके वुध पुरुष को चाहिए कि श्रेष्ठ द्विजों को आचमन समर्पित करे ।। ३८ ।। द्विजेश्वर को चाहिए सर्व प्रथम भक्ति के भाव से उन्हीं में अपना मन लगाते हुए पितृगण के लिये स्वस्ति वाचन कराकर दक्षिणा देवे ।। ३९ ।। उन सबको दक्षिणा देकर वैश्वदेविक का वचान करावे फिर उसे "जो विश्वेदेवा हैं वे प्रीणित होवे''—यह सहना चाहिए ।। ४० ।। उसी भाँति उन विप्रों के द्वारा कहे जाने पर उनसे आशीर्वाद देने के लिये प्रार्थना करनी चाहिए । हे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

महापते ! फिर उसी भाँति देवों का विसर्जन करे और पूर्व में पितृगणों का विसर्जन करना चाहिए ।। ४१ ।। इसी भाँति माता मातामह आदि का भी देवों के साथ जो क्रम से स्थित हैं भोजन में और अपनी शक्ति से दान देने पर और उसी भाँति विसर्जन करने पर इसी प्रकार से द्विजों में आपाद शौचन से पूर्व में करना चाहिए ।। ४२ ।।

ज्ञानिनं प्रथमं विप्रं त्रिषु मातामहादिषु ।
तथा विसर्जययेत् प्राज्ञः सम्मान्याभ्यर्थिनस्ततः ।।४३
निवर्तेताभ्यनुज्ञात आद्वारान्तमनुव्रजेत् ।
ततस्तु वैश्वदेवाख्यां कुर्यान्नित्यक्रियां ततः ।।४४
भुज्जीयाच्च समं पूज्य भृत्यवन्धुभिरात्मना ।
एवं श्राद्धं बुधः कुर्यात् पित्र्यं मातामहं तथा ।
श्राद्धैराप्ययिता दद्युः सर्वान् कामान्पितामहाः ।।४५
वर्ज्यं तु कुर्वता श्राद्धं क्रोधोध्वगमनं त्वरा ।
भोक्तुं रज्यति विप्रेन्द्रै त्रयमेतन्न संशयः ।।४६
विश्वेदेवाः सपितरस्तथा मातामहा द्विज ।
कुलं चाप्यायितं पुंसा सर्व श्राद्धं प्रकुर्वता ।।४७
सोमाधारः पितृगणो योगाधारस्तु चन्द्रमाः ।
श्राद्धं योग नियुक्तं तु तस्माद् विप्रेन्द्र शस्यते ।।४८
सहस्रस्यापि विप्राणां योगी चेत् पुरतः स्थितः ।
सर्वान् भोक्तृंस्तारयति यजमानं तथा द्विज ।।४९
इयं सर्वपुराणेषु सामान्या पैतृकी क्रिया ।
एतत्क्रमात् कर्मकाण्डं ज्ञात्वा मुच्येत वन्धनात् ।।५०

इन तीनों माता मह आदि में जो विप्र ज्ञानी हो उसका और फिर प्राज्ञ सामान्य अभ्यर्थियों को विसर्जित करे अर्थात् विदाई देवे ।४३। द्वार के अन्तपर्यन्त उनके पीछे गमन करे और उनकी आज्ञा प्राप्त करके वापिस निवृत्त होना चाहिए । इसके अनन्तर वैश्व देव की क्रिया को

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सम्पादित करके फिर अपनी नित्य क्रिया को सम्पन्न करना चाहिये। ।।४४।। इसके अनन्तर अपने पूज्य वर्ग—बन्धु और भृत्यों के साथ स्वयं भी अपनी अशन क्रिया का सम्पादन करना चाहिए। इसी रीति से वुध पुरुष अपने पितृगण तथा माता मह आदि का श्राद्ध करे। पितामह आदि श्राद्धों के द्वारा आप्यायित होते हुए श्राद्ध करने वाले की सभी कामनाओं को पूर्ण किया करते हैं ।।४५।। जो भी श्राद्ध करने वाला है उसे क्रोध-मार्ग गमन और शीघ्रता का वर्जन कर देना चाहिए। विप्रेन्द्र के भोज्य में प्रसन्न होने पर अर्थात् भोजन के द्वारा परम सन्तुष्ट हो जाने पर हे द्विज ! यह तीन बातें निश्चित रूप से होती हैं और इसमें लेश मात्र भी संशय नहीं है। विश्वेदेवा—पितृगण और मातामह आदि सभी प्रसन्न एवं परम सन्तुष्ट होते हैं। सव श्राद्धों के करने वाले पुरुष के द्वारा सम्पूर्ण कुल आप्यायित हो जाया करता है ।।४६।।४७।। पितृगण सोम के आधार वाले हैं और चन्द्र योग के आधार वाला होता है। योग से विप्रयुक्त श्राद्ध इसी कारण से प्रशस्त हुआ करता है ।।४८।। सहस्रों विप्रों में यदि योगी होता है तो वह सबसे आगे स्थित हुआ करता है। हे द्विज ! सब भोक्ताओं को तथा यजमान को वह तार दिया करता है। यह सभी पुराणों में पैतृकी क्रिया सामान्य हुआ करती है। इस कर्म काण्ड को क्रम से जानकर मानव बन्धन से मुक्त हो जाया करता है ।।४६।।५०।

१५–दशावतार स्तोत्र से गौरमुख मुनि की मोक्ष

एवं श्राद्धविधि त्वा मार्कश्रुण्डेयान् महामुनिः।
तदा गौरमुखो देवः किमूर्व्वं कृतवा न सौ ।।१
एताच्छ्रुत्वा तदा धात्रि पितृतन्त्रं महामुनिः।
तत्स्मारितो जन्म शतं मार्कण्डेयेन धीमता ।।२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सस्मार सर्वजन्मानि स्मृत्वा चैव तु यत्कृतम् ।
तच्छृणुष्व वरारोहे कथयामि समासतः ।।३
प्रभासं नामयत्तीर्थं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ।
तत्र दैत्यान्तकं देवं स्तोतुं गौरमुखः स्थितः ।।४
स्तोष्ये महदं रिपुदर्पहं शिवं नारायणं ब्रह्मविदां वरिष्ठम् ।
आदित्य चन्द्राश्विययुगस्थमाद्यं पुरातनं दैत्यहरं सदा हरिम् । ५
चकार मात्स्यं वपुरात्मनोयः पुरातनं वेदविनाशकाले ।
महामहीभृद् वपुरग्र पुच्छच्छटा हर्वाच्चिः सुरशत्रुहाद्य ।।६
तथाब्धिमन्थान कृते गिरीन्द्रंदधार यः कौर्मंवपुः पुराणम् ।
हितेच्छयाप्त पुरुषः पुराणः प्रपातु मां दैत्यहरः सुरेशः ।।७

इस प्रकार से मार्कण्डेय महर्षि से उस महा मुनि ने श्राद्ध की विधि का श्रवण करके इसके आगे उसने क्या किया था ।।१।। हे धातृ ! उस समय में उस महामुनि ने इस पितृतन्त्र का श्रवण करके धीमान् मार्कण्डेय ने अपने सौ जन्मों का स्मरण कर लिया था ।। २ ।। उस मुनि ने अपने गत स्वजनों का स्मरण कर लिया था और स्मरण करके उसने जो भी कुछ किया था उसका श्रवण हे वरारोहे ! आप करिए । मैं उसको अति संक्षेप से कहता हूँ ।। ३ ।। प्रभास नाम का जो तीर्थ है वह तीनों लोकों में प्रसिद्ध है । वहाँ पर दैत्यों के अन्त करने वाले देवेश्वर का स्तवन करने के लिए गौर मुख मुनि स्थित हो गया था ।।४।। महान् रिपुओं के दर्प के हनन करने वाले—ब्रह्म वेत्ताओं में वरिष्ठ—शिव नारायण—आदित्य, चन्द्र और अश्विनीकुमारों के युग में स्थित—पुरातन—सदाशिव—दैत्यों के हरण करने वाले—हरि—आद्य का मैं स्तवन करूँगा ।। ५ ।। जिसने पुरातन वेदों के विनाश के कान्त में मत्स्य का स्वरूप धारण किया था और अपने आपको स्वयं मत्स्य बना लिया था । हे आद्य ! विशाल मही के धारण करने वाले शरीर से युक्त—और अग्र पुच्छ की छटा अग्नि की ज्वाला वाली थी और सुरों के शत्रुओं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के हनन करने वाले हुए थे ।। ६ ।। उसी भाँति समुद्र के मन्थन के समय में जिसमें कूर्म का पुराण वपु रखकर गिरीन्द्र को अपने ऊपर धारण कर लिया था। सबकी भलाई की इच्छा से जो दैत्यों का हनन करने वाले सुरेश पुराण पुरुष होगये थे वे मेरी रक्षा करें ।।७।।

महावराह सततं पृथिव्यास्तलात्तलं प्राविशद्यो महात्मा ।
यज्ञाङ्गसंज्ञः सुरसिद्धसंघै स पातु मां दैत्यहरः पुराणः ।।८
नृसिहरूपी च बभूव योऽसौ युगे युगे योगिवरोथ भीमः ।
करालवक्रः कनकाग्रवर्चा वराशयोऽस्मानसुरान्तकोऽव्यात् ।।९
बलेर्मखध्वंसकृदप्रमेयो योगात्मको योगवपुः स्वरूपः ।
स दण्डकाष्ठा जिनलक्षणः क्षितिं योऽसौ महान् क्रान्तवान्नः पुनातु
।।१०
त्रिःसप्तकृत्वो जगतीं जिगाय कृत्वाददौ कश्यपाय प्रचण्डः ।
स जामदग्न्योऽभिजनस्य गोप्ता हिरण्य गर्भोऽसुराहा प्रपातु ।।११
चतुष्प्रकारं च वपुर्य आद्यं हैरण्यगर्भं प्रतिमान लक्ष्यम् ।
रामादि रूपैबहुरूपभेदं चकार सोऽस्मानसुरान्तकोऽव्यात् ।।१२
चाणूरकंसासुरदर्पभीतेः भीतामराणामभयाय वेदः ।
युगे युगे वासुदेवी बभूब कल्पे भवत्यद्भुतरूपकारी ।।१३
युगे युगे कल्कि नाम्ना महात्मा वर्णस्थितिं कर्त्तुमनेकरूपः ।
सनातनो ब्रह्ममयः पुरातनो न यस्य रूपं सुरसिद्धदैत्याः ।।१४

जो आद्य महात्मा पृथिवी का उद्धार करने के लिये महावराह का स्वरूप धारण करके तलातल में प्रवेश कर गये थे—जो सुरासुर और सिद्धों के समुदायों के द्वारा यज्ञ के अङ्ग की संज्ञा वाले हुए थे। वे ही दैत्यों के विनाशक पुराण पुरुष मेरी रक्षा करें ।। ८ ।। जो यह नृसिह के स्वरूप वाले हुए थे और जो योगिवर भीम हुए थे, जिनका मुख महान् कराल था जिनका कनक के अग्रभाग के समान वर्ण था वे वराशय और असुरों के अन्त करने वाले हैं वे हमारी रक्षा करें ।।९।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जिसने राजा बलि के मख का ध्वंस किया था—जो अप्रमेय हैं और जो योगात्मक योग के शरीर को धारण करने वाले स्वरूप के धारी हैं और वे दण्ड काष्ट तथा दण्ड के लक्षण वाले हैं और जिसने महान् बनकर सम्पूर्ण क्षिति का समाक्रमण किया था वे देवेश्वर हमारा परित्राण करें ॥ १० ॥ इस बार इस जगत् को जीत लिया था और प्रचण्ड रूप वाले ने उस भूमि को कश्यप ऋषि को दान कर दिया था। यह परशुरामजी का अवतार था जिन्होंने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित कर दिया था। वह जमदग्नि ऋषि के पुत्र का पुत्र थे जो अभिजन के रक्षा करने वाले थे। वे हिरण्य गर्भ असुरों के हनन करने वाले हमारी रक्षा करें ॥ ११ ॥ जो आद्य चार प्रकार में वपु के धारी थे और हिरण्य गर्भ प्रतिमान लक्ष्य थे और श्रीराम आदि रूपों के द्वारा बहुत रूपों के भेद को कर दिया था वह असुरों के अन्त करने वाले प्रभु हमारी रक्षा करें ।: १२ ॥ चाणूर कंस आदि असुरों के दर्प के भय से डरे हुए देवों के अभय के लिये जो जानते थे और युग-युग में वासुदेव हुए थे और कल्प में अद्भुत रूप करने वाले होते हैं ॥ १३ ॥ युग-युग में कल्कि के नाम से महात्मा वर्णों की स्थिति करने के लिये अद्भत रूपों के करने वाले हैं। यह सवातन ब्रह्ममय है जिनके रूप को सुर-सिद्ध और दैत्य कोई भी नहीं देखते हैं ॥१४॥

पश्यन्ति विज्ञान गतिं विहाय अतोयमेनापि समर्च्चयन्ति ।
मत्स्यादि रूपाणि चराणि सोऽव्यात् ॥१५
नमोनमस्ते पुरुषोत्तमाय पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ।
नमोनमः कारणकारणाय नमस्व मां मुक्तिपदं नमस्ते ॥१६
एवं नमस्यतस्तस्य महर्षेर्भावितात्मनः ।
प्रत्यक्षताङ्गतो देवः स्वयं चक्रगदाधरः ॥१७
तं दृष्ट्वा तस्य विज्ञान निस्तरङ्गं स्वदेहतः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उत्तस्थौ सोऽपि त्वं लब्धा तस्मिन् ब्रह्मणि शाश्वते ।
लयं जगाम देवात्मन्य पुनर्भव संज्ञिते ।।१८

अतएव विज्ञान की गति का परित्याग करके यम के द्वारा भी इन्हीं का समर्चन किया करते हैं। चरणतस्य आदि रूप हमारी रक्षा करें ।। १५ ।। पुरुषोत्तम भगवान आपके लिये बारम्बार नमस्कार है और फिर भी आपके लिये बारम्बार नमस्कार है कारणों के भी कारण के लिये बारम्बार नमस्कार है। आप कृपा करके मुझको मुक्ति का पद दीजिए। आपके लिये नमस्कार है ।। १६ ।। भावित आत्मा वाले महर्षि उसको इस रीति से प्रणाम करते हुए के सामने देवेश्वर चक्र और गदा को धारण किए हुए स्वयं प्रत्यक्षता को प्राप्त हो गये थे अर्थात् साक्षात् रूप से सामने प्रकट हो गये थे ।।१७।। उनका दर्शन प्राप्त करके उसके अपने देह से विज्ञान की तरङ्ग उठी थी और वह भी उनको प्राप्त करके उन शाश्वत ब्रह्म में लय को प्राप्त हो गया था जो कि देवात्मा अपुनर्भव संज्ञा वाले थे ।।१८।।

१६—सरमोपाख्यन

तदा दुर्वाससा शप्तो देवराजः शतक्रतुः ।
वसिष्यसि त्वं मर्त्येषु सुप्रतीक सुतेन तु ।।१
उत्सादितो दिवो मूढत्येवमुक्तस्तु भूधरः ।
इन्द्रो मर्त्यमुपागम्य सर्वदेवसमन्वितः ।।२
किं चकार च तस्मिन्स्तु दुर्जये च नियातिते ।
परमेष्ठिना भगवता तेन योग विदुत्तमौ ।।३
स्वर्गे विद्युत्सुविद्युच्च तौ च किं चक्रतुस्तदा ·
एतन्मे संशयं देव कथयस्व प्रसादतः ।।४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दुर्जयेन जितो धात्रि देवराजः शतक्रतुः ।
भारतेहि तदा वर्षे वाराणस्यां तु पूर्वतः ॥५
आश्रित्य संस्थितौ देवैः सह यक्षमहोरगैः ।
विद्युत्सुविद्युच्च तदा योगमास्थाय शोभने ॥६
दीर्घताप ज्वरं वायुकर्मयोगेन संश्रितौ ।
लोकपालाय तं कृत्स्नं चक्रतुर्योगमायया ॥७

उस समय मे दुर्वासा मुनि के द्वारा देवराज इन्द्र को शाप दिया गया था। शाप का स्वरूप यह था कि तू जाकर मनुष्यों में निवास करेगा। सुप्रतीक के सुत के द्वारा उत्साहित किया गया था और दिव-लोक से मूढ़—इस प्रकार से भूधर कहा गया था। इन्द्र समस्त सुरगणों से समन्वित होकर उसने मर्त्यलोक में प्राप्त होकर उस दुर्जय के निया-तित हो जाने पर क्या किया था। भगवान् परमेष्ठी के साथ उसका योग हुआ था। विद्वानों में उत्तम स्वर्ग में विद्युत और सुविद्युत इन दोनों ने उस समय में क्या किया था? यह हे देव! हमारे हृदय में संशय है। आप परम प्रसन्नता से इस संशय को निवारित कीजिए और कहिए ॥ १—४ ॥ हे धात्रि! दुर्जय ने देवराज इन्द्र को युद्ध में जीत लिया था। उस समय में भारतवर्ष में पूर्व में वाराणसी में समा-श्रय ग्रहण करके देवों और यक्षों तथा महोरगों के साथ संस्थित हो गये थे। हे शोभने! उस समय में विद्युत और सुविद्युत योग में समा-स्थित होकर वायु कर्म के योग के द्वारा दीर्घ ताप ज्वर में संश्रित हो हो गये थे। उस सबको लोकपाल के लिये योग माया से कर दिया था ॥५—७॥

तं दुर्जयं मृतं श्रुत्वा समुद्रान्तः स्थितं सदा ।
आनीय च तुरंगं तु देवान्प्रति विजग्मतुः ॥८
आगत्य तौ तदा दैत्यो महासैन्येन पर्वतम् ।
हिमवन्तं समाश्रित्य संस्थितौ तु बभूवतुः ॥९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

देवा. अपि महत्सैन्यं संहृत्य कृतदंशिताः ।
मन्त्रयाञ्च क्रूर व्यग्रा ऐन्द्र पदमभीप्सवः ॥१०
अब्रवीत्तत्र देवानां गुरुराङ्गिरसो मुनिः ।
गोमेधेन यजध्वं वै प्रथमं तदनन्तरम् ॥११
यष्टव्यं क्रतुभिः सर्वैरेषा स्थितिरथामराः ।
उपदेशो मया दत्तः क्रियतां शीघ्र एष वै ॥१२
एवमुक्तास्तदा देवा गाः पशूंश्चानु कल्प्यते ।
मुमुचुश्चारणार्थाय रक्षार्थं सरमां ददुः ॥१३
ताश्च गावो देवशुन्या रक्ष्यमाणा धराधरे ।
तत्र जग्मुस्तदा गावश्चरन्त्यो यत्र तेऽसुराः ॥१४

उस दुर्जय राजा को मृत हुआ सुनकर जो समुद्र के अन्त पर्यन्त सदास्थित था उसने तुरङ्ग को लाकर देवों के प्रति वे चले गये थे ।।८।। उस समय में वे दोनों दैत्य समागत होकर महती सेना के सहित हिमवान् पर्वत का समाश्रय गृहण करके संस्थित हो गये थे ।।-।। देवों ने भी उस महान् सेना का संहार कर दिया था और देशिता प्राप्त करली थी इन्होंने अव्यग्र होकर मन्त्रणा की थी और ये सब इन्द्र के पद प्राप्त करने के इच्छुक थे ।।१०।। यहाँ पर उस समय में आङ्गिरस महा गुरु ने जो देवगणों के थे देवों से कहा था—दे अमरो ! सर्व प्रथम यदि ऐसा ही चाहते हैं तो गौ मेध यज्ञ का यजन करो । इसके अनन्तर सब क्रतुओं के द्वारा यजन करना चाहिए—यह स्थिति है ।।११।।१२।। मैंने यह आप लोगों को उपदेश दे दिया है। आपको यह शीघ्र हीं करना चाहिये । उस अवसर में इस प्रकार से देवगण से कहा गया था । गौ और पशुओं की अनुकल्पना की जाती है । उन्होंने चारण के लिये उनको छोड़ दिया था और उनकी रक्षा करने के लिये सरमा को दे दिया था । ।।१३।। वे गौएे देवों से शून्य थी जो कि धराधर में रक्ष्यमाण थीं । उस समय में चरण करती हुई वे गायें वहाँ पर पहुँच गयी थीं जहाँ पर वे असुर स्थित थे ।।१४।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ते च गावस्तु ता दृष्ट्वा शुक्रमूचुः पुरोहितम् ।
पश्य त्वं देव गा ब्रह्मंश्चार्यन्ते रक्षमाणया ।
देवशुन्या सरमया वद किं क्रियतेऽधुना ॥१५
एवमुक्त स्तदा शुक्रः प्रत्युवाचासुरांस्तदा ।
एता गा ह्रियतां शीघ्रमसुरा मा विलम्बथ ॥१६
एवमुक्ता स्तदा दैत्या जह्रुस्ता गा यदृच्छया ।
हृतासु तासु सरमा मार्गान्वेषण तत्परा ॥१७
अपश्यत्सा दितेः पुत्रैर्नीता गावो धराधरे ।
दैत्येरपि शुनी दृष्ट्वा दृष्टमार्गा विशेषतः ॥१८
दृष्ट्वा ते तां च सरपूमां सामपूर्वमिदं वचः ।
आसां गवां तु दुग्ध्वैवं क्षीरं त्वं सरमे शुभे ॥१९
पिब स्वैरमिति प्रोक्त्वा तस्यै तद्ददुरञ्जसा ।
दत्त्वा तु क्षीरपानं त तस्यै ते दैत्यनायकाः ॥२०
मा भद्रे देवराजाय गास्त्विमा विनिवेदय ।
एवमुक्त्वा ततो दैत्या मुमुचुस्तां शुनीं वने ॥२१

उन असुरों ने उन गौओं को देखकर पुरोहित शुक्रदेव से कहा था—हे देव ! आप देखिये हे ब्रह्मन् ! ये गायें रक्षमाण के द्वारा यहाँ पर चराई जा रही हैं। ये इस समय में देवगणों से रहित हैं। इस सरमा के द्वारा आप ही बतलाइए अब क्या किया जाता है ॥१५॥ इस तरह से जब असुरों के गुरु शुक्राचार्य से कहा गया था तब उन्होंने उन असुरों को उत्तर दिया था। हे असुरो ! इन गायों का आप लोग हरण कर लीजिए और शीघ्रता करिए—इस कार्य में विलम्ब न करें ॥१६॥ इस प्रकार से जब असुरों से गुरुदेव ने कहा यो उन दैत्यों ने यह इच्छा से उन गौओं का हरण कर लिया था। उन गौओं के हरण किए जाने पर वह सरमा मार्ग के अन्वेषण में तत्पर हो गया था ॥१७॥ उसने देखा था कि दिति के पुत्रों ने उस पर्वत पर गौओं को ले लिया है। दैत्यों ने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भी उस शुनी को देखकर और विशेष रूप से देखे हुए मार्ग वाली को देखकर उन्होंने उस सरमा से साम पूर्वक यह वचन कहा था। दैत्यों ने कहा—हे शुभे सरमे ! इन गौओं का दोहन करके इनका दूध आप पीजिए और स्वतन्त्रता पूर्वक दुग्ध का पान करिए—यह कहकर तुरन्त ही उसको वह दे दिया था। क्षीर का पान देकर उन दैत्य नामकों ने उससे कहा था—हे भद्रे ! आप इन गौओं के विषय में देवराज से कुछ भी न कहें। इस प्रकार से कहकर उन दैत्यों ने उस शुनी को वन में छोड़ दिया था ॥१८—२१॥

तैर्मुक्ता सा सुरांस्तूर्णं जगाम खलु वेपती।
नमश्चक्रे च देवेन्द्रं सरमा सुरसत्तमम् ॥२२
तस्याश्च मरुतो देवा देवेन्द्रेण निरूपिताः।
गूढं गच्छत रक्षार्थं देवशुन्या महावलाः ॥२३
इत्युक्तास्तेन सूक्ष्मेण वपुषा जग्मुरञ्चसा।
तेऽप्यागम्य सुरेन्द्राय नमश्चक्रुर्धराधरे ॥२४
तान्देवराजः पप्रच्छ गावः किं सरमेऽभवन्।
एवमुक्ता तु सरमा न जानामीति चाब्रवीत् ॥२५
तत इन्द्रो रुषा युक्तो यज्ञार्थमुपकल्पिताः।
गावः क्वचेति मरुतः प्रोवाचेदं शुनीकथम् ॥२६
एवमुक्तास्तु मरुतो देवेन्द्रेण धराधरे।
कथयामासुरव्यग्राः कर्म तत्सरमाकृतम् ॥२७
तत इन्द्रः समुत्थाय पदा सन्ताड्यच्छुनीम्।
क्रोधेन महताविष्टो देवेन्द्रः पाकशासनः ॥२८

उन दैत्यों के द्वारा मुक्त हुई वह तुरन्त ही काँपती हुई सुरों के समीप में चली गयी थी। उसने देवराज को नमस्कार किया था अर्थात् उस राजा ने देवों में श्रेष्ठ देवेन्द्र के समक्ष में नमन किया था ॥२२॥ देवेन्द्र ने उसकी रक्षा के लिए मरुत देवों को निरूपित कर दिया था

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और उनको यह आदेश दिया था कि वे छिपकर ही उसकी रक्षा के लिए जावें क्योंकि यह अबला देवों से शून्य है ॥ २३ ॥ इन्द्रदेव के द्वारा इस तरह से कहे गये वे भी तुरन्त ही सूक्ष्म वपु धारण करके वहाँ गये थे । उन्होने भी समागत होकर उस पर्वत पर सुरेन्द्र के लिए प्रणाम किया था ॥ २४ ॥ देवराज ने उनसे पूछा था—गौऐं कहाँ हैं और सरमा को क्या हो गया हैं । इस प्रकार से जब उससे कहा गया तो सरमा ने यही कहा था मैं नहीं जानती हूँ ॥ २५ ॥ उस समय में देव-राज बहुत ही क्रोधयुक्त हो गये थे और उन्होंने कहा—ये गौऐं तो यज्ञ के लिए उपकल्पित हैं और ये गायें कहाँ हैं । शुनी ने मरुतों से यह कैसे कहा था ॥ २६ ॥ इस तरह से देवेन्द्र के द्वारा मरुतों से कहा गया था तो उस पर्वत पर उन्होंने अव्यग्र होकर उस सरमा के द्वारा किये हुए कर्म को कह दिया था ॥ २७ ॥ तब देवेन्द्र ने समुत्थित होकर उस शुनी को अच्छी तरह से प्रताड़ित किया था । वह पाक शासन बड़े भारी क्रोध से आविष्ट होगये थे ॥ २८ ॥

क्षीरं पीतं त्वया मूढे गावस्ताश्र्वासुरैः हृताः ।
एवमुक्त्वा पदा तेन ताडिता सरमा धरे ॥२९
तस्येन्द्र पादघातेन क्षींर वक्तृात् प्रसुसुवे ।
स्रवता तेन पयसा सा शुनी यत्र गाभवत् ॥३०
जगाम तत्र देवेन्द्रः सहसैन्यस्तदा धरे ।
अपश्त्तत्र देवेन्द्रस्तागा दैत्येरुपाहृताः ॥३१
चक्रुर्ये पालनं दैत्यास्ते दैत्या वलिनोभृशम् ।
तैः सैन्येर्निहिताः सद्यस्तत्यजुर्गाः स्वमूर्त्तिभिः ॥३२
सामन्तैश्च सुरेन्द्रोऽथ वृतः परम हर्षितैः ।
ताश्च लब्ध्वा महेन्द्रस्तु मुदा परमया युतः ॥३३
चकार यज्ञान्विविधान् सहस्रानपि स प्रभुः ।
क्रियमाणैस्ततो यज्ञैः ववृधेन्द्रस्य तद बलम् ॥३४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वर्द्धितेन वलेनेन्द्रो देवसैन्यमुवाच ह ।
सन्नह्यन्ता सुराः शीघ्रं दैत्यानां वधकर्मणि ॥३५

देवेन्द्र ने सरमा ने कहा—से मूढ़े ! तूने तो गौओं का दूध पिया और उन गौओं का असुरों ने हरण कर लिया है। हे चरे ! इस तरह से कहकर उस देवेन्द्र नेउस सरमा को ताड़ित किया था। उस इन्द्र ने पद के घात से मुख से क्षीर प्रसूत हुआ था। सुवले हुए उस पय से वह शुभी जहाँ पर न रही थी ॥२६॥३०॥ हे धरे ! उस समय में इन्द्र देव अपनी सेना के सहित वहाँ पर गया था। देवेन्द्र ने वहाँ पर देखा था कि वे गौऐं दैत्यों के द्वारा उपाहृत हुई थीं ॥३१॥ जिन दैत्यों ने पालन किया था वे दैत्य बहुत ही अधिक वली थे। उन सैनिकों के द्वारा वे निहत हुए और तुरन्त ही उन्होंने अपनी मूर्त्तियों से गायों का त्याग कर दिया था ॥ ३२ ॥ इसके अनन्तर सुरेन्द्र परम हर्षित सापन्नों के साथ समन्वित होकर और गायों को प्राप्त करके सुरेन्द्र ने अनेक प्रकार के यज्ञों को जो संख्या में सहस्रों ही थे उस प्रभु ने किया था ॥ ३३ ॥ उन किये जा रहें यज्ञों से द्वारा इन्द्र देव का वल गया बढ़ था ॥३४॥ बर्धित हुए बल से युक्त देवेन्द्र देव से बोला था—सब सुरगण दैत्यों के बध के कार्य में शीघ्र ही सम्नद्ध हो जावें ॥ ३५ ॥

एवमुक्तास्वता देवाः सन्नद्धास्ततक्षगेऽभवन् ।
असुराणामभावाय जग्मुर्देवाः सवासवाः ॥३६
गत्वा तु युयुधुस्तुर्णं विजिग्युस्त्वासुरीं चमूम् ।
जिताश्च देवरैसुरा हतशेषा धराधरे ॥३७
ममज्जुःसागर जले भयत्रस्ता विचेतसः ।
देवराजोऽपि त्रिदिवं लोकपालैः समं धरे ॥३८
आरुह्य बुभुजे प्राग्वत् सदेवो देवराट् विभुः ।
य एवं शृणुयान्नित्यं सरमाख्यानमुत्तमम् ॥३९
सगोमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भ्रष्टराज्यश्च यो राजा शृणोतीदं समाहितः।
स देवेन्द्र इव स्वर्गं राज्यं स्वं लभते नरः ॥४०

इस तरह से कहे गये समस्त देवगण उसी क्षण में सम्भद्ध हो गये थे। असुरों के अभाव करने के लिये इन्द्र के सहित सब देवगण गये थे ॥ ३६ ॥ और उन्होंने गमन करके शीघ्र ही युद्ध किया था और उन असुरों की सेना पर विजय प्राप्त करली थी। और जो मरने से बच गये थे वे उसी पर्वत पर भय से त्रस्त होकर अचेतन होकर सागर के जल में गये थे। हे धरे ! देवराज भी लोक पालों के सहित स्वर्ग में आरूढ़ होकर देवों के साथ देवराट् विभु पूर्व की ही भाँति भोग करने लगा था ॥३७॥३८॥ जो इसका नित्य ही श्रवण किया करता है इस उत्तम सरमा के आख्यान का पठन करता है या सुनता है वह मानव गोपेध यज्ञ के फल को प्राप्त किया करता है। जिस राजा का राज्य भ्रष्ट हो गया हो वह यदि इसका समाहित होकर श्रवण करता है वह देवेन्द्र की ही भाँति स्वर्ग के राज्य का लाभ मनुष्य है ॥३९॥४०॥

१७–महातपा उपाख्यान

ये ते मणौ तदा देव उत्पन्ना नरपुंगवाः।
तेषां वरो भगवता दत्तस्त्रेतायुगे किल ॥१
राजानो भवितारो वै कथं तेषां समुद्भवः।
किं चक्रुर्वै हि ते कर्म पृथङ् नामानि शंस मे ॥२
सुप्रभो मणिजो यस्तु राजा नाम महामनाः।
तस्तोत्पत्ति शृणु त्वं भूतधारिणि ॥३
आसीद्राजा महाबाहुरादौ कृतयुगे पुरा।
श्रुतकीर्तिरिति ख्यातस्त्रैलोक्ये बलवत्तरः ॥४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तस्य पुत्रत्वमायेदे सुप्रभो मणिजो धरे ।
प्रजपालेति वै नाम्ना श्रुतिकीर्तिर्महाबलः ॥५
स एकस्मिन्दिने प्रायाद्‌गहनं श्वापदाकुलम् ।
तत्रापश्यद्दवेर्द्धन्यं महदाश्रममण्डलम् ॥६
तस्मिन्महातपा नाम ऋषिः परम धार्मिकः ।
तपस्तपे निराहारो जपन्ब्रह्म सनातनम् ॥७

जो नर पुङ्गव उस समय में उस मणि से समुत्पन्न हुए थे उनको भगवान् ने त्रेता युग में वरदान दिया था कि वे सब राजा होंगे। उनका समुद्भव किस तरह से हुआ था और उन्होंने हित में क्या कर्म किया था जो पृथक् था उनके नामों को आप कृपा करके मुझे बतलाइए। ॥१॥२॥ जो मणि से उत्पन्न हुआ सुप्रभ राजा था वह महामना था हे भूतों के धारण करने वाली ! उस की उत्पत्ति का आप श्रवण करिए। ॥३॥ पुराने समय में कृत युग में एक महावाहु आदि में राजा था। वह श्रुतकीर्त्ति—इस नाम से त्रैलोक्य में विशेष अधिक बलवान् प्रसिद्ध हुआ था ॥४॥ हे धरे ! मणि से समुत्पन्न सुप्रभ वे उसके पुत्र के स्वरूप को प्राप्त किया था श्रुत कीत्ति महान् बलवान् था और प्रजपाल इस नाम वाला हुआ था ॥५॥ वह एक दिन श्रापदों से समाकुल किसी परम गहन वन में गया था। वहाँ पर उसने एक ऋषिका परम धन्य आश्रम मण्डल का अवलोकन किया था ॥६॥ उस आश्रम में एक महा तपा नाम वाले परम धार्मिक ऋषि निवास किया करते थे। वे निरन्तर निराहार रहकर सनातन ब्रह्म का जप किया करते थे ॥७॥

तत्रा सौ पार्थिवः श्रीमान्प्रवेशाय मतिं तदा ।
चकार चाविशद्राजा प्रजापालो महातपाः ॥८
एवं स राजा विविधानुपायान् वराश्रमे प्रेक्षमाणो विवेश ।
तस्मिन्प्रविष्टे तु स तीव्रतेजा महातपाः पुण्डकृतां प्रधानः ॥९
स मुनिस्तं नृपं दृष्ट्वा प्रजापालमकल्मषम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अभ्यागतक्रियां चक्रे आसनस्वागतादिभिः ।।१०
ततः कृतासनो राजा प्रणम्य ऋषिपुंगवम् ।
पप्रच्छ वसुधे प्रश्नमिमं परम दुर्लभम् ।।११
भगवन्दुःखसंसारमग्नैः पुम्भिर्जिगीषुभिः ।
यत्कार्यं तन्ममाचक्ष्व प्रणते शंसितव्रत ।।१२
संसारार्णवमज्जमानमनुजैः पोतः स्थिरोऽति ध्रुवः-
कार्यः पूजनहोमदग्नविधिभिर्यज्ञैः समं ध्यानकैः ।
कीलैः कीलितमोक्षकैः सुरभटैरूर्ध्वं महारज्जुभिः
प्राणाद्यैरधुना कुरुष्व नृपते पोतं त्रिलोकेश्वरम् ।।१३
नारायणं नरकहरं सुरेश भक्त्या नमस्कुर्वति यो नृपेश ।
स वीत शोकः परमं विशोकं प्राप्नोति पदमव्ययं यत् ।।१४

वहाँ पर उस आश्रम में श्रीमान् राजा ने प्रवेश करने की उस समय में अपनी बुद्धि की थी । और महा तपस्त्री राजा ने प्रजा पाल ने उसमें प्रवेश किया था ।। ८ ।। इस तरह से उस श्रेष्ठ आश्रम में उस राजा ने अनेक उपायों को देखते हुए प्रवेश किया था उसके प्रविष्ट होने पर परम तीव्र तेज वाले और पुण्य कर्म करने वालों में प्रधान महा तपा मुनि ने उस नृप को देखा था कि वह प्रजापाल कल्मष से रहित है तो उस मुनि महा तपा ने आसन और स्त्रणात आदि के द्वारा उसका अभ्पणात सब क्रिया को सम्पादित किया ।। ६ ।। १० ।। इसके अनन्तर राजा ने आसन ग्रहण करके उस परश्रेष्ठ ऋषि महानया को प्रणाम किया था और हे वसुध्वे उस राजा ने परम दुर्लभ इस प्रश्न को मुनि से पूछा था ।। ११ ।। हे शंसित व्रत वाले ! हे भगवन् ! जीवने की इच्छा रखने वाले और सांसारिक दुःखों में मग्न हुए मनुष्यों का जो भो कर्म हो वह आप प्रणत हुए मुझे बतलाइए— यह आपका परम अनुग्रह मुझ पर होगा ।। १२ ।। उस महा मुनि ने राजा को इस प्रश्न का उत्तर यही दिया था कि—इस संसार रूपी महासागर में डूवते हुए मनुष्यों के लिये

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यही निश्चित और स्थिर पार उतारने के लिये पोज (जहाज) है कि उनको ध्यान के साथ पूजा—होम—दान आदि अनेक विधि वाले यज्ञ करने चाहिए। हे नृपते ! कीलित और कीलित मोक्ष वाले सुरभरों के द्वारा ऊपर की ओर महारज्जु स्वरूप प्राणादि के द्वारा इस समय में त्रिलोकेश्वर को ही पोत बनाओ ॥ १३ ॥ हे नृपेश ! जो मानव भक्ति के भाव से नरक के हरण करने वाले सुरेश नारायण प्रभु को नमस्कार किया करता है वह वीत शोक होकर परम विशोक अव्यय पद को प्राप्त कर लिया करता है ॥ १३ ॥ १४ ॥

भगवन् सर्वधर्मज्ञ कथं विष्णुः सनातनः ।
पूज्यतेमोक्षमिच्छद्भिः पुरुषैर्वद तत्त्वतः ॥१५
श्रृणु राजन् महाप्राज्ञ यथा विष्णुः प्रसीदति ।
पुरुषाणां तथा स्त्रीणां सर्व योगीश्वरो हरिः ॥१६
सर्वे देवाः सपितरो ब्रह्माद्याश्चाण्ड मध्यगाः ।
विष्णोः सकाशादुत्पन्न इतीयं वैदिकी श्रुतिः ॥१७
अग्निस्तथाश्विनौ गौरीगज वक्तृ भुजङ्गमाः ।
कार्तिकेयस्तथादित्या मातरो दुर्गया सह ॥१८
दिशो धनपतिर्विष्णुर्यमो रुद्रः शशी तथा ।
पितरश्चैव सम्भूताः प्राधान्येन जगत्पतेः ॥१९
हिरण्लगर्भस्य तनौ सर्व एव समुद्‌वाः ।
पृथक् पृथक् ततो गर्वं वहमानाः समन्ततः ॥२०
अहं योग्यस्त्वहं याज्य इति तेषां स्वनो महान् ।
श्रूयते देवसमितौ क्षुब्धसागर सन्निभः ॥२१

राजा ने उस महा तपा मुनि से कहा था—हे भगवन् ! आप तो सभी धर्मों के ज्ञान रखने वाले हैं। यह बतलाइये कि सनातन भगवान् विष्णु का मोक्ष की इच्छा रखने वालों को किस प्रकार से पूजन किया जाया करता है ? जो मुक्ति की इच्छा रखते हैं उनके द्वारा किये

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जाने वाला पूजन कैसा होना चाहिये—इसी का उत्तर आप कृपा करके तात्त्विक रूप से प्रदान कीजिए ॥ १५ ॥ उस महा मुनि महा तपा ने कहा था—हे राजन् ! अन आप श्रवण कीजिए कि भगवान् विष्णु किस तरह से प्रसन्न हुआ करते हैं। आप तो महान् प्रज्ञा वाले हैं। चाहे स्त्रियाँ हो या पुरुष होवें वह योगीश्वर हरि सभी के हैं ॥ १६ ॥ सभी देवगण—पितृगण और इस अण्ड के मध्य में होने वाले ब्रह्मा आदिक सभी भगवान् विष्णु के ही सकाश से उत्पन्न हुए हैं—ऐसा ही वैदिक श्रुति बतलाती है ॥ १७ ॥ अग्नि—अश्विनी कुमार—गौ की—गणेश—भुजङ्गम— स्वामीवाकार्त्तिकय—आदित्य मातृगण—दुर्गा—दिशाऐं—कुवेर—विष्णु—यम—रुद्र शशि और पितर ये सभी प्रधानता से जगत्पति से ही समुद्गत हुए हैं। ये सभी हिरण्य गर्भ के शरीर में ही समुत्पन्न होने वाले हैं। इसके अनन्तर पृथक् पृथक् गर्व को वहन करते हुए चारों ओर से हो रहे थे ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ में योग्य हूं—आप मान्य हैं—ऐसा उनकी महान् ध्वनि हुई थी। जो उस देवों की समिति में क्षुब्ध सागर के ही समान थी ॥ २१ ॥

तेषां विवदमानानां वह्निरुत्थाय पार्थिव ।
उवाच मां यजस्वेति ध्याय तं मामिति ब्रुवन ॥२२
प्राजापत्यमिदं नूनं शरीरं मद्विना कृतम् ।
विनाशमुपपद्येत यतो नायं महानहम् ॥२३
एवमुक्ता शरीरं तु त्वक्त्वा वह्निः विनिर्ययौ ।
निर्गतेऽपि ततस्मिन् तच्छरीरं न शीर्यते ॥२४
ततोऽश्विनौ मूर्तिमन्तौ प्राणापान शरीर गौ ।
आवां प्रधानवित्थवेमूचतुर्याज्यमुत्तरौ ॥२५
एवमुक्त्वा शरीरं तु विहाय क्वचिदास्थितौ ।
तयोरपि क्षयं कृत्वा क्षींण तत्पुरमास्थितम् ॥२६
ततो वागब्रवीद् गौरी प्रधान्यं मयि संस्थितम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

साप्येवमुक्त्वा शेत्रात्तु निश्चक्राम वहिः शुभा ।।२७
तया विनापि तत्क्षेत्रं वागूनं व्यवतिष्ठत ।
ततो गणपतिर्वाक्यमाकाशाख्योऽब्रवीत्तदा ।।२८

हे पार्थिव! इस प्रकार से परस्पर में विवाद करते हुए वे स्थित थे। उसी समय में वह्नि ने उठकर उनसे अग्नि ने कहा था—तुम स्त्व मेरा यजन करो और मेरा ही ध्यान कर—यही वह अग्नि उनसे बोल रहा था आपको त्रिनाश उत्पन्न हो जायगा क्योंकि जो आप ऐसा कह रहे हैं कि मैं महान् हूँ—यह नहीं है ।। २२ ।। २३ ।। वस इतना ही कहकर उस वह्नि ने अपने शरी का त्याग कर दिया था और वह निर्णत हो गया था। उसके विनिर्गत होने पर भी उसका शरीर विनष्ट नहीं होता हैं ।। २४ ।। इसके अनन्तर अश्विनीकुमार मूर्त्तिभान् प्राण—अयान शरीर वाले समुत्थित हुए थे उन्होंने कहा था—हम दोनों ही प्रधान हैं हमारा ही यजन करो ।। २५ ।। इस प्रकार कहकर शरीर का त्याग करके वे दोनों किसी स्थान पर समास्थित हो गये थे उन दोनों का क्षय करके उनका पुर क्षीण आस्थित हो गया ।। २६ ।। इसके अनन्तर वाग् गौरी ने कहा था—प्रधानता तो मुझ में संस्थित है। उसने भी इस तरह से कहकर उस क्षेत्र से वह शुभा भी वाहिर निकल कर चली गयी थी ।२७। उसके बिना भी वह क्षेत्र वाक् से रहित व्यवस्थित हुआ था। इसके उपरान्त आकाश नामक उस समय में गणपति ने वाक्य वोला था ।२८।

न मया रहितं किञ्चिच्छरीरं स्थायि दूरतः ।
कालान्तरेत्येवमुक्त्वा सोऽपि निष्क्रम्य देहतः ।।२९
पृथग्भूतस्तथाप्येतच्छरीरं नाप्यनीनशत् ।
विनाशाख्यं च तत्तेन तथापि न विशर्यते ।।३०
सुषिरैस्तु विहीनं तु दृष्ट्वा क्षेत्रं व्यवस्थितम् ।
शरीर धातवः सर्वे ते ब्रूयुर्वाक्यमेव हि ।।३१
अस्माभिः व्यतिरिक्तस्य न शरीरस्य धारणम्

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भवनीत्येवमुक्त्वा ते जहुः सर्वे शरीरिगः ।।३२
तैर्व्यपेतमपि क्षेत्रं पुरुषेण प्रपाल्यते ।
तं दृष्ट्वा त्वब्रवीत् स्कन्दः सोऽहङ्कारः प्रकीर्तितः ।।३३
मया विना शरीरस्य सम्भूतिरपि नेष्यते ।
एवमुक्त्वा शरीरात्तु स व्यपेतः प्रथक् स्थितः ।।३४
तेनाक्षेते तत्क्षेत्रं विना मुक्त वदास्थिमम् ।
तं दृष्ट्वा कुपितो भानुः स आदित्य प्रकीर्तितः ।।३५

मेरे बिना कोई भी शरीर दूर तक स्थाई नहीं हैं और अन्य काल में भी नहीं हैं—इतना ही यह कहकर वह भी शरीर से निकल कर पृथग् भूत हो गया था तो भी उसका शरीर विनष्ट नहीं हुआ था। और वह विनाश नाम वाला था और उसने भी अपने आप को विशीर्ण नहीं किया था ।।२९।।३०।। सुषिरो से विहीन उस क्षेत्र को व्यवस्थित देखा था। फिर शरीर की सब धातुओं ने यह वाक्य कहा था—हमारे से व्यतिरिक्त के शरीर का धारण नहीं होता है अर्थात् शरीर का रहना हमी से हुआ करता है यदि हम न हों तो यह शरीर रह ही नहीं सकता है। यह कह कर उन सबने जो शरीर धारी थे उस क्षेत्र का त्याग कर दिया था ।।३१।।३२।। उसके द्वारा व्यपेत भी इस क्षेत्र का पुरुष के द्वारा प्रतिपालित किया जाता है उसको देखकर स्कन्द ने कहा था—मैं ही अहङ्कार कीर्त्तित किया गया हूँ ।।३३।। मेरे बिना तो इस शरीर की समुत्पत्ति भी अभीष्ट नहीं हुआ करता है। इस प्रकार से कहकर वह शरीर से व्यपेत होकर पृथक् स्थित हो गया था ।।३४।। अक्षत उसके बिना भी वह क्षेत्र युक्त वह आस्थित रहा था। उसको देखकर भानु बहुत कुपित हुए थे वह आदित्य इस नाम प्रकीर्तित हुए थे ।।३५।।

मया विना कथं क्षेत्रमिमं क्षणमपीष्यते ।
एवमुक्त्वा थ यातः स तच्छरीरं न शीर्यते ।।३६
ततः कामादिरुत्थाय गणो मातृविसंज्ञितः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

न मया व्यतिरिक्तस्य शरीरस्य व्यवस्थितिः ।
एवमुक्त्वा स यातस्तु शरीरं तन्न शीर्यते ॥३७
ततो विष्णोर्मनो ब्रूयान्नायं देहो मया विना ।
क्षणमप्युत् सहेत्स्थातुमित्युक्त्वान्तर्दधे पुनः ॥३८
ततोऽब्रवीन्महादेवः अव्यक्तो भूतभावनः ।
महासंज्ञो मयाहीनं षरीरं नो भवेद्यथा ।
एवमुक्त्वा गतः शम्भुस्तच्छरीरं न शीर्यते ॥३९
प्रागवस्थं शरीरं तु दृष्ट्वा सर्वज्ञपालितम् ।
ताः क्षेत्रदेवताः सर्वा वैलक्षं भावमस्थिता ॥४०
तमेवं तुष्टुवुः सर्वास्तं देवं परमेश्वरम् ।
स्वस्थानं विविशुः सर्वास्तदा नृपतिसत्तम ॥४१
त्वमग्निस्त्वं तथा प्राणस्त्वमपानः सरस्वती ।
त्वमाकाशं धनाध्यक्षस्त्वं शमीरस्य धातवः ॥४२

मेरे बिना यह क्षेत्र किस प्रकार से एक क्षण भी व्यवस्थित रह सकता है । ऐसा कहकर वह भी चला गया था किन्तु उसका शरीर भी विशीर्ण नहीं हुआ था ॥३६॥ इसके अनन्तर मातृ विसंज्ञित कामादिगण ने उठकर कहा था—मेरे बिना इस शरीर व्यवस्थिति ही नहीं होती है । इस तरह से कहकर वह भी चला गया था और यह शरीर विनष्ट नहीं हुआ था ॥३७॥ इसके उपरान्त विषय श्रम ने कहा था—यह देह मेरे बिना नहीं रह सकता है । और एक क्षण भी स्थित रहने के लिये योग्य नहीं हो सकता है । इतना कह कर वह भी अन्तर्हित हो गया था ॥३८॥ इसके उपरान्त अव्यक्त और भूतों पर कृपा करने वाले महादेवजी ने कहा था—मैं महान् संज्ञा वाला देव हूँ मेरे बिना यह शरीर नहीं रह सकता है । इस प्रकार से कहकर शम्भुजी गमन कर गये थे और वह शरीर विशीर्ण नहीं होता है ॥३९॥ पूर्व की अवस्था में स्थित शरीर को सर्वज्ञ के द्वारा पालित देखकर सभी क्षेत्र हैनता को लक्ष भाव में समा-

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्थित हो गये थे अर्थात् सबको बहुत आश्चर्य हुआ था ।।४०।। उन सबों ने उन देवेश्वर परमेश्वर का स्तवन किया था हे नृप श्रेष्ठ ! उस समय में वे सब अपने स्थान में प्रवेश कर गये थे । उन्होंने कहा था—आप ही अग्नि हैं—आप ही प्राण तथा अपान हैं—आप ही सूररजनी—आकाश—धनाध्यक्ष और आप ही शरीर की धातुऐं हैं ।।४१।।४२।।

अहंकारो भवान्देव त्वमादित्योऽष्टको गणः ।
त्वं माया पृथिवी दुर्गा त्वं दिशिस्त्वं मरुत्पतिः ।।४३
त्वं विष्णुस्त्वं तथा धर्मस्त्वं जिष्णुस्त्भं पराजितः ।
अक्षरार्थ स्वरूपेण परमेश्वर संज्ञितः ।
अस्माभिरपयातंस्तुकथमेतद् भविष्यति ।।४४
एवमत्र शरीरं तु त्यक्तमस्माभिरेव च ।
न परं भवतो देव तदत्र त्वं च पालयेः ।।४५
स्थानभंगो न नः कार्यः स्वयं सृष्ट्वा प्रजापते ।
एवं स्तुतलततो देवस्तेषां तोषं परं ययौ ।।४६
उवाच चैतान् क्रीडार्थं भवन्तोत्पादिता मया ।
कृतकृत्यस्य चैकं तु भवद्भिर्मे प्रयोजनम् ।।४७
तथा चेदप्रियं रूपे द्वे द्वे प्रत्येकशोऽधुना ।
भूतकार्येष्वमूर्तेन देवलोके तु मूर्तिना ।।४८
तिष्ठध्वमपि कालान्ते लयं त्वाविशत द्रुतम् ।
शरीराणि पुनर्नैव कर्तव्योऽहमिति क्विचित् ।।४९

उन्होंने कहा था—हे देव ! आप ही अहङ्कार हैं—आदित्य हैं और आप ही अष्टकगण हैं । आप ही माया—दुर्गा—पृथिवी हैं । आप ही दिशाऐं हैं और आप ही यरुत्पति हैं ।।४३।। आप ही विष्णु के स्वरूप धारी हैं—आप ही धर्म हैं तथा आप ही पराजित्य जिष्णु हैं । अक्षरार्थ स्वरूप से आप परमेश्वर संज्ञा वाले हैं । हम सबके अपयात हो जाने पर यह जैसे होगा ।।४४।। इस प्रकार से हमने यहां पर शरीर का

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

त्यागकर दिया है। हे देव ! यहां पर आपसे पर कोई भी नहीं है सो यहां पर आप को ही पालन करना चाहिए।।४५।। हे प्रजापते ! स्वयं ही सृजन करके आपको स्थान को भ्रष्ट नहीं करना चाहिए। इस प्रकार से स्तवन किते हुए देव फिर परम तोष को प्राप्त हुए थे। ।।४६।। और उनको क्रीड़ा करने के लिये कहा था मैंने आप लोगों को समुत्पादित किया था। कृतकृत्य मुझे आप लोगों से एक प्रयोजन है ।।४७।। यदि उस प्रकार से आपको अप्रिय हो तो इस समय में प्रत्येक के दो-दो रूप भूत कार्यों में अमूर्त्त रूप के द्वारा ओर देव लोक में मूर्त्त रूप से शीघ्र ही लय में प्रविष्ट हो जाइये। फिर शरीरों को लय में प्रविष्ट करिए और पुनः अहम्—यह कहीं पर भी न करना चाहिए ।।४८।।

मूर्तिनां च तथा तुभ्यमग्निनामानि वोऽधुना।
अग्निर्वैश्वानरो नाम प्राणापानौं तथाश्विनौ ।।५०
भविष्यति तथा गौरी हिमशैलसुता तथा।
पृथव्यादिगुणस्त्वेष गजवक्त्रो भविष्यति ।।५१
शरीरधातवश्चेमे नानाभूतानि चैव तु।
अहंकारस्तथा स्कन्दः कार्तिकेयो भविष्यति ।।५२
शरीरमाया दुर्गैषा कारणात्ते भविष्यति।
दश कन्या भविष्यन्ति काष्ठासावृतास्तु वारुणाः ।।५३
अयं वायुर्द्धनेशस्तु कारणं ते भविष्यति।
अयं मनो विष्णुनामा भविष्यति न संशयः ।।५४
धर्मोऽपि यम नामा च भविष्यति न संशयः।
महत्तत्वं च भगवान् महादेवो भविष्यति ।।५५
इन्द्रियार्थाश्च पितरो भविष्यन्ति न संशयः।
अयं सोमः पुरा भूत्वा जामित्रं सर्वदामराः ।।५६
एवं वेदान्त पुरुषः प्रोक्तो नारायणात्मकः।
स्वस्थाने देवताः सर्वा देवस्तु विरराम ह ।।५७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवं प्रभावो देवोऽसो वेदवेद्यो जनार्दनः ।
कथितो नृपते तुभ्यं किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ।।५८

अब आपके लिये मूर्तियों के अग्नि नाम हैं । अग्नि—वैश्वानर नाम हैं—प्राणापान तथा अश्विनी कुमार—यह होंगे । तथा गौरी और शैल सुता है—यह पृथिवी आदि का गुण है जो गज वक्त्र होंगे ।।५०।। ।।५१।। ये शरीर की धातुयें और नाना प्रकार के प्राणी हैं । तथा स्कंद कीर्त्ति के या अहंकार होंगे ।।५२।। यह शरीर माया दुर्गा कारण के अन्त में होगी । दश कन्यायें होंगी और ये वारुण काष्ठायें अर्थात् दिशायें हैं ।।५३।। यह वायु धनेश तुम्हारे कारण होंगे । यह मन विष्णु नाम वाला होगा—इसमें कुछ भी संशय नहीं हैं ।। ५४ ।। धर्म्म भी यम नाम वाला होगा—इसमें कुछ भी संशय नहीं है महत्तत्त्व भगवान् और महादेव स्वयं होंगे ।।५५।। इन्द्रियों के अर्थ अर्थात् विषय पितृगण होंगे-इसमें संशय नहीं है । हे अमरगणो ! यह सोम पहिले अमित्र होकर सर्वदा रहता है ।।५६।। इस प्रकार से वेदान्त पुरुष जो नारायण के स्वरूप वाले है कहे गये थे । देवता सब अपने स्थानों पर है और देवेश्वर ने विराम ग्रहण किया था ।।५७।। इस प्रकार के प्रभाव वाले यह देव हैं जो जनार्दन प्रभु वेदों के द्वारा जानने के योग्य होते हैं । हे नृपते ! यह सब कहकर सुना दिया है । अब आगे अन्य आप क्या श्रवण करना चाहते हैं ? ।।५८।।

१८—अग्नि उत्पत्ति वर्णन

कथमग्नेः समुत्पत्तिरश्विनोर्वा महामुनेः ।
गौर्यां गणपतेर्वापि नागानां वा गुहस्य च ।।१
आदित्य चन्द्र मातृणां दुर्गाया वा दिशां तथा ।
धनदस्य च विष्णोर्वा धर्मस्य परमेष्ठिनः ।।२
शम्भोर्वापि पितृणां च तथा चन्द्रमसो मुने ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शरीर देवताः सर्वाः कथं मूर्तित्वमागताः ।।३
किं च तासां मुने भोज्यं का वा संज्ञा तिथिश्च का ।
यस्यां दृष्ट्वा त्वमी पुंसां फलं यच्छन्त्यनामयम् ।।४
एतन्मे सरहस्यं तु मुने त्वं वक्तुमर्हसि ।
योगसाध्यस्वरूपेण आत्मा नारायणात्मकः ।।५
सर्वज्ञः क्रीडतस्तस्य भोगेच्छा चात्मनात्मनि ।
क्षोभितेऽस्मिन्महाभूते एतत्सद्वै तदद्भुतम् ।।६
तमद्य प्रीतिमत्तोऽयं विकारं समरोचयत् ।
विकुर्वतस्तस्य तदा महानग्निः समुत्थितः ।।७

हे महामुने ! अग्नि की समुत्पत्ति कैसे हुई थी ? अथवा अश्विनियों का उद्भव किस तरह से हुआ था । गौरी का—गणपति का--नागों का और गुह का समुद्भव कैसे हुआ था ? ।।१।। आदित्य का—चन्द्रका—मातृगणों का—दुर्गा का तथा दिशाओं का धनद कुवेर का—भगवान् विष्णु का—धर्म का और परमेष्ठी का अथवा भगवान् शम्भु का तथा चन्द्रमा का हे मुने ! उद्भव कैसे हुआ था और ये सभी शरीर के देवता हैं फिर ये भूर्त्तित्व को कैसे प्राप्त हुए थे ।।२।।३।। हे मुनिवर ! उन देवताओं का भोज्य पदार्थ क्या है अथवा क्या संज्ञा है और कौन सी तिथि है ? जिसमें देखकर ये पुरुषों को अनामय फल प्रदान किया करते हैं ।।४।। हे मुनिवर ! यह सब रहस्य के ही साथ आप मुझे कहने के लिये समर्थ होते हैं । योग के द्वारा साध्य स्वरूप के द्वारा नारायण स्वरूप वाले आत्मा सर्वज्ञ हैं अर्थात् सब कुछ का ज्ञान रखने वाले हैं । क्रीड़ा करते हुए उनकी अपनी आत्मा ही के द्वारा आत्मा में भोग की इच्छा हुई थी । इस शोभित महा भूत में यह सत् है यह परम अद्भुत है ।।५।। ।। ६ ।। प्रीतिमान उनका यह आज विकार समरोचित हुआ था । उस समय में विकार युक्त होते हुए उनसे महान् अग्नि समुत्थित हुआ था ।। ७ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कोटिज्वाला परीवारः शब्दवाम् दहनात्मकः ।
असावप्यति तेजस्वी विकारं समरोचयत् ।।८
विकुर्वतो बभौवह्नेर्वायुः परमदारुणः ।
तस्मादपि विकारस्थादाकाशं समपद्यत ।।६
तच्छब्दलक्षणं व्योम सच वायुः प्रतापवान् ।
तच्च तेजोऽम्भसायुक्तं श्लिष्टमन्योन्य तस्तथा ।।१०
तेजसा शोषितं तोयं वायुना उग्रगामिना ।
बोधितेन तथा व्योममार्गे दत्ते तुतत्क्षणात् ।।११
पिण्डीभूतं तथा सर्वं काठिन्यं समपद्यत ।
सेयं पृथ्वी महाभाग तेषां वृक्षेतराभवत ।।१२
चतुर्णां योग काठिन्यादेकैक गुण वृद्धितः ।
पृथ्वी पंचगुणा ज्ञेया तेऽप्येतस्यां व्यवस्थिताः ।।१३
सच काठिन्यकं कुर्वन् ब्रह्माण्डं समपद्यत ।
तस्मिन्नारायणो देवश्चतुर्मूर्तिः चतुर्भुजः ।।१४

करोड़ों ज्वालाऐं ही उसका परिवार है वह शब्द वाला तथा दहन करने के स्वरूप वाला है। यह भी अत्यधिक तेजस्वी था और उसने विकार को समरोचित किया था ।। ८ ।। विकार को प्राप्त हुए वह्नि से परम दारुण वायु सुशोभित हुआ था । वह भी जब विकार में स्थित हुआ था तो उससे आकाश समुत्पन्न हुआ ।।६।। वह व्योम शब्द के ही लक्षण वाला था अर्थात् आकाश में ही शब्द होता है और यही उसका लक्षण है और वह वायु प्रताप वाला था । वह तेज जल से युक्त और परस्पर में एक दूसरे से श्लिष्ठ थे ।। १० ।। तेज के द्वारा जल-शोषित किया गया था और वह तेज उग्रगामी वायु के द्वारा बोधित किया गया था । तथा उसी क्षण में व्योम के मार्ग में दिये जाने पर वह सब पिण्डीभूत होकर कठिनता को प्राप्त हो गया था । हे महाभाग ! वही यह पृथ्वी हुई थी जिसमें वृक्ष आदि इतर पदार्थ हुए थे ।। ११—१२ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चारों के योग के काठिन्य से एक-एक में गुणों की वृद्धि हुई थी। यह पृथ्वी पाँच गुणों से समन्वित है—ऐसा नाम लेना चाहिए। ये पाँचों गुण इस पृथ्वी में व्यवस्थित रहा करते हैं ।। १३ ।। और वह कादित्य करता हुआ ब्रह्माण हुआ था। उन भगवान् नारायण देवेश्वर की चारों मूर्त्तियाँ हैं जो चार भुजाओं से युक्त हैं ।।१४।।

प्राजापत्येन रूपेण सिसृक्षुर्विविधा प्रजाः ।
चिन्तयन्नाधिगच्छेतु सृष्टि लोकपितामहः ।।१५
ततोऽस्य सुमहान् कोपो जज्ञे परमदारुणः ।
तस्मात्कोपात् सहस्रार्चिरुत्तस्थौ दहनात्मकः ।।१६
स तं दिधक्षुः ब्रह्माणं ब्रह्मणोक्तस्तद नृप ।
हव्यं कव्यं वहस्वेति ततोऽसौ हव्यवाहनः ।।१७
ब्रह्माणं क्षुधित प्रायात् किंकरोमि प्रशाधि माम् ।
स ब्रह्मा प्रत्युवाचैनं त्रिधा तृप्तिमवाप्स्यसि ।।१८
दत्तासु दक्षिणास्वादौ तृप्तिर्भूत्वा यतोऽमरान् ।
नयसे दक्षिणाभागं दक्षिणाग्निस्ततोऽभवत् ।।१६
आ समन्ताद् हुतं किंचिद्यत्त्रिलोके विभावसो ।
तद्वहस्व सुरार्थाय ततस्त्वं हव्यवाहनः ।।२०
गृहं शरीरमित्युक्तं तत्पतिस्त्वं यतोऽधुना ।
अतो वै गार्हपत्यस्त्वं भव सर्वगतो विभो ।।२१

प्रजापति के स्वरूप से अनेक प्रकार की प्रजाओं के सृजन करने की इच्छा वाले हुए थे। सृष्टि के सृजन करने के विषय में चिन्तन करते हुए भी उनको कुछ भी ज्ञान नहीं हुआ था कि मैं किस तरह से सृष्टि का सृजन करूँ। इसके अनन्तर उन प्रजापति ब्रह्माजी के हृदय में परम दारुण क्रोध उत्पन्न हो गया था। उसी क्रोध से सहस्रों अर्चियों वाला, दहन के स्वरूप वाला अग्नि समुत्थित हुआ था ।। १५—१६ ।। और वह ब्रह्मा को दग्ध करने की इच्छा वाला होकर समक्ष में आया था।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उस समय में ब्रह्माजी ने उससे कहा था—आप हव्य और कव्य का वहन कीजिए। तभी से यह हव्य वाहन नाम वाला हो गया था। अर्थात् उसी समय से अग्नि को हव्य वाहन—इस नाम से कहा जाने लगा था ॥१७॥ वह क्षुधित होकर ब्रह्माजी के समीप गया था। तब ब्रह्माजी ने इससे कहा था आप तीनों स्वरूपों वाला होकर ही तृप्ति को प्राप्त होओगे ॥ १८ ॥ आदि में सुदक्षिणाओं के देने पर आप सुतृप्त होकर क्योंकि दक्षिणा भाग को अमरों के लिये ले जाते हैं तभी से दक्षिणाग्नि हुए थे ॥ १६ ॥ हे विभावसो ! तीनों लोकों में जो कुछ भी हनन किया जावे उसी को आप सुरों के लिये वहन कीजिए। तभी से आप हव्य वाहन अर्थात् हव्य के वहन करने वाले हुए हैं ॥ २० ॥ आपका गृह शरीर ही है—ऐसा कहा गया है। आप उसके पति हैं। इसी कारण से इस समय में हे विभो ! आप गार्हपत्य हैं अतएव आप सर्वगत होइए ॥२१॥

विश्वान्नरान् हुतो येन नयसे सद्गति प्रभो।
अतो वैश्वानरो नाम तव सत्यं भविष्यति ॥२२
द्रविणं वलमित्युक्तं धनं द्रविणं ततः।
ददाति तद्भवानेव द्रविणोदास्ततोऽभवत् ॥२३
पापस्तिरोभवेन्नित्यं निःशब्दो निश्चयात्मकः।
अतस्त्वं सर्वगत्वाच्च तेजोऽग्निस्ते भविष्यति ॥२४
ध्माप्रपूरणं शब्दो य इध्मानामपि कीर्त्यते।
पूरितस्य गतिर्येन तेनेध्मस्त्वं भविष्यसि ॥२५
याज्यान्येतानि नामानि तव पुत्र महामखे।
यजन्तस्त्वां नराः कामैस्तर्पयिष्पन्त्यसंशयम् ॥२६

आप हुत होते हुए विश्व नरों को हे प्रभो ! सद्गति प्राप्त कराया करते हैं इसी कारण से आपका वैश्वानर—यह नाम अन्वर्थक और सत्य ही होगा ॥ २२ ॥ द्रविण वल है—ऐसा कहा गया है और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

द्रविण धन होता है। इस द्रविण को आप ही दिया करते हैं अतएव तभी से आपका नाम द्रविणोदा यह हुआ था ॥ २३ ॥ पाप नित्य ही तिरोभूत होता है और वह निःशब्द एवं निश्चयात्मक है। अतएव सब में गत होने से ही आपका तेज अग्नि होगा ॥ २४ ॥ आपका शब्द धमा—इससे प्रपूरित होता है इसी कारण से आपका इध्मा—यह नाम भी कीर्त्तित किया जाया करता है। जिससे पूरित आप ही गति हैं इसीलिए आप इध्म होंगे ॥ २५ ॥ हे पुत्र ! महान् मख में ये नाम आपको याज्य होते हैं। मनुष्य आपका यजन करते हुए मनोरथों से आपको तृप्त करेंगे—इसमें संशय नहीं है ॥२६॥

१६–अग्नि की श्रेष्ठता और प्रशंसा

विष्णोर्विभूतिमाहात्म्यं कथितं ते प्रसङ्गतः ।
तिथीनां शृणु माहात्म्यं कथ्यमानं मया नृप ॥१
इत्यम्भूतोमहानग्निः ब्रह्मक्रोध समुद्भवः ।
उवाच देवं ब्रह्माणं तिथिर्मे दीयतां विभो ।
यस्यामहं समस्तस्य जगतः ख्यतिमाप्नुयाम् ॥२
देवानामथ यक्षाणां गंधर्वाणां च सत्तम ।
आदौ प्रतिपदा येन त्वमुत्पन्नोऽसि पावक ॥३
त्वत्पदात् प्रातिपादकं सम्भविष्यन्ति देवताः ।
अतस्ते प्रतिपन्नाम तिथिरेषा भविष्यति ॥४
तस्यां तिथौ हविष्येण प्राजापत्येन मूर्तिना ।
होष्यन्ति तेषां प्रीताः स्युः पितरः सर्व देवताः ॥५

भगवान् विष्णु की विभूतियों का माहात्म्य मैंने प्रसङ्ग वश आपको कह दिया है। हे नृप ! अब मेरे द्वारा कहे जाने वाले तिथियों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का माहात्म्य सुनिये ।। १ ।। महान् अग्नि इसी प्रकार का है जो ब्रह्मा जी के क्रोध से समुद्भूत हुआ है। उसने ब्रह्माजी से कहा था—हे विभो ! मुझे तिथियाँ भी प्रदान कीजिये जिससे मैं इस सम्पूर्ण जगत् की ख्याति अर्थात् प्रसिद्धि को प्राप्त करलूँ ।। २ ।। देवो की—यक्षों की और गन्धर्वों की हे श्रेष्ठतम ! ब्रह्माजी ने कहा था आदि में प्रतिपदा तिथि है जिसमें हे पावक ! आप समुत्पन्न हुए हैं ।। ३ ।। देवता लोग आपके पद से प्रतिपादक की ही सम्भावना करेंगे। इसीलिये आपका नाम प्रतिपद है और यही प्रतिपदा आपकी तिथि भी होगी ।। ४ ।। उस तिथि में हविष्य के द्वारा प्रजापत्य मूर्ति से लोग हवन करेंगे उन परं हवन करने वाले मानवों पर सत्र पितृगण और देवगण परम प्रसन्न होंगे ।। ५ ।।

चतुर्विधानि भूतानि मनुष्याः पशवोऽसुराः ।
देवाः सर्वे सगन्धर्वाः प्रीताः स्युस्तर्पितास्त्वयि ।।६
यश्चोपवासं कुर्वीत त्वद्भक्तः प्रतिपद्दिने ।
क्षीराशनो वा वर्त्तेत श्रृणु तस्य फलं महत् ।
चतुर्युगानि षडविंशं स्वर्गलोके महीयते ।।७
तूष्णीम्बभूव सोऽप्यग्निः ब्रह्मदत्ताश्रम ययौ ।।९
य इदं श्रृणुयान्नित्यं प्रातरुत्थाय मानवः ।
अग्नेर्जन्मन्यसौ पापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ।।१०

चार प्रकार के प्राणी हैं। मनुष्य—पशु और असुर—सब देवता और गन्धर्व गण आप में हीं तर्पित होकर प्रसन्न हुआ करते हैं ।। ६ ।। जो मनुष्य आपका भक्त होकर प्रतिपदा के दिन में उपवास किया करता है अथवा केवल खीर का अशन करने वाला रहता है उसको जो महान् फल होता है उसका श्रवण करिए। चार युगों के छब्बीस संख्या तक वह स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित हुआ करता है ।। ७ ।। इसके अनन्तर वह अग्नि चुप हो गया था और ब्रह्माजी के दिये हुए आश्रम में चला गया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था। जो कोई मानव नित्य ही प्रात.काल में उठकर इसका श्रवण किया करता है वह अग्नि की कृपा से इस जन्म में निश्चय ही पापों से मुक्त हो जाया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ ९—१० ॥

२०—अश्विनीकुमारों की उत्पत्ति

एवमग्नेः समुत्पत्तिर्जाता ब्रह्मन्महात्मनः ।
प्राणापानौ कथं देवाश्विनौ सम्बभूवतुः ॥१
मरीचिर्ब्रह्मणः पुत्रः स्वयं ब्रह्मा द्विसप्तिभिः ।
रूपैः व्यवस्थितस्तेषां मरीचिः श्रेष्ठतामगात् ॥२
तस्यपुत्रो महातेजाः कश्यपो नाम वै मुनिः ।
स्वयं प्रजापति श्रीमान्देवतानां पिताभवत् ॥३
तस्य पुत्र बभूर्वुहि आदित्या द्वादश प्रभो ।
नारायणात्मकं तेजो द्वादशेति प्रकीर्तितम् ॥४
ते च मासास्त आदित्याः स्वयं संवत्सरो हरिः ।
एवं ते द्वादशादित्य मार्तण्डश्च प्रतापवान् ॥५
तस्य त्वष्टा ददौ कन्यां संज्ञां नाम महाप्रभाम् ।
तस्यापत्यद्वयं जज्ञे यमश्च यमुना तथा ॥६
तस्य तेजोऽप्यसहती बभूवाश्चा मनोजवा ।
स्वां छायां तत्र संस्थाप्य सा जगामोत्तरान् कुरून् ॥७

हे ब्रह्मन् ! इस प्रकार से महात्मा अग्नि देव की उत्पत्ति हुई थी। हे देव प्राण और अपान ये दोनों अश्विनी कुमार कैसे हुए थे ? ॥ १ ॥ मरीचि ऋषि ब्रह्माजी के पुत्र थे और स्वयं ब्रह्मा जी बहत्तर रूपों से व्यवस्थित थे। उनमें मरीचि ऋषि ही परम श्रेष्ठता को प्राप्त हुए ॥ २ ॥ उस मरीचि का पुत्र महान् तेजस्वी कश्यप नाम

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाले मुनि हुए थे। यह श्रीमान् स्वयं ही प्रजापति हुए थे और देवताओं के पिता थे ।। ३ ।। हे प्रभो ! उसके पुत्र द्वादश आदित्य हुए थे। वह नारायण के स्वरूप वाला तेज था जो द्वादश—इस नाम से प्रकीत्तित हुए थे ।। ४ ।। उसमें मास थे वे ही आदित्य थे और हरि स्वयं सम्वत्सर हुए थे। इस रीति से वे द्वादत आदित्य है और प्रतापवान् मार्त्तण्ड है ।। ४ ।। ५ ।। उसको त्वष्टा ने अपनी कन्या दी थी जिसका नाम महा प्रभा था उसके दो सन्तान हुई थीं। एक यम और दूसरी कन्या यमुना ने जन्म ग्रहण किया था ।। ६ ।। उसके तेज को उसने सहन नहीं किया और अमनोजवा हो गई थी उसने अपनी छाया को वहाँ पर स्थापित कर दिया था और वह उजर कुरु देशों को चली थी ।। ७ ।।

तद्रूपां तां सवर्णां तु भेजे मार्तण्डभास्करः ।
तस्मादपि द्वयं जज्ञे शनिं तपती मेव च ।।८
यदा त्वसदृशं भेजे पुत्रान् प्रति नरोत्तमः ।
छायां प्रोवाच भगवान् क्रोधसंरक्त लोचनः ।
असमत्वं न कर्तव्यं स्वेष्वपत्येषु भामिनि ।।९
एवमुक्ता यदा सा तु ह्यसम त्वं व्यरोचत ।
ततः यमः स्वपितरं प्रोवाच भृशदुःखितः ।।१०
नेयं माता भवेत्तात त्वस्माकं शत्रुवत्सदा ।
सपत्नीव वृथाचारा स्वेष्व पत्येषु वत्सला ।।११
एवं यमवचः श्रुत्वा साच्छाया क्रोधमूर्च्छिता ।
शशाय प्रेतराजस्त्वं भविष्यस्यचिरादिव ।।१२
एवं श्रुत्वाथ मार्तण्डस्तदा पुत्रहितेच्छया ।
उवाच मध्यवर्ती त्वं भविता धर्मपापयो ।
लोकपालश्च भविता त्वं पुत्र दिवि शोभसे ।।१३
शनिं शशाय मार्तण्डः छायाकोपप्रधर्षितः ।
त्वं क्रूरदृष्टिर्भविता मातृदोषेण पुत्रक ।।१४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसी के रूप वाली सवर्णा उसका मार्त्तण्ड भास्कर ने सेवन किया था। उससे भी दोनों ने जन्म ग्रहण किया था। एक तो शनि थे और दूसरी सन्तति तपती थी ॥ ८ ॥ जिस समय में असदृश का सेवन किया था तो नरोत्तम भगवान् ने छाया से कहा था और क्रोध से रक्त लोचन वाले ने पुत्रों के प्रति कहा था। हे भामिनि अपनी सन्ततियों में असमता कभी भी नहीं करनी चाहिए ॥ ९ ॥ जब उससे ऐसा कहा गया तो भी उसने असमता ही को ठीक समझा इसके अनन्तर यम ने अत्यन्त दुःखित होकर अपने पिता से कहा था ॥१०॥ हे तात ! यह माता नहीं है। यह तो हमको सदा शत्रु की ही भाँति देखा करती है। यह कैसी वत्सला है कि सदा अपनी ही सन्ततियों में सपत्नी की ही भाँति वृथा आचार किया करती है ॥ ११ ॥ इस प्रकार यम के वचन को सुन करके यह छाया क्रोध से मूच्छित हो गई थी। और उसने शाप दे दिया था कि तू शीघ्र ही प्रेतराज हो जायगा ।१२। इस तरह से श्रवण करके मार्त्तण्ड ने स्वयं पुत्र के हित की इच्छा से कहा था कि तुम धर्म और पाप के मध्यवर्त्ती हो जाओगे। हे पुत्र ! तुम लोक पाल होओगे और दिवलोक में—शोभित होओगे ॥ १३ ॥ छाया के कोप से प्रधर्षित होकर मार्त्तण्ड शनि का शाप दे दिया था कि हे पुत्र ! तू क्रूर दृष्टि वाला माता के ही दोष से हो जायगा ॥१४॥

एवमुक्त्वा समुत्थाय ययौ भानुः दिदृक्षया।
तामपश्यत्त्वसावश्वामुत्तरेषु करुष्वथ ॥१५
ततोऽश्वरूपं कृत्वा स गत्वा तत्रोत्तरान् कुरून्।
प्राजापत्येन मार्गेण युयोजात्मानमात्मना ॥१६
तस्यां त्वष्ट्र्यामश्वरुप्यां मार्तण्डस्तीव्रतेजसा।
बीजं निर्वापयामास तज्ज्वलत्तु द्विधापतत् ॥१७
तत्र प्राणस्त्वपानश्च योनौ चात्मजितौ पुरा।
वरदानेन च पुनर्मूर्तिमन्तौ बभूवतुः ॥१८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तौ त्वाष्ट्र्यामश्वरुपायां जातौ येन नरोत्तमौ ।
ततस्तावश्विनो देवौ कीर्त्येते रवि नन्दनौ ॥१६
प्राजापत्यं स्वयं भानुः त्वाष्ट्री शक्ति परापरा ।
तस्याः प्रागवच्छरीरस्थावमूर्तो मूर्तिमाश्रितौ । २०
ततस्तावश्विनौ देवौ मार्तण्ड मुपतस्थतुः ।
ऊचतुः स्वर्रुचि तावत् किं कर्तव्यमथावयोः ॥२१

इस प्रकार से कहकर स्वयं उठकर भानुदेव देखने की इच्छा से गये थे। उसने उसको उत्तर कुरुओं में जाकर अश्व के रूप में देखा था ॥ १५ ॥ फिर इसके अनन्तर वह अश्व का रूप धारण करके उत्तर कुरुओं में गया था और प्राजापत्य मार्ग के द्वारा आत्मा के द्वारा आत्मा को योजित किया था ॥ १६ ॥ उस अश्व रूप वाली त्वष्ट्री मे मार्त्तण्ड ने अपने तीव्र तेज से अपने बीज का निर्वपन किया था और वह जलता हुआ दो भागों में गिरा था ॥ १७ ॥ वहाँ पर प्राण और अपान जो पहिले आत्मजित थे और इसी योनि में उत्पन्न हुए थे और फिर वरदान से वे दोनों मूर्त्तिमान् हो गये थे ॥ १८ ॥ वे दोनों अश्व रूप वाली त्वाष्ट्री गर्भ से समुत्पन्न हुए थे और ये नरों में उत्तम थे। इसी से फिर वे दोनों अश्विनी देव रवि के पुत्र कहे जाया करते हैं ॥ १६ ॥ भानुदेव स्वयं प्राजापत्य के रूप में थे और त्वाष्ट्री परुणा शक्ति थी। उसके प्रागवत् शरीर में स्थित अमूर्त्त मूर्त्ति में समाश्रित हुए थे ॥ २० ॥ इसके अनन्तर वे दोनों अश्विनी कुमार देव अपने पिता श्रीमार्त्तण्ड देव के समीप में उपस्थित हुए थे। और उन दोनों ने कहा था कि हम दोनों का क्या कर्त्तव्य है ॥ २१ ॥

पुत्रौ प्रजापतिं देवं भक्त्याराधयतां वरम् ।
नारायणं सवो दवि वरं नूनभवाप्स्यथः ॥२२
एवं तावश्विनौ प्रोक्तौ मार्त्तण्डेन महात्मना ।
तेपतुस्तीव्र तरसौ तपः परमदुश्चरम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ब्रह्मपारमयं स्तोत्रं जपन्तौ तु समाहितौ ।।२३
तयो कालेन महता ब्रह्मा नारायणात्मकः ।
तुतोष परमप्रीत्या वरं चैवं ददौतयोः ।।२४
वरं वरयतां शीघ्रं देवैः परमदुर्लभम् ।
येन वो वरदानेन चरतस्त्रिदिवे सुखम् ।२५
आवयोर्देवभागं तु देहि देव प्रजापते ।
सोमपत्वं च देवानां सामान्यत्वं च शाश्वतम ।।२६

मार्त्तण्ड देव ने उनसे कहा था—हे पुत्रा ! भक्ति की समुत्कट भावना से प्रजापति देव की समाराधना करो। और वर प्राप्त करो। भगवान् नारायण सभी कुछ के प्रदान करने वाले हैं। आप दोनों निश्चित रूप से वर प्राप्त कर लेंगे ।। २२ ।। इस रीति से उन दोनों अश्विन कुमारों से महात्मा मार्त्तण्ड देव ने कहा था। उन दोनों ने तीव्र तपस्वी होकर परम दुश्चय तपश्चर्या का तप न किया था। उन्होंने परम समाहित होकर ब्रह्म पार मय स्तोत्र का जप किया था ।। २३ ।। इसके उपरान्त वहुत अधिक काल में नारायण के स्वरूप वाले ब्रह्मा जी परम प्रसन्न हुए थे और उन दोनों को वरदान भी दे दिया था ।।२४।। आप दोनों ही वर का वरण करो जो देवों के द्वारा भी परम दुलंभ होवे। जिस वरदान के द्वारा आप लोग त्रिदिय में सुख पूर्वक चरण करें ।।२५।। उन्होंने कहा--हे प्रजापते ! हे देव ! इन दोनों को देवों का भाग दीजिए। देवों का जो सोम यत्व है और सामान्यत्व है जो शाश्वत होवे वही देंने की कृपा कीजिए ।। २६ ।।

रूपं कान्तिर नौपम्यं भिषक्त्वं सर्ववस्तुषु ।
सोमपत्वं च लोकेषु सर्वमेतद्भविष्यति ।।२७
एतत्सर्वं द्वितीयायामश्विभ्यां ब्रह्मणा पुरा ।
दत्तं यस्मादतस्तेषां तिथीनामुत्तमा तिथिः ।।२८
एतस्यां रूपकामस्तु पुष्पाहारो भवेन्नरः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

संवत्सरं शुचिर्नित्यं मुस्वरुपो भवेन्नरः ।।२६
अश्विनोर्ये गुणाः प्रोक्तास्ते तस्यापि भवन्ति च ।
य इदं श्रणुयान्नित्यमश्विनोः जन्म चोत्तमम् ।
सर्वपाप विनिर्मुक्तः पुत्रवान् जायते नरः ।।३०

अनुपम रूप—कान्ति—सब वस्तुओं में भिषक्त्व और लोकों में सोमपत्व अर्थात् सोम रस का पान यह सभी आप दोनों का हो जायगा ।। २७ ।। यह सभी कुछ ब्रह्मा जी ने पहिले द्वितीया तिथि में अश्विनी कुमारों को दिया था । इसीलिये उनकी तिथियों में द्वितीया उत्तम तिथि होती ।। २८ ।। इस तिथि में रूप की कामना रखने वाला पुरुष पुष्पों के हार वाला होना चाहिए । एक वर्ष तक नित्य ही शुचि रहे तो मनुष्य सुन्दर स्वरूप वाला हुआ करता है।२६। अश्विनी कुमारों के जो गुण कहे गये हैं वे उस मनुष्यों के भी हो जाया करते हैं । जो पुरुष नित्य ही इस अश्विनीकुमारों के अत्युत्तम जन्म का श्रवण किया करता है वह सभी प्रकार के पापों से छुटकारा पा जाता है और नर पुत्रवान् हो जाता है ।। ३० ।।

२१--गौरी की उत्पत्तिः

कथं गौरी महाप्राज्ञ संस्तुता वरदानतः ।
मूर्तिं लब्धवती पुंसः परस्य परमात्मनः ।।१
पूर्वं प्रजापतिर्देवः सिसृक्षुः विविधाः प्रजाः ।
चिन्तयामास धर्मात्मा यदा तानाध्यगच्छत ।।२
तदास्य कोपात्संजज्ञे स च रुद्रः प्रतापवात् ।
रोदनात्तस्य रुद्रत्वं संजातं परमेष्ठिनः ।।३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तस्य ब्रह्मा शुभः कन्यां भार्यार्थं मूर्तिसम्भवाम् ।
गौरी नाम्नीं स्वयं देवीं भारतीं तां ददौ पिता ।
रुद्रायामितदेहाय स्वयं ब्रह्मा प्रजापतिः ।।४
स तां लब्ध्वा वरारोहां मुदा परमया युतः ।
सर्गकालेषु तं ब्रह्म तपसा प्रत्युवाच ह ।।५
रुद्र प्रजाः सृजस्वेति पौनः पुन्येन चोदितः ।
असमर्थोऽस्मीति जलेन्यमज्जत महाबलः ।।६
तपोऽर्थी त्वं तपोहीनः स्रष्टुं शक्नोति न प्रजाः ।
एवं चिन्त्य जले मग्नस्ततो रुद्रः प्रतापवान् ।।७

हे महा प्राज्ञ ! गौरी किस तरह से वरदान से संस्तुत हुई थी और उसने कैसे परात्पर परमात्मा पुरुष की मूर्त्ति का लाभ प्राप्त किया था ।। १ ।। सबसे पूर्व में देव प्रजापति ने सृजन की इच्छा वाले होकर अर्थात् अनेक प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि का सृजन की अभिलाषा वाले ने जिस समय में धर्मात्मा ने चिन्तन किया था तो उनका ज्ञान प्राप्त नहीं किया था । उस समय में उनको बड़ा भारी क्रोध हुआ था । और उसी कोध से प्रतापवान् रुद्र देव ने जन्म ग्रहण किया था । रुदन करने ही से परमेष्ठी उनको रुद्रत्व हो गया था ।। २ ।। ३ ।। उनको ब्रह्मा जी ने शुभ कन्या जो मूर्त्ति से समुत्पन्न की भार्या के लिये गौरी नाम वाली स्वयं देवी भारती उसके पिताजी ने दी थी । प्रजापति ब्रह्मा जी ने स्वयं ही अमिन देह वाले रुद्र देव को दी थी ।। ४ ।। वह उस वरा सेहा को प्राप्त करके परम हर्ष से समन्वित हो गये थे और सभी कालों में उन्होंने ब्रह्मा जी ने तपस्या से युक्त उनसे कहा था कि हे रुद्र ! प्रजा की सृष्टि का सृजन करो और इसी बाल को बारम्वार उनसे कहकर उनको प्रेरित किया था । इस पर रुद्र देव ने कह दिया था कि मैं सृजन का कार्य सम्पादन करने में असमर्थ हूँ । और यह कहकर वह महा बलवान् जल में निमग्न हो गये थे ।।५।।६।। तुम तप करने के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थी है। तुम से हीन हो जो कि प्रजा का सृजन नहीं कर सकते है। ऐसा ही चिन्तन करके फिर वह रुद्र देव जो प्रतापवान् थे जल में मग्न हो गये थे ॥ ७ ॥

तस्मिन्निमग्ने देवेशे तां ब्रह्मा कन्यकां पुनः ।
अन्तः शरीरगां कृत्वा गौरीं परम शोभनाम् ॥८
पुनः सिसृक्षुः भगवान सृजत सप्त मानसान् ।
दक्षं च तत आरभ्य प्रजाः सम्यग्विवर्धिताः ॥९
तत्र दाक्षायणी पुत्राः सर्वे देवाः सवासवाः ।
वसवोऽष्टौ च रुद्राश्च आदित्या मरुतस्तथा ॥१०
सापि दक्षाय सुश्रोणी गौरी दत्ताथ ब्रह्मणा ।
दुहितृत्वे पुरा या हि रुद्रेणोढा महात्मना ॥११
सा च दाक्षायणो देवी पुनर्भूत्वा नृपोत्तम ॥१२
ततोदक्षः प्रहृष्टात्मा दौहित्रांस्तान् समृद्धिकृतः ।
दृष्ट्वा यज्ञमथारेभं प्रीणनाय प्रजापतेः ॥१३
तत्र ब्रह्मसुताः सर्वे मरीच्यादय एव च ।
चक्रुरार्त्विज्यकं कर्म स्वे स्वे मार्गे व्यवस्थिताः ॥१४

उस देवेश्वर के जल में निमग्न हो जाने पर ब्रह्माजी ने उस कन्या को पुनः अपने अन्दर शरीर में रहने के लिए कर लिया था जो कि परम शोभना गौरी थी ॥८॥ भगवान् ब्रह्माजी फिर सृजन की इच्छा वाले होकर उन्होंने सात मानस पुत्रों को समुत्पन्न किया था और दक्ष को उत्पन्न किया था जहाँ से आरंभ करके प्रजा भली भाँति बिवर्धित हुई थी ।९। वहाँ पर सब प्रजा दाक्षायणी हुई थी उसमें सब देवगण-इन्द्र-वसुगण-मरुद्गण-आदित्य हुए थे । ब्रह्माजी ने कुससुश्रोण गौरी को दक्ष के लिये दे दी थी। और यह कहा था कि पहिले दक्ष की दुहिता बनो फिर महात्मा रुद्र के द्वारा व्याही जाने वाली होओगी ।। १० ॥ ११ ॥ हे नृपोत्तम ! और वह दाक्षायणी देवी ने पुनः जन्म ग्रहण किया था ॥ १२ ॥ इसके अनन्तर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रजापति दक्ष ने समृद्धि करने वाले दौहित्रों के देखकर बहुत प्रसन्न हुए थे और प्रजापति को प्रीणित करने के लिये उन्होंने यज्ञ करना आरम्भ कर दिया था ।। १३ ।। इसके अनन्तर ब्रह्माजी के पुत्र मरीचि आदि सबने ऋत्त्विजों का कर्म अपने—अपने मार्ग में व्यवस्थित होकर किया था ।। १४ ।।

तत्र याज्यः स्वयं ब्रह्मा स च इज्यस्तु विश्वकृत ।
पूज्यं दक्षस्य दौहित्रा रुद्रादित्योऽङ्गिरादयः ।।१५
प्रत्यक्षं पितरस्ते हि तैः प्रीतैः प्रीयते जगत् ।
तत्र भागार्थिनौ देवा आदित्या वसवस्तथा ।।१६
विश्वेदेवाः सपितरो गन्धर्वाद्या मरुद्गणाः ।
जगृहुः यज्ञभागांस्तान्यावन्तो हविषार्पिताः ।।१७
तावत्कालं जलात् सद्य उत्तस्थौ ब्रह्मणः पुनः ।
रुद्रः कोपोद्भवो यस्तु पूर्वं मग्नो महाजले ।।१८
स सहस्रार्कसंकाशो निश्चक्राम जलात्ततः ।
सर्वज्ञानमयो देवः सर्वदेवमयोऽमलः ।।१९
अधिरुद्रो यदा रुद्रस्तथा चोर्वी सकाननाम् ।
दृष्ट्वा सस्यवतीं रम्यां मनुष्य पशु संकुलाम् ।।२०
शुश्राव च तदा शब्दानृत्विजां दक्षसद्मनि ।
आश्रमे यज्ञियानोच्चैः योगस्थैरिति कीर्तितान् ।।२१

उसमें ब्रह्मा स्वयं राज्य थे और वह विश्व के करने वाले याज्य थे दौहित्र रुद्र आदित्य और आङ्गिरादिक पूज्य थे । वे सब प्रत्यक्ष में पितर थे जिनके प्रीत होने पर सभी जगत् प्रीणित है । उसमें भागों के आदित्य वसुगण देव थे ।। १५ ।। १६ ।। विश्वे देवा—पितर—गन्धर्व आदि—मरुद्गण—इन सब ने हवि के द्वारा अर्पित जितने भी यज्ञ भाग थे उनको ग्रहण किया था ।। १७ ।। उतने काल में जल से ब्रह्माजी के सामने तुरन्त ही पुनः उत्थित हुए थे जो रुद्र कोप से अद्भूत थे और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पहिले जल में मग्न गये थे ।। १८ ।। उस समय म वह सहस्रों के सदृश थे और उस जल से निकल कर बाहिर आये थे । वे देव सम्पूर्ण थे तथा वे सब देवों से सम्पन्न थे तथा अमल थे ।। १९ ।। जिस समय में रुद्र से युक्त पृथ्वी थी तो उन रुद्र देव ने वनों के सहित पृथ्वी को देखा था ओर उसको सस्य वाली—रम्य तथा मनुष्यों और पशुओं से संकुल देखा था ।। २० ।। और इसके अनन्तर उन्होंने दक्ष के भवन में ऋत्विजों के शब्दों का भी श्रवण किया था । आश्रम में योग में स्थित यज्ञियों को कीर्त्तित थे श्रवण किया था ।। २१ ।।

तत श्रुत्वा महातेजाः सर्वज्ञः परमेश्वरः ।
चुकोय सुभृशं देवो वाक्यं चेदमुवाच ह ।।२२
अहं पूर्वं तु कविना सृष्टः सर्वात्मना विभुः ।
प्रजाः सृजस्वेति तदा वाक्यमेतत्तथोक्तवान् ।।२३
इदानीं केन तत्कर्म कृतं सृष्ट्यादि वर्णनम् ।
एवमुक्तो भृशं कोपन्ननाद परमेश्वरः ।।२४
तस्मैव नदतो ज्वालाः श्रोत्रेभ्यो निर्ययुस्तदा ।
तत्र भूतानिबेताला उच्छुष्माः प्रेतपूतनाः ।।२५
उत्तस्थुः कोटिशस्तत्र नाना प्रहरणावृताः ।
तं दृष्ट्वा भूतसंघाता विविधायुधपाणयः ।।२६
ससर्ज वेदविद्याङ्गरथं परम शोभनम् ।
तस्मिन्मृगद्वयं स्वश्वो त्रितत्त्वं च त्रिवेणुकम् ।।२७
त्रिपूजकं त्रिषवणं धर्माक्षं मारुतध्वनिम् ।
अहो रात्रे पताके द्वे धर्माधर्मे तु दण्डकम ।।२८

इसके अनन्तर महातेजस्वी परमेश्वर ने श्रवण करके देवेश्वर बहुत ही अधिक कुपित हुए थे और उन्होंने यह वाक्य कहा था ।।२२।। सर्वात्मा कवि ने पूर्व में विभु मेरा सृजन सर्वात्मा ने किया था और मुझसे प्रजा का सृजन करने के लिये कहा था । उन्होंने प्रजा का सृजन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करो'— यह वाक्य मुझसे कहा था ॥२३॥ इस समय में यह सृष्टि आदि का वर्णन का कर्म किसने किया है। इस प्रकार से कहकर परमेश्वर बहुत अधिक कोप से नाद करने वाले हुए थे ॥२४॥ उनके नाद से उस समय में श्रोत्रों से ज्वालाऐं निकली थीं उन ज्वालाओं में भूत वेताल— अच्छुष्म— प्रेत— पूतना आदि करोड़ों की संख्या में प्रहरणों से समन्वित उठकर खड़े हो गये थे। अनेक आयुधों को हाथों में ग्रहण किये हुए उन भूत संघातों को देखकर एक परम शोभय वेद विद्याङ्ग रथ का सृजन किया था। उस रथ में दो भृग अश्व थे—तीन तत्त्वों वाला और वह तीन गुणों वाला था ॥ २६—२७॥ वह त्रिपूजक— त्रिषवण—धर्म के अक्षों वाला और मारुत ध्वनि से युक्त था। उसके दिन और रात दो पताकाऐं थीं और धर्माधर्म दण्ड थे ॥२८॥

शकटं सर्वंविद्याश्च स्वयं ब्रह्मा हि सारथिः ।
गायत्री च धनुस्तस्य ओङ्कारो गुण एव च ॥२६
स्वराः सप्त शरास्तस्य देव देवस्य सुव्रत ।
एवं कृत्वा स सामग्रीः देवदेवः प्रतापवान् ॥३०
जगाम दक्षयज्ञाय कोपाद्रुद्रः प्रतापवान् ।
गच्छतस्तस्य देवस्य अम्बराङ्गिरसन्नयत ॥३१
ऋत्विजां मन्त्रनिचयो नष्टो रुद्रागमे तदा ।
विपरीतमिदं दृष्ट्वा तदा सर्वेऽत्र ऋत्विजः ॥३२
उचु, सन्नह्यतां देवा महद्वो भयमागतम् ।
कश्चिदायाति बलवानसुरो ब्रह्मनिर्मितः ॥३३
यज्ञभागार्थ मेतस्मिन् क्रतौ परमदुर्लभे ।
एवमुक्तास्ततो देवा ऊचुमीतामहं तदा ॥३४
दक्ष तात किमत्रास्मत् कार्यं ब्रूहि विवक्षितम् ।
ऊह्यन्तां द्रुतमस्त्राणि संग्रामोऽत्र विधीयताम् ॥३५

यह शंकर था जिसमें सभी विद्याऐं थी और ब्रह्माजी स्वयं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ही उसके सारथि थे। गायत्री ही उसका धनुष था तथा ओङ्कार उस धनुष की डोरी थी ॥ २९ ॥ सात षड्ज आदि स्वर ही उसके शर थे। हे सुव्रत ! उन देव का ऐसा ही रथ था। वह प्रतापवान् देवों के भी देव ने इस प्रकार की सामग्री की रचना करके ये रुद्रदेव दक्ष के यज्ञ में कोप समन्वित होकर प्रतापी वहाँ पर गये थे। गमन करते हुए उन देव के अम्वरणङ्गिरस्तें को ले जाओ। जो शक्ति से समुत्पन्न हैं। उन रुद्र देव के आगमन होने पर उस समय में मन्त्रों का समूह नष्ट हो गया था। इस परम विपरीत कार्य को देखकर उस समय में सब ऋत्विज कहने लगे थे कि सब देव सम्भहत्वभान हो गये हैं अथवा कोई महान् भय आने वाला है। अथवा कोई ब्रह्म निर्मित बलवान् असुर आ रहा है ॥ ३० ॥—॥ ३३ ॥ इस परम दुर्लभ ऋतु में यज्ञ के भाग के लिये ही कोई आ रहा है। यह कहकर उस समय में देवों ने मातामह से कहा था—हे तात ! हे दक्ष ! अब यहाँ पर हमारा क्या कार्य है ? जो भी कुछ आपका विवक्षित हो उसे ही बतलाइए। देवों ने कहा था—बहुत शीघ्र ही अस्त्रों को उठाइए। यहाँ पर अब संग्राम करिए ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

एवमुक्ते तदा देवैर्विविधायुध धारिभिः।
रुद्रस्यानुचरैः सार्धं महद्युद्धं प्रवर्तितम् ॥३६
तत्र वेतालभूतानि कूष्माण्डा ग्रहपूतनाः।
युयुधुर्लोकपालेश्च नानायुध धराणि च ॥३७
ततस्तस्मिन् महारौद्रे संग्रामे भीमरूपिणि
रुद्रो भगस्य नेत्रे तु विभेदंकेषुणामृधे ॥३८
रुद्रस्यशरपातेन नष्टनेत्रं भगं तदा।
दृष्ट्वास्य क्रोधत्तेजस्वी पूषा रुद्रमयोधयत् ॥३९
तस्य दन्तांस्तदा दृष्ट्वा पूष्णो रूपेण पातितान्।
दुद्रुवुः सर्वतो दिक्षु रुद्रास्त्वेकादश द्रुतम् ॥४०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तां भग्नां सहसा दिक्षु दृष्ट्वा विष्णुः प्रतापवान् ।
आदित्यावरजो वाक्यमुवाच स्वबलं तदा ।।४१
परमेष्ठिगुणैर्युक्ता लब्धमायुर्यतः पुरा ।
तं नमस्कुरुतामोघं पृथिव्यां पद्मजं स्वयम् ।।४२

देवों के द्वारा इस प्रकार से दक्ष से कहा था और अनेक प्रकार के अस्त्रों के धारण करने वाले रुद्र के अनुचरों के साथ यहाँ पर युद्ध प्रवृत्त हो गया था ।।३६।। उस युद्ध में वेताल-भूत-कूष्माण्ड-ग्रहण पूतना ये सब अनेक आयुधों के धारण करने वाले लोक वालों के साथ युद्ध करने लगे थे ।।३७।। इसके अनन्तर उस युद्ध में जो महान् रौद्र था और जिसका महान् भयानक रूप वाला था रुद्रदेव ने उस युद्ध में एक ही वाण के द्वारा भग के नेत्र में भेदन कर दिया था ।।३८।। रुद्रदेव के शर के गिरने से उस समय में अपने नेत्र से हीन मन को देखकर क्रोध से पूषा ने रुद्रदेव से युद्ध किया था ।।३९।। उस अवसर में रुद्रदेव के द्वारा पूषा के गिराये हुए दाँतों को देखकर सभी दिशाओं में एकादश रुद्रों ने शीघ्र ही आक्रमण किया था ।।४०।। प्रतापवान् भगवान् विष्णु ने सब दिशाओं में उनको भग्न देखकर आदित्या वरण ने उस समय में अपनी सेवा से यह वाक्य कहा था ।।४१।। परमेश्री के गुणों से युक्त जिसने पहिले आयु का लाभ प्राप्त किया था उस अमोघ पृथिवी में स्वयं पद्मरज हैं नमस्कार करो ।।४२।।

एवमुक्त्वा गरुत्मन्तमारुरोह हरिस्तदा ।
शंखचक्रगदापाणिः पीतवासा जनार्दनः ।।४३
मतो हरिहरं यूद्धमभवल्लोमहर्षणम् ।
युयुधाते भृशं दिव्यं परस्पर जिघांसया ।
दिव्यं वर्ष सहस्रं तु तयोर्युद्धमभूत्तदा ।।४४
अन्योऽन्यातिशयोपेतौ तदालोक्य पितामहः ।
उवाच शाम्यतामस्त्रे स्वस्वभावेन सुव्रते ।।४५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवं ते ब्रह्मणा प्रोक्ते शान्तभावं प्रजग्मतुः ।
अथ विष्णुपरौ ब्रह्मा वाक्यमेतदुवाच ह ।।४६
उभौ हरिहरौ देवौ लोके ख्यातिं गमिष्यथः ।
अयं च यज्ञो विध्वस्तः सम्पूर्णत्वं गमिष्यति ।।४७
दक्षस्य ख्यातिमाँल्लोके सन्तत्यायं भविष्यति ।।४८
एवमुक्त्वा हरिहरौ तदा लोके पितामहः ।
ब्रह्मा लोकानुवाचेदं रुद्रभागोऽस्य दीयताम् ।।४९

इस प्रकार से कहकर उस अवसर पर भगवान् हरि ने गरुण पर समारोहण किया था भगवान् जनार्दन पीताम्बर धारण किये हुए थे और उनके करकमलों में शंख चक्र और गदा धारण करने वाले थे ।।४३।। इसके अनन्तर हरिवृदौर हर का बड़ा लोमहर्षण युद्ध हुआ था । दोनों ने परस्पर में हवन करने की इच्छा से बहुत ही दिव्य युद्ध किया था । दिव्य एक सहर्ष वर्ष पर्यन्त उस समय में उन दोनों का युद्ध हुआ था ।।४४।। परस्पर में अतिशय से समुपेरा उन दोनों को उस समय में पितामह ने देखा था । हे सुव्रते ! ब्रह्मा जी ने कहा था अपने-अपने भाव से अब अस्त्रों को शमन कीजिए ।।४५।। इस नीति से ब्रह्माजी के द्वारा कहे जाने पर वे दोनों शान्त मान को प्राप्त हो गये थे । इसके अनन्तर ब्रह्माजी ने भगवान् विष्णु और हर से यह वाक्य कहा था ।।४६।। आप दोनों हरि और हर देवेश्वर लोक में परमाधिक ख्याति को प्राप्त करो, में और जो यह यज्ञ बिध्वस्त किया था वह भी सम्पूर्णता को प्राप्त कर लेगा ।।४७।। यह वृक्ष प्रजापति की सन्तति से लोक में स्वाभिमान् अर्थात् परम प्रसिद्ध होंगे ।।४८।। उस समय में लोक पितामह ब्रह्माजी ने हरि और हर से यह इसीलिये कहकर उन्होंने फिर कहा था कि इसका रुद्रभाग दे दीजिए ।।४९।।

रुद्रभागो ज्येष्ठभाग इतीयं वैदिकी श्रुतिः ।
स्तुतिं च देवाः कुरुत रुद्रस्य परमेष्ठिनः ।।५०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

येनायं वः प्रसन्नात्मा वरदत्वं भजत ह ।
एवमुक्तास्तु ते देवाः स्तोत्रं शम्भोर्महात्मनः ॥५१
चक्रुः परमया भक्त्या नमस्कृत्य स्वयम्भुवे ॥५२
नमो विषमनेत्राय नमस्ते त्र्यम्बकाय च ।
नमः सहस्रनेत्राय नमस्ते शूलपाणये ॥५३
नमः खट्वाङ्गहस्ताय नमस्ते दंड धारिणे ।
त्वं देव हुतभ्ज्वालाकोटि भानुसम प्रभः ॥५४
अदर्शने वयं देव मूढ विज्ञानतोऽधुना ॥५५
नमस्त्रिनेत्रर्तिहराय शंभो त्रिशूलपाणे विकृतास्वरूप ।
समस्त देवेश्वर शुद्धभाव प्रसीद रुद्राच्युत सर्व भाव ॥५६
पूष्णोऽस्य दन्तान्तक भीमरूप प्रलम्व भोगीन्द्र मनोज्ञ कण्ठ ।
विशालदेहाच्युत नीलकण्ठ प्रपाहिनः सर्व गुणोपपन्न ॥५७
सिताङ्गरागाप्रतिपन्नमूर्ते कपालधारिस्त्रिपुरघ्न देव ।
प्रपाहिनः सर्वभयेषु चैवमुमापते पुष्कर नाल जन्म ॥५८

रुद्रदेव का सबसे बड़ा भाग होना है-—यह वैदिकी श्रुति है । हे देवो ! परमेष्ठी रुद्रदेव की आप लोग स्तुति करें ॥५०॥ जिससे यह प्रसन्न आत्मा वाले होकर आप लोगों का वरदाता हो जावें । इस तरह से जब देवगणों से कहा गया था तो उन समस्त देवताओं ने महान् आत्मा वाले भगवान् शम्भु का स्तवन किया था और परमाधिक भक्ति की भावना से उन्होंने शम्भू के लिये प्रणाम किया था ॥५१॥५२॥ अब वहास्त्रोत वनलाया जाता है—विषम नेत्रो वाले प्रभु के लिए नमस्कार है—अम्बक भगवान् की सेवा में प्रणाम है—सहस्रों नेत्रों के धारी प्रभु को मेरा प्रणाम है—हाथ में त्रिशूल धारण करने वाले के लिये नमस्कार है ॥५३॥ खट्वाङ्ग धारी को नमस्कार है तथा दण्ड रखने वाले के लिये प्रणाम है । हे देव ! आप अग्नि की करोंणों ज्वाला और भानु के समान प्रभा वाले हैं आपके अदर्शन में हम विज्ञान से इस समय

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में मूढ़ है ॥५४॥५५॥ हे त्रिनेत्र शम्भो ! आर्तिक हरण करने वाले आपको प्रणाम है। हे विकृत स्वरूप वाले ! आप करकमल में त्रिशूल रखते हैं और आप समस्त देवों के ईश्वर हैं—आप का भाव परम शुद्ध हैं। हे सर्वभाव ! हे रुद्र ! हे अच्युत ! आप प्रसन्न होइए ॥५६॥ आप पूषा के दाँतों का विनाष करने वाले हैं—आपका महान् भीम स्वरूप है—आपका कण्ठ परम सुन्दर है और आप भोगिन्द्रों को अपने शरीर पर लटकाये रहा करते हैं। आपका देह परम विशाल है—हे अच्युत ! हे नीलकण्ठ ! आप समस्त गुण गणों से समन्वित हैं—आप हमारा परित्राण कीजिए ॥५७॥ आप सिव अङ्गराग से प्रति यन्त्र मूर्ति वाले हैं—आप कपालों की माला को धारण करने वाले हैं—आप त्रिपुर असुर के हनन करने वाले हैं हे देव ! आप सभी भयों में हमारी रक्षा कीजिए। आप उस देवी के स्वामी हैं और आपका पुष्कर की नाल से जन्म हुआ है ॥५८॥

पश्यामि ते देहगतान्सुरेस सर्गाद्यकान् वेदवराननन्त।
साङ्गान् सविधान सपदक्रमांश्च सर्वा निलानास्त्वयि देवदेव ॥५६
भव शर्व महादेव पिनाकिन् रुद्र ते हर।
नताः स्म सर्वे विश्वेश त्राहि नः परमेंश्वर ॥६०
इत्थं स्तुतस्तदा देवैर्देवो महेश्वरः।
तुतोष सर्वदेवानां वाक्यं चेद मुवाच ह ॥
भगस्य नेत्रं भवतु पूष्णो दन्तास्तथामुखे।
दक्षस्याच्छिद्रतां यातु यज्ञश्चाप्यदितेः सुताः ॥६२
पशुभावं तथा चापि अपनेष्यामि वः सुराः।
मद्दर्शनेन जात. पशुभावो दिवौकसाम् ॥६३
स मयापहृतः सद्यः पतित्वं वो भविष्यति।
अहं च सर्वविघानां पतिराद्यः सनातनः ॥६४
अहं वै पतिभावेन पशुमध्ये व्यवस्थितः।
अतः पशुपतिनाम मम लोके भविष्यति ॥६५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे देवों में श्रेष्ठ ! हे अनन्त ? हे सुरेश्वर ! मैं आपके देह में गत स्वर्गादिक का अवलोकन कर रहा हूँ। हे देव देव ! साङ्ग— विपाओं के सहित पद क्रमों से युक्त ये सभी आपके देह में विलीन रहा करते हैं ॥ ५९ ॥ हे भवीहे ! हे शर्व ! हे महादेव ! हे पिनाकिन् ! हे रुद्रदेव ! हम सब आपके चरणार विन्दो में प्रणत हैं। हे परमेश्वर ! आप तो विश्व के ईश हैं। हमारी रक्षा कीजिए ॥६०॥ इस रीति से जब देवों के द्वारा स्तुति की गयी थी तो उस समय में महेश्वर प्रभु परम सन्तुष्ट हो गये थे और उन्होंने देवगणो से यह वाक्य कहा था। ॥६१॥ हे अदिति के पुत्रो ! भग के नेत्र हो जावें—पूषा के मुख में दाँत हो जावें तथा प्रजापति दक्ष का यज्ञ परिपूर्ण हो जावे ॥६२॥ हे सुरो ! मैं आपके पशु भाव का भी अपनयन कर दूँगा। मेरे दर्शन करने से जो भी देवों को पशु भाव हो गया था ॥६३॥ वह पशु भाव मैंने तुरन्त ही अपहृत कर दिया है और अब आप लोगों की पतित्व हो जायगा। मैं सभी विद्याओं का आद्य पति सनातन हूँ ॥६४॥ निश्चित रूप से पशुओं के मध्य में पतिभाव से व्यवस्थित रहता हूँ। इसीलिये मेरे लोक में मैं पशुपति नाम बाला हो जाऊँगा ॥६५॥

ये मां यजन्ति तेषां स्यादीक्षा पशुपतो भवेत् ।
एवमुक्ते तु रुद्रेण ब्रह्मा लोक पितामहः ॥६६
उवाच रुद्रं सस्नेह स्मितपूर्वमिदं वचः ।
ध्रुव पशुपतिर्देव त्वां लोक ख्यातिमेष्यसि ॥६७
अयं च देवस्तन्नाम्ना लोके ख्याति गमिष्यति ।
आराण्यश्च समस्तानां लोकादीनां गमिष्यति ॥६८
एवमुक्त्वा तदा ब्रह्मा दक्षं प्रोवाच बुद्धिमान् ।
गौरीं प्रयच्छ रुद्राय पूर्वमेवापेपादिताम् ॥६९
एवमुक्त्वा तदा देवस्तां कन्यां दक्षसन्निधौ ।
ददौ रुद्राय महते गौरीं परम शोभनाम् ॥७०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दक्षस्य च प्रियं कुर्वन् बहुमान पुरः सरम् ।
गृहीतायां तु कन्यायां दाक्षायण्यां पितामहः ।।७१
दादौ रुद्राय निलयं कैलासं सुर सन्निधौ ।
रुद्रोऽपि प्रययौ भूतैः समं कैलास पर्वतम् ।।७२

जो भी मानव मेरा यजन किया करते हैं। उनको पशुपति दीक्षा हो जाया करती है। इस तरह से रुद्रदेव के द्वारा कहने पर लोक पिता मह ब्रह्मा की रुद्रदेव से स्मित पूर्वक स्नेह से समन्वित वचन बोले थे—हे पशुपति देव ! निश्चय ही आप लोक में ख्याति को प्राप्त करेंगे। ।।६६।।६७।। और यह देव उसी नाम से लोक में प्रसिद्धि प्राप्त करेंगे। और यह समस्त लोकों के परम आराधना करने के योग्य हो जाँयगे। इस प्रकार से कहकर फिर बुद्धिमान् ब्रह्माजी ने दक्ष प्रजापति से कहा था। हे दक्ष ! अब आप गौरी को रुद्रदेव के लिये दे दो क्योंकि यह तो पूर्व में ही प्रतिपादित हुई है ।।६८।।६९। यह कहकर उसी समय में देव ने दक्ष की सन्निधि में उस कन्या को रुद्रदेव के लिये दे दिया था। जो रुद्र महान् थे और वह ब्रह्म गौरी परम शोभन थी ।।७०।। वह भाव पूर्वक दक्ष का हित करते हुए दाक्षायणी कन्या के गृहीत किये जाने पर पितामह ने रुद्रदेव को सुरों की सन्निधि में कैलास पर्वत पर निवास स्थान दिया था। फिर वे रुद्रदेव भी अपने भूतगणों के साथ कैलास पर्वत पर गमन करके वहाँ पर चले गये थे ।।७१।।७२।।

२२–गौरी और शिव का विवाह

तस्मिन्निवसतस्तस्य रुद्रस्य परमेष्ठिनः ।
चुकोप गौरी देवस्य पितुर्वैरमथास्मरत् ।।१
चिन्तयामास देवस्य त्वनेनपहृत पुरम् ।
यज्ञो विध्वंसितो यस्मात्तस्माद्देह त्यजाम्यहम् ।।२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आराध्य तपसा तस्य गृहे भूत्वा व्रजाम्यहम् ।
कथं गच्छामि पितरं दक्ष भयित वान्धवम् ॥३
भवपत्नी च दुहिता एवं संचिन्त्य सुन्दरी ।
जगाम तपसे देवी हिमवन्तं महागिरिम् ॥४
तत्र कालेन महता क्षपयन्ती कलेवरम् ।
स्वशरीराग्निरा दग्ध्वा ततः शैलसुताभवत !
उमा नाम्नाति महती कृष्णा चेत्यमिधानतः ॥५
लब्ध्वा तु शोभनां मूर्तिं हिमवन्त गृहे शुभाम् ।
पुनस्तप श्चकारोग्रं देवं स्मृत्वा त्रिलोचनम् ॥६
असावेव पतिर्मह्यमित्युक्त्वा तपसि स्थिता ।
कुर्वन्त्या तत्तपश्चोग्रं हिमवन्ते महागिरौ ॥७

उस कैलास पर्वत पर निवास करने वाले देवेश्ववर परमेष्ठी रुद्र देव के ऊपर गौरी ने अपने पिता दक्ष के बैर का स्मरण करके बहुत ही कोप किया था उस देवी ने ऐसा ही चिन्तन किया था कि इन्हीं देव ने पुट का अपहरण किया था और मेरे पिता के यज्ञ का विध्वंस किया था। इसी कारण से मैं अपने इस देह को परित्यक्त किये देती हूँ ॥१॥ ॥२॥ तपश्चर्या के द्वारा आराधना करके उनके गृह में रहूँगी—अत. अब मैं गमन करती हूँ। किन्तु अपने पिता दक्ष के समीप में मैं कैसे गमन करूं क्योंकि वह वान्धवों से क्षीण हो गये हैं ॥३॥ मैं दक्ष की पुत्री हूँ और सुन्दरी भव की पत्नी हूँ। यह सोच विचार करके वह देवी महा गिरि हिमवान् पर तप करने के लिये चली गयी थी ॥४॥ वहाँ पर बहुत अधिक समय तक अपने कलेवर का क्षीण करती हुई उसने अपने ही शरीर से समुद्भूत अग्नि के द्वारा अपने शरीर को दग्ध करके भस्मसाद् हो गई थी और वह फिर शैल हिमाचल की ही पुत्री के रूप में जन्म ग्रहण करने वाली हुई थी। वह उमा के नाम से बड़ी हुई थी तथाभी उसका शुभ नाम था ॥५॥ हिमवान् के घर में परम शुभ और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परम शोभन मूर्त्ति का लाभ करके उसने त्रिलोचन देव का स्मरण करके पुनः तपस्या की थी ।।६।। यही भगवान् शम्भु मेरे पति होवें यही अपने मन में संकल्प करके वह तपश्चर्या में स्थित हो गयी थी । वह हिमवान् महान् गिरि पर ही महान् उग्र तप कर रही थी ।।७।।

कालेन महता देवस्तपसा राधितस्तया ।
आजगामाश्रमं तस्या विप्रोभूत्वा महेश्वरः ।।८
वृद्धः शिथिलसर्वाङ्गः स्खलंश्चैव पदे पदे ।
कृच्छ्रात्तस्यः समीपं चाप्यागत्य द्विजसत्तमः ।
वुभुक्षि तोऽस्मि मे देहि भद्रे भोज्यं द्विजस्य तु ।।९
एवमुक्ता तदा कन्या उमा शैलसुता शुभा ।
उवाच ब्राह्मणं भोज्यं दद्मि विप्र फलादिकम् ।
कुरु स्नान द्रुतं विप्र भुंजस्वान्नं यहच्छया ।।१०
एवमुक्तस्तदा विप्रस्तस्याः पार्श्वे महानदीम् ।
गङ्गा जगाम स्नानार्थी स्नानं कर्त्तुमेवातरत् ।।११
स्नानं तु कुर्वता तेन रुद्रेण द्विजरुपिणा ।
भूत्वा मायामयं भीमं मकरं भयदर्शनम् ।
ग्राहितस्तु तदा विप्रस्तेन दुष्टेन मद्गुना ।।१२
दृष्ट्वा धृतमथात्मानं मकरेण बलीयसा ।
वृद्धमात्मा नमथ तां दर्शयन्वाक्यमब्रवीत् ।।१३
अब्रह्मण्यङ्कृतं कन्ये त्रायस्व मामतो त्ताषात् ।
यावन्न याति विकृति तावन्मांत्रा तु मर्हसि ।।१४

बहुत काल के व्यतीत हो जाने पर भी उसने तपश्चर्या के द्वारा देवेश्वर की आराधना की थी । फिर महेश्वर प्रभु उसके हृदय के सत्य-भाव को जानने के लिये एक विप्र का स्वरूप धारण करके उसके आश्रम में समागत हुए थे ।।८।। वह विप्र का स्वरूप भी ऐसा था कि सभी शरीर के अङ्ग उसके शिथिल थे तथा पद-पद में वह स्थलित होता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था—ऐसा वह विप्र बड़ी कठिनाई से उस देवी के समीप में समागत हुआ था। उसने वहाँ पहुँच कर उमा देवी से कहा था—हे भद्रे ! मैं भूखा हूँ। आप इस विप्र को कुछ भोज्य प्रदान कीजिए ॥९॥ जब इस प्रकार से उस कहा गया तो उस परम शुभा शैल की पुत्री उमा ने उस ब्राह्मण से कहा था—हे विप्र ! मैं फल आदि भोज्य आपको दे रही हूँ। हे विप्र ! आप शीघ्र स्नान करिये और इच्छा पूर्वक अन्न का भोजन करिये ॥१०॥ इस तरह से उस कहे हुये विप्र ने पाश में ही महान ही जो भागीरथी गङ्गा थी वहाँ पर वह चला गया था। वहाँ पर स्नान करने के लिये उसने उस गङ्गा में अवतरण किया था ॥११॥ स्नान करते हुए उन द्विज रूपी रुद्र देव ने एक माया से परिपूर्ण मकर का स्वरूप धारण कर लिया था जो देखने में वहुत ही भयानक था। उस समय में वह विप्र ग्राहित हो गया था और दुष्ट मकर ने उनको पकड़ लिया था जो अपनी ही माया से बना दिया गया था ॥१२॥ उस वलवान् मकर के द्वारा अपनें आपको पकड़ा हुआ देखकर उस देवी को अपने आपके स्वरूप को वृद्ध दिखाते हुए यह वाक्य उसने देवी उमा से कहा था ॥१३॥ हे कन्ये ! मैं ब्राह्मण इस समय में अक्षित हो गया हूं। इस मकर से महान भय से मेरी रक्षा करो। जब तक मेरा शरीर विकृत न होवे तभी तक आप मुझे बचाइए अर्थात् मेरा परित्राण करने की कृपा कीजिए ॥१४॥

एवमुक्त्वा तदा कन्या चिन्तयामास पार्वती।
पितृभावेन शैलेन्द्रं भर्तृभावेन शंकरम्।
स्पृशामि तपसा पूता कथं विप्रं स्पृशाम्यहम् ॥१५
यद्येनं नापकर्षामि मकरेण जले धृतम्।
तदानी ब्रह्मवध्या मे भविष्यति न संशयः ॥१६
अन्यं व्यतिक्रमे धर्ममपनेतुं च शक्यते।
ब्रह्मवध्या पुनर्नैभेववमुक्त्वा गतांजसा ॥१७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सा गत्वा त्वरितं भीसर्गृहीत्वा पाणिना द्विजम् ।
चकर्षान्तर्जलत्तावत्स्वयं भूतपतिर्हरः ॥१८
यमाराध्य तपश्चर्त्तुमारब्धं शैलकन्यया ।
सा एव भगवान् रुद्रस्तस्याः पाण्यलन्वितः ॥१९
तं दृष्ट्वा लज्जिता देवी पूर्वत्यागमसस्मरत् ।
न किंचिदुत्तरं सुभ्रूः वदति स्य सुलज्जया ॥२०
तूष्णीम्भूतां तु तां दृष्ट्वा गौरीं रुद्रो हसन्निव ।
पाणौगृहीत्वा मां भद्रे कथं त्यक्तुमिहार्हसि ॥२१

इस प्रकार से जब उस देवी से कहा गया था तो उस कन्या पार्वती के मन में विचार किया था। मैं अपने पिता के भाव से शैलेन्द्र का स्पर्श किया करती हूँ और अपने भर्त्ता के भाव से मैं भगवान शँकर का स्पर्श किया करती हूँ। अब तप से पवित्र हुई मैं इस विप्र का स्पर्श कैसे कर सकती हूँ ॥१५॥ यदि मैं इसका अपकर्षण नहीं करती हूँ जो जल में मकर के द्वारा पकड़ा गया है तब तो मैं ब्रह्म वध्या हो जाऊँगी-इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥१६॥ इस व्यतिक्रम में अन्य धर्म का अपनयन करने का कोई भी साधन नहीं हो सकता है। इस प्रकार से ब्रह्म हत्या का दोष फिर नहीं होता है—ऐसा कहकर वह शीघ्र ही वहाँ गयी थी ॥१७॥ उस भीरु ने वहाँ पहुँच कर शीघ्र ही अपने हाथ से द्विज को ग्रहण करके जब तक जल के अन्दर से उस द्विज को खींचा था तब तक भूतपति शम्भु स्वयं प्रकट हो गये थें। और उन्होंने कहा था--जिसका आराधन करके शैल कन्या के द्वारा तपश्चर्या का करना आरम्भ किया था वह ही साक्षात् भगवान् रुद्र उसके कर से अवलम्बित हो गये हैं ॥१९॥ उन भगवान् शम्भु का दर्शन करके वह देवी लज्जित हो गई थी और उसने पूर्व में किये हुए त्याग का स्मरण किया था। उस सुभ्रू ने अत्यधिक लज्जा से कुछ भी इसका उत्तर उनको नहीं दिया था।२०। उस गौरी को चुप हुई देख कर रुद्रदेव हँसते हुए गौरी का हाथ पकड़

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कर कहने लगे थे—हे भद्रे ! आपने मुझे हाथ से पकड़ कर ऊपर किया था अब आप मुझे कैसे त्याग करने के योग्य हो रही हो ।।२१।।

मत्पाणिग्रहणं भद्रे वृथा यदि करिष्यसि ।
तदग्नीं ब्रह्मणः पुत्र्यामाहारार्थी ब्रवीम्यहम् ।।२२
न भवेत्परिहासोऽयमुक्तं देवी परंपरा ।
लज्जमाना तदा वाक्यं वदति स्मितपूर्वकम् ।।२३
देवदेव त्रिलोकेश त्वदर्थोऽयं समुद्यमः ।
प्राग्जन्माराधितो भर्त्ता भवान्देवो महेश्वरः ।।२४
इदानीं मे भवान्देवः पतिर्नाम्यो भविष्यति ।
किन्तु स्वामी पिता मह्यं शैलेन्द्रो मे व्रजामि तत् ।।२५
अनुज्ञाप्य विधानेन ततः पाणिं गृहीष्यसि ।।२६
एवमुक्त्वा तदा देवी पितरं प्रति भामिनी ।
कृतांजलिपुरा भूत्वा हिमवन्त मुवाच ह ।।२७
इतोऽन्यजन्मभर्त्ता मे रुद्रो दक्षमखान्तकः ।
इदानीं तपसा सैव ज्ञातोऽभूत्गतिभावतः ।।२८

शिव देव ने कहा—हे भद्रे ! मेरे पाणि के ग्रहण को यदि आप वृथा करेंगी तब तो मैं ब्रह्माजी की पुत्री के समीप आहार के लिये जाता हूँ - मैं यह कहता हूं ।।२२।। यह परिहास न हो जावे—ऐसा जब कहा था तो परापरा देवी लज्जभान होती हुई स्मित पूर्वक उस समय में कहती है ।।२३।। हे देवों के देव ! आप तो त्रिलोकी के स्वामी हैं । यह मेरा समुद्यम तो आप ही के लिये था । आप मेरे पूर्व जन्म में आराधित देव भर्त्ता हैं और आप महेश्वर हैं ।।२४।। इस समय में आप ही देव मेरे भर्त्ता हैं और अन्य कोई भी नहीं होगा । किन्तु मेरे पिता शैलेन्द्र हैं वे ही मुझे स्वामी को प्रदान करेंगे मैं अब उन्हीं के समीप में गमन करती हूँ ।।२५।। उनको अनुज्ञापित करके ही विधि-विधान के द्वारा ही आप मेरा पाणिग्रहण करेंगे ।।२६।। उस समय में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस प्रकार से कह कर वह भामिनी देवी अपने पिता के पास गयी थी और हाथों को जोड़कर उस उमा ने पिता से कहा था ।। २७ ।। उमा नेकहा था—इससे पूर्व जन्म में मेरे भर्त्ता रुद्रदेव थे जिन्होंने दक्ष के यज्ञ का विध्वंस किया था। इस समय में तप के द्वारा गति भाव से उनका ही ज्ञान प्राप्त हो गया है ।। २८ ।।

स च विश्वपतिर्भूत्वा ब्राह्मणो मे तपोवनम् ।
आगत्य भोजनार्थी मां याचयामास शङ्करः ।।२६
मया स्नातुं व्रजस्वेति चोदितो जाह्नवीं गतः ।
तत्रासौ वृद्धभावेन द्विजरूपेण शङ्करः ।
मकरेण धृतः पूर्वमब्रह्मण्यमुवाच ह ।।३०
ब्रह्महत्याभयात्तात मया पाणौ धृतस्ततः ।
धृतमात्रः स्वकं देहं दर्शयामास शंकरः ।।३१
ततो मामब्रवीद्देवः पाणिग्रहणमागतम् ।
भवती देवि किंचिद्विचारय तपोधने ।।३२
एवमुक्ता त्वहं तेन शंकरेण महात्मना ।
तमनुज्ञाप्य देवे शंभवन्तं प्रष्टुमागता ।।३३
इदानीं पत्क्षमं कार्यं तच्छीघ्रं संविधीयताम् ।।३४
एवं श्रुत्वा तदा वाक्यं शैलराजो मुदा युतः ।
ऊचे दुहितरं कन्यां तस्मिन्काले वरानने ।।३५

वे सम्पूर्ण विश्व के पति है तो भी ब्राह्मण का स्वरूप धारण करके मेरे पास तपोवन में समागत हुए थे और उन भगवान् शङ्कर ने वहाँ आकर भोजन के लिये मुझसे याचना की थी ।।२६।। मेरे द्वारा उस समय में उनको प्रेरणा दी गयी थी कि स्नान करने के लिये जाइए। और वे स्नान के लिये गङ्गा नदी पर गये थे। वही पर इन्हीं भगवान् शिव ने वृद्ध भाव से जो कि एक द्विज के स्वरूप में थे एक मायामय मकर के द्वारा पकड़े गये थे। उन्होंने उसी समय में मुझसे कहा था कि

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यह अब्रह्मण्य होगा अर्थात् ब्राह्मण रक्षा न करने का महान् पाप होगा ॥३०॥ हे तात ! ब्राह्मण की हत्या के पाप के भय से मैंने इनको हाथ से पकड़ कर खींच लिया था। जैसे ही मैंने इनका हाथ पकड़ा था। उसी क्षण में भगवान् शङ्कर ने मुझे अपने साक्षात् स्वरूप का दर्शन करा दिया था ॥३१॥ उस समय में देवेश्वर ने मुझसे कहा था-- यह योपाणि ग्रहण हो गया है। हे तपोधने ! अब आप कुछ भी अपने हृदय में विचार न कीजिये। उन देवेश्वर शङ्कर ने मुझ से इसी प्रकार से कहा था और मैं आप की अनुज्ञा प्राप्त करने के लिये आप से पूछने के ही लिये यहाँ पर समागत हुई हूँ ॥३२॥३३॥ इस समय में जो भी क्षय कार्य हो उसी को आप शीघ्र ही करिये ॥३४॥ उस समय में इस तरह के वाक्य का श्रवण करके शैरभ राज परम प्रसन्नता से युक्त हो गये थे और उन्होंने उस समय में अपनी पुत्री कन्या से कहा था—हे वरानने ! ॥३५॥

पुत्रि धन्योऽस्म्यहं लोके यस्य रुद्र स्वयं हरः।
जमाता भविता देवस्त्वयाऽपत्यवदस्म्यहम् ॥३६
स्थापितो मूर्ध्नि देवानामपि पुत्रि त्वया ह्यहम्।
स्थयितां क्षणमेक तु यावदागमन मम ॥३७
एवमुक्त्वा गतो राजा शैलानां प्रह्मणोऽन्तिकम्।
तत्र दृष्ट्वा महात्मानं सर्वं देवपितामहम् ॥३८
उवाच प्रणतो भूत्वा ब्रह्माणं शैलराट् ततः।
देव्रोमा दुहिता मऽद्य तां रुद्राय ददाम्यहम् ॥३९
प्रयच्छोवाच देवानां तदा लोकपितामहः ॥४०
एवमुक्तः शैलराजः स्ववेश्मागम्य सत्वरम्।
तुम्बुरुं नारदं चैव हाहा हूहू मथाह्वयत् ॥
स गत्वा किन्नरांश्चैव असुरान् राक्षसानपि ॥४१
पर्वता सरितः शैला वृक्षओषधयस्तथा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आगता मूनिमन्तो वै पर्वताः सङ्गभोपालाः ।
हिमवत्कन्यकां द्रष्टुं विवाह शंकरेण ह ।।४२

हे पुत्रि ! मैं परम धन्य लोक में हूं जिसके जामाता रुद्र हर स्वयं हीं हो जावें । हे देवि ! मैं तो परम भाग्य वाला हूँ और आपके ही द्वारा सन्तति वाला हो गया हूँ ।। ३६ ।। हे पुत्रि ! तेरे द्वारा मैं देवों के भी मस्तक पर स्थापित किया गया हूँ । जब तक मेरा आगमन होवे तब तक एक क्षण तुम यहीं पर स्थित रहो ।। ३७ ।। उस शैलों के राजा ने इस प्रकार से कहकर फिर वह ब्रह्माजी के समीप में गया था । वहाँ पर उसने सब देवों के पितामह का दर्शन किया था और उस शैलों के राजा ने प्रणत होकर ब्रह्माजी से कहा—मेरी जो देवी दुहिता है उसको रुद्र देव के लिये प्रदान कर रहा हूँ । उस समय में लोकों तथा देवों के पिता ने कह दिया था तुम उस देवी को रुद्र देवी को रुद्र देव के लिये प्रदान करदो ।। ३८ ।। ३९ ।। ४० ।। इस तरह से कहे गये शैलराज वहुत ही शीघ्र अपने घर में वापिस आग ये थे । इसके अनन्तर वहाँ पर तुम्वरू—नारद—ही ही हू हू—नाम वालों के पास बुलाने को वह शैल राज गया था । किन्नरों को—असुरों को और राक्षसो को भी वहाँ पर विवाहोत्सव में उस शैलों के राजा ने बुलाया था वहाँ पर सभी पर्वत—नदियाँ—शैल—वृक्ष—और औषधियाँ सभी मूर्त्तिमान् होकर सङ्गमोपल सभी हिमवान् की कन्या का भगवान् शङ्कर के साथ उस विवाहोत्सव को देखने के लिये वहाँ पर समागत हुये थे ।।४१।।४२।।

तत्र वेदि क्षितिश्चासीत् कलशाः सप्त सागराः ।
सूर्यो दीपस्तथा सोमः सरितो ववहुर्जलम् ।।४३
एवं विवाहसामग्रीं कृत्वा शैलवराधिपः ।
प्रेषयामास रुद्राय समीपं मन्दरं गिरिम् ।।४४
स तदा शङ्करोक्तस्तु मन्दरो द्रुतमाययौ ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विधिना सोमया पाणिं जग्राह परमेश्वरः ।।४५
तत्रोत्सवे पर्वंत नारदौ गो जगुश्च सिद्धाननृतुर्वनस्पतीः ।
पुष्पाण्यनेकानि विचिक्षिपुः शुभा ननृतरुच्चैः सुरयोषितौ भृशम्
।।४६
तस्मिन् विवाहे सलिल प्रवाहे चतुर्मुखो लोकपरः स्वसंस्थः ।
उवाच कन्यां तव पुत्रि लोके नारीं सुभर्त्ता तव चान्यपुंसाम् ।४७
इत्येवमुक्त्वा स उमां स रुद्रां पितमहः स्वां पुरमा जगाम ।।४८
स वभूव यथाप्रोक्तं प्रजापालाय पृच्छते ।
ऋषिणा महता पूर्वं तपसा भावितात्मना ।।४९
गौर्या उत्पत्तिरेषा वै कथिता परमर्षिणा ।
विवाहश्च यथा वृत्तस्तत्सर्वं कथितं तव ।।५०

वहाँ पर उस विवाह के उत्सव में क्षिति ही देवी बनी थी और सात सागर ही सात कलश हुए थे। सूर्य और चन्द्र दीप बने थे तथा—सरिताओं ने जल का बहुत किया था ।। ४३ ।। शैलों के श्रेष्ठ राजा ने इस प्रकार से ही सम्पूर्ण सामग्री बना करके फिर उस हिमवान् ने मन्दर पर्वत को रुद्रदेव के समीप में भेजा था। उस समय में शङ्कर भगवान् के द्वारा कहा गया मन्दराचल शीघ्र ही वापिस आ गया था और विधि-विधान के साथ सोम पान करने वाले परमेश्वर ने उमा देवी का पाणिग्रहण किया था ।। ४४ ।। ४५ ।। वहाँ पर वन स्थली में पर्वत नारद दोनों ने गायन किया था और सिद्धों ने नृत्य किया था। देवाङ्गनाओं ने अनेक तरह के पुष्पों वृष्ठि की थी और नृत्य किया था ।। ४६ ।। उस विवाह में सलिल के प्रवाह में चतुर्मुख ब्रह्माजी लोक पर संस्थिय थे। उन्होंने कन्या से कहा था—हे पुत्रि ! लोक में तुम्हारा बहुत ही उत्तम भर्त्ता प्राप्त हुआ है जो अन्य पुरुषो में अत्यधिक श्रेष्ठ हैं ।। ४७ ।। उन ब्रह्माजी ने रुद्र देव के सहित उमा देवी को इस प्रकार से कहकर पितामह अपने पुर में आ गये थे ।। ४८ ।। वह जैसा कहा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गया है वैसे ही दान करने वाले प्रजापात के लिये हो गये थे। पूर्व में महान् तप से भावितात्मा ऋषि ने पूर्व में गौरी की यह उत्पत्ति कही थी। और उनका जैसे विवाह हुआ था बह मैंने आपको बतला दिया है ॥ ४६ ॥ ५० ॥

एतत्सर्वं तु गौर्या वै सम्पन्नं तु तृतीयया ।
तस्यां तिथौ तृतीयायां लवणं वर्जयेत्सदा ॥५१
यश्चोयोष्यति नारी वा सा सौभाग्यं तु विन्दति ॥५२
दुर्भगा या तु नारी स्यात्पुरुषश्चाति दुर्भगः ।
एतत् श्रुत्वा तृतीयायां लवणं तु विवर्जयेत् ॥५३
सवकामानवाप्नाति सौभाग्य द्रव्य सम्पदः ।
आरोग्यं च सदा लाक करति पुष्टि च विन्दति ।५४

गौरी का यह सब कार्य तृतीया तिथि में सुम्पन्न हुआ था। अतएव तृतीया में लवण को वर्जित कर देना चाहिए। और सदा ही लवण का त्याग कर देवे ॥ ५१ ॥ जो नारी तृतीया तिथि में उपवास किया करती है वह तारी सर्वदा सौभाग्य की प्राप्ति क्रिया करती है। वह नारी दुर्भगा होती है और पुरुष भी दुर्भग होता है जो तृतीया के महत्त्व को नहीं मानते हैं इसका श्रवण करके तृतीयातिथि में सदा ही लवण का त्याग कर देना चाहिए ॥ ५३ ॥ जो भी इस तृतीया में लवण का त्याग करके उपवास किया करते हैं वे अपनी सभी कामनाओं की प्राप्ति किया करते है तथा परम सौभाग्य—द्रव्य और सम्पदाओं को प्राप्त करते हैं। सदा आरोग्य और लोक में कीर्त्ति तथा पुष्टि को प्राप्त किया करते हैं। इसका इतना अधिक महत्त्व हुआ करता है ॥ ५४ ॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

२३—गणपति जन्म

कथं गणपतेर्जन्म मूर्तिमत्त्वं च सत्तम ।
एतन्मे संशयं छिन्धि हृदि कष्ट व्यवस्थितम् ।।१
पूर्वं देवगणाः सर्वे ऋषयश्च तपोधनाः ।
कार्यारम्भं तथा चक्रुः सिद्धयन्ते च न संशयः ।।२
सन्मार्गवर्तिषु तथा सिद्धयन्ते विघ्नतः क्रियाः ।
असत्कारिषु सर्वेषु तवदेवमविघ्नतः ।।३
ततो देवाः सपितरश्चिन्तयामासुरोजसा ।
असत्कार्येषु विघ्नार्थे सर्व एवाभ्यमन्त्रयन् ।।४
ततस्तेषां तदा मन्त्रं कुर्वतां त्रिदिवौकसाम् ।
बभूव बुद्धिर्गमने रुद्रं प्रति महामतिम् ।।५
ते तत्र रुद्रमामन्त्र्य कैलासनिलयं गुरुम् ।
ऊचुः सविनयं सर्वे प्रणिपातपुरःसरम् ।।६
देवदेव महादेव शूलपाणे त्रिलोचन ।
विघ्नार्थमविशिष्टानामुत्पादयितुमर्हसि ।।७

हे श्रेष्ठतम ! भगवान् गणपति का जन्म कैसे हुआ था—इस मेरे संशय का आप छेदन कर दीजिए । यह मेरे हृदय में बहुत कष्ट दे रहा है जो कि व्यस्थित है ।। १ ।। पूर्व में अर्थात सबसे प्रथम सभी देवगण और तपोधन ऋषिगण गणपति का अर्चन करके ही किसी भी कार्य का आरम्भ किया करते थे । वे सभी कार्य सिद्ध हुआ करते हैं—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।। २ ।। सन्मार्ग के वर्त्तन करने वालों में विघ्न से क्रियाऐं सिद्ध हुआ करती हैं और जो असत्कारी हैं उन सब में उसी भाँति अविघ्न से होती हैं ।।३।। इसके अनन्तर देवों ने ओज से पितरों के सहित चिन्तन किया था । असत्कार्यों में विघ्न के लिये सभी ने इस प्रकार से मन्त्रणा की थी ।।४।। इसके अनन्तर देवों के इस तरह से मन्त्रणा करते हुओं को ऐसी बुद्धि समुत्पन्न हो गई थी कि महापति

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

रुद्रदेव के समीप में जाना चाहिए। ने ही इसके विषय में उचित मार्ग का प्रदर्शन कर देंगे। क्योंकि वे महान् मति वाले देवेश्वर हैं ॥ ५ ॥ वे सभी देवगण वहाँ पर रुद्रदेव के कैलास के निवास स्थान पर गुरुदेव के समीप में पहुँचे थे। और सब ने प्रणाम पूर्वक विनय के साथ भगवान शिव से प्रार्थना की थी ॥ ६ ॥ देवों ने कहा—हे देवों के देव! हे महादेव! हे शूलपाणे! हे त्रिलोचन! आप अविशिष्टों के विघ्नों के लिए उत्पादन करने को परम योग्य हैं ॥७॥

एवमुक्तस्तदा देवैर्भवः परमया मुदा ।
उमां निरीक्षयामास चक्षुषाऽनिमिषेण ह ॥८
देवानां सन्निधौ तस्य पश्यतस्तां महात्मनः ।
चिन्ताभूद व्योम्नि मूर्तिर्नो दृश्यते केन हेतुना ॥९
पृथिव्या विद्यते मृतिरयां मूर्तिस्तथैव च ।
तेजसः श्वसनस्यापि मूर्तिरेषा तु दृश्यते ॥१०
आकाशं च कथं नति मत्वा देवो जहास च ।
ज्ञानशक्तिः युमान् दृष्टः यद्दृष्टं व्योम्नि शम्भुना ॥११
यथोक्तं ब्रह्मणा पूर्वं शरीरं तु शरीरिणाम् ।
यच्चापि हसितं तेन देवेन परमेष्ठिना ॥१२
एतत्कार्यं चतुष्केण पृथिव्यादि चतुर्ष्वपि ।
मूर्तिमानाति तेजस्वी हसतः परमेष्ठिनः ॥१३
प्रदीप्तास्यो महादीप्तः कुमारो भासयन्दिशः ।
परमेष्ठिगुणैर्युक्त साक्षात् रुद्रहवा परः ॥१४

इस रीति से जब देवों के द्वारा शम्भु से प्रार्थना की गयी थी तो उसी समय में देवेश्वर शंकर ने परम आनन्द के साथ एक टक नेत्र से उमा देवी का निरीक्षण किया था ॥८॥ देवों की सन्निधि में उस उमा देवी को देखते हुए उन शंकर को ऐसी चिन्ता हुई थी कि किस कारण से व्योम में मूर्त्ति नहीं दिखलाई दिया करती है अर्थात् आकाश

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की कोई भी मूर्त्ति न होने का क्या कारण है ॥६॥ पृथिवी की मूर्ति विद्यमान है—उसी भाँति जलों की भी मूर्त्ति होती है । तेज की और बायु की भी यह मूर्त्ति दिखलाई देती है ॥१०॥ इस आकाश की कोई मूर्त्ति क्यों नहीं है—यह विचार करके महादेव हँस गए थे । ज्ञान शक्ति वाला पुमान् देखा गया था जो कि शम्भु के व्योम में देखा था ॥११॥ ब्रह्माजी ने पूर्व में शरीर धारियों का जो शरीर जैसा कहा था । परमेष्ठी देव ने जो भी हास किया था । इस चार कार्यो से पृथिवी आदि चारों में भी हँसते हुए परमेष्ठी के द्वारा अति तेजस्वी मूर्त्तिमान् प्रदीप्त मुख से समन्वित—महान दीप्ति वाला कुमार दिशाओं को भासित करते हुए कुमार प्रकट हुए थे जो परमेष्ठी के गुणों से युक्त थे और साक्षात् दूसरे रुद्र के ही समान थे ॥१२—१४॥

उत्पन्न यात्रो देवानां व्युषितः संप्रमोहयन् ।
कान्त्यादीप्त्या तथा मूर्त्या रूपेण च महात्मवान् ॥१५
तं दृष्ट्वा परमं रूपं कुमारस्य महात्मनः ।
उमाऽनि मेषनेत्राभ्यां तमपश्यच्च भामिनी ॥१६
तं दृष्ट्वा कुपितो देवः स्त्रीभावं चंचलं तथा ।
मत्वा कुमाररुपं तु शोभनं मोहनं दृशाम् ॥१७
ततः शशाय तं देवो गणेशं परमेश्वरः :
कुमार गजवक्तृस्त्वं प्रलम्बजठरस्तथा ।
भविष्यसि तथा सर्पैरूपवीत गतिध्रुवम् ॥१८
एवं शशाय तं देवस्तोव्रकोय समन्वितः ।
धुन्वन् शरीरमुत्थाप्य ततो देवो रूषान्वितः ॥१६
यथा यथा सौ स्वशरीरमाद्यं धुनोति देवस्त्रिशिखास्त्रपाणिः ।
तथा तथा चाङ्गरूहाच्चकासे जलक्षिति संन्यपत्तत्तथान्यत् ॥२०
विनायकानेका विधा गजास्यास्तमाल नीलाञ्जन सन्निकाशाः ।
उत्तस्थुरूच्चैर्विविधास्त्रहस्ताः ततस्तु देवो मानसाकुलेन ।२१

उस कुमार ने केवल उत्पन्न होते ही जो कान्ति दीप्ति—मूर्त्ति और रूप के द्वारा महान् आत्मा वाले थें उन्होंने सब देवगणों को प्रमो-

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हित कर दिया था। देवों ने उस महान आत्मा वाले कुमार का परम दिव्य रूप को देखकर तथा ऊषादेवी ने भी उस सुन्दर स्वरूप वाले को देखकर उस भामिनी ने निर्विभेद नेत्रों के द्वारा उसकी ओर देखा था। ।।१५।।१६।। उसको देखकर देवेश्वर परम कुपित हो गये थे और स्त्री भाव को चंचल मान कर दृष्टि को मोहित करने वाले कुमार के शोभन रूपको देखकर उन्होंने देदिया था अर्थात् परमेश्वर ने गणेशको शाप दिया था—हे कुमार ! तू गज के मुख वाला होजा और तेरी सूंड बहुत लम्बी हो जाये। तथा सर्पों के द्वारा उपवीत गति निश्चय ही हो जावे ।।१८।। इसी रीति से देव ने उनको शाप दे दिया था और परम तीव्र कोप से युक्त हो गये थे। फिर शरीर को कँपाते हुए फिर देवेश्वर क्रोध से संयुत हो गये थे ।१९। जैसे जैसे यह आद्य अपने शरीर को कम्पित करते थे वैसे-वैसे ही उनके अङ्ग रुह से जल व्यक्त होता था। देव ने अग्नि अस्त्र अपने हाथ में ग्रहण कर रक्खा था। तथा अन्य संनिपतित हुआ था ।।२०।। विनायक से अनेक प्रकार के गजमुख जो तमाल और नील अञ्जन समान थे। वे अस्त्रों को हाथों में धारण किए अनेकों ऊपर की ओर उत्थित हो गये थे। इसके अनन्तर देवेश्वर मन में अत्यधिक आकुल हो गए थे ।।२१।।

किमेतदित्यद्भुत कर्मकारी ह्येक करोत्य प्रतिमं महच्च।
कार्यं सुराणां कृतमतदिष्टं भवेदथैनं परितः कुतस्तत् ।।२२
दिवौकसां चिन्तयतां तथा तु विनायकैः क्ष्मा क्षुभिता बभूव।
चतुर्मुखश्चा प्रतिमं विमानमारूह्यखे वाक्यमिदं जगाद् ।।२३
धन्या स्थ देवाः सुरनायकेन त्रिलोचनेनाद्भुत रूपिणा च।
अनुगृहीताः परमेश्वरेण सुरद्विषां विघ्नकृतां न तौ च ।। २४
इत्येवमुक्त्वा प्रपितामहस्तानुवाच देवस्त्रिशिखास्त्रपाणिम्।
यस्ते विभो वस्तृ समुद्भवः प्रभुः विनायकानां भव सन्त्विमेऽनुगाः ।।२५
भवान्तथास्यात्मवरेण चाम्बरे त्वया चतुर्व्वस्तु शरीर चारी।
आकाशमेतद्वहुधा व्यवस्थितं त्वया चैको वदतां तेऽपयाताः ।।२६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रभुर्भव त्वं प्रतिमास्त्र पाणिना इमानि चास्त्राणि वरांश्च देहि ।
इत्येव मुक्त्वा विगते पितामहे त्रिलोचनश्चात्य भवं जगाद ।।२७

यह अत्यन्त अद्भुत कर्म के करने वाला है। यह एक ही अनुपान और महान् कार्य कर रहा है। सुरगणों का कार्य कर रहा है। यह इष्ट हो गया है। इसके चारों ओर यह वया है ।।२२। देवगणों के चिन्तन करते हुये होने पर यह पृथ्वी परम क्षुभित हो गई थी। चतुर्मुख अप्रतिम विमान में समारूढ़ होकर उन्होंने आकाश में यह वाक्य कहा था ।।२३।। हे देवो ! आप लोग परम धन्य हैं। अद्भुत रूप वाले सुरनायक त्रिलोचन के द्वारा आप अनुगृहीत हुये हैं। परमेश्वर ने आप लोगों पर बड़ी कृपा की है। विघ्नों को करने वाले सुरों के द्वेषी असुर उनके आगे नहीं रहेंगे ।२४।। इस प्रकार से इतना ही कहकर प्रपितामह देव ने त्रिशिखास्त्र अर्थात् आग्नेयास्त्र हाथ में रखने वाले से कहा था—हे विभो ! जो यह वक्त्र से समुद्भूत प्रभु हैं अर्थात विनायकों के नायक हैं ये उनके अनुगामीं होंगे। ।।२५।। मुख से समुद्भूत तुझ से आप अम्बर में चार शरीर धारी होगे। यह आकाश तुझसे बहुत प्रकारों से व्यवस्थित है और यही एक है इसके कहने वालों के वे सब अपयात हो जाँयगे ।।२६।। आप प्रतिमास्त्र पाणि से प्रभु हो जाइये और इन अस्त्रों को तथा वरों को दीजिए। बस, इतना ही कहकर पितामह के विनिर्गत हो जाने पर त्रिलोचन प्रभु ने अपनी आत्मा से जन्म ग्रहण करने वाले पुत्र से कहा था ।।२७।।

विनाय को विघ्नकरो गजास्यो गणेश नामा च भवस्य पुत्रः ।
एते च सर्वे त्वपयान्तु भृत्या विनायकाः क्रूरदृशः प्रचण्डाः ।।२८
उच्छुष्मदानादि विवृद्ध देहाः कार्येषु सिद्धिः प्रतिपादयन्तः ।
भवांश्च देवेषु तथा मखेषु कार्येषु चान्येषु महानुभावान् ।।२९
अग्रे तु पूजां लभतेऽन्यथा च विनाशयिष्यस्यथ काय सिद्धिम् ।
इत्येव मुक्त्वा परमेश्वरेण सुरैः समं कांचन कुम्भ संस्थैः ।।३०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जलैस्तथासावभिषिक्त गात्रोरराज राजेन्द्र विनायकानाम् ॥३१
दृष्ट्वाभिषिच्यमानं तु देवास्तं गणनायकम् ।
तुष्टु वुः प्रयताः सर्वे त्रिशूलास्त्रस्य सन्निधौ ॥३२
नमस्ते गजवक्ताय नमस्ते गण नायक ।
विनायक नमस्तेऽस्तु नमस्ते चण्डविक्रम् ॥३३
नमोऽस्तुते विघ्नकर्त्रे नमस्ते सर्पमेखल ।
नमस्ते रुद्रवक्तोत्थ प्रलम्ब जठराश्रित ।
सर्व देव नमस्कारादविघ्नं कुरु सर्वदा ॥३४

विनायक—विघ्न कर—गज वदन—गणेश नाम धारी शम्भु के पुत्र—ये सब क्रूर द्रष्टि वाले—प्रचण्ड—मृत्य विनायक सब अपमान करें। अर्थात् यहाँ से दूर चले जावें। उच्छुष्म दानादि से पिवृद्ध देहों वाले—कार्यों में सिद्धि का प्रतिपादन करते हुए हैं। और आप देवगणों में तथा मखों में और अन्य कार्यों में महानुभाव के यहाँ आप सबसे आगे पूजा का लाभ प्राप्त करते हैं अर्थात् सबके पहिले गणेश जी ही पूजित किये जाते हैं। यदि इनकी सबसे प्रथम पूजा नहीं होती है तो यह कार्यों की सिद्धि का विनाश कर देंगे। अर्थात् बिना प्रथम गणेशजी की पूजा के कार्यों की सिद्धि को यह नष्ट कर दिया करेंगे। इतना यह ही इस प्रकार से कहकर हे राजेन्द्र ! सुवर्ण के कलशों के सहित संस्थित सुर-गणों के साथ जलों से अभिषिक्त होकर गज मुख शोभित हुये थे। और विनायकों के प्रमुख बनाये गये थे ॥२८—३१॥ अभिषेक किये हुए गण नायक का दर्शन करके देवों ने भगवान् शंकर की सन्निधि में सब ने प्रपत होकर उन गणेश जी की स्तुति की थी ॥३२॥ हे गज के समान मुख वाले ! आपकी सेवा में हमारा सबका नमस्कार है। हे गणों के नायक ! आपको हमारा प्रणाम है। हे विनायक ! आपके लिये हमारा प्रणाम है। हे चण्ड विक्रम वाले आपको नमस्कार हैं ॥३३॥ हे विघ्नों के करने वाले ! आपके लिये प्रणाम है। आप सर्पों की मेखला धारण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किये हैं आपको हमारा नमस्कार है हे रुद्र वक्त्र ! आपको नमस्कार है तो लम्बे जठर से आश्रित हैं। आप हम सब देवों के आप नमस्कार से सर्वदा विघ्नों का अभाव कीजिये ॥३४॥

एवं स्तुतस्तदा देवैर्महात्मा गणनायकः ।
अभिषिकस्तु रुद्रेण सोमयाऽपत्यताङ्गतः ॥३५
एतच्चतुर्थ्यां सम्पन्नं गणाध्यक्षस्य पार्थिव ।
यतस्ततोऽयं महती तिथीनां परमातिथिः ॥३६
एतस्यां यस्तिलान् भुक्त्वा भक्त्या गणपतिं नृप ।
आराधयति तस्याशु तुष्यते नात्र संशयः ॥३७
यश्चैतत्पठति स्तोत्रं यश्चैतच्छृणुयात्सदा ।
न तस्य विघ्ना जायन्ते न पापं सर्वथा नृप ॥३८

इस प्रकार से उस समय में वे महान आत्मा वाले गणनायक देवों के द्वारा स्तवन किये गये थे। रुद्र देव के द्वारा अभिषिक्त होकर वे उमादेव की अपत्यता को प्राप्त हुए थे अर्थात् उमा की सन्तति हो गए थे ॥३५॥ हे पार्थिव ! यह सब कार्य कलाप गणाध्यक्ष का चतुर्थी तिथि में ही सम्पन्न हुआ था। तभी से यह चतुर्थी तिथि अन्य तिथियों में सबसे अधिक महत्त्व वाली हो गई थी ॥३६॥ हे नृप ! इस चतुर्थी तिथि में जो तिलों का भोजन करके भक्ति की भावना से भगवान् गणपति की आराधना किया करता है उस पर भगवान् गणपति बहुत ही शीघ्र प्रसन्न हो जाया करते है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥३७॥ जो पुरुष इस स्तोत्र का पाठ किया करता है और जो कोई इस का श्रवण किया करता है तब फिर उस पुरुष के लिए कभी भी विघ्न नहीं हुआ करते हैं। हे नृप उस पुरुष को कभी भी पाप भी बिल्कुल नहीं हुआ करता है ॥३८॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

२४--सर्पों की उत्पत्ति

श्रुत्वा गणपतेर्जन्म प्रजापालो नराधिपः ।
उवाच श्लक्ष्णया वाचा तं मुनिं शंसित व्रतम् ॥१
भगवंस्ताक्ष्यविषयाः कथं मूर्तिमुपागताः ।
नागा बभूव कुटिला एतदाख्यातुमर्हसि ॥२
सृजता ब्रह्मणा सृष्टिं मरीचे सूतिकारणम् ।
प्रथमं मनसा ध्यातस्तस्य पुत्रस्तु कश्यपः ॥३
तस्य दाक्षायणी भार्या कद्रूः नाम शुचिस्मिता ।
मारीचो जनयामास तस्यां पुत्रान्महा बलान् ॥४
अनन्तं वासुकिं चैव कम्वलं च महावलम् ।
कर्कोटकं च राजेन्द्र पद्मं चान्यं सरीसृपम् ॥५
महापद्मं तथा शंखं कुलिकं पापराजिलम् ।
एते कश्यपदायादाः प्रधानाः परिकीर्त्तिताः ॥६
एतेषां तु प्रसूत्या तु इदमापूरितं जगत् ॥७

प्रजापालक नराधिप ने भगवान् गणपति के जन्म का समाचार श्रवण करके उसने शंसित व्रत वाले उन मुनीश्वर से अधिक भाक्षण वाणी से कहा था ॥ १ ॥ हे भगवन् ! ताक्ष्य के विषय किस प्रकार से मूर्त्ति के स्वरूप में प्राप्त हुए थे । नाम कुटिल हुए थे—कृपा करके यह अब आप बतलाने के योग्य होते हैं ॥ २ ॥ सृष्टि के सृजन करते हुए ब्रह्माजी के द्वारा मरीचि को ही प्रसब का कारण बनाया था । सबसे प्रथम उन्होंने मनसे ध्यान किया था और उसके पुत्र कश्यप हुए थे ॥ ३ ॥ उन कश्यप ऋषि की एक भार्या दाक्षायणी रुद्र थी जो शुचि स्मित्वा वाली थी । मारीच ने अर्थात् कश्यप जी ने उस रुद्र में महान् बलवान् पुत्रों को जन्म ग्रहण कराया था ॥ ४ ॥ उनके नामों का परिगण न करके बताया जाता है—अनन्त नाम—वासु कि—कम्बल—महावल—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे राजेन्द्र ! कर्कोटक—पद्म और अन्य सरीसृप—महा पद्म—शंख—कुलिक और पापराजिल—ये इतने कश्यप मुनि के पुत्र हुए थे जो प्रधान पुत्र हुए थे उनको हो यहाँ पर कहा गया है ।। ४ ।। ५ ।। ६ ।। इनकी ही इतनी अधिक सन्ततियाँ हुई थी जिनसे यह सम्पूर्ण जगत् आपूरित कर दिया है ।। ७ ।।

कुटिला हीनकर्माणस्तीक्ष्णास्योत्थ विषोल्बणाः ।
दृष्ट्वा सन्दश्य मनुजान् भस्म कुर्युः क्षणाद् ध्रुवम् ।।८
शब्दगामी यथा स्पृशो मनुष्याणां नराधिप ।
अहन्य हनि जायेत क्षयः परम दारूणः ।।९
आत्मनस्तु क्षवं दृष्ट्वा प्रजाः सर्वाः समन्ततः ।
जग्मुः शरण्यं शरणं परं तु परमेश्वरम् ।।१०
इममेवार्थमुदिदृश्य प्रजाः सर्वा महीपते ।
ऊचुः कमल जन्मै वं पुराणं ब्रह्म संज्ञितम् ।।११
त्राहि नस्तीक्षण दंष्ट्रेभ्यो भुजंगेभ्यौ महाबल ।
अहन्यहनि ये देव पश्येयुरुरगां दृशा ।।१२
मनुष्य मृगयू थं वा तत्सर्वं भस्मसाद्भवेत् ।।१३
त्वया सृष्टिः कृता देव लीयते सा भुजङ्गमैः ।
एतज्ज्ञावा तु दुर्वत्तं तत्कुरुष्व महामते ।।१४

ये सब परम कुटिल थे और हीन कर्मों वाले थे। इनके परम तीक्ष्ण मुख महान् उल्कण बिषय निकला करता था। ये मनुष्यों को देखकर ही काट लिया करते थे और एकही क्षण में अपने विष से उनको भस्म कर दिया करते थे। यह निश्चित ही इनका प्रभाव था ।। ८ ।। हे नराधिप ! ये मनुष्यों को शब्द गामी स्पर्श वाले थे। ये दिन प्रतिदिन में समुत्पन्न होता है और इनका क्षय परम दारुण है ।। ९ ।। अपना दिनों दिन क्षय देखकर सब ओर सभी प्रजा चिन्तित हो गई थी और वे सब शरण्य—परम परमेश्वर की शरणा गति पें प्राप्त हुए थे ।। १० ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे महीपते ! इसी अर्थ का उद्देश्य लेकर समस्त प्रजा ने कमल से जन्म धारण करने वाले पुराण ब्रह्म की संज्ञा वाले पुत्र से प्रार्थना की थी—उन्होंने कहा था—हे महाव्रत ! आप तीक्ष्ण दाढ़ों वाले भुजङ्गमों से इस समय में हमारी रक्षा कीजिए। आये दिन इन उरगों को दृष्टि से देखते हैं जो भी हे देव ! देखता है चाहे वह मनुष्य हों या मृगों का यूथ हो वह सभी भस्म सात् हो जाया करते हैं ॥ १३ ॥ हे देव ! आपने तो यह सृष्टि की रचना की है और वह सम्पूर्ण सृष्टि भुजङ्गों के द्वारा लीन की जाती है। आप इस बुरे वृक्ष को जानकर हे महामते ! अब आप रक्षा कीजिए ॥ १४ ॥

अहं रक्षां विधास्यामि भवतीनां न संशयः।
व्रजध्वं स्वानि धिष्णानि प्रजा गाला: ससध्वसाः ॥१५
एवमुक्तास्तु जग्मस्ते ब्रह्मणा व्यक्त मूर्तिना।
आगतासु प्रजास्वाद्यस्तानाहूय भुजङ्गमान्।
शशाय परमक्रुद्धो वासुकि प्रमुखांस्तथा ॥१६
यतो मतप्रभवान्नित्यं क्षयं नयम मानुषान्।
भवान्तरे अथान्यस्मिन्मातुः शायात सुदारुणात ॥
भवितातिः क्षयो घोरो स्वायम्भुवेऽन्तरे ॥१७
एवमुक्तास्तु वेपन्तो ब्रह्मणा भुजगोत्तमाः।
निपत्य पादयोस्तस्य इदमूचुः वचस्तदा ॥१८
भगवन् कुटिला जातिरस्माकं भवता कृता।
विषोल्वणत्वं क्रूरत्वं दृक्शस्त्रत्वं नोऽव्ययाम।
सम्पादितं त्वया देव इदानीं शमयाच्युता ॥१९
यदि नाम मया सृष्टा भवन्तः कुटिलाशयाः।
ततः भि मनुजान्नित्तं भक्षयध्वं गतव्यथा ॥२०
मर्यादाः कुरु देवेश स्थानं चैव पृथक् पृथक् ॥२१

ब्रह्माजी ने कहा था—आप सबकी मैं रक्षा करूंगा—इसमें कुछ भी संशय मत करो। अब आप अपने २ गृहों को जाइए आप प्रजा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पाल भयभीत हैं। प्रकट मूर्त्ति वाले ब्रह्माजी के द्वारा इस प्रकार से कहे गये वे सब निवासों को चले गये थे। प्रजाओं के आगत हो जाने पर आद्य देव ब्रह्माजी ने उन सब भुजङ्गमों को बुलाया था तथा परम क्रुद्ध होकर उन्होंने वासुकि जिनमें प्रधान था शाप दे दिया था। क्योंकि आप लोग मेरे द्वारा समुत्पन्न हुए मनुष्यों को क्षय किया करते हैं। इस संसार के अन्दर अन्य जन्म में माता के सुदारुण शाप से आपका अत्यन्त ही घोर क्षय इस स्वायम्भुव के अनन्तर में हो जायगा।। १५ ।। १६ ।। १७ ।। ब्रह्माजी के द्वारा इस तर हसे कहे गये वे भुजंगोत्तम काँपते हुए उनके चरणों में गिर गये थे और उस समय में वे यह वचन कहने लगे थे ।। १८ ।। हे भगवन् ! हमारी कुटिल जाति तो आपने ही की है। हममें आपने ही विष से उल्वण होना—क्रूरता—दृष्टि का शत्रु वाला होना—जो अविनाशी है। हे देव ! आपने ही सम्पादित किया है। हे अच्युत देव ! इस समय में आप शमन कीजिए ।। १९ ।। ब्रह्माजी ने उन सूर्यों से कहा था कि यदि मैंने ही इन सबका सृजन आप लोगों में किया है तो क्या इसका यह अभिप्राय है कि आप लोग नित्य ही व्यथा रहित होते हुए मनुष्यों का भक्षण अर्थात् दशन किया करें। सर्पों ने प्रार्थना की थी—हे देवेश्वर ! इसकी कोई मार्यादा कीजिए और पृथक् पृथक् स्थान भी कर दीजिए ।। २० ।। २१ ।।

नागानां वचनं श्रुत्वा देवोवचनमब्रवीत् ।
अहं करोमि वो नागाः समयं मनुजैः सह ।।२२
तदेक मनसः सर्वे श्रृणुध्वं मम शासनेम् ।
पातालं वितलं चैव सुतलाख्यं तृतीयकम् ।।२३
दत्तं वै वस्तुकामानां गृहं तत्र गमिष्यथ ।
तत्र भोगान्बहुविधा न्भुंजाना मम शासनात् ।।२४
तिष्ठध्वं सप्तमं या वद्रात्र्यन्तं मे पुनः पुनः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ततो वै वस्वतस्यादौ काश्यपेया भविष्यथ ।।२५
दायादा सर्वं देवानां सुपर्णस्य च धीमतः ।
तदा प्रसूतिर्वः सर्वा भोक्ष्यते चित्रभानुना ।।२६
भवतां नैव दोषोऽयं भविष्यति न संशयः ।
ये वै क्रूरा भोगिनो दुर्विनीतास्तेषमन्तो भविता नान्यथैतत् ।।२७
काल प्राप्तं भक्षयध्वं दशध्वं तथाऽपकारे च कृते मनुष्यात् ।।२८

नागों के इस वचन का श्रवण करके देव ने कहा—हे नागो ! मैं मनुष्यों के साथ आपका समझौता कर दूंगा ।। २२ ।। वही अब आप लोग परम समाहित होकर मेरे शासन का श्रवण कीजिए। मैंने आप लोगों को जो भी निवास करने की इच्छा रखते हैं उन सबको पाताल—वितल और सुतल ये बीच चेके लोक दे दिये हैं। वहाँ पर ही आप सबका गृह होगा। अतएव आप सब वहीं पर गमन करिए। मेरे शासन से वहाँ पर अनेक प्रकार के भोगों का उपभोग करते हुए निवास कीजिए। आप लोग वहाँ पर मेरी जब तक सप्तम रात्रि होवे ठहरिए और इसके उपरान्त वैवस्वत मन्वन्तर के आदि काल में आप पुनः काश्यपेय अर्थात् कश्यप की सन्तान होंगे ।।२३—२५।। आप लोग सभी देवों के दामाद हैं और श्रीमान् सुहर्ण के दामाद हैं। उस समय में आपकी सम्पूर्ण प्रसूति चित्रभानु के द्वारा भोक्ष्यमाण होती है ।।२६।। यह आपका कोई दोष नहीं होगा—इसमें संशय नहीं हैं। जो भी पर-माधिक क्रूर भोगी हैं और अत्यन्त ही दुर्निनीत हैं उनका ही अन्त होगा अन्यथा यह नहीं होगा ।। २७ ।। काल के प्राप्त होने पर तथा कुछ उपकार करने पर आप मनुष्यों का भक्षण करिए तथा दंशन भी करिए ।।२८।।

मन्त्रौषधैर्गारुडमण्डलैश्च वर्द्धदंष्टैर्मानवाये चरंति ।
तेषां भीतैर्वर्तितव्यं न चान्याच्चिन्त्यं कार्यं चान्यथा वो विनाशः ।।२९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इतीरिता ब्रह्मणा ते भुजङ्गा जग्मु: स्थानं क्ष्मातलाख्यं हि सर्वे ॥३०

एवं शापं ते तु लब्ध्वा प्रसादं च चतुर्मुखात् ।
तस्थु: पाताल निलयं मुदितेनान्तरात्मना ॥३१
एतत सर्वं च पंचम्यां तेषां जातं महात्मनाम् ।
अत: प्रिया तिथिर्धन्या सर्वपाप हरा शुभा ॥३२
एतस्यां संयतो यस्तु अम्लं तु परिवर्जयेत् ।
क्षीरेण स्नापयेन्नागांस्तस्य यास्यन्ति मित्रताम् ॥३३

मन्त्रों से—औषधों से—गारुड़ मण्डलों से वृद्धों तथा दृष्टों से जो मनुष्य चरण किया करते हैं उनसे आप लोगों को भीत होकर ही वरताव करना चाहिए। अन्य से नहीं कार्य का चिन्तन करना चाहिए। यदि इसके विपरीत करेंगे तो आपका विनाश होगा ॥२६॥ इस तरह से ब्रह्माजी के द्वारा कहे हुए वे सब भुजङ्ग रसातल नामक स्थान को चले गये थे। इस तरह से उन्होंने चतुर्मुख से शाप प्राप्त किया था और फिर प्रसन्नता भी प्राप्त की थी। वे सब परम हर्षित आत्मा वाले हुए पाताल के निलय अर्थात् गृह में स्थित हो गये थे। यह सभी कार्य उन महात्माओं का पञ्चमी तिथि में सम्पन्न हुआ था। अतएव वह पञ्चमी तिथि उनकी परम प्रिय और धन्य है तथा शुभ है। और सब पापों के हरण करने वाली है जो पुरुष इस तिथि में परम संयत होकर अम्ल पदार्थ का परिवर्जन कर देता है और दूध से नागों का स्तवन कराया करता है उसके साथ नागगण मित्रता को प्राप्त हो जांयगे ॥ ३०—३३ ॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

२५–कार्तिकेय की उत्पत्ति

अहंकारात्कथं जज्ञे कार्त्तिकेयो द्विजोत्ताम ।
एतन्मे संशयं छिन्धि पृच्छतो वै महामुन ।।१
सर्वेषामेव तत्त्वानां यः परः पुरुषः स्मृतः ।
तस्मादव्यक्तमुत्पन्नं तत्त्वादि त्रिविधं तु तत् ।।२
पुरुषाव्यक्तयोर्मध्ये महत्त्वं समपद्यत ।
स चाहङ्कार इत्युक्तो यो महान्समुदाहृतः ।।३
पुरुषो विष्णुरित्युक्तः शिवो व नामतः स्मृतः ।
अव्यक्तं तु उमादेवी श्रीर्वा पद्मनिभेक्षणा ।।४
तत्संयोगादहङ्कारः स च सेनापति र्गुहः ।
तस्योत्पत्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु राजन्महामते ।।५
सृष्ट्यां विस्तारितायां तु देव दैत्या महावलाः ।
सात्वतं भावमास्थाय युयुधुर्विजिगीषवः ।।६
दैत्यानां बलिनः सन्ति नायका युद्धदुर्मदाः ।
हिरण्यकशिपुः पूर्वं हिरण्याक्षो महासुरः ।।७

हे द्विजो में परम उत्तम ! स्वामी कार्त्ति केम प्रभु अहङ्कार से कैसे समुत्पन्न हुए थे ? मेरे हृदय में यह बड़ा भारी संशय हो रहा है कृपा करके इस संशय का छेदन कर दीजिए । हे महामुने ! मैं आपसे यही पूछ रहा हूँ ।१। सभीतत्वों का जो परम पुरुष कहा गया है ब्रह्म से ही अव्यक्त की उत्पत्ति हुई थी । वह तत्त्व आदि से तीन प्रकार का है ।।२।। पुरुष और अव्यक्तके मध्य में महत् समुद्भूत हुआ था । और वह अहंकार-इस नाम से कहा गया है जो कि महान् समुदाहृत किया गया है ।।३।। जो पुरुष है वही विष्णु कहा गया है अथवा शिव—-इस नाम ने कहा गया है । जो अव्यक्त है वही उमा देवी हैं अथवा पद्म के समान लोचनों वाली श्री देवी है । उसके संयोग से अहंकार उत्पन्न हुआ था जो सेनापति गुह है ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे महामने ! राजन् ! मैं अब उसकी उत्पत्ति को बतलाऊँगा । आप इसका श्रवण कीजिए ॥४॥५॥ सृष्टि के विस्तृत हो जाने पर महान् बलवान् देवगण और दैत्य सात्त्वत भाव में आस्थित होते हुए होकर जीतने की इच्छा वाले परस्पर में युद्ध करने लगे थे ॥६॥ दैत्यों में बलवान् युद्ध में दुर्मद नामक हैं । पूर्व में हिरण्य कशिपु हुआ था और और महासुर हिरण्याक्ष हुआ था ॥७॥

विप्रचित्तिः विचित्रस्तु भीमाक्षः क्रौंच एव च ।
एतेऽतिबलिनः शूरा देव सैन्यं महामृधे ॥८
अमरांश्च शितैर्वाणैः जयन्त्यनुदिनं मृधे ।
तेषां पराजयं दृष्ट्वा देवानां च बृहस्पतिः ॥६
मुवाच हीनं वै सैन्यं नायकेन विना सुराः ।
एकेनेन्द्रेण दिव्यं तु सैन्य पातु न शक्यते ॥१०
अतः सेनापतिं कञ्चिदन्वेषयत मा चिरम् ।
एवमुक्तास्ततो देवा जग्मुर्लोकपितामहम् ॥११
सेनापतिं च नो देहि वाक्यमूचुः स सम्भ्रमम् ।
ततो दध्यौ चतुर्वक्तृः किमेषां क्रियते मया ॥१२
ब्रह्मणश्चिन्त्यमानस्य रुद्रं प्रति मनो गतम् ।
ततो देवाः सगन्धर्वा ऋषयः सिद्ध चारणाः ॥१३
ब्रह्माणं पुरतः कृत्वा जग्मुः कैलास पर्वतम् ।
तत्र दृष्ट्वा महादेवं शिवं पशुपतिं विभुम् ।
तुष्टुवुः विविधैः स्तोत्रैः शक्राद्यास्त्रि दिवौक सः ॥१४

विप्र चित्ति—विचित्र--भीमाक्ष और कौञ्च—ये अति बल-वान् शूर हुए थे । महान् युद्ध में देवों की सेना को और देवों को युद्ध में तीक्ष्ण वाणों के द्वारा आये दिन जीत लिया करते थे । वृहस्पति ने इन देवों की पराजय को देखकर बोले थे ॥८॥६॥ हे सुरो ! नायक से हीन आपकी सेना है अर्थात् आपकी सेना का कोई भी सेनापति नहीं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है। इन्द्र एक ही है उसके द्वारा यह दिव्य सेना रक्षित नहीं की जा सकती है ।।१०।। इसीलिये सेना के लिये किसी सेनापति का अन्वेषण कीजिए और इस कार्य में विलम्ब मत कीजिए। इस प्रकार से जब देवों से कहा गया था तो वे सव देवगण देवेश्वर पितामह के समीप में गये थे ।।११।। उन सबने सम्भ्रम के साथ ब्रह्माजी से कहा था--हे देव ! आप हमको कोई सेनापति हमारी सेना के लिते प्रदान कीजिए। इसके अनन्तर ब्रह्माजी ने विचार किया था कि मुझे इन देवों के लिए क्या करना चाहिए।१२। इसप्रकार से चिन्तन करते हुए ब्रह्माजी का मन शिवजी की ओर गया था। इसके अनन्तर सब देवगण—गन्धर्व—ऋषिगण—सिद्ध और चारण सब ब्रह्माजी को अपना अगुअ बना कर कैलास पर्वत पर गए थे। वहाँ पर उन सबने महादेव—शिव—विभु और पशुपति का दर्शन किया था इन्द्र आदि समस्त देवों ने अनेक स्तोत्रों के द्वारा उन का स्तवन किया था ।।१३।।१४।।

सेनापतिं च देवेश देवेश देहि दैत्यवधाय वै।
देवाना ब्रह्ममुख्यानामेतदेव हितं भवेत् ।।१५
ददामि सेनानाथं वो देवा भवत विज्वराः।
भविष्ममस्ति पौराणां योगाद नामचिन्तयत् ।।१६
एवमुक्त्वा हरो देवान्विसृज्य स्वाङ्गसंस्थिताम्।
शक्तिं संक्षोभयामास पुत्रहेतो परन्तप ।।१७
तस्य क्षोभयतः शक्ति ज्वलनाकसमप्रभः।
कुमारः सहजां शक्तिं विभ्रज्ज्ञानकशालिनीम् ।।१८
उत्पत्तिस्तस्य राजेन्द्र बहुरूपा व्यवस्थिता।
मन्वन्तरेष्वनेकेषु देव सेनापतिः किल ।।१९
तस्मिन्जाते स्वयं ब्रह्मा सर्वं देवैः समन्वितः।
पूजयामास देवेशं शिवं पशुपतिं तदा ।।२०
सर्वैश्च देवैः ऋषिभिश्च सिद्धैः सेनापतिर्दान वरेण तेन।
आप्यायितः सोऽपि सुरानुवाच सहायौ मे क्रीडनकं च दद्ध्वम् ।।२१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उन सबने भगवान् शिव से कहा था—हे देव ! दैत्यों के वध करने के लिए कोई अच्छा सेनापति दीजिए। ब्रह्मा जिन में मुख्य है इन देवों का यह ही अर्थात् अच्छे सेनापति का होना ही एक बड़ा भारी हित होगा ।।१५।। शिवजी ने कहा था—हे देवगणो ! आप लोगों को मैं एक उत्तम सेनापति दूँगा—अब आप सब दुःख रहित हो जाइए। यह कुछ पौरों का और योगादिक का भविष्य है—ऐसा ही उन्होंने चिन्तन किया था ।। १६ ।। इस तरह से शम्भु ने कहकर सब देवों को विदा किया था और फिर स्वाङ्ग संस्थिता शक्ति को क्षोभित किया था। हे परन्तप ! यह शक्ति को क्षुब्ध करना केवल पुत्र के ही लिए कि जिससे शक्ति के उदर से कोई पुत्र उत्पन्न हो जावे ।।१७।। शक्ति को क्षोभित करते हुए उसके ज्वलन (अग्नि) के आकार के समान प्रभा वाला कुमार हुआ था जो सहज ज्ञानैक शालिनी शक्ति को धारण करने वाला था ।।१८।। हे राजेन्द्र ! उस कुमार की उत्पत्ति बहुत रूपों वाली व्यवस्थिता हैं अनेक मन्वन्तरों में देव सेनापति हुए थे ।।१९।। उसके समुत्पन्न हो जाने पर ब्रह्माजी स्वयं सब देवों से समन्वित होकर वहाँ गये थे और पशुपति देवेश्वर शिव का उन्होंने पूजन किया था। उस समय में सब देवों ने—ऋषियों ने—और सिद्धों ने सबने ही उनका अभ्यर्चन किया था। दानश्रेष्ठ मुन के द्वारा वह भी आप्यायित हो गए और वह भी सहायक सुरों से बोले थे—मुझे खिलौना दे दो ।।२०।।२१।।

श्रुत्वा वचनेस्तस्य महानुभावो वाक्यं महादेव इदं जगाद।
ददामि ते क्रीडनक तु कुक्कुटं तथानुगौ शाखविशाख सज्ञो ।।२२
कुमार भूतग्रह नायको भवान् सेनापतिस्त्वं भव देवसंघे।
एव मुक्त्वा ततो देवः सर्व देवांश्च पार्थिव ।।२३
भव त्वं देवसेनानीर्मशिवर सुत प्रभो ।
षण्मुख स्कन्द विश्वेश कुक्कुटध्वज पावके ।
कम्पितारे, कुमारेश स्कन्द बालग्रहानुग ।।२४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जितारे क्रौंचविध्वंस कृत्तिकाज शिवात्मज ।
भूतग्रहपनिश्रेष्ठ पावक प्रियदर्शन ॥२५
महाभूतपतेः पुत्र त्रिलोचन नमोऽस्तु ते ।
एवं स्तुतस्तदा देवैः विवर्द्धन् भवनन्दनः ॥२६
द्वादशादित्य सांकाशो वभूवातुल विक्रमः ।
त्रैलोक्यं तेजसा स्वेन तापयामास पार्थिव ॥२७
कथं त्वं कृत्तिकापुत्रमुक्तवान शसमे गुरो ।
कथं वा पावकिरसौ कथं षण्मातृनन्दनः ॥२८

महानुभाव श्री महादेव ने उसका वचन सुनकर इस वाक्य को कहा था—मैं आपको एक क्रीडनक देता हूँ और वह कुक्कुट है। इसके अतिरिक्त शाख और विशाख नामों वाले अनुग भी दिये थे ॥ २२ ॥ उन्होंने कहा था—हे कुमार, आप भूतों और ग्रहों के नायक हैं और अब आप देवों के संघ मे सेनापति हो जाइये। हे पार्थिव ! इसके अनन्तर सब देवों से उन देवेश्वर इस प्रकार से कहकर कुमार से कहा—हे महेश्वर सुत ! हे प्रभो ! आप देवों के सेनानी हो जाइए। हे परामुख ! आप स्कन्द हैं—विश्व के ईश हैं—कुक्कुटध्वज हैं—पावकि हैं—आप कम्पितारि है अर्थात् अरियों को कम्पित होने वाले हैं—हे कुमारेश ! आप स्कन्द और वालग्रहानुग हैं ॥ २३—२४ ॥ आप अरियों को जीतने वाले हैं—आप कौञ्च का विध्वंस करने वाले हैं—आप कृत्तिराज हैं और शिव के आत्मज हैं। आप भूतों और ग्रहों के परम श्रेष्ठ पति हैं और पावक के समान प्रिय दर्शन हैं ॥ २५ ॥ हे महाभूत पति के पुत्र ! हे त्रिलोचन ! आपके लिये हम सबका नमस्कार समर्पित हैं। उस समय में इस तरह से देवों के द्वारा स्तवन किये गये भव के नन्दन विवर्धित हुए थे। वे अतुल विक्रम वाले द्वादश आदित्यों के सदृश थे हेपार्थिव! अपने तेजके द्वारा उन्होंने तीनों लोकों को तापयुक्त कर दिया था ॥२५--२७॥ हेगुरो! आप यही बतलाइएकि आप कृत्तिकाके पुत्र कैसे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहे गये हैं—यह मुझे आप बतलाइए। और यह पावकि कैसे कहेगये हैं और आप षाण्मातृ--नन्दन कैसे हुए हैं? ॥ २८ ॥

आदिमन्वन्तरे देवस्योत्पत्तिर्या मयोदिता।
परोक्ष दर्शिभिः देवैरेव मेव स्तुतः प्रभो ॥२९
कृत्तिका पावकस्यतस्य मातरो गिरिजा तथा।
द्वितीय जन्मनि गुहस्यैते उत्पत्तिहेतवः ॥३०
एवमेतत्तवाख्यातं पृच्छतः पार्थिवोत्तम।
आत्मविद्यामृतं गुह्यमहङ्कारस्य सम्भवः ॥३१
स्वयं स्कन्दो महादेवः सर्वपाप प्रणाशनः।
तस्य षष्ठीं तिथिं प्रदादाभिषेके पितामहः ॥३२
अस्यां कलाशनो यस्तु पूजयेद्यन मानसः।
अपुत्रो लभते पुत्रमधनोऽपि धनं लभेत्।
यं यमिच्छेतुमनसः लभते तं तु मानवः ॥३३

हे प्रभो! आदि मन्वम्मर में जो मैंने देव की उत्पत्ति कही थी। परोक्ष के देखने वाले देवों के द्वारा इसी प्रकार से स्तुति किये गये थे ॥ २९ ॥ उसकी कृत्तिका—पावक तथा गिरिजा— ये माताऐं हैं और द्वितीय जन्म में गुह के ये उत्पत्ति के हेतु हैं ॥ ० ॥ हे पार्थिव देव पूछते हुए आपको यह मैंने कह दिया है। आत्म विद्यामन गुह्य अहङ्कार से समुद्भूत हैं ॥ ३१ ॥ स्कन्द तो स्वयं ही महादेव हैं जो सब प्रकार के पापों के विनाश करने वाले हैं। पितामह ने उनको षष्ठी तिथि अभिषेक में प्रदान की थी ॥ ३२ ॥ इसी षष्ठी तिथि में जो फलों का अशन करने वाला होकर अपने मन को संयत करके पूजा किया करता है वह यदि पुत्रहीन हो तो पुत्र की प्राप्ति कर लिया करता है और जो-जो भी वह मानव अनद्य अर्थात् पाप रहित होकर चाहता है उसी उसी को प्राप्त कर लिया करता है ॥३३॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

२६–आदित्य की उत्पत्ति

शरीरस्य कथं मूर्ति ग्रहणं ज्योतिषो द्विज ।
एतन्य संशयं छिन्धि प्रणतस्य द्विजोत्तम ।।१
योऽसावात्मा ज्ञानशक्तिरेक एव सनातनः ।
स द्वितीयं यदा चैच्छ तदा तेजः समुत्थितम् ।।२
तत्सूर्य इति भास्वांस्तु अन्योन्येन महात्मनः ।
लीनी भूतानि तेजांसि भासयन्ति जगत् त्रयम् ।।३
तस्मिन् सर्वे सुराः सिद्धा गणा सर्वैर्महर्षिभिः ।
स्वयंभूत इति प्रोक्तस्तस्मात् सूर्यस्तु सोऽभवन् ।।४
लीनी भूतस्य तस्याशु तेजसोऽभूच्छरीरकम् ।
पृथक्त्वेन रविः सोऽथ कीर्त्यते वेद वादिभिः ।।५
भासयेत्सर्वं लोकांस्तु यतोऽसावुत्थितो दिवि ।
अतोऽसौ भास्करः प्रोक्तः प्रकाशाच्च प्रभाकरः ।।६
दिवा दिवस इत्युक्तस्तत कारित्वाद् दिवाकरः ।
सर्वस्य जगतस्त्वादिः आदित्यस्तेन चोच्यते ।।७

हे द्विज ! ज्योति स्वरूप आदित्य के शरीर का ग्रहण किस प्रकार से हुआ था ? मेरे मन में यह बड़ा भारी संशय हो रहा है। हे द्विजोत्तम ! प्रणत हुए मेरे इस सन्देह का आप छेदन करने की कृपा कीजिए ।। १।। जो यह आत्मा ज्ञान शक्ति है और एक ही सनातन तेज है उसने जब यह इच्छा की थी कि द्वितीय हो जाऊँ तभी उस समय में यह तेज समुत्थित हुआ था ।।२।। वही सूर्य यह भास्वान् है और यह महात्मा का अन्योन्य स्वरूप है और लीनी भूत तेज ही तीनों लोकों को भासित किया करते हैं।।३।। उसमें सब सुर-सिद्ध गण सब महर्षियों के साथ ही लीनी भूत हैं तथा स्वयम्भूत है—यह कहा गया है इसी से वह हुआ था ।।४।। लीन हुए उसकाही तेज है उसी से यह शरीर हुआ है और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यह पृथक् स्वरूप वाला हुआ है—ऐसा हीं वेद वादी लोगों के द्वारा कीर्त्तित किया जाता है ॥ ५ ॥ यह सभी लोकों को भासित करता है इसी कारण से यह दिवलोक में समुत्थित हुआ है। इसीलिए यह भास्कर कहा गया है और प्रकाश करने से यह प्रभाकर कहा गया है। यह सम्पूर्ण जगत् का आदि है इसी से इसको आदित्य कहा जाता है ॥७॥

एतस्य तेजसा जाता आदित्या द्वादश पृथक् ।
प्रधान एक एवायं जगत्सु परिवर्तते ॥८
तं दृष्ट्वा जगतो व्याप्तिं कुर्वाणं परमेश्वरम् ।
तस्यैवान्तः स्थिता देवा विनिष्क्रम्य स्तुतिं जगुः ॥९
भवान् प्रसूतिर्जगतः पुराणः प्रपासि विश्वं प्रलयं च हंसि ।
समुत्थितस्त्वं सततं प्रयासि विश्वं सदा त्वं प्रणताः स्म नित्यम् ॥१०
त्वया ततं सर्वत एव तेजः प्रतापितं सूर्य जगत्प्रवृत्तो ।
सप्ताश्वयुक्ते च रथे स्थितस्त्वं कालाक्षमन्वन्तर वेगयुक्ते ॥११
प्रभाकरस्त्वं रविरादिदेव आत्मा समस्तस्य चराचरस्य ।
पितामहस्त्वं वरुणो यमश्च भूतं भविष्यच्च वदन्ति सिद्धाः ॥१२

इसके ही तेज से द्वादश आदित्य पृथक् समुत्पन्न हुए हैं। प्रधान तो यह एक ही है जो जगतों में परिवर्त्तित हुआ करता है ॥ ८ ॥ उसका दर्शन करके जो इस जगत् की प्राप्ति करने वाले परमेश्वर को ही मानते हैं। उसके ही अन्दर में स्थित देव विनियुक्त होकर इसकी स्तुति किया करते थे ॥९॥ आप ही इस जगत् की प्रसूति हैं अर्थात् आपने ही जगत् को उत्पन्न किया है और आप पुराण हैं। आप ही इस विश्व का परिपालन किया करते हैं तथा प्रलयों के द्वारा आप ही इस विश्व का संहार किया करते हैं। आप समुस्थित होकर निरन्तर विश्व का पालन करते हैं। हम नित्य सदा ही आपके चरणों में प्रणत होते हैं ॥१०॥ आपने ही यह सभी ओर तेज का विस्तार किया है और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रतापित किया है और आप इस जगत् में प्रवृत हुए हैं। आप कालाक्ष भवन्तर वेग से युक्त सात अश्वों से समान्वित रथ में विराजमान हैं। हे आदिदेव ! आप प्रभा कर हैं और रवि हैं तथा इस सम्पूर्ण चराचर की आप आत्मा हैं। आप पितामह हैं—वरुण हैं और आप ही यम हैं और आपको ही सिद्ध गण भूत तथा भविषत् कहते हैं ॥११॥१२॥

तेजोऽरि विध्वंसन वेदमूर्ते प्रपाहि चास्मान् शरणागतान् सदा।
वेदान्तवेद्योऽसि मखेषु देव त्वं हूयसे विष्णुरिति प्रसन्न ॥१३
इतिस्तुतस्तं सुरनाथ भक्त्या प्रपाहि शम्भो न इति प्रसह्य ॥१४
एवमुक्तस्तदा देवः सौम्यां मूर्तिमथा करोत।
प्रकाशत्वं जगामाशु देवतानां महप्रभः ॥१५
एयत्सर्वं सुराणांतु दहनं शाभितं त्वया :
सप्तम्यां खलु सूर्येण मूर्तिस्त्वङ्गीकृता भुवि ॥१६
एतां यः पुरुषो भक्त्या उपास्ते सूर्यमर्चयेत् ।
भास्करश्चैव तस्यासौ फलमिष्टं प्रयच्छति ॥१७

हे वेदमूर्त्ते ! आपका तेज अरियों के निध्वस करने वाला है। आप सदा शरण में समागत हुए हमारी रक्षा कीजिए। हे देव ! आप मखों में प्रसन्न हुए विष्णु के रूप वाले हैं और वेदान्तों के द्वारा आप जानने के योग्य होते हैं ॥१३॥ हे सुरनाथ ! इस प्रकार से भक्तिभाव से उनके द्वारा आपका स्तवन किया गया है। हे शम्भो ! आप बल पूर्वक हमारा परिपालन करें ॥१४॥ इस तरह जन देवों के द्वारा स्तुति की गयी थी तो उस समय में उनने अपनी परम सौम्य मूर्त्ति धारण की थीं। और महान् प्रभा वाले उनने प्रकाशक स्वरूप को शीघ्र प्राप्त कर लिया था ॥१५॥ यह सब दहन देवों का आपके ही द्वारा शोभित है। यह मूर्त्ति सूर्य देव ने सप्तमी तिथि में ही स्वीकार की थी जो भूमण्डल में दिखाई दिया करती है ॥१६॥ इस मूर्त्ति की जो मानव भक्त होकर उपासना किया करता है और सूर्य का अभ्यर्धन करता है

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तो यह भास्कर भगवान् उसको अभीष्टफल अवश्य ही प्रदान किया करते हैं ॥१७॥

२७–अष्ट माताओं की उत्पत्ति

पूर्वमासीन् महादैत्यो बलवानन्धको भुवि ।
स देवान् वशमानिन्ये ब्रह्मणो वरदर्पितः ॥१
तेनात्मसात्सुराः कृत्वा त्याजिता मेरुपर्वतम् ।
ब्रह्माणं शरणं जग्मुरन्धकस्य भयार्दिताः ॥२
तानागतान्तदा ब्रह्मा उवाच सुरसत्तमान् ।
किमागमन कृत्यं वो देवा ब्रूत किमास्यते ॥३
अन्धकेनार्दिताः सर्वे वयं देवा जगत्पते ।
त्राहि सर्वांश्चतुर्वक्त्र पितामह नमोऽस्तु ते ॥४
अन्धकान्नैव शक्तोहं त्रातुं वै सुरसत्तमाः ।
भवं शर्वं महादेवं व्रजामः शरणार्थिनः ॥५
किन्तु पूर्वं मया दत्तो वरस्तस्य सुरोत्तमाः ।
अवध्यस्त्वं हि भविता न शरीरं स्पृशेन्महीम ॥६
तस्यैवं बलिनस्त्वेको हन्ता रुद्र परन्तप ।
तत्र गच्छामहे सर्वे कैलासनिलय प्रभुम् ॥७

पूर्व समय में इस भूमण्डल में महा बलवान् एक अन्धक नामक महा दैत्य हुआ था । वह ब्रह्माजी के वरदान से बड़ा घमण्डी हो गया था और उसने सभी देवों को अपने वश में कर लिया था ॥१॥ उसने मेरु पर्वत को अपने अधीन करके वहां से सुरों को भगा दिया था। उस समय में सब देवगण अन्धक के भय से पीड़ित होकर ब्रह्माजी की शरण में प्राप्त हुए थे । २॥ उस समय में आये हुए उनसुरों से ब्रह्माजी ने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहा था—ब्रह्माजी बोले—हे सुरगणो ! यहां पर आप लोगों के आगमन का क्या कारण या प्रयोजन है ! आप मुझे बतलाइए ॥३॥ देवताओं ने ब्रह्माजी को उत्तर दिया था कि हे जगत् के स्वामिन् ! हम सभी देवगण अन्धक दैत्य के भय से दुःखित हैं। हे चतुर्मुख पितामह ! आप हम सबकी रक्षा कीजिए। हम सब आपको प्रणाम करते हैं ॥४॥ ब्रह्माजी ने कहा—हे सुर श्रेष्ठो ! अन्धक दैत्य से त्राण करने को मैं असमर्थ नहीं हूं। अब हम सब भव शिव महादेवजी के ही शरण में चलें। अन्धक को वरदान प्राप्त था कि हे अन्ध ! तू ऐसा बलवान् होगा कि तेरा शरीर मही का स्पर्श नहीं करेगा। इस प्रकार से उस बलवान् का दमन करने वाले एक परन्तय रुद्र ही हैं और उनमें ही ऐसी शक्ति विद्यमान है। इसलिये हम सब कैलास के निवासी प्रभु के ही समीप में चलें। अर्थात् उन्ही शम्भु की शरण में हम सब को जाना चाहिए ॥५॥६॥७॥

एवमुक्त्वा ययौ ब्रह्मा सदेवो भवन्निधौ।
तस्य सन्दर्शनादरुद्रः प्रत्युत्थानादिकाः क्रियाः ॥८
कृत्वाभ्यवाच देवेशो ब्रह्माणं भुवनेश्वरम्।
किं कार्यदेवताः सर्वा आहता मम सन्निधौ ॥९
ये नाहं तत्करोम्याशु आज्ञा कायाहि सत्वरम्।
रक्षस्व देव बलिनस्त्वन्धकाद् दुष्ट चेतसः ॥१०
यावदेव सुराः सर्वे शंसति परमेष्ठिनः।
तावत्सैन्येन महता तत्र चान्धक आययौ ॥११
बलेन चतुरङ्गेण हन्तुकायो भवं मृधे।
तस्य मार्या गिरिसुता हन्तुमिच्छन् ससाधनः ॥१२
तं दृष्ट्वा सहसायान्तं देवो दैत्यं प्रहारिणम्।
सन्नह्य सहसा देवा रुद्रस्यानुचराभवन् ॥१३
रुद्रोऽपि वासुकिं ध्यात्वा तक्षकं च धनंजयम्।
वलयं कटिसूत्रं च चकार परमेश्वरः ॥१४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस तरह से कहकर समस्त देवों के साथ ब्रह्माजी भगवान् शिव की सन्निधि में गये थे। उनका दर्शन करके भगवान् रुद्रदेव ने उनके स्वागत में प्रत्युत्थान आदि की क्रिया की थीं ।।८।। उनका भलिभाँति स्वागत करके ही उन देवेश्वर ने भुवनेश्वर ब्रह्माजी से कहा था—आप सब देवगण मेरे पास किस प्रयोजन के लिये समागत हुए हैं। आप यह मुझे बतलाइए जिससे मैं आपकी आज्ञा का पालन शीघ्रता से कर दूँ। इस भगवान् शम्भु के वचन के उत्तर में देवोंने कहा था—हे देव! महान् वलवान् और दुष्टचित्त वाले अन्धक दैत्य से आप हमारी रक्षा कीजिए ।।९।।१०।। जब तक ये सव देवता परमेष्ठी से यह प्रार्थना कर रहे थे तभी तक वह अन्धक दैत्य बड़ी भारी सेना को साथ में लेकर वहां पर ही आ गया था ।।११।। उसका यही अभिप्राय था कि युद्ध में अपनी चतुरङ्गिणी सेना से शम्भु का हनन कर देवे। किन्तु उन भगवान् शम्भु देवकी भार्या गिरि सुनाने साधन सम्पन्न उसके हनम करने की इच्छा की थी। देवेश्वर ने सहसा आते हुए उस ओर प्रहरण ग्रहण किये हुए दैत्य को देखा था। देवगण सहसा सन्नद्ध होकर रुद्र देव के अनुचर हो गये थे ।।१२।।१३।। परमेश्वर रुद्र देव ने भी उस समय में वासुकि—तक्षक और धनञ्जय का ध्यान किया था और उनका वलय तथा अपना कटिसूत्र बनाया था ।।१४।।

नीलनामातु दैत्येन्द्रो हस्ती भूत्वा भवान्ति कम् ।
आगतस्त्वारितः शत्रुर्हस्तीवाद्भुत रूपवान् ।।१५
स ज्ञातो नन्दिना दैत्यो वीरभद्राय दर्शितः ।
वीरभद्रोऽपि सिंहेन रूपेणाहत्य तं द्रुतम् ।।१६
तस्य कृति विदार्या शु करिणस्त्वञ्जन प्रभाम् ।
रुद्रायार्पितवान् सोऽपि तमेवाम्बरमावृणोत् ।।१७
ततः प्रभृति रुद्रोऽपि गजचर्मपरोऽभवत् ।
गजचर्म परो भूत्वा भुजङ्गामरणोज्ज्वलः ।।१८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आदाय त्रिशिख शूलं सगणोऽन्धकमभ्यियात ।
ततः प्रववृते युद्धं देव दानवयोर्महत ॥१९
इन्द्राद्या लोकपालास्तु स्कन्दः सेनापतिस्तथा ।
सर्वे देवगणाश्चान्ये युयुधुः समरे तदा ॥२०
तद् दृष्ट्वा नारदस्तूर्णं ययौ नारायणं प्रति ।
शशंस च महद्युद्धं कैलासे दानवैः सह ॥२१

भील नाम वाला दैत्य हाथी बनकर भगवान् शिव के समीप में में आया था । वह शत्रु हाथी के स्वरूप में ही स्वरूप वाला था ॥१५॥ नन्दी ने उस दैत्य का ज्ञान प्राप्त कर लिया था और उसको वीरभद्र को दिखा दिया था । उही समय में वीरभद्र ने सिंह के स्वरूप के द्वारा उस पर शीघ्रता से प्रहार किया था ॥१६॥ करी के स्वरूप वाले उस दैत्य की कृति का शीघ्र विदाहरण करके उसकी अम्नन प्रभा को रुद्र देव के लिये अर्पित कर दिया था ॥१७॥ तभी से लेकर भगवान् रुद्र भी गज के चर्म में तत्पर हो गये थे । फिर रुद्र देव गज के चर्म को धारण करके भुजङ्गों के आभरणो से स्युज्ज्वल हो गये थे ॥१८॥ और फिर उन्होंने त्रिशिक शूल का ग्रहण करके वे अन्धक के पीछे आक्रमण करने के लिये गये थे । फिर देवों और दानवों का एक महान् युद्ध आरम्भ हो गया था ॥१९॥ उस समय में इन्द्र आदि देवगण और सेनापति स्कन्द तथा अन्य सभी देवगण उस रण स्थल में युद्ध करने लगे थे ॥२०॥ उस महान् भीषण युद्ध को देखकर देवर्षि नारदजी शीघ्र ही भगवान् नारयण के पास शरण में गये थे और उनसे जाकर प्रार्थना की थी कि कैलास में दानवों के साथ महान् भीषण युद्ध हो रहा है ॥२१॥

तंच्छ्रुत्वा चक्रमादाय गरुडस्थो जनार्दनः ।
तमेव देशमागत्य युयुधे दानवैः सह ॥२२
आगत्य च ततो देवा हरिणाप्यायिता रणे ।
विषण्णवदनाः सर्वे पलायनपराभवन ॥२३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तत्र भग्नेषु देवेषु स्वयं रुद्रोऽन्धकं ययौ ।
तत्र तेन महद्युद्धम् भवल्लोमहर्षणम् ॥२४
तत्र देवोऽप्यसौ दैत्यं त्रिशूलेनाहनद् भृशम् ।
तस्याहतस्य यद्रक्तमपतद्भूतले किल ॥२५
तत्र न्धका असांख्याता बभूवुरपरे भृशम् ।
तद्दृष्ट्वा महदाश्चर्यं रुद्रो मूलान्धकं मृधे ॥२६
गृहीत्वा त्रिशिखाग्रेण ननर्त्त परमेश्वरः ।
इतयेऽप्यन्धकाः सर्वे चक्रेण परमेष्ठिना ॥२७
नारायणेन निहतास्तत्रतेऽन्ये समुत्थिताः ।
असृगधारातुषारैस्तु शूलप्रोतस्य चासकृत् ॥२८

यह श्रवण करके भगवान् ने गरुड़ पर समारोहण किया था और अपना सुदर्शन चक्र ग्रहण करके जनार्दन प्रभु उसी देशमें समागत हो गये थे जहां युद्ध हो रहा था तथा उन्होंने भी उन दानवों के साथ युद्ध किया था ॥ २२ ॥ वहाँ पर प्रभु ने समागत होकर सभी देवों को हरि ने आप्यायित कर दिया था। देवगण सभी विषाद से युक्त मुख वाले होकर उस रण स्थल से पलायन करने में ही परायण हो गये थे ॥ २३ ॥ वहाँ पर युद्ध में देवों के मग्न हो जाने पर रुद्र देव स्वयं अन्धक पर आक्रमण करने के लिये गये थे। वहाँ पर उनके साथ बड़ा भारी लोम हषण युद्ध हुआ था ॥ २४ ॥ वहाँ पर इन देवेश्वर ने भी अपने त्रिशूल के द्वारा वहुत बार हनन किया था उसके आहत होने पर जो भी रक्त की बूंदें भूतल पर गिरीं थीं उनसे वहाँ पर असंख्यों अन्धक दूसरे ही समुत्पन्न हो गये थे। यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ था और रुद्र देव ने उस मूल अन्धक को ग्रहण कर लिया था और अपने त्रिशिख शूल के अग्रभाग पर उसे लटका कर परमेश्वर नृत्य करने लगे थे। दूसरे जो माया से उद्भूत अन्धअ थे वे सब परमेष्ठी ने अपने चक्र के द्वारा निहत किया था और भगवान् नारायण ने वहाँ पर और जो भी समुत्थित

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुए वे सब मार दिये थे। वह जो त्रिशूल में प्रोत था उसकी अनेक बार रक्त की धारा वह रही थी ॥ २५ ॥—॥ २८ ॥

अनारतं समुत्तस्थौ ततो रुद्रो रुषान्वितः।
तस्य क्रोधेन महती मुखाज्ज्वाला विनिर्ययौ ॥२६
तद्रूप धारिणी देवी या तां योगेश्वरीं विदुः।
स्वरूप धारिणी चान्या विष्णुनापि विनिर्मिता ॥३०
ब्रह्मणा कार्त्तिकेयेन इन्द्रेण च यमेन च।
वराहेण च देवेन विष्णुना परमेष्ठिना ॥३१
पातालोद्धारणं रूपं तस्या देव्या विनिर्ममे।
माहेश्वरी च माहेन्द्री इत्येता अष्ट मातरः ॥३२
कारणं यस्य यत् प्रोक्तं क्षेत्र ज्ञेनावधारितम्।
शरीरं देवतानां तु तदिद कीर्त्तितं मया ॥३३
कामं क्रोधस्तथा लोभो मदो मोहोऽथ पंचमः।
मात्सर्यं षष्ठ मित्याहु पैशुन्यं सप्तमं तथा ॥३४
अनसूयाष्टमी ज्ञेया इत्येता अष्ट मातरः ॥ ३५

इसके अनन्तर भगवान् रुद्र देव निरन्तर ही रोष से समन्वित होकर समुत्थित रहे थे। उनका ऐसा भयानक क्रोध उस समय था कि उसके कारण से उनके मुख से बहुत बड़ीं ज्वाला पिघल रही थी ॥२६॥ उसके रूप के धारण करने वाली जो देवी थी उसको योगेश्वरी जानते हैं। और अन्य रूप के धारण करने वाली वह भी भगवान् विष्णु के द्वारा निर्मित हुई थी ॥ ३० ॥ उस देवी का ब्रह्माजी ने—स्वामी कार्त्तिकेय ने—इन्द्र ने और यम ने बराह देव ने—परमेष्ठी विष्णु ने पाताल से उद्धरण का निर्माण किया था। माहेश्वरी—-और माहेन्द्री—ये आठ रूप वाली माताऐं हैं ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ जिसका जो कारण कहा गया था क्षेत्रज्ञ ने अवधारित किया था। देबताओं का यह शरीर है जिसको मैंने कीर्तित किया है ॥ ३३ ॥ काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह पाँचवाँ है—मात्सर्य को छटवाँ कहते हैं तथा पैशुन्य सातवाँ हैं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और अनसूया आठवीं जाननी चाहिए। वे ही आठ माताऐं हैं।
।। ३४ ।।३५ ।।

एताभिर्देवतासिश्च तस्य रक्तेऽतिशोषिते ।
क्षयं गतासुरी माया स च सिद्धोऽन्धकोऽभवत् ।।३६
एतत्ते सर्वमाख्यातमात्मविद्यामृतं मयाः ।
त एतन् श्रृणुयान्नित्यं मातृणाभुद्भवं शिवम् ।।३७
तस्य ताः सर्वतो रक्षां कुर्वन्त्यनु दिनं नृप ।
यश्चैनपठते जन्म मातृणां पुरुषोत्तम ।।३८
स धन्यः सर्वथा लोके शिव लोकं च गच्छति ।
तासां च ब्रह्मणा दत्ता त्वष्टमी तिथिरुत्तमा ।।३९
एताः सम्पूज्यतेद्भक्त्या विल्वाहारो नरः सदा ।
तस्य ता परितुष्टाः स्युः क्षेमारोग्यं ददति च ।।४०

इन देवताओं के द्वारा उसके रक्त के अति शोषित होने पर वह असुरी माया समाप्त हो गयी थी और वह अन्धक सिद्ध हो गया था ।। ३६ ।। मैंने आत्म विद्यामृत यह सम्पूर्ण आपको बतला दिया था । जो भी पुरुष इसका नित्य ही श्रवण किया करता है जोकि परम शिव मातृगणों का उद्भव है ।। ३७ ।। उस मनुष्य का वे सब माताऐं सभी ओर से प्रतिदिन हे नृप ! रक्षा किया करती हैं । जो हे पुरुषोत्तम ! माताओं की उत्पत्ति के आख्यान को नित्य पढ़ा करता हैं वह सभी प्रकार से इस लोक में परम धन्य है और अन्त में वह शिव के लोक में गमन किया करता है । उन माताओं के लिये ब्रह्माजी ने उत्तम अष्ट भी प्रदान की है ।। ३८ ।। ३९ ।। इन माताओं का भली भाँति पूजन करके मनुष्य भक्ति की भावना से सदा निल्व फल का आहार किया करता है उस मनुष्य पर वे माताऐं परम प्रसन्न हुआ करती हैं और उसको क्षेम तथा आरोग्य प्रदान करती हैं ।। ४० ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

२८–दुर्गा की उत्पत्ति

कथं माया समुत्पन्ना दुर्गा कात्यायनी शुभा ।
आदि क्षेत्रे स्थिता सूक्ष्मा पृथङ्मूर्त्त्या व्यजायत ॥१
आसीद्राजा पुरा राजन् सिन्धुद्वीप प्रतापवान् ।
वरुणांशे महाराज सोऽरण्ये तपसि स्थितः ॥२
पुत्रो मे शक्रनाशाय भवेदिति नराधिपः ।
एवं कृतमतिः सोऽथ महता तपसा स्वकम् ॥३
कलेवरं स्थिरो भूत्वा शोषयामास सुव्रत ।
कथं तस्य द्विजश्रेष्ठ शक्रेणापकृतं भवेत् ॥४
यनासौ तद्विनाशाय पुत्रमिच्छान् व्रते स्थितः ।
सोऽन्ये जन्मनि पुत्रोऽभूत्वष्टुर्बलभृतां वरः ॥५
अवध्यः सर्वं शस्त्रौघैरयां फे नेन नाशितः ।
जल फे नेन निहतस्तस्मिन् लयमवाप्तवान् ॥६
पुनर्ब्रह्मान्वये जातः सिन्धुद्वीपः प्रतापवान् ।
स तेये परमं तीव्रं शक्रवैरमनुस्मरन् ॥७

परम शुभा कात्यायनी दुर्गा देवी किस प्रकार से उत्पन्न हुई थीं जो आदि क्षेत्र में सूक्ष्म स्वरूप में स्थित थीं। वह पृथक् मूर्त्ति के द्वारा कैसे समुद्भूत हुईं थीं ॥१॥ इसके उत्तर में कहा था—हे राजन् ! पहिले समय में एक बड़ा प्रतापी सिन्धु द्वीप राजा था। महाराज! वह वरुणांश अरण्य में तपश्चर्या में समवस्थित हो गया ॥ २ ॥ उसकी तपस्या का प्रयोजन यही था कि मेरा पुत्र नराधिय इन्द्र देव के विनाश करने के लिये उत्पन्न होवे। ऐसी अपनी बुद्धि करके उसने बड़े ही दुष्कर तप से अपना शरीर को स्थिर होकर हे सुव्रत ! शोषित कर दिया था। इस पर यह प्रश्न किया था कि हे द्विज श्रेष्ठ ! उसका इन्द्र ने ऐसा क्या अपकार किया था ॥ ३ ॥ ४ ॥ जिसके कारण से उस इन्द्र के विनाश करने के लिये उसने ऐसी इच्छा करके तपश्चर्या में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वह स्थित हुआ था। इसका उत्तर यह दिया जाता है कि वह अन्य जन्म त्वष्टा का पुत्र जो बलवानों में परम श्रेष्ठ था ॥ ५ ॥ वह सभी शस्त्रों के समुदायों के द्वारा अवध्य था और जल के फेनों से उसका नाश किया जायगा या जल के फेनों से वह निहत होकर उसने लय प्राप्त कर लिया था ॥ ६ ॥ फिर इसके अनन्तर वह ब्रह्माजी के वंश में वंश में समुत्पन्न हुआ था। उसने इन्द्र देव के साथ वैर का स्मरण करते हुए ही परम तीव्र तप किया था ॥ ७ ॥

ततः कालेम महता नदी वेत्रवती शुभा ।
मानुषं रूप मास्थाय सालंकार मनोरमम् ॥८
आजगाम यतो राजा तेपे स परमं तपः ।
तां दृष्ट्वा रूप सम्पन्नां स राजाक्षुब्धमानसः ॥९
उवाच कासि सुश्रोणि सत्यं कथय भामिनि ।
अहं जलपतेः पत्नी वरणस्य महात्मनः ॥१०
नाम्ना वेत्रवती एषा त्वामिच्जन्माह चागता ॥११
एवमुक्तस्तया राजा साभिलाषोप भुक्तवान् ।
तस्य सद्योऽभवत्पुत्रो द्वादशार्क समप्रभः ॥१२
वेत्र वत्युदरे जातो नाम्ना वेत्रासुरोऽभवत् ।
बलवानति तेजस्वी प्राग्ज्योतिषयतिः त्वभूत् ॥१३
स कालेन युवा जातो बलवान् दृढविक्रमः ।
महायोगेन संयुक्तो जिगायेमां वसुन्धराम् ॥१४

इसके अनन्तर जब बहुत अधिक समय व्यतीत हो गया था तो परम शुभ वेत्र वती नहीं ने अपना अतीव अलङ्कारों से संयुत मनुष्य का परम सुन्दर रूप धारण किया था ॥ ८ ॥ और वह वहाँ पर समागत हुई थी जहाँ पर राजा परम तीव्र तप कर रहा था। राजा ने रूप लावण्य से संयुत परमाधिक सुन्दरी का दर्शन किया तो राजा के मनमें क्षोभ उत्पन्न हो गया था ॥ ९ ॥ राजा ने उससे कहा था—हे सुश्रोणि ! आप कौन हैं हे भामिनि ! आप मुझे सर्वथा सच—सच बतलाइए। उस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुन्दरी ने कहा—मैं जलपति की पत्नी हूँ जो महात्मा वरुण हैं। मैं नाम से बेत्रवती हूँ। यह आपकी इच्छा करती हुई ही यहाँ पर समागत हुई हूँ ॥ १० ॥ ११ ॥ उसके द्वारा जब राजा से ऐसा कहा था। उसके तुरन्त ही द्वादश आदित्यों की प्रभा के समान प्रभा वाला एक पुत्र समुत्पन्न हुआ था ॥ १२ ॥ क्योंकि वह वेत्रवती के उदर से उत्पन्न हुआ था इसीलिये उसका नाम वेत्रासुर हो गया था। वह अत्यधिक वलवान् था और विशेष तेजस्वी था और वह प्राज्योतिष का अधिपति हुआ था ॥ १३ ॥ वह कुछ काल में युवा हो गया था। वह बलवान् और दृढ़ पराक्रम वाला था। वह महायोग से समन्वित था और उसने इस वसुन्धरा को जीत लिया था ॥ १४ ॥

सप्तद्वीपवर्ती पश्चान्मेरु पर्वतमारुहन् ।
तत्रेन्द्रं प्रथमं जिग्ये पश्चादग्निं यमं ततः ॥१५
इन्द्रो भग्नो गतः सोग्निमग्निर्भग्नो यमं ययौ ।
यमो निऋतिमागच्छन् निऋतिर्वरुणं ययौ ॥ ६
इन्द्रादिभिरुपतस्तु वरुणो वायुमन्वगात् ।
वायुधनपतिं त्वागात् सर्वैरिन्द्रादिभिः सह ॥१७
धनदोऽपि स्वकं मित्रमीशं देवैः समन्वितः ।
इयाय गदया सोऽपि दानवो बल गर्वितः ॥१८
गदामादाय दुद्राव शिवलोकं प्रति प्रभो ।
शिवोऽप्यवध्यं तं मत्वा देवान् गृह्णन्यतौ पुरीम् ॥१९
ब्रह्मणः सुरसिद्धाद्यैः वन्दिता पुण्यकारिभिः ।
तत्र ब्रह्मा जगत्स्रष्टा विष्णु पादोद्भवे जले ॥२०
नियमेन च संयुक्तो जपन्नन्तर्जले शुभे ।
क्षेत्रज्ञ मायां गायत्रीं ततो देवा विचुक्रुशुः ॥२१

वह सप्तद्वीप वर्ती था और इसके पश्चात् उसने मेरु पर्वत पर आरोहण किया था। उसने सबसे प्रथम इन्द्र को जीत लिया था फिर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अग्नि को और यम को पराजित कर दिया था ॥ १५ ॥ इद्रभान होकर अग्नि में चला गया था और अग्नि भान होकर यम में चला गया था। यम मग्न होकर निर्ऋति वरण में वरुण में चला गया था ॥ १६ ॥ इन्द्रादि से समुपेत वरुण वायु के पीछे चला गया था। वायु धनपति के पास चला गया था जो सब इन्द्र आदि के सहित था ॥ १७ ॥ वह धनद भी देवों से समन्वित होता हुआ मित्र ईश के समीप चला गया था। वह दानव अपने बल के गर्व वाला था और वह भी गदा लेकर पीछे गया था । १८ ॥ हे प्रभो ! वह दानव गदा लेकर इन सबको उसने शिव लोक की ओर खदेड़ दिया था। भगवान ने उसको अवध्य मान कर वे भी देवों को ग्रहण करके ब्रह्मा की पुरी में चले गये थे ।१९॥ जो पुरी सुर सिद्ध आदि पुण्य कारियो के द्वारा वन्दिता थी। वहाँ पर जगत् के सृजन करने वाले ब्रह्माजी विष्णु के चरण से समुद्भूत शुभ जल में नियमों से समन्वित होते हुए उस जल के अन्दर वर्त्तमान थे। इसके अनन्तर क्षेत्रज्ञ की माया जो गायत्री थी उसको देवों ने जाकर अपना दुःख प्रकट किया था ॥२०—२१॥

त्राहि प्रजायते सर्वान्देवानृषि वरानपि ।
असुराद्भयमापन्नान् त्राहि त्राहीत्यचोदपत् ॥२२
एवमुक्तस्तदा ब्रह्मा दृष्ट्वा देवांस्तदागतान् ।
चिन्तयामास देवस्य मायेयं विगतं जगत् ॥२३
नासुरा न च रक्षोऽत्र मायेयं कीदशीमता ।
एवं चिन्तयतस्तस्य प्रादुरासीदयोनिजा ॥२४
शुक्लाम्बरधरा कन्या स्त्रक्किरीटोज्ज्वलानना ।
अष्टभिर्बाहुभिर्युक्ता दिव्य प्रहरणोद्यता ॥२५
चक्रं शंखं गदां पाशं खड्गं घण्टां तथा धनुः ।
धारयन्ती तथा चान्यान् बद्धतूणा जलाद्वहिः ॥२६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

निश्चक्राम महायोगा सिंहवाहनवेगिता ।
युयुधे चासुरान्सर्वा नेकैव वहुधा स्थिता ॥२७
दिव्यं वर्ष सहस्र तु दिव्यैरस्त्रैमहावला ।
युद्धा कालात्यये देव्या हतो वेत्रासुरो रणे ॥२८

देवों ने कहा—हे प्रजापते ! सब देवों का और ऋषिवरों का आप परित्राण कीजिए । हम लोग असुर से भय को प्राप्त हो गये हैं हमारी रक्षा करो—हमारी रक्षा करो—हमारा परित्राण करो—इस तरह से उन्होंने बारम्बार प्रेरित किया था ॥२२॥ जब इस तरह से ब्रह्माजी से प्रार्थना की थी तो ब्रह्माजी ने वहाँ पर समागत देवों को देखा था । तब ब्रह्माजी ने चिन्तन किया था कि यह देव की माया है जिसने जगत् को विगत कर दिया है । न तो यहाँ कोई असुर हैं और न कोई राक्षस है । यह कैसी माया है । इस प्रकार से ध्यान करते हुए उनके सामने अयोनिजा देवी प्राहुर्भूत हुई थी ॥२३॥२४॥ वह कन्या शपल वस्त्रों के परिधान करने वाली थी—शिर पर उत्तम किरीट धारण किये हुई परम उज्जल स्वरूप वाली थी । उसके आठ भूजायें थीं और उनमें परम दिव्य प्रहरण लिये हुई थी । अर्थात् युद्ध के लिये समुद्यत थी ॥२५॥ शंख—चक्र—गदा—पाश—खड्ग—घण्टा—धनुष—इनको वह धारण करने वाली थी । तथा वह तूणीर को बाँधे हुये थी और अन्य भी अस्त्र उसके पास थे । वह महा योगा जल से वाहिर निकली थी और सिंह के वाहन पर वेग युक्त थी । वह एक ही थी किन्तु बहुत-से रूपों में स्थित होकर उसने उन सब असुरों के साथ युद्ध किया था । ॥२७॥ उस महा वल वाली देवी ने एक सहस्र दिव्य वर्षों तक दिव्य सस्त्रों से उन असुरों से युद्ध किया था और युद्ध काल के अन्त में देवी के द्वारा रण में वह वेत्रासुर निहत हो गया था ॥२८॥

ततः किलकिला शब्दो देव सैन्ये मऽवन्महान् ।
हतेवेत्रासुरे भीमे तदा सर्वे दिवौकसः ॥२९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रणेमुर्जय युद्धे त्वमित्थमीशः स्तुति जगौ ।
जयस्व देवि गायीत्रि महामाये महाप्रमं ॥३०
महादेवि महाभागे महासत्त्वे महोत्सवे ।
दिव्यगन्धानुलिप्ताङ्गि दिव्यस्रग्दाम भूषिते ॥३१
वेदमातर्नमस्तुभ्यमक्षरस्थे महेश्वरि ।
त्रिलोकस्थे त्रितत्त्वस्थे त्रिवह्निस्थे त्रिशूलिनि ॥३२
त्रिनेत्रे भीमवक्त्रे च भीमनेत्रे भयान के ।
कमलासनजे देवि सरस्वति नमोऽस्तु ते ॥३३
नमः पंकज पत्राक्षि महामायेऽमृतस्रवे ।
सर्वगे सर्वभूतेशि स्वाहाकारे स्वधेऽम्बिके ॥३४
इत्येवं संस्तुता देवी भवेन परमेष्ठिना ।
देवैरपि जयेत्युच्चैरुक्ता सा परमेश्वरी ॥३५

उसके मरने के पश्चात् देवों की सेना में किल किला महान् शब्द हुआ था। महा भीषण नेत्रासुर के हत हो जाने पर उस समय में सब देवगण ने प्रणाम किया था और यह कहा था आपकी युद्ध में जय हो—इस तरह से देवों ने स्तुति गान किया था। देवों ने कहा था—हे महाभागे ! हे गायत्रि ! हे देवि ! आपकी प्रभा तो बहुत अधिक है ॥ २९—३० ॥ हे महाभाग वाली ! आप तो सबसे बड़ी देवी हैं आपका सत्त्व महान् है और आप महान् उत्सवों वाली हैं। आप दिव्य गन्ध से अनुलिप्त अङ्गों वाली हैं और आप दिव्य मालाओं से भूषित हैं ॥ ३१ ॥ हे वेदों की जननि ! आपकी सेवा में हमारा नमस्कार है। हे अक्षरस्थे ! आप महेश्वरी हैं। आप तीनों लोकों में स्थित रहा करती हैं—आप तीनों तत्त्वों में विद्यमान हैं—आपकी स्थिति तीनों अग्नियों में रहा करती है। हे त्रिशूल के धारण करने वाली ॥ ३२ ॥ आपके तीन नेत्र हैं—आपका मुख शत्रुओं के लिए परम भीषण है—आपके नेत्र भी भयानक हैं और आपका स्वरूप भी महान्

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भयानक है। आप कमलासन ब्रह्माजी की पुत्री है—हे देवि! हे सरस्वति! आपकी सेवा म हमार। नमस्कार समर्पित है ॥ ३३ ॥ हे पङ्कज पत्राक्षि! आप तो महामाया हैं और अमृत का स्रवण करने वाली हैं। आप सबमें गमन करने वाली हैं। आप समस्त प्राणियों की स्वामिजी हैं। हे अम्बिके! आप स्वाहा और स्वधा के आकार वाली हैं ॥३४॥ इस तरह से परमेष्ठी के द्वारा भावपूर्वक उस देवी का स्तवन किया गया था। और सब देवों के द्वारा भी—"आपकी जय हो"—यह बहुत ऊँचे स्वर से उस परमेश्वरी से कहा गया था ॥३५॥

यावदास्ते चतुर्वक्तृ स्तावदन्तर्जलाद् वहिः।
निश्चक्राम ततो देवीं कृतकृत्यां ददर्श सः ॥३६
तां दृष्ट्वा देव कार्यं च सिद्धं मत्वा पितामहः।
भविष्तं कार्यमुद्दिश्य ततो वचनमब्रवीत् ॥३७
इयं देवी वरारोहा यायु शैल हिमालयम्।
तत्र यूयं सुराः सर्वे गत्वा नंदतमा चिरम् ॥३८
नवम्यां च सदापूज्या इयं देवी समाधिना।
वरदा सर्वलोकानां भविष्यति न संशयः ॥३९
नवम्यां यस्तु पिष्टाशी भविष्यति हि मानवः।
नारी व तस्य सम्पन्नं भविष्यति मगोगतम् ॥४०

जब तक चतुर्मुख ब्रह्माजी जल से बाहिर निकले थे वह देवी वहां पर विद्यमान थी और उनने उस कृतकृत्या देवी का दर्शन प्राप्त कर लिया था ॥ ३६ ॥ उस देवी का दर्शन करके और देवों का कार्य सिद्ध हो गया है—यह मानकर पितामह ने आगे होने वाले कार्य का उद्देश्य ग्रहण करके उस देवी से यह वचन कहा था ॥ ३७ ॥ यह वरारोही देवी हिमालय गिरि पर पधारें। और वहीं पर सब सुरगण महान् आनन्द के साथ गमन करके चिरकाल पर्यन्त परम समाधि से युक्त होकर इस देवी का नवमी तिथि में सदा आप लोगों के द्वारा अभ्यर्चन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

होना चाहिए। तो यह देवी सभी लोकों को वरदान देने वाली होगी—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ ३८-–३६॥ जो पिष्ट से अशन किया करने वाला मानव नवमी तिथि में रहेगा वह मानव नारी वल से सम्पन्न और मनोवाञ्छित को पूर्ण करने वाला होगा ॥ ४० ॥

वरदो देव सर्वासु आपत्स्वप्युद्धरेतस्वयम् ।
एवमुक्त्वा भवं ब्रह्मा पुनर्देवीं स चाब्रवीत् ॥४१
त्वया देवि महाकार्यं कर्तव्यं चान्यदस्ति नः ।
भविष्य महिषाख्यस्य असुरस्य विनाशनम् ॥४२
एव मुक्त्वा ततो ब्रह्मा सर्वे देवाश्च पार्थिव ।
यथगतं ततो जग्मुर्देवीं स्थाप्य हिमे गिरौ ॥४३
संस्थाप्य नन्दिता यस्मत्तस्मान् नन्दाऽभवत्तु सा ।
यश्चेदं शृणुयाज्जन्म देव्या यश्च स्वयं पठत् ॥४४
सर्वपापविनिर्मुक्तः परं निर्वाण मृच्छति ॥४५

वरद देव सभी आपदाओं में उसका स्वयं उद्धार कर दिया करते हैं। इस प्रकार से ब्रह्माजी ने शम्भु भगवान् से कहकर फिर उनने देवी से कहा था ॥ ४१ ॥ ब्रह्माजी ने कहा था—हे देवि आपके द्वारा हमारा एक दूसरा महान् कार्य भी है जो आपको ही करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि वह आप ही के द्वारा होने के योग्य हैं। भविष्य में होने वाले महिषासुर नामक दुष्ट का विनाश करना है ॥४२॥ हे पार्थिव ! इस प्रकार से देवी से प्रार्थना करके ब्रह्माजी और समस्त देवगंण जहाँ से जिस तरह से समागत हुए थे वहीं पर चले गये थे और उस देवी को हिमाचल पर संस्थापित कर दिया था ॥ ४३ ॥ वहाँ पर वह देवी संस्थापना प्राप्त करके परम नन्दित हुई थी इसी से वह नन्दा—इस नाम वाली हो गई थी। जो पुरुष इस देवी के जन्म के आख्यान का श्रवण करता है या इसको स्वयं पढ़ता है वह सभी तरह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के पापों से विनिर्मुक्त हो और जाता है परम निर्वाण पद को प्राप्त कर लेता है ॥४४—४५॥

२९—दश दिशाओं की उत्पत्ति

श्रृणु राजन्नवाहितः प्रजापाल कथाभिमाम् ।
यदा दिशः समुत्पन्नाः श्रोतेभ्यः पृथ्वीपते ॥१
ब्रह्मणा सृजत सृष्टि माहि सर्गे समुत्थिते ।
चिन्ताभून् महती को मे प्रजाः सृष्टा धरिष्यति ॥२
एवं चिन्तयतस्तस्य अबकाशं व्रजन्तिवह ।
प्रादुर्बभूबुः श्रोत्रेभ्यो दशकन्या महा प्रभाः ॥३
पूर्वा च दक्षिणा चैव प्रतीची चोत्तरा तथा ।
ऊर्द्धधरा च षण्मुख्याः कन्या ह्यासंस्तदा नृप ॥४
तासां मध्ये चतस्रस्तु कन्याः परम शोभनाः ।
रूपवत्यो महाभागा गाम्भीर्येण समन्विताः ॥५
ता ऊचुः प्रणयाद्देवं प्रजापतिमकल्मषम् ।
अवकाशं तु नो देहि देव देव प्रजापते ॥६
तिष्ठामो यत्र वा सर्वा भर्त्तृभिः सहिताः सुखम् ।
पतींश्चैव महाभागान्देहि नोऽव्यक्त सम्भव ॥७

हे प्रजाओं के पालन करने वाले राजन् ! अब आप परम सावधान होकर इस कथा का श्रवण कीजिये हे पृथिवी के स्वामिन् ! जिस तरह से श्रोत्रों से ये दिशायें समुत्पन हुई थीं ॥१॥ आदि सर्ग के समुत्थित होने पर सृष्टि का सृजन करते हुये ब्रह्माजी को बड़ी भारी यह चिन्ता ही गई थी कि मेरी सृजन की हुई इस प्रजा को धारण कौन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करेगा ।।२।। उसके इस तरह से चिन्तन करते हुए यह आया कि यहाँ पर अवकाश प्राप्त करें। और उस समय में उनसे श्रोत्रों से महती प्रभा वाली दश कन्यायें प्रादुर्भूत हुईं थीं ।।६।। पूर्वा—दक्षिणा—प्रतीची—और उत्तरा तथा ऊर्ध्वा और अधरा—ये छै उन दशों में मुख्य थी। हे नृप! इन्हीं छै कन्याओं की प्रमुखता हुई थी ।।४।। उन सबों के मध्य में चार कन्यायें तो बहुत ही अच्छी थी। ये बहुत अधिक रूप वाली थीं और गाम्भीर्य से समन्वित थीं ।।४।। उन्होंने परमाधिक प्रणय से कल्मष रहित प्रजापति से कहा था-—हे देवों के देव! आप तो प्रजापति हैं हमको रहने के लिये आश्रय प्रदान कीजिए ।।६।। जहाँ पर समाश्रय करके हम अपने स्वामियों के साथ सुख पूर्वक स्थित रहें। हे अव्यक्त से समुद्भव प्राप्त करने वाले! हम सबको महान् भाग वाले पति भी दीजिए ।।७।।

ब्रह्माण्डमेनत्सु श्रोण्यः शत कोटि प्रविस्तरम् ।
तस्यान्ते स्वेच्छाया तुष्टा उष्यतां मा विलम्वथ ।।८
एव दत्त्वा पुनर्ब्रह्मा तिथिं प्रादाद् दिशां तथा ।
दशमो च निथिस्ता सामतीव दयिता भवत् ।।९
तस्यां दध्यशनो यस्तु सुव्रतो ना भविष्यति ।
तस्य पापक्षयं तास्तु कुर्वन्त्य हरहर्नृप ।।१०
यश्चैतछ्णुयाज्जन्म दिशां नियम मानसः ।
स प्रतिष्ठामवाप्नोति ब्रह्मलोके न संशयः ।।११

ब्रह्माजी ने कहा था—हे सुश्रोणिमो! यह ब्रह्माण्ड मौ कोटि विस्तार वाला है। इस ब्रह्माण्ड के अन्त में अपनी इच्छा से परम संतुष्ट होती हुई वहाँ पर हीं निवास करो और इस कार्य में विल्कुल भी विलम्ब मत करिए ।।८।। इस प्रकार से उनको स्थान का निर्देश करके फिर ब्रह्माजी उन दिशाओं को तिथियाँ भी प्रदान की थीं। उनकी दशमी तिथि बहुत ही अधिक प्रिय हुई थी ।। ९ ।। उस दशमी तिथि मे जो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कोई मनुष्य दधि से अपनी अशन क्रिया करता हुआ सुव्रत होता है हे नृप ! उस मानव के पापों का क्षय प्रतिदिन ये किया करती हैं ॥१०॥ जो पुरुष नियत मन वाला होकर इन दिशाओं के जन्म की कथा का श्रवण किया करता है वह ब्रह्म लोक में प्रतिष्ठा प्राप्त कर लिया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥११॥

३०—कुबेर की उत्पत्ति

श्रृणु चान्यां वसुपते उत्पत्तिं पाप नाशिनीम् ।
यथा वायु शरीर स्थोधनदः सम्बभूव ह ॥१
आद्यं शरीरं यत्तस्मिन्वायुरन्तः स्थितोऽभवत् ।
प्रयोजनात् मूर्तिमत्त्वमातिष्ठत् क्षेत्र देवता ॥२
तत्र मूर्त्तस्य वायोस्तु उत्पत्तिः कीर्त्तिता मया ।
तां श्रृणुष्व महाभाग कथ्यमानां मयानघ ॥३
ब्रह्मणः सृष्टि कामस्य मुखाद् वायुर्विनिर्ययौ ।
प्रचण्डं शर्करावर्षी तं ब्रह्मा प्रत्यषेधयत् ॥४
मूर्तो भव त्वं शान्तश्च तेनोक्तो मूर्तिमानभूत् ।
सर्वेषां चैव देवानां यद्वित्तं फल मेव च ।।५
तत्सर्वं पाहि येनोक्तं तस्तद्धन पतिर्भवान् ।
तस्य ब्रह्मा ददौ तुष्ट स्तिथिमेकादशी प्रभुः ॥६
तस्यामनीग्न पक्वाशी यो भवेन्नियतं शुचिः ।
तस्यापि धनदो देवस्तुष्टः सर्वं प्रयच्छित ॥७
ऐषा धनपते मूर्त्तिः सर्व किल्विष नाशिनी ।
य एतां श्रृणुयाद्भक्त्या पुरुषः पठतेऽपि वा ।
सर्वकामान वाप्नोति स्वर्गलोक च गच्छति ॥८

अब एक अन्य वसुपति (कुबेर) की उत्पत्ति का श्रवण करिए।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जिस तरह से वायु शरीर में स्थित है उसी प्रकार से धनद (कुवेर) समुद्भूत हुए थे ॥१॥ जो आदि में होने वाला शरीर है उसमें अन्दर वायु स्थित हुआ था। प्रयोजन के वश होने से वह मूर्त्तिमत्ता में समास्थित हुआ था। अर्थात् उसने अपनी एक मूर्त्ति धारण की थी। वह ऐसा ही क्षेत्र देवता है ॥२॥ वहाँ पर वायु की मूर्त्त रूपता मैंने बतलाई है। हे महाभाग! आप तो अघों से रहित हैं। मेरे द्वारा कही हुई उसका ही अब आप श्रवण कीजिए ॥३॥ सृष्टि के सृजन करने की इच्छा वाले ब्रह्माजी के मुख से वायु विनिर्गण हुआ था। वह वायु बहुत ही तेज शर्करा का वर्षण करने वाला था। ब्रह्माजी ने उस कृत्य के विषय में निषेध किया था ॥४॥ ब्रह्माजी ने उससे कहा था—आप मूर्त्त स्वरूप वाले हो जाइए और इस प्रचण्ड रूप का त्याग करके मूर्त्त रूप वाले हो जावें और शान्ति युक्त हो जाओ। जब ब्रह्माजी ने ऐसा कहा था तो फिर वह मूर्तिमान् हो गया था। समस्त देवों का जो भी वित्त है तथा फल है उसका आप प्रतिपालन करिये। जब ऐसा कहा गया तो यह भी उन्होंने कहा था कि आप इसीलिए धनपति हो जाँयगे। ब्रह्माजी ने उन पर परम प्रसन्न होकर उनकी प्रभु ने एकादशी तिथि दीं थीं ॥६॥ उस एकादशी तिथि में जो भी अग्नि के बिना ही परिपक्व हुए पदार्थ का अशन करने वाला नियत रूप से शुचि रहा करता है उस मानव पर धनद देव बहुत ही प्रसन्न होते हैं और उसको सभी कुछ दिया करते हैं ॥७॥ यह धनपति की मूर्ति सभी तरह के किल्बिषों का बिनाश करने वाली होती है। जो पुरुष इस आख्यान का भक्ति की भावना से श्रवण किया करता है अथवा इसको पढ़ता है वह अपने सभी मनोरथों को प्राप्त कर लिया करता है और अन्त में स्वर्ग लोक को गमन करता है ॥८॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

३१--विष्णु की उत्पत्ति

मनोर्नाम मनुत्व च यदेतत्पठ्यते किल ।
प्रयोजन वशाद्विष्णुरसावेव तु मूर्तिमान् ।।१
योऽसौ नारायणो देवः परात्परतरो नृप ।
तस्य चिन्ता समुत्पन्ना सृष्टि प्रति नरोत्तम ।।२
सृष्टा चेयं मया सृष्टिः पालनीया मयैव ह ।
कर्मकाण्डं त्वमूर्तेन कर्तुं नैवेह शक्यते ।।३
तस्मान् मूर्तिं सृजाम्येकां यया पाल्यमिदं जगत् ।
एवं चिन्तय तस्तस्य सत्यानिध्यपिनो नृप ।।४
प्राक्सृष्टिजातं राजन्वै मूर्तिमत्तत्पुरो वभौ ।
पुरोभूनस्त तस्तस्मिन्देवो नारायणः स्वयम् ।।५
प्रविशन्तं ददर्शाथ त्रैलोक्यं तस्य देहतः ।
ततः सस्मार भगवान् वरदानं पुरातनम् ।।६
वागादीनां त तस्तुष्टः प्रादात्तस्य पुनर्वरम् ।
सर्वज्ञः सर्वकर्ता त्वं सर्वलोकनमस्कृतः ।।७

मनु का नाम और मनुत्व—इसका जो पाठ किया जाता है। प्रयोजन के वश होने से यही मूर्त्तिमान विष्णु हैं ।। १ ।। हे नृप ! जो यह नारायण देव हैं जो पर से भी पर हैं और देव हैं। हे नरोत्तम ! उनके हृदय में सृष्टि की ओर चिन्ता समुत्पन्न हो गई थी ।। २ ।। यह सृष्टि मैंने ही सृजन की है और मुझे ही इसका पालन करना चाहिए। यहाँ पर इस कर्मकाण्ड का किया जाना मूर्त्ति के बिना कभी भी सम्भव नहीं हो सकता है ।। ३ ।। इस कारण से मुझे एक मूर्त्ति का सृजन करना है जिसके द्वारा यह सम्पूर्ण जगत् पालन चाहिए अर्थात् जो इस जगत् का परिपालन कर ले। हे नृप ! उनके इस तरह से चिन्तन करते हुए और रुत्य स्वरूप से ध्यान करते हुए पूर्व में सृष्टि के जात होते हुए

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उनके आगे एक मूर्त्तिमान हो गये थे। जो परम शोभित हुए थे। इसके अनन्तर उसमें पुरोभूत देव नारायण ने स्वयं ही उसके देह से प्रवेश करते हुए त्रैलोक्य को देखा था। इसके अनन्तर भगवान ने पुरातन वरदान का स्मरण किया था ॥ ६ ॥ इसके अनन्तर वागादिक पर प्रसन्न होकर उसने उनको पुनः वरदान दिया था। उन्होंने कहा था— आप सर्वज्ञ हैं—सबके करने वाले हैं और सभी लोकों के द्वारा नमस्कार किये हुए हैं ॥७॥

त्रैलोक्य प्रतिपालाच्च भव विष्णुः सनातनः।
देवानां सर्वदा कार्यं कर्तव्यं ब्रह्मणः सदा ॥८
सर्वज्ञ त्वं च भवतु तव देव न संशयः।
एवमुक्त्वा ततो देवः प्रकृतिस्थो वभूव ह ॥९
विष्णुरप्यधुना पूर्वां बुद्धि सस्माट स प्रभुः।
तदा संचित्य भगवान् योगनिद्रां महातपाः ॥१०
तस्या संस्थाप्य भगवानिन्द्रियार्थोद्भवाः प्रजाः।
ध्यात्वा परेण रूपेण ततः सुष्वाप वै प्रभुः ॥११
तस्य सुप्तस्य जठरान् महत्पद्म विनिः सृतम्।
सप्त द्वीपवती पृथ्वी ससमुद्रा स कानना ॥१२
तस्य रूपस्य विस्तारं पातालातल संस्थितम्।
कर्णिकायां तथा मेरुस्तन्मध्ये ब्रह्मणो भवः ॥१३
एवं दृष्ट्वा परं तस्य शरीरस्य तु सम्भवम्।
मुमुदे तच्छरीरस्थो वायुर्वायु ससर्ज ह ॥१४

तीनों लोकों के परिपालन करने से आप सनातन विष्णु हो जाइए। आपको सर्वदा देवों का और ब्रह्माजी का जो भी कार्य है उसे करना चाहिए ॥८॥ हे देव! आपके अन्दर सर्वज्ञता अर्थात् सबका ज्ञान रखना हो जावेगा—इसमें संशय नहीं है। इस तरह से कहकर फिर वह देव प्रकृति में स्थित हो गये थे ॥९॥ उन प्रभु विष्णु ने इस समय

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में पूर्व बुद्धि का स्मरण किया था। उस समय में भगवान् महान् तपस्वी ने योग निद्रा का चिन्तन किया था ॥१०॥ भगवान् ने उसकी इन्द्रियों के द्वारा अद्भूत प्रजा को संस्थापित किया था और पर रूप से ध्यान करके भगवान् प्रभु शयन करके सो गये थे ॥११॥ सोये हुये उनके उदर से अर्थात् नाभि से एक महान् पद्म निकला था। उसमें सातों द्वीपों से समन्वित पृथ्वी थी जिसमें सम्पूर्ण सागर और कानन थे ॥१२॥ उसके रूप का विस्तार पाताल तल में संस्थित था। उस पद्म की कर्णिका में मेरु था और उसके मध्य में ब्रह्माजी का समुद्रवना हुआ था। ॥ १३ ॥ उसके शरीर के पर सम्भव को देखकर उनके शरीर में स्थित वायु परम प्रसन्न हुआ था और उसने वायु का सृजन किया था ॥ १४ ॥

अविद्या विजयं चेमं शंखरूपेण धारय ।
अज्ञानच्छेदनार्थाय खड्गं तेस्तु सदा करे ॥१५
कालचक्रमय घोरं चक्रं तद्धारयाच्युत ।
अधर्म राजघातार्थं गदां धारय केशव ॥१६
मालेयं भूतमाता ते कण्ठे तिष्ठतु सर्वदा ।
श्री वत्स कौस्तुभौ चेमौ चन्द्रादित्यच्छलेन ह ॥१७
मारुतस्ते गतिर्वीर गरुत्मान्स च कीर्तितः ।
त्रैलोक्य गामिनी देवी लक्ष्मोस्तेऽस्तु सदाश्रये ॥१८
द्वादशी च तिथिस्तेऽस्तु कामरूपी च जायते ।
घृताशनो भवेद्यस्तु द्वादश्यां त्वत्परायणः ॥१९

इस अविद्या के विजय को आप शंख रूप से धारण कीजिए। अज्ञान के छेदन करने के लिये आपके कर में शंख सदा रहे ॥१५॥ हे अच्युत ! काल चक्र मय यह घोर सुदर्शन चक्र है इस को भी आप धारण करिए। हे केशव ! अधर्म राज के घात करने के लिये आप इस गदा को भी धारण कीजिए ॥१६॥ ये भूतों की माता वैजयन्ती माला

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सदा ही आपके कोमल कण्ठ में विराजमाना रहे। चन्द्र और आदित्य के मिष से ये श्री वत्स का चिह्न और कौस्तुभ मणि भी आपके वक्षः स्थल में शोभित रहें ॥१७॥ हे वीर ! मारुत ही आपकी गति है जो गुरुत्मान् कहा गया है। तीनों में गमन करने वाली यह महा लक्ष्मी देवी सदा ही आपके आश्रय में विद्यमान रहें ॥१८॥ आप की तिथि द्वादशी होवे और कामरूपी होवे। जो कोई कृत का अशन करने वाला होकर द्वादशी तिथि में उसी प्रभु में परायण रहा करता है ॥१९॥

स स्वर्गवासी भवतु पुमान् स्त्री वा विशेषतः।
स च विष्णुस्तदाख्यातो मूर्त्तयो देवदानवाः ॥२०
हन्ति पाति शरीराणि सृजत्यन्यानि चात्मनः।
युगे युगे सर्वगोऽयं वेदान्तपुरुषो ह्यसौ ॥२१
न हीन बुद्धया वक्तव्यो मनुष्योऽयं कदाचन।
य एव शृणुयात्सर्गं वैष्णवं पापनाशनम् ॥२२
स कीर्त्तिमिह सम्प्राप्य स्वर्ग लोके महीयते ॥२३

वह पुरुष होवे या विशेष रूप से नारी होवे वह स्वर्ग वासी होता है अर्थात् उसको स्वर्ग का निवास होता है। उस समय में वह विष्णु भगवान्—इस नाम से विख्यात हुए थे। देव और दानव भी उन्हीं की मूर्त्तियाँ हैं ॥२०॥ वह हनन किया करते हैं और पालन किया करते हैं तथा अपनी आत्मा से ही अन्य शरीरों का सृजन किया करते हैं। यह युग-युग में अर्थात् सभी युगों में यह वेदान्त पुरुष सगगामी है ॥२१॥ इनको कभी भी हीन बुद्धि से मनुष्य नहीं कहना चाहिये। जो भी पुरुष इस भगवान् विष्णु के सर्ग का श्रवण किया करता है तो यह पापों का विनाश करने वाला होता है ॥२२॥ वह मानव इस लोक में सुन्दर कीर्त्ति की प्राप्ति करके अन्त में स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठित हुआ करता है ॥२३॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

३२–धर्म की उत्पत्ति

पूर्वं ब्रह्माव्ययः शुद्धः परादपर संज्ञितः ।
स सिसृक्षुः प्रजास्त्वादो पालनं च विचिन्तयन् ॥१
तस्य चिन्तयतस्त्वङ्गाद् दक्षिणाद् श्वेतकुण्डलः ।
प्रादुर्बभूव पुरुषः श्वेतमाल्यानुलेपनः ॥२
तं दृष्ट्वो वाच भगवांश्चतुष्पादं वृषा कृतिम् ।
पालयेमाः प्रजाः साधो त्वं ज्येष्ठो जगतो भव ॥३
इत्युक्तः समवस्थोऽसौ चतुष्पात्स्यात्कृते युगे ।
त्रेतायां त्रिपदश्चासौ द्विपदो द्वापरेऽभवत् ॥४
कल वेकेन पादेन प्रजाः पालयते प्रभुः ।
षड्भेदो ब्राह्मणानां स त्रिधा क्षत्रे व्यवस्थितः ॥५
द्विधा वैश्ये तथा शूद्र एकः सर्वगतः स्थितः ।
रसातलेषु सर्वेषु द्वीप वर्षेष्वयं प्रभुः ॥६
गुण द्रव्य क्रिया जाति चतुष्पात् संप्रकीर्त्तितः ।
त्रिशृंगोऽसौ स्मृतो वेदे स संहिता पदक्रमैः ॥७

सबसे पूर्व में अव्यय और शुद्ध तथा पर से अपर संज्ञा वाला ब्रह्मा हुआ था। वह आदि काल में प्रजा की सृष्टि करने की इच्छा वाला होकर उसने उस प्रजा के परिपालन की चिन्ता की थी ॥१॥ इस तरह से चिन्तन करते हुए उसके दक्षिण अङ्ग से श्वत कुण्डलों वाला हुआ था। वह पुरुष श्वेत माल्य से शोभित तथा श्वेत अनुलेपन वाला द्राहुर्भूत हुआ था ॥२॥ उस चार पादों वाले वृष की आकृति से युक्त को देखकर भगवान् ने उससे कहा था—हे साधो ! आप इस प्रजा का पालन करो। आप इस जगत् में सबसे बड़े हो जाइए ॥३॥ इस तरह से कहे गये उसने अपने आपको कृतयुग में चार पादों वाला समवस्थित किया था। वह त्रेतायुग में तीन पादों वाला हुआ था और फिर द्वापर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

युग में दो पादों वाला रहा था। वह प्रभु कलियुग मैं एक ही पाद से अवस्थित होकर प्रजा का परिपालन किया करता है। वह छै भेदों वाला होकर ब्राह्मणों में रहा था—क्षत्रियों मे तीन भेदों वाला—वैश्यों में दो भेदों स युक्त तथा शूद्रों में एक ही भेद वाला होकर सबमें गत होता हुआ स्थित हुआ था। प्रभु सब रसातलों तथा द्वीपों में और सभी वर्षों में स्थित रहता है ॥४॥५॥६॥ द्रव्य—गुण—क्रिया और जाति ये ही चारों से यह चतुष्पाद कीर्त्तित किया गया है। यह स्मृति में तीन शृङ्ग है और वेद में संहित के पद क्रमों से स्थित रहता है ॥७॥

तथा आद्यन्त ओङ्कारद्विशिराः सप्त हस्तवान् ।
उदात्तादि त्रिभिर्बद्ध एवं धर्मो व्यवस्थितः ॥८
सधर्म पीडितः पूर्वं सोमेनाद्भुतकर्मणा ।
तारां जिघृक्षुणा पत्नीं भ्रातुराङ्गिरस स्य च ॥९
सोऽपायाद् भ्रंशितस्तेन बलिना क्रूरकर्मणा ।
अरण्यं गहनं घोर माविवेश तदा प्रभुः ॥१०
तस्मिन्गते सुराः सर्वे असुराणां तु पत्तयः ।
जिघृक्षन्तः तदौकांसि बभ्रमुर्द्धर्म वंचिताः ॥११
देवासुरा युयुधिरे सोम दोषेण को पिताः ।
स्त्रीहेतोश्च महाभाग विविधायुधपाणयः ॥१२
तान् दृष्ट्वा युध्यतो देवानसुरैः सह कोपितान् ।
नारदः प्राह संगम्य पितरं प्रति हर्षितः ॥१३
स हसमामारूह्य सर्व लोक पितामहः ॥
निवारयामास तदा कस्मार्थं युद्ध मद्य वः ॥१४

तथा आदि—अन्त में ओङ्कार दो शिरो वाला और सात हाथों वाला है। उदात्त—अनुदात्त—स्वरित—इन तीनों से वद्ध इस प्रकार से धर्म्म व्यवस्थित है ॥८॥ वह धर्म्म पहिले समय में अद्भुत कर्म्म वाले सोम ने पीड़ित किया था क्योंकि वह सोम भाई आङ्गिरस की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai.

पत्नी तारा को ग्रहण करने की इच्छा वाला हो गया था। क्रूर कर्म वाले उस वली के द्वारा वह अपाय से भ्रंशित किया गया था। उस समय में वह प्रभु अधिक घोर वन में प्रवेश कर गया था ॥ ९—१० ॥ उसके चले जाने पर समस्त सुर और असुरों के गण सभी उसके स्थानों की खोज करते हुए धर्म से वाञ्चित होकर भ्रमण करने लगे थे ॥११॥ हे धरे ! देव और असुर सोम के दोष से परम क्रोधित होकर वे युद्ध करने लगे थे। हे महाभाग ! स्त्री के ही हेतु से ये अनेक प्रकार के अस्त्र—शस्त्रों को हाथों में लेकर युद्ध के लिए सन्नद्ध हुए थे ॥ १२ ॥ उस समय में अत्यन्त कुपित देवों को जो असुरो के साथ युद्ध कर रहे थे देवर्षि नारदजी ने देखा था और अपने पिता के पास जाकर हर्षित होकर उन्होंने कहा था। तब सब लोकों के पितामह अपने हंस की सवारी पर चढ़कर वहाँ पर गये थे और उनके युद्ध का निवारण किया था। ब्रह्माजी ने उनसे पूछा था कि आप किसके लिए इस समय में युद्ध कर रहे हैं ॥१३—१४॥

सर्वे शशसु साम तु सतु ब्रुद्धया स्वक सुतम् ।
पीडनाद पयात तु गहन वन माश्रितम् ॥१५
ततो ब्रह्मा ययौ तत्र दवासुर युतोऽञ्जसा ।
ददर्श च सुरैः सार्द्धं चतुष्पाद बृषा कृतिम् ॥१६
चरन्तं शशि सकाश दृष्ट्वा देवानुवाच ह ।
अयं मे प्रथमः पुत्रः पीडितः शशिना भृशम् ॥१७
इदानीं तोषयध्वं तं सर्व एव सुरा सुराः ।
ततः सर्वे स्तुतिं चक्रुस्तस्य देवस्य हर्षिताः ॥१८
एवं स्तुततस्तदा देवैर्बृषभरूपी प्रजापतिः ।
तुष्टः प्रसन्नमनसा शान्त चक्षुरभाषत ॥१९
दृष्ट मात्रास्तु ते देवाः स्वयं धर्मेण चक्षुषा ।
क्षणो न गत सम्मोहाः संम्यक्सद्धर्मसंहिताः ॥२०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सबने ब्रह्माजी से कहा था और सोम को बतलाया था। वह अपनी बुद्धि से अपने पुत्र के पीड़न से अवगत हो गया है और उमने गहन वन का आश्रय ले लिया है ॥१५॥ इसके अनन्तर ब्रह्माजी शीघ्र ही देवासुरों से युक्त होकर वहाँ पर गये थे और उन्होने सुरों के साथ चतुष्पाद वृष की आकृति वाले धर्म को वहाँ पर देखा था ॥१६॥ शशि के संकाश चरण करते हुए उसको देखकर ब्रह्माजी ने देवगणों से कहा था—यह मेरा प्रथम पुत्र है और चन्द्र के द्वारा यह अत्यधिक पीड़ित हुआ है ॥१७॥ इस समय में सभी सुर और असुर इसको तोषित करो। इस ब्रह्माजी के कथन के अनन्तर परम हर्षित होकर उन्होंने उस देव का स्तवन किया था ॥१८॥ उस समय में इस तरह से देवों द्वारा स्तुत हुए वह प्रजापति वृषभ रूप वाले परम सन्तुष्ट हो गये थे और परम प्रसन्न मन से शान्त चक्षु वाले वे बोले ॥१९॥ धर्म के द्वारा स्वयं नेत्र से देखे गये वे देवगण एक ही क्षण में सम्मोह से रहित हो गये थे और सब भली भाँति धर्म से युक्त हो गये थे ॥२०॥

असुरा अपि तद्वच्च ततो ब्रह्माऽवदच्च तम्।
अद्य प्रभृति ते धर्म तिथिरस्तु त्रयोदशो ॥२१
यस्तामुपोष्य पुरुषो भवन्तं समुपार्चियेत्।
कृत्वा पापसमाचांर तस्यान्मुंचति मानवः ॥२२
यच्चारण्य मिदं धर्म त्वया व्याप्तं चिरं प्रभो।
नाम्ना भविष्यति ह्येतद् धर्मारण्यामीति प्रभो ॥२३
चतुस्त्रिपाद् द्वयेकपाच्च प्रभो त्वं कृतादिभिल्लक्ष्य से येन लोकैः।
तथा तथा कर्म भूमौ नभश्च प्रायो युक्त· स्वगृहं पाहि विश्वम्
॥२४

और असुर भी उसी भाँति धर्मयुत हो गये थे। इसके उपरान्त ब्रह्माजी ने उससे कहा था—हे धर्म! आज से ही लेकर आपकी तिथि त्रयोद शीहोगी ॥२१॥ जो कोई पुरुष इस त्रपोदशी में उपवास

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके आपका अभ्यर्चन करेगा वह पाप के सम आचारों को करके भी उन सब से मुक्त हो जायगा ॥२२॥ हे प्रभो ! और जो हे धर्म ! आपने चिरकाल तक यह आरण्य धर्म का समाचरण किया है जो व्यास है। हे प्रभो ! यह मैं धारण करूँगा—इसी नाम से विख्यात होगा। अर्थात् जो धारण किया जाता हैं वही धर्म नाम है ॥२३॥ हे प्रभो ! आप कृत युग आदि में चतुष्पाद—त्रिपाद—द्विपाद और एक पाद दिखाई दिया करते हैं और जिस कारण से ऐसा लोकों के द्वारा आप दिखाई दिया करते हैं उसी भाँति ही कर्म भूमि में—नभ प्राम आप से युक्त है। आप प्रायः युक्त होकर अपने इस गृह विश्व का परिपालन करिए ॥२४॥

३३—रुद्र की उत्पत्ति

अथा परां रुद्रसम्भूतिमाद्यां शृणुष्वेमां यत्नतः सोऽभ्युवाच।
महातपः पातितो धर्मवृक्षः क्षमास्त्रधारी ऋषिरुग्रतेजाः ॥१
जातः प्रजानां पतिरुग्रतेजा ज्ञानं परं तत्त्वभावं विदित्वा।
सृष्टि सिसृक्षुः क्षुभितोऽतिरोषाद वृद्धिकाले जगतः प्रकामम् ॥२
तपस्यत्तोन्तः स्थिर कीर्ति पुण्यो रजस्तमोध्वस्तगतिर्बभूव।
वरो वरेण्यो वरदः प्रतापी कृष्णरूणः पुरुषः पिङ्ग नेत्रः ॥३
रुद्रन् नुक्तो ब्रह्मणा मा रुद्र त्वं रुद्रस्ततोऽसाव भवत्पुराणः।
नपस्व सृष्टि विततस्वरूपां भवान् समर्थोऽसि महानुभाव ॥४
इत्युस्त मात्रः सलिले ममज्ज मग्ने ससर्जात्म भवाय दक्षः।
कस्थे तदा देव वरेऽपि ते तु सृष्टि चक्रुर्मानसा ब्रह्म जाताः ॥५
तस्यां ततार्यां तु सुराधिपे तु पैतामहं यज्ञवरं प्रकामम्।
मग्नः पुरा यत्सालिले स रुद्र उत्सृज्य विश्वं तु सुरान् सिसृक्षुः ॥६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुस्राव यज्ञं सुरसिद्धयक्षानुपागतान् क्रोध वशं जगाम।
कन्यां च दीप्तां परिभाव्य केन सृष्टं जगन्मां व्यतिरिच्य मोहात्
॥७

इसके अनन्तर उन्होंने कहा था कि अब आप इस अमर आद्य रुददेव की सम्भूति का श्रवण कीजिए। महान् तप वाला धर्म वृक्ष पतित हुआ था और अत्युग्र तेज वाले---क्षमा के अरक्रम को धारण करने वाले ऋषि समुत्पन्न हुए थे जो प्रजाओं के पति थे और अत्यन्त उग्र तेज से समन्वित थे। उन्होंने पर तत्त्वभाव का ज्ञान प्राप्त करके सृष्टि के सृजन करने की इच्छा वाले होकर जगत् के वृद्धि काल में प्रकाश में अत्यन्त रोष से क्षुभित हो गये थे। तपस्या करते हुए—अन्दर में स्थित कीर्ति वाले—पुण्यमय और रजोगुण-तमोगुण स ध्वस्त गति वाले हो गये थे। श्रेष्ठ—वरेण्य—वरद—प्रतापी और कृष्णारुणवर्ण से मुक्त तथा पिङ्गवर्ण वाले नेत्रों से समन्वित हुए थे। यह रुद्रन कर रहे थे तो उस समय मे ब्रह्माजी ते इनसे कहा था—आप रुद्रन करते हैं अतएव आप पुराने रुद्र हुए थे। अब आप निवृत स्वरूप वाली इस सृष्टिका सृनन करिए क्योंकि आप महानुभाव हैं और सृजन के कार्य के करने मं पूर्ण सामर्थ्य रखते है॥ १।, २॥ ३॥ ४॥ केवल इतमाही कहे जाने पर वह जाल में मग्न हो गये थे और मग्न हो जाने पर आत्मभव के लिये दक्ष ने सृजन किया था। उस समय मे देव वर के जल में स्थित हो जाने पर ब्रह्माजी के ओ मानस से समुत्पन्न हुए थे उन्होंने सृष्टि की थी ॥ ५॥ सुराधिय के द्वारा उस सृष्टि के विस्तृन होने पर पितामह का श्रेष्ठ यज्ञ अच्छी तरह से सम्पन्न हुआ था। जो पहिले जल में मग्न हो गये थे वह रुद्र विश्व का त्याग करके सुरों के सृज करने की इच्छा वाले हुए थे। यज्ञ का स्रवण किया था और उपागृत सुर-सिद्ध-यक्षों को देखकर क्रोध के वश हो गये थे। दीप्त कन्या को परिभावित करके देव ने मुझको मोह से व्यतिरिक्त करके जगत् का सृजन किया था॥ ६॥ ७॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हा हेति चोक्ते ज्वलनार्चिषस्तु निश्चेरूरास्यात्परि पिङ्गलस्य।
तत्रा भवन् क्षुद्र षिशच संधा वेताल भूतानि च योगि संघाः ॥८
घनं यदा तंवितंत वियच्च भूमिश्च सर्वाश्च दिशश्च लोकाः।
तदा स सर्वज्ञतया चकार धनुश्चतुर्विंशति हस्तमात्रम् ॥९
गुणं त्रिवृत्तं च चकार रोषाद्दादत्त दिव्ये इषुधी शरांश्च।
देवाश्च सर्वे पशुतामुपेयुर्जग्मुश्च सर्वे प्रणतिं भवस्य ॥१०
रुद्रं दृष्ट्वा देव देवो जगाद मा तात कोपेन गतोहि यज्ञः।
इति ब्रह्म वचः श्रुत्वा रुद्र प्रोवाच कोपवान् ॥११
सृष्टः पूर्वं भवताहं तवेमे कस्मान्न भागं परिकल्प यन्ति।
यज्ञोद्भवं तेन रूपं मये मे वीतज्ञाना विकृता देव देव ॥१२
देवाः शम्भुं स्तुतिभिर्ज्ञानि हेतोर्य जध्वमुच्चैर सुराश्च सर्वे।
येन रुद्रो भगवांस्तोषमेति सर्वज्ञता तोषमात्रा दिह स्यात् ॥१३

हा-हा—इसके कहने पर अग्नि के समान अर्चियों वाले उसके पिङ्गलाक्ष के मुख से वहां पर क्षुद्र विशाचों के संघ, वेताल, भूत और योगियों के समुदाय हुए थे ॥ ८ ॥ जब उन्होंने धन को विस्तृत किया था और आकाश-भूमि-सब दिशाएँ और लोकों को विस्तृत किया था उस समय में उन्होंने सर्वज्ञाता से चौबीस हाथों के प्रमाण वाले एक धनुष को किया था ॥ ९ ॥ उन्होंने रोष से त्रिवृत्त गुण किया था और उन्होंने दिव्य धनुषों को और सुरों को ले लिया था। और सब देवगण पशुता को प्राप्त हो गये थे और उन्होंने भगवान् भव की प्रणति की थी ॥ १० ॥ रुद्रदेव को देखकर देवदेव ने कहा था—हे तात ! कोम से यज्ञ को गत मत करो। इस ब्रह्माजी के वचन का श्रवण करके कोम से भरे हुए रुद्रदेव ने कहा था ॥ ११ ॥ आपके द्वारा पूर्व में मेरा सृजन किया गया हे। तो ये मेरे भाग की कल्पना क्यों नहीं किया करते हैं। हे देवों के देव। ! इसी से मेरा यज्ञोद्भव रूप है मेरे द्वारा ये बीतज्ञान वाले विकृता हैं ॥ १२ ॥ ब्रह्माजी ने कहा—सब

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

देवगण और सुरवर्ग ज्ञान के हेतु के लिये भगवान् शम्भु का स्तुतियों के द्वारा यजन करें और उच्चरूप से स्लवन करें जिससे भगवान् रुद्र सन्तुष्ट होंगे और उनके सन्तोष मात्र से ही सर्वज्ञता हो जायगी ॥ १३ ॥

इत्युक्तांस्तेन ते देवा: स्तुतिञ्चक्रुर्महात्मनः ।
भवन्तः पशवः सर्वे भवन्तु सहिता इति ॥१४
अहं पतिश्च भवतां ततो मोक्षमवाप्स्यथ ।
तथेति देवांस्तं प्राहुस्ततः पशुपति र्भवान् ॥१५
ब्रह्मा पशुपतिं प्राह प्रसन्ने नान्तरात्मना ।
चतुर्दशी ते देवेश तिथिरस्तु न संशयः ॥१६
तस्यां तिथौ भवन्तं ये यजन्ति श्रद्धयान्विताः ।
तेषां त्वं तुष्टिमापन्नो देहि स्थान मुत्तमम् ॥१७

उनके द्वारा इस रीति से कहे गये देवों ने महान् आत्म वाले उनकी स्तुति कीं थी। तब शम्भु ने कहा था—आप सव लोग सहित पशुगण हो जावें और मैं आप लोगों का पति बनूँ तभी आप लोग मोक्ष की प्राप्ति करेंगे। तब देवों ने ऐसा ही होगा यह कहा था तभी से आप पशुपति हुए हैं ॥ १४॥१५॥ आपने परम प्रसन्न अन्तरात्मा से ब्रह्माजी ने पशुपति से कहा था—हे देवेश्वर ! आपकी चतुर्दशी तिथि होगी—इसमें कुछ भी संशय नहीं हैं ॥ १६ ॥ उस चतुर्दशी तिथि में जो लोग परम श्रद्धा से समन्वित होकर आपका यजन किया करते हैं उन पर आप परमाधिक प्रसन्नता को प्राप्त होते हुए उनको उत्तम स्थान दीजिए ॥ १७ ॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

३४—पितृों की सृष्टि और स्थिति

पूर्वं प्रजापतिर्ब्रह्मा सिसृक्षुः विविधाः प्रजाः ।
एकाग्रमनसः सर्वास्तन्मात्रा मनसो वहिः ॥१
कृत्वा परमकं ब्रह्मा ध्यायन्सर्वेषु रूपकैः ॥२
तस्यात्मनि तदा योगं गतस्य परमेष्ठिनः ।
तन्मात्रा निर्ययुर्देहाद्धूमवर्णं कृतत्त्विषः ॥३
पिवाम इति भाषन्त सुरान्सोममिति स्म ह ।
ऊर्ध्वं जिगमिषन्तो वैं वियत्संस्थास्तपस्वि नः ॥४
तान्दृष्ट्वा सहसा ब्रह्मा तिर्यक्संस्थांस्तथोन्मुखान् ।
भवन्तः पितरः सन्तु सर्वेषां गृहमेधिनाम् ॥५

पूर्वकाल में ब्रह्माजी जो प्रजापति हैं अनेक प्रकार की प्रजाओं के सृजन करने की इच्छा वाले होकर एकाग्रमन वाले उनसे मन से बाहिर सव तन्मात्राएँ करके ब्रह्माजी रूपों के द्वारा सव में परमब्रह्म का ध्यान करने लगे थे। आत्मा में भोग को प्राप्त हुए उन परमेष्ठी से उस समय में धूम्र वर्ष वाली तन्मात्राऐं उनके देह से निकली थी जिनकी क्रान्ति धूम्रवर्ण वाली थी। वे सोम का पान करती हैं--ऐसा सुरों से कह रही थी। आकाश में स्थित तपस्वी वे ऊपर की ओर जाने की इच्छाऐं कर रही थीं॥ १॥ २॥ ३॥ ४॥ उनको देखकर जो सहमा तिर्यक संस्थ थीं और उसी भाँति उन्मुखथीं तो उनसे ब्रह्माजी ने कहा था—आप सब लोग पितृगथ हो जावें जो सभी गृहमेधियों के पितर होवें॥ ५॥

ऊर्द्ध वस्त्रास्तु ये तत्र ते नान्दीमुख संज्ञिताः ।
इत्युक्त्वा तु तदा ब्रह्मा तेषां पन्थान मा करोत् ॥६
दक्षिणायन संज्ञं तु पितृणां च पितामहः ।
तूष्णीं ससर्ज भूतानि तमूचुः पितरस्ततः ।
वृत्ति नो देहि भगवन् यथा विन्दामहे सुखम् ॥७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अमावास्यादिनं वोऽस्त तस्यां कुशतिलोदकैः ।
तर्पिता मानुषैस्तृप्ति परांगच्छत नान्यथ ॥८
तिला देयास्तथै तस्यामुपोष्य पितृभक्तित ।
परमं तस्य संतुष्टा वरं यच्छत मा चिरम् ॥९

वहां पर जो ऊपर की ओर मुख वाले थे वे नान्दीमुख संज्ञा वाले हुए थे। यही कहकर ब्रह्माजी ने उस समय में उनका मार्ग बना दिया था। ६ ॥ पितामह ने पितृगणों का दक्षिणयन नामक मार्ग बनाया था। फिर चुप चाप भूतों का सृजन किया था। पितृगण ने उनसे कहा था—हे भगवान्! आप कृपाकर हमको वृत्ति प्रदान करिए जिससे हम सुख की प्राप्ति करें ॥ ७ ॥ ब्रह्माजी ने कहा—आप लोगों की तिथि अमावस्य होगी उस तिथि में कुश और तिलमिश्रत जलों के द्वारा मानवों से तर्पित किये हुये आप लोग परा तृप्ति को प्राप्त होंगे इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी आपकी तृप्ति का साधन या मार्ग नहीं है ॥८॥ इसतिथि में पितृगण के प्रति भक्ति कीं भावना से उपवास करके उसी भाँति तिल देने चाहिये उससे आप लोग परम सन्तुष्ट होकर उनको वर दीजिये और विलम्ब न कीजिये ॥९॥

३५—सोम की उत्पत्ति

ब्रह्मणो मानसः पुत्रो ह्यत्रिर्नाम महायशाः ।
तस्य पुत्रोऽभवत्सोमो दक्षजामातृताङ्गतः ॥१
याः सप्तविंशतिः कन्या दाक्षायण्यः प्रकीत्तिताः ।
सोमपत्न्योऽतिमान्यास्तास्तासां श्रेष्ठा तु रोहिणी ॥२
इतराः प्रोचुरागत्य चन्द्रस्या समतां पितुः ।
दक्षोऽप्यसकृदागत्य तमुवाच स नाकरोत् ॥३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समतां सोऽपि तं दक्षः शशापान्तर्हितो भव ।
एवमुक्तः क्षयं सोम अगमद्दक्ष शापत् ।।४
देवा मनुष्याः पशवो नष्टे सोमे सवीरुधः ।
क्षीणा भवंस्तदा सर्वा औषध्यश्च विशेषतः ।।५
क्षयं गच्छद्भिरत्यर्थम् ओषधीभिः सुरर्षभाः ।
मूलेषुवीरुधां सोमः स्थित इत्यूचुरातुराः ।।६
तेषां चिन्तामवत्तीव्रा विष्णु च शरणं ययुः ।
भगवानाह तान्सर्वान्ब्रत कि क्रियते मया ।।७

ब्रह्माजी का एक मानस पुत्र महान् यश वाले अत्रि हुये थे। उसका पुत्र सोम हुआ था जो प्रजापति दक्ष का जामाता बना था ।।१।। जो सत्ताईस कन्यायें थीं जो कि दाक्षायणी कीर्त्तित की गयी हैं। वे सब सोम की पत्नियाँ हुईं थीं और अत्यधिक मान्य थीं। उन सब में रोहिणी परम श्रेष्ठा थी ।।२।। अन्य सब ने पिता के समीप में आकर पिता से चन्द्रदेव के असमान व्यवहार के विषय में कहा था। दक्ष ने कई बार आकर उस सोम से कहा था कि ऐसा नहीं करना चाहिए। तथापि उस चन्द्र ने समता का व्यवहार नहीं किया था। तब प्रजापति दक्ष ने उसको शाप दे दिया था कि—अन्तर्भत्र हो जाओ। इस प्रकार से कहे जाने पर सोम दक्ष के शाप से क्षय को प्राप्त हो गया था ।।३।।४।। देवगण-- मनुष्य—पशुगण तथा वीरुधें सभी सोम ने क्षीण हो जाने पर उस समय में क्षीण एवं नष्ट होने लगे थे। और विशेष रूप से औषधियाँ क्षीण हो गईं थीं ।।५।। अत्यधिक रूप से क्षय को प्राप्त होने पर सुर-श्रेष्ठों ने परमाधिक आतुर होकर यह कहा था कि सोम वीरुधों के मूल में स्थित होवे ।।६।। उनको फिर बहुत अधिक चिन्ता हुई थी जो कि बहुत ही तीव्र थी और वे सब भगवान् विष्णु की शरणागति में प्राप्त हुए थे। भगवान् विष्णु ने उन सब से कहा था कि आप लोग बतलाइये कि मुझे अब क्या करना चाहिए ।।७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ते चोचुर्देव दक्षेण शप्तः सोमो विनाशितः ।
तानुवाच तदा देवो मथ्यतां कलशोदधिः ।
औषध्यः सर्वतो देवाः प्रक्षिप्याशु सुसंयतैः ॥८
एवमुक्त्वा ततो देवान्दध्यौ रुद्रं हरिः स्वयम् ।
ब्रह्माणं च तथा दध्यौ वासुकिं नेत्ररूपिणम् ॥९
ते सर्वे तत्र सहिता ममन्थुर्वरुणालयम् ।
तस्मिन्सुमथिते जातः पुनः सोमो महीपते ॥१०
योऽसौ क्षेत्रज्ञ संज्ञो वै देहेऽस्मिन्पुरुषः परः ।
स एव सोमो मन्तव्यो देहिनां जीवसंज्ञकः ॥११
परोक्षया स मूर्तिं तु पृथक्साम्यां प्रपेदिवान् ।
तमेव देवमनुजाः षोडशेमाश्च देवताः ।।१२
उपजीवन्ति वृक्षाश्च तथैवौषधयः प्रभुम् ।
रुद्रस्तमेव सकलं दधार शिरसा तदा ॥१३
तदात्मिका भवन्त्यापो विश्वमूर्तिरसौ स्मृतः ।
तस्य ब्रह्मा ददौ प्रीतः पौर्णमासीं तिथिं प्रभुः ॥१४
तस्यामुपोषयेद्राजंस्तमथं प्रतिपादयेत् ।
स चान्नाहारश्च भवेत्तस्य ज्ञानं प्रयच्छति ।
कान्तिं पुष्टिं च राजेन्द्र धनं धान्यं च केवलम् ॥१५

उन देवों ने भगवान् से कहा था—हे देव ! दक्ष प्रजापति ने सोम को शाप दिया है और उसे विनाशित कर दिया है। तब भगवान् ने उनसे कहा था कि आप लोग कलशोदधि का मन्थन करिए। फिर सब देवों ने सुसंयत होकर शीघ्र ही सब ओर से ओषधियों का प्रक्षेप किया था ॥१८॥ इस तरह से सब देवों को कहकर भगवान् हरि ने स्वयं रुद्र का ध्यान किया था। तथा उन्होंने ब्रह्माजी का तथा नेत्र रूप से वासु कि का चिन्तन किया था ॥९॥ उन सब ने सहित होकर वरुणालय (सागर) का मन्थन किया था। हे महीपते ! उस समुद्र के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भली भाँति मन्थन होने पर फिर सोम उससे समुत्पन्न हुआ था ॥१०॥ वह यह क्षेत्रज्ञ संज्ञा वाला इस देह में पर पुरुष था। वह ही सोम मानना चाहिए जो देह धारियों का जीव संज्ञा वाला था ॥११॥ परीक्षा द्वारा उसने पृथक् सौम्य मूर्त्ति को प्राप्त कर लिया था। उसको ही देव-मनुष्य और ये षोड़श देवता और वृक्ष तथा औषधें प्रभु से उप जीवित रहा करते हैं। रुद्र देवने उसी को कला के सहित उस समय में शिर में धारण कर लिया था ॥१२॥१३॥ उसके ही स्वरूप से परिपूर्ण आप (जल) हुए हैं और यह विश्व मूर्त्ति कहा गया है। ब्रह्माजी ने उसको परम प्रसन्न होकर प्रभु ने पौर्ण मासी तिथि के दिन जो उपवास करता है उसको उसका मनोऽभिलषित फल का वह प्रतियादन किया करता हैं। और वह अन्न के आहार वाला होवे तो उसको ज्ञान प्रदान किया करता है। हे राजेन्द्र! उसको कान्ति—पुष्टि—धान्य भी दिया करता है ॥१५॥

३६—प्राचीन इतिहास वर्णन

आदित्रेतासु राजानो मणिजा ये प्रकीर्तिताः।
कथयिष्यामि तान्राजन्यत्र जातोऽसि पार्थिवः ॥१
योऽसौ सुप्रभ नामासीत्स त्वं राजन्कृते युगे।
जातोऽसि नाम्ना विख्यात. प्रजापालेति शोभनः ॥२
शेषास्त्रेतायुगे राजन्भविष्यन्ति महाबलाः।
यो दीप्ततेजा मणिजः स शान्त इति कीर्तितः ॥३
सुरश्मिर्भविता राजा शशकर्णो महाबलः।
शुभदर्शनः पाञ्चालो भविष्यति न संशयः ॥४
सुशान्तिरङ्गवशे वं सुन्दरोऽप्यङ्ग इत्युत।
सुन्दश्च मुचुकुन्दोऽभूत्सुद्युम्नस्तुरुरेव च ॥५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आदि त्रेताओं में जो राजा मणिज कहे गये हैं हे राजन् ! उनके विषय में मैं वर्णन करूंगा जिसमें पार्थिव समुत्पन्न हुआ है ।।१।। जो यह सुप्रभ नाम वाला था हे राजन् ! वह आप कृत युग में उत्पन्न हुए हैं । नाम से परम प्रख्यात थे और बहुत अच्छे प्रजा के पालक थे ।।२।। हे राजन् ! शेष जो भी थे वे त्रेता युग में महान् बलवान होंगे । जो दीप्त तेज वाला मणिन था वह शान्त—इस नाम से प्रकीर्त्तित हुआ था ।।३।। सुरश्मि राजा होगा और महान् वलवान् शशकर्म हुआ शुभदर्शन पाञ्जान होगा—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।४।। सुशान्ति-अङ्ग वेश—सुन्दर—अङ्ग—सुन्द और भुप्र द्वन्द—सुद्युम्न—तुरु हुआ था ।।५।।

सुमनाः सोमदत्तस्तु शुभः संवरणोऽभवत् ।
सुशीलो वसुदानस्त्वसुपतिः सुखदोऽभवत् ।।६
शम्भुः सेनापतिरभूत्कान्तो दशरथः स्मृतः ।
सोमोऽभूज्जनको राजा एते त्रेतायुगे नृपः ।।७
सर्वे भूमिमिमां राजन् भुक्त्वा ते वसुधाधियाः ।
इष्ट्वा च विविधैर्यज्ञैर्दिवं प्राप्स्यन्त्यसंशयम् ।।८
एवं श्रुत्वा स राजर्षि ब्रह्मविद्यामृतं प्रभुः ।
आख्यानं परमं प्रीतस्तपश्चत्तुमगाद्वनम् ।।९
ऋषिरध्यात्मयोगेन विहायेदं कलेवरम् ।
ब्रह्मभूतोऽभवद्धात्रि हरौ लयमवाप च ।।१०

सुमन—सोमदत्त—शुभ और संवरण हुआ था । सुशील—वसु-दान—वसुपति और सुखद हुआ था ।।६।। शम्भु—सेनापति हुआ था । कान्त दशरथ कहा गया है । सोम जनक हुआ था—ये राजा—त्रेतायुग में हुए थे ।।७।। हे राजन् । सबने इस भूमि का भोग किया था और वे सभी वसुधा के स्वामी हुए थे । सबने अनेक यज्ञों के द्वारा यजन किया था और वे सभी दिवलोक को प्राप्त करेंगे —इसमें कुछ भी संशय नहीं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है ।।८।। इस प्रकार से वह राजर्षि श्रवण करके उस प्रभु ने ब्रह्म विद्यामृत को प्राप्त किया था । इस अख्यान को सुनकर वह बहुत ही प्रसन्न हुआ था और फिर तपस्या का समाचरण करने के लिये वन में चला गया था ।।६।। ऋपि इस अध्यात्म योग से इस कलेवर का परित्याप करके हे धात्रि ! वह ब्रह्म भूत हो गया था और उसने भगवान् हरि में तप प्राप्त किया था ।। १० ।।

३७–दीर्घबाहु चरित्र

कथमाराध्यसे देव भक्तिमद्भिः नरैः विभो ।
स्त्रीभिर्वा सर्वमेतन्मे शंस त्वं भूतभावन ।।१
भावसाध्योऽस्म्यहं देवि न वित्तैर्न जपैरहम् ।
साध्यस्तथापि भक्तानां कायक्लेशं वदामिते ।।२
कर्मणा मनसा वाचा मच्चित्तो यो नरो भवेत् ।
तस्य व्रतानि वक्ष्येऽहं विविधानि निबोध मे ।।३
अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं प्रकीर्त्तितम् ।
एतानि मानसान्याहुर्व्रतानि तु धराधरे ।।४
एक भक्तं तथा नक्तमुपवासादिकं च यत् ।
तत्सर्वं कायिकं पुंसां व्रतं भवति नान्यथा ।।५
वेदस्याध्ययनं विष्णोः कीर्त्तनं सत्यभाषणम् ।
अपैशुन्यं हितं धर्मं वाचिकं व्रतमुत्तमम् ।।६
अत्रापि श्रूयते चान्यहृषिरुग्रतयाः पुरा ।
ब्रह्मपुत्रः पुरा कल्पे आरुणिनमि नामतः ।।७

धरित्री ने कहा—हे देव ! भक्ति मान् नरों के द्वारा हे विभो ! किस प्रकार से हरि का आराधना की जाया करती है ? अथवा स्त्रियों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के द्वारा कैसे आराधन किया जाता है यह आप सब मुझे बतलाइए। आप तो प्राणियों पर परम कृपा करने वाले हैं ॥१॥ हे देवि ! मैं तो भावना के द्वारा ही साध्य होता हूँ और धनों के द्वारा यामजपों के द्वारा मैं साध्य नहीं हुआ करता हू। तो भी भक्तों को मैं साध्य होता हूँ। मैं आपको काय क्लेश बतलाता हूँ ॥२॥ कर्म से—मन से और वचन से जो मनुष्य मुझमें ही चित्त लगाने वाला तत्पर हुआ करता है उसके व्रतों को मैं बतलाता हूँ जो अनेक प्रकार के हैं। अब आप मुझसे उसका ज्ञान प्राप्त करलो ॥३॥ हे धराधरे ! अहिंसा सत्य और अस्तेय तथा ब्रह्मचर्य कहे गये हैं। ये ही मन के द्वारा किये जाने वाले व्रत हैं जो कहे गये हैं ॥४॥ एक बार भोजन तथा रात्रि में भोजन करना और जो उपवास आदि हैं ये सभी पुरुषो के कामिक व्रत हैं। अन्यथा नहीं हैं ॥५॥ वेदों का अध्ययन—भगवान् विष्णु का कीर्त्तन और सत्य भाषण—अपैशुन्य—हित यह वाचिक उत्तम धर्म व्रत हैं ॥६॥ इस विषय में भी यह सुना जाता है कि पहिले उग्रतया ऋषि हुए थे जो ब्रह्माजी के पुत्र थे जो पहिले कल्प में आरुणि नाम वाले हुए थे ॥७॥

सोऽरण्यमगमत् किंचित्तपोऽर्थी द्विजसत्तमः।
तपस्तेपे ततस्तस्मिन् उपवासपरायणः ॥८
देविकायस्तरे रम्ये सोऽवसद् ब्राह्मणः किल।
कदाचिदभिषेककार्य स जगाम महानदीम् ॥९
तत्र स्नात्वा जपन्विप्रो ददर्शायान्तमग्रतः।
व्याधं महाधनुः पाणिमुग्र नेत्रं विभीषणम् ॥१०
तं द्विजं हन्तुमायातस वल्कलानां जिघृक्षता।
तं दृष्ट्वा क्षुभितो विप्रो वह्याघ्रस्य भयदिति ।।११
ध्यायन्नारायणं देवं तस्थौ तत्रैव स द्विजः।
तं दृष्ट्वान्तर्गत हरिं व्याधो भीत इवाग्रतः ॥१२
विहाय सशरं चापं ततो वचनमब्रवीत्।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हन्तुमिच्छन्नहं ब्रह्मन्भवन्तं प्रागिहागतः ।।१३
इदानीं दर्शनात्तुभ्यं सा मीत क्वापि मे गता ।
ब्राह्मणानां सहस्राणि सत्स्त्रीणामयुतानि च ।।१४

वह श्रेष्ठ द्विज तप की इच्छा वाला होकर वन में तप का समाचरण करने के लिये चले गये थे । वह उपवासों में परायण होकर वहाँ पर अरण्य में तप का तप न किया करते थे ।। ८ ।। देविका के रम्य तट पर वह ब्राह्मण निवास किया करता था । किसी समय में अभिषेक के लिये वह उस महा नदी में गया था ।। ९ ।। वह विप्र स्नान करके जप कर रहा था कि उस समय में आगे जाते हुए एक व्याध को देखा था जिसके हाथ में एक बड़ा धनुष था और उसका स्वरूप बड़ा भीषण था और उसके नेत्र बहुत ही उग्र थे ।। १० ।। वह व्याध वल्कलों की लेने की इच्छा से उसका हनन करने के लिये वह उसके पास आया था । उसको देखकर विप्र बहुत ही क्षुभित हो गया था और उस ब्राह्मण के हनन करने वाले से उसको बड़ा भय उत्पन्न हो गया था ।। ११ ।। वह द्विज भगवान् नारायण का ध्यान करता हुआ वहीं पर स्थित हो गया था । जिसके अन्दर नारायण हैं—ऐसे उस विप्र को देखकर वह व्याध डरा हुआ होकर वहीं पर आगे स्थित रह गया था ।। १२ ।। उस व्याध ने अपना बाण और धनुष छोड़ दिया था और फिर यह वचन बोला था—हे ब्रह्मन् ! मैं अपना हनन करने के लिए ही पहिले यहाँ पर आया था ।। १३ ।। इस समय में आपके दर्शन करने से मेरी वह बुद्धि न मालुम कहाँ चली गई है । मैंने सहस्रों ही ब्राह्मणों का तथा सहस्रों स्त्रियों का हनन किया है ।।१४।।

निहतानि मया ब्रह्मन्सततं पापकारिणा ।
कां गतिं प्रतिपत्स्यामि ब्रह्मघ्नोऽहं द्विजोत्तम ।।१५
इदानीं तप्तुमिच्छामि तपोऽहं त्वत्समीपतः ।
उपदेश प्रदानेन प्रसादं कर्तुमर्हसि ।।१६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एव मुक्तोऽप्यसौ विप्रो नोत्तरं प्रत्यपद्यत ।
व्रह्महा पापकर्मेति मत्वा व्राह्मण पुंगवः ।।१७
अनुक्तोऽपि स धर्मेप्सुः व्याधस्तत्रैव तस्थिवान् ।
स्नात्वा नद्यां द्विजः सोऽपि वृक्षमूलमुपाश्रितः ।।१८
कस्यचि त्त्वय कालस्य तां नदीमगमत् किल ।
व्याघ्रो वुभुक्षितः शान्त तं विप्रं हन्तुमुद्यतः ।।१९
अन्तर्जलगतं विप्रं यावद् व्याघ्रो जिघृक्षति ।
तावद्व्याधेन व्याघ्रोऽसौ सद्यः प्राणैर्वियोजितः ।।२०
तस्माद् व्याघ्र शरीरास्त्तु उत्थाय पुरुषः किल ।
विप्रश्चान्तर्जले मग्नः श्रुत्वा तं शब्दमाकुलम् ।।२१

हे ब्रह्मन् ! मैं निरन्तर पाप के करने वाला हूँ । हे द्विजोत्तम ! आप मुझे यही वतलाइए कि मेरी क्या गति प्राप्त होगी क्योंकि मैं ब्राह्मणों का हनन करने वाला हूँ । इस समय में मैं तप करने की इच्छा करता हूं । इसलिये मैं आपके समीप में उपदेश प्राप्त करने के लिये समागत हुआ हूँ । आप उपदेश प्रदान करने के लिये मेरे ऊपर प्रसाद करने के योग्य हैं ।। १५—१६ ।। इस तरह से कहने पर भी उस विप्र ने कुछ भी उसको उत्तर नहीं दिया था । उस श्रेष्ठ ब्राह्मण ने यही मान लिया था कि यह तो ब्राह्मणों का हनन करने वाला—पाप कर्म करने वाला है । जब उससे कुछ भी नहीं गया था तो भी वह धर्म का इच्छुक व्याध वहाँ पर ही स्थित हो गया था । द्विज भी नदी में स्नान करके वह भी एक वृक्ष के मूल का आश्रय लेकर स्थित हो गया था ।। १७—१८ ।। कुछ काल तक ठहर कर वह विप्र उसी नदी पर चला गया था । उसी समय में एक भूखा व्याघ्र उस परम शान्त विप्र को मारने के लिए उद्यत हुआ था । जल के अन्दर गये हुए उस विप्र को जब तक वह व्याघ्र ग्रहण करने की इच्छा करता है तब तक उस व्याध ने उस व्याघ्र को प्राणों से विमुक्त कर दिया था ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

॥ १६ ॥ २० ॥ उस व्याघ्र के शरीर से एक पुरुष उठा था। वह विप्र तो उस आकुल शब्द को सुनकर जल में अन्दर निमग्न हो गया था ॥ २१ ॥

नमो नारायणायेति वाक्यमंतदुवाच ह ।
व्याघ्रेणापि श्रुतो मन्त्रः प्राणैः कण्ठस्थितैस्ततः ॥२२
श्रुतमात्रे जहौ प्रणान् पुरुषश्चाभवच्छुभः ।
सोऽब्रवोद्यामि त देशं यत्र विष्णुः सनातनः ॥२३
त्वत् प्रसादात् द्विज श्रेष्ठ मुक्तपाप्मा निरामयः ।
इत्युक्तो ब्राह्मणः प्राह कोऽसि त्वं पुरुषोत्तम ॥२४
सोऽब्रवीत्तस्य राजेन्द्र यद्वृत्तं पूर्वं जन्मनि ।
दीर्घं वाहुरिति ख्यातः सर्वधर्म विशारदः ॥२५
अहं जनामि वेदांश्च अहं वेद्मि शुभाशुभम् ।
ब्राह्मणैः नैव मे कार्यं किं वस्तु ब्राह्मण इति ॥२६
तस्यैवं वादिनो विप्राः सर्वे क्रोध समन्विताः ।
ऊचुः शापं दुराधर्षं क्रूरो व्याघ्रो भविष्यसि ॥२७
ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वे प्रणिपत्य मया मुने ।
ययघुघातं लब्ध्वा तु प्राणैः कण्ठ गतैर्भवान् ॥२८

"नमो नारायण"—यह वाक्य उस पुरुष ने कहा था। उस व्याघ्र के प्राण कण्ठगत थे तो भी ऐसी दशा मे यह मन्त्र उस व्याघ्र ने भी सुना था ॥ २२ ॥ केवल सुनने से ही प्राणों को त्याग दिया था और परम शुभ पुरुष हो गया था। वह बोला—मैं उस देश को जाता हूँ जहाँ पर सनातन विष्णु बिराजमान हैं ॥ २३ ॥ हे द्विज श्रेष्ठ ! आपके प्रसाद से निरामय और मुक्त पाप वाला हो गया हूँ। इस तरह से कहे हुए ब्राह्मण ने कहा था—हे पुरुषोत्तम ! आप कौन हैं ? ॥ २४ ॥ वह उससे बोला था हे राजेन्द्र ! पूर्व जन्म में जो भी हुआ था। मैं दीर्घबाहु इस नाम से विख्यात था ॥ २५ ॥ मैं वेदों को जानता हूँ और मैं शुभ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नहीं है ब्राह्मण क्या वस्तु हैं ।। २६ ।। इस प्रकार से उसके कहने पर समस्त विप्र क्रोध युक्त हो गये थे । उन सब विप्रों ने दुराधर्ष शाप दे दिया था कि तू महान् क्रूर व्याघ्र होगा ।। २७ ।। हे मुने ! इसके अनन्तर मैंने उन सब ब्राह्मणों को प्रणिपात किया था । तब उन्होंने कहा था कि वाण का घात प्राप्त करके तेरे प्राणदाह बस जब होंगे तभी आप मन्त्र का श्रवण करेंगे ।।२८।।

श्रोष्यति द्विज वक्त्रात्तु नमो नारायणेति च ।
तदा स्वर्गगतिस्तुभ्यं भविता नात्र संशयः ।।२९
यः पुनर्ब्राह्मणान्पूज्य स्ववक्त्रेण नमो हरिम् ।
वदन्प्राणैः विपुज्येत मुक्तोऽसौ वीतकिल्बिषः ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यमुत्क्षिप्य भुजमुच्यते ।।३०
ब्राह्मणोऽपि तदा मुक्तस्तं व्याध प्रत्यभाषत ।
जिघृक्षोर्मृगराजस्य य त्त्वया रक्षितो ह्यहम् ।।३१
तत्पुत्र तुष्टस्ते दद्मि वरं वरय सुव्रत ।
एष एव वरो मह्यं यत्त्व मां भाषसे द्विज ।।३२
इदानीं वरमेके त्वं गृहाण मम सन्निधौ ।
तपः कुरुष्व साधो त्वं यावदिच्छसि ।।३३
स एष भवता प्रोक्तो विष्णुर्नारायणः प्रभुः ।
स कथं प्राप्यते मर्त्यैरेष एव वरो मम ।।३४
तमुद्दिश्य व्रतं कुर्याद्यत्किंचित् पुरुषोऽच्युतम् ।
स परं तमवाप्नोति भक्त्या युक्तः पुमानिति ।।३५

एक विप्र के मुख से "नमोनारायण'—इसका आप श्रवण करेंगे । तब फिर आपकी स्वर्ग जाने की गति होगी—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।। २९ ।। जो फिर ब्राह्मणों की पूजा करके अपने मुख से 'नमो हरिम्'—यह बोलता हुआ प्राणों से वियुक्त होता है वह किल्विष रहित होकर मुक्त हो जाता है । यह सर्वथा सत्य है और पुनः सत्य है

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और पुन, सत्य है और पुन: सत्य है मेरे द्वारा भुजा अकार यह कहा जाता है ॥३०॥ ब्राह्मण भी उस समय में मुक्त हो गया था और उस व्याध से बोला था। मृगराज को जो मुझे ग्रहण करने की इच्छा वाला था उससे मुझे रक्षित किया है ॥३१॥ इससे हे पुत्र ! मैं आपसे परम प्रसन्न हूँ। हे सुव्रत ! आप अत्र मुझ से वर का वरण कर लीजिए। हे द्विज ! यही एक वर है कि आप मुझ से भाषण कर रहे हैं ॥३२॥ इस समय में मेरी सन्निधि में आप एक वरदान का ग्रहण कीजिए। हे साधो ! आप तप करिए जब तक भी आप करना चाहते हैं ॥३३॥ वह ही यह आपने कहा है जो प्रभु विष्णु नारायण हैं। वह नारायण मनुष्यों के द्वारा कैसे प्राप्त किये जाते हैं यह ही मेरा वरदान है ॥३४॥ उन भगवान् अच्युत का उद्देश्य करके पुरुष जो कुछ भी किया करता है वह पुरुष उस परम पुरुष की प्राप्ति कर लिया करता है और प्रभु की भक्ति से वह मुक्त जाया करता है ॥३५॥

३८-सत्यतपा का आख्यान

स शुभं शोभनं मार्गमास्थाय व्याधसत्तमः ।
तपस्तेपे निराहारस्तं गुरुं मनसा स्मरन् । १
भिक्षाकाले तु सम्प्राप्ते शीर्ण पर्णान्य भक्षयत् ।
स कदाचित् क्षुधाविष्टो वृक्षमूलं समाश्रितः ॥२
निराहारस्तपस्तेपे स्मरन् गुरुमतन्द्रितः ।
एवं तपस्यतस्तस्य काले ऋषिवरोऽभ्ययात् ॥३
दुर्वासाः शंसितात्मा वै प्राणयुक्तमपश्यत ।
व्याधं तपोत्थतेजोभिर्ज्वलमानं हविर्यथा ॥४
सोऽपि व्याधस्तु तं नत्वा शिरसाऽथ महामुनिम् ।
उवाच तं कृतार्थोऽस्मि भगवन् दर्शनात्तव ॥५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इदानीं श्राद्धकाले त्वं प्राप्तोऽसि मम दैवतम् ।
शीर्ण पर्णादिभिः कृत्वा प्रीणयामि द्विजोत्तम् ॥६
दुर्वासा अपि तं शुद्धभावपूत जितेन्द्रियम् ।
जिज्ञासुस्तत्तपो वाक्यमिदमुच्चैरुवाच ह ॥७

वह व्याधों में श्रेष्ठ परम शोभन मार्ग में समास्थित होकर बिना कुछ आहार किये हुए उसने तपश्चर्या का समाचरण किया था और उसने मनसे गुरु का स्मरण किया था ॥१॥ भिक्षा के काल के समाप्त होने पर वह झड़ कर गिरे हुए सूखे पत्तों को खाया करता था। वह किसी समय में भूख से आविष्ट होकर एक वृक्ष के मूल का समाश्रय लेकर बैठा था ॥२॥ बिना ही आहार किये हुए नन्द्रा से रहित होकर गुरुदेव का स्मरण करते हुए तप का तपन किया करता था। इस तरह से तपश्चर्या करते हुए उसके समीप में उसी समय श्रेष्ठ ऋषि आ गये थे ॥३॥ शंसितात्मा उसने उसको प्राण युक्त देखा था। वह व्याध तपश्चर्या से समुत्थित तेजों से ज्वलमान हवि की ही दिखाई दिया था ॥४॥ उस व्याध ने भी उस महा मुनि को शिर से प्रणाम करके उससे बोला था—हे भगवन् मैं! आपके दर्शन से कृतार्थ होगया हूँ ॥५॥ इस समय में श्राद्ध के काल में आप मेरे देवता प्राप्त हो गये हो। अब मैं शीर्ण पर्ण आदि के द्वारा द्विजों में उत्तम आपको प्रीणित करता हूँ ॥६॥ दुर्वासा ऋषि ने भी शुद्ध भाव से पवित्र—इन्द्रियों को जीत लेने वाले उससे उसके उस तप के विषय में जानने की इच्छ वाले होकर उससे यह वाक्य कहा था ॥७॥

यव गोधूमशालीनामन्नं चैव सुसंस्कृतम् ।
दीयतां मे क्षुधार्त्ताय त्वामुद्दिश्यागताय च ॥८
इत्युक्ते नन्वसौ व्याधश्चिन्तां परमिकां गतः ।
क्व संभविष्यते मह्यमिति चिन्तापरोऽभवत् ॥९
तस्य चिन्तयतः पात्र माकाशात्पतितं शुभम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सौवर्णं सिद्धिसंयुक्तं तज्जग्राह करेण सः ।।१०
तद्गृहीत्वा मुनिं प्राह दुर्वासाख्यं ससाध्वसः ।
अत्रैव स्थयितां ब्रह्मन्यावद् भिक्षाटनं त्वहम् ।।११
करोमि मत्प्रसादोऽयं क्रियतां ब्रह्मवित्तम ।
एवमुक्त्वा ततो भिक्षां याचितुं व्याधसत्तमः ।।१२
नाति दूरेण नगरं वनघोष समन्वितम् ।
तस्य तत्र प्रयातस्य अग्रतः सर्वशोभनाः ।।१३
वृक्षेभ्यो निर्ययुश्चान्या हेमपात्राग्रपाणयः ।
विविधान्नानि तस्याशु दत्वा पात्रं प्रपूरितम् ।।१४

यव गोधूम और शातियों का सुन्दर संस्कार किया हुआ अन्न ही मुझे दीजिए क्योंकि मैं क्षुधा से परम आर्त्त हो रहा हूँ और आपके ही पास समागत हुआ हूँ ।।८।। इस तरह से कहा गया वह व्याध परमाधिक चिन्ता को प्राप्त हो गया था । उसको यही चिन्ता हुई थी कि मेरे लिये यह कहाँ सम्भव होगा ।। ९ ।। जिस समय में वह यह चिन्ता कर रहा था तो उसी समय में एक परम शुभ पात्र आकाश से गिरा था । वह सुवर्ण का पात्र था और सिद्धि से संयुक्त था । उसने अपने हाथ से उसको ग्रहण कर लिया था ।।१०।। उसे लेकर डर से युक्त होता हुआ उस मुनि से बोला था जो कि दुर्वासा नाम वाले थे । हे ब्रह्मन् ! आप यही पर स्थित हो जाइए तब तक मैं भिक्षाटन करता हूँ ।।११।। हे ब्रह्म वित्तम ! आपका यह मेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह ही होगा । यह कहकर वह श्रेष्ठ व्याध भिक्षा की याचना करने के लिये वन घोष समन्वित नगर में पास ही गया था । वहाँ पर प्रपाण करते हुए उसके आगे सर्व शोभन अत्य होम में पात्रों को पत्रों में ग्रहण किये हुए वृक्षों से निकले थे । उन्होंने अनेक तरह के अंगों को देकर शीघ्र ही उसके पात्र को पूरित कर दिया था ।।१२।।—।।१४।।

स च भूतार्थमात्मानं मत्वा पुनरथाश्रमम् ।
आजगाम ततोऽपश्यत्तमृषिं जपतां वरम् ।।१५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तं दृष्ट्वा स्थाप्य तां भिक्षां शुचौ देशे प्रसन्नधीः ।
प्रणम्य तमृषि वाक्यमुवाच व्याध सत्तमः ॥१६
प्रक्षाल्य हस्त पादौ च तदन्नं श्रद्धयान्वितम् ।
वुभुजे परमप्रीतस्तथाचभ्य विचक्षणः ॥१७
तमस्थि शेषं व्याधं तु क्षुधा दुबलताङ्गतम् ।
उवाच वेदाः साङ्गास्ते सरहस्य पदक्रमाः ॥१८
ब्रह्मविद्या पुराणानि प्रत्यक्षाणि भवन्तु ते ।
एवं प्रदाद् वरं तस्य दुर्वासा नाम चाकरोत् ॥१९
भवान् सत्यतपा ऋषिराद्यो भविष्यति ।
एवं दत्तवरो व्याधस्तमाह मुनि सत्तमम् ॥२०
व्याधो भूत्वा कथं व्रह्मन् वेदानध्यापयाम्यहम् ।
प्राक्शरीरं गतं तेऽद्य निराहारस्य सत्तम ॥२१
तपोमयं शरीरं ते पृथग्भूतं न संशयः ।
तेन वेदाश्च शास्त्राणि प्रतिभा स्यन्ति वै मने ॥२२

और वह अपने आपको भूतार्थ मानकर फिर वह इसके अनन्तर आश्रम में आ गया था और इसके उपरान्त उसने जाप करने वालों में श्रेष्ठ उस ऋषि को देखा था ॥१५॥ उसका दर्शन करके उस भिक्षा को प्रसन्न बुद्धि वाले उसने पवित्र स्थल में रखकर उन ऋषि को प्रणाम किया था और उस व्याध श्रेष्ठ ने उस ऋषि से कहा था ॥ १६ ॥ उस विचक्षण ने हाथ—पैरों को धोकर श्रद्धा से समान्वित उस अन्न को आचमन करके भक्षण किया था ॥१७॥ उस व्याध को जिसके शरीर में केवल आस्थियाँ ही शेष थीं और जो भूख से अत्यन्त दुर्बल हो गया था उस ऋषि ने कहा था—अङ्गो सहित सब वेद जो रहस्य और पद क्रम के सहित हैं—ब्रह्म शिक्षा और पुराण आपको प्रत्यक्ष हो जावें—इस प्रकार से उसको वरदान दिया था और उसका नाम दुर्वासा रख दिया था ॥१८॥१९॥ आप आद्य सत्य तपा ऋषि होंगे । इस तरह से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वरदान दिये हुए वह व्याध उन परम श्रेष्ठ ऋषि से बोला था। हे ब्रह्मन् ! मैं व्याध होकर कैसे वेदों को पढ़ाऊंगा॥ उस ऋषि ने कहा—अब तेरा पहिला शरीर गत हो गया है और बिल्कुल पृथक् हो गया है—इसमें कुछ भी संशय नहीं रहा है। हे मुने इसी से सब वेद और शास्त्र तुझको प्रति भासित हो जायेंगे ॥२०॥२१॥२२॥

३६—मत्स्य द्वादशी व्रत

भगवन् द्वे शरीरे तु इति यत्परिकीर्त्तितम् ।
तन्मे कथय भेदं वै केन व्रह्मविदां वर ॥१
न द्वे त्रीणि शरीराणि वाच्यं तद् विपरीकम ।
विभोगायत नं चैव शरीराणीति देहिनाम् ॥२
प्रागवस्थमधर्माख्यं परिज्ञान विवर्जितम् ।
अपरं सव्रतं तद्धि ज्ञेयमत्यन्त धार्मिकम् ॥
धर्माधर्मोपभोगाय यत्तृतीयमतीन्द्रियम् ।
तत्त्रिभेदं विनिर्दिष्टं व्रह्मविद्भिः विचक्षणैः ॥४
यावता धर्म भोगश्च भुक्मिश्चेति त्रिभेदकम् ।
यस्तु भावः पुरा ह्यासीत्प्राणिनो निघ्नतस्तव ॥५
तत्पापाख्यं शरीरं ते पाप संज्ञमतोऽभवत् ।
इदानीं शुभवृत्तिं तु कुर्वतस्तय आर्जव्रम् ॥६
अपरं धर्मं रूपं तु शरीरं ते व्यवस्थितम् ।
तेन वेद पुराणानि ज्ञातुमर्हस्यसंशयम् ॥७

हे भगवन् ! शरीर ही हैं—यह जो आपने कहा है। उसका भेद आप मुझे बतलाइए। आप तो ब्रह्म के ज्ञान रखने वालों में परम श्रेष्ठ हैं। यह किससे होता है—यही कहिए ॥१॥ दो और तीन शरीर है यह विपरीत्त नहीं बोलना चाहिए। यह तो भोगों का आचमन होता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

है। देह धारियों के शरीर भोग के स्थान है ।।२।। पूर्व की अवस्था में स्थित—अधर्म नामक—परिज्ञान से रहित—ऊपर सव्रत वह निश्चय ही अत्यन्त धार्मिक जानना चाहिए ।।३।। धर्म और अधर्म के भोग के लिये जो तीसरा वह अतीन्द्रिय अर्थात् इन्द्रियों से परे है। ब्रह्मा वेत्ता विचक्षणों के द्वारा यह तीन भेद कहे गये हैं ।।४।। जितना धर्म का भाग और मुक्ति हैं—यह त्रिभेदक है अर्थात् तीन भेदों वाला है। जो भाव पहिले था जब कि तू प्राणियों का निहमन करता था ।। ५ ।। वह पाप नामक तेरा शरीर है इसी से पाप संज्ञक हुआ था। इस समय में शुभ बृत्ति करते हुए तेरा तप और आर्जव है। वह दूसरा धर्म के रूप वाला तेरा शरीर व्यवस्थित है। इसी कारण से वेदों और पुराणों का ज्ञान करने के लिये बिना ही संशय के आप योग्य होते हैं ।। ६—७ ।।

यदाष्टके सम्परिर्वातते पुमांस्तदान्य वृत्तो भवतीह निश्चितम् ।
गतष्टवर्षस्तु पुमान् यदा भवेत्तदान्य चेष्टो भवतीह मानवः ।।८
एकं शरीरं हि पृथक् निर्दिष्टं ब्रह्मवादिभिः ।
अवस्था भेद तश्चैवं तदेतत्कथितं त्रिधा ।।९
अन्तरं नाम्नि चैतस्य यथा मृद्घटयोरिव ।
कर्मकाण्डं चतुर्भेदं ब्राह्मणादिषु कीर्त्तितम् ।।१०
यत्तदेतत्परं ब्रह्म त्वया प्रोक्तं महामुने ।
तस्य रूपं न जानन्ति योगिनोऽपि महात्मनः ।
अनाम गोत्ररहितममूर्त्तां मूर्तिवर्जितम् ।।११
कथं तज्ज्ञायते ब्रह्म संज्ञानामविवर्जितम् ।
तत्तस्य संज्ञां कथय येत जानाम्यहं गुरो ।।१२
यदेतत्परमं ब्रह्म वेदे शास्त्रेषु पठ्यते ।
स वेदः पुण्डरीकाक्षः स्वयं नारायणो हरिः ।
स यज्ञैः विविधैरिष्टैः दानैर्दत्तैश्च सत्तम ।।१३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राप्यते परमो देवः स्वयं नारायणो हरिः ।
भगवन् बहुवित्तेन ऋत्विग्भिः वेदपारगैः ॥१४

जिस समय में अष्टक सम्परिवर्त्तित होता है उस समय में पुरुष निश्चित रूप से अन्य वृत्त वाला हुआ करता है। जब पुरुष आठ वर्षों को समाप्त कर लेता है तो उस समय में और ही चेष्टा वाला मानव हुआ करता है ॥ ८ ॥ शरीर एक ही होता है किन्तु ब्रह्मवादियों ने उसे पृथक निर्दिष्ट किया है। यह अवस्था के भेद से ही होता है। इसी से आपको तीन प्रकार का यह बताया है ॥ · ॥ इसके नाम में जो अन्तर है वह ऐसे ही होता है जैसे मृत्तिका और घट में हुआ करता है। घट की मिट्टी ही है किन्तु उसके नाम का घट बन जाने पर अन्तर हो जाता है। ब्राह्मण आदि में कर्मकाण्ड चार प्रकार भेदों वाला कहा गया है ॥१०॥ जो इससे परे ब्रह्म है हे महामुने ! आपने वह बता दिया है। उस पर ब्रह्मा का रूप महान् आत्मा वाले योगी भी नहीं जानते हैं। वह बिना नाम वाला—गोत्र से रहित—अमूर्त्त और मूर्त्ति से वर्जित है ॥११॥ जो संज्ञा और नाम से शून्य है वह ब्रह्म किस तरह से जाना जा सकता है। सो उसी की संज्ञा कहिए हे गुरो ! जिससे मैं जानलूं ॥१२॥ जो यह परम ब्रह्म है जो वेदों में और शास्त्रों में पढ़ा जाता है। वह वेद है पुण्डरी काक्ष है और स्वयं नारायण हरि है ॥१३॥ हे श्रेष्ठतम ! वह परम ब्रह्म अनेक प्रकार के यज्ञों से जो यजन किये जाते हैं—दिये हुए दानों के द्वारा परम ब्रह्म वह स्वयं नारायण हरि प्राप्त किये जाते हैं। हे भगवन् ! विपुल वित्त के द्वारा प्राप्त किया जाया करता है ॥ १४ ॥

प्राप्यते पुण्यकृद्भिर्हि देवो नारायणो भृशम् ।
अधनेन न कथं देवः प्राप्यते तद्वदस्व मे ॥१५
कथयामि परं गुह्यं रहस्यं देव निर्मितम् ।
धरण्या यत्कृतं पूर्वं मज्जन्त्या नु रसातले ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पृथिव्या पार्थिवो सलितेना तिरेचितः ।।१६
तस्यां सलिलमग्नायां पृथ्वी प्रायाद्रसातलम् ।
सा भुतधारिणी देवी रसातलगता शुभा ।।१७
आराधयामास विभु देवं नारायणं प्रभुम् ।
उपवासव्रतैर्देवि नियमैश्च पृथग्विधी ।।१८
कालेन महता तस्याः प्रसन्नो गरुडध्वजः ।
उज्जहार क्षितिं स्थित्यां स्थापयामास सोऽव्ययः ।।१६
कोऽसौ धरण्या सञ्चीर्ण उपवासो महामुने ।
कानि व्रतानि च तथा एतन्मे वक्तुमर्हसि ।।२०
यदा मार्गशिरे मासि दशम्यां नियतात्मवान् ।
कृत्वा देवार्चनं धीमानग्निकार्यं यथाविधि ।।२१

जो परमाधिक प्रण्य करने वाले हैं उनके द्वारा ही देव नारायण अत्यर्थ रूप से प्राप्त किये जाये जाते हैं। हे देवि ! विना धन वाले के द्वारा वह देव कैसे प्राप्य किये जा सकते हैं—यही आप मुझे बतलाइए ।। १५ ।। यह परम गोपनीय है और देव निर्मित रहस्य है उसे मैं कहता हूँ जो धरणी ने रसातल में डूबते हुए पूर्व में जो किया था। पृथिवी के द्वारा पार्थिव सलिल से अत्तिरे चित हुआ था ।। १६ ।। उसके सलिल में मग्न होने पर पृथ्वी रसातल में चली गई थी वह भूतों को (प्राणियों को) धारण करने वाली देवी जो चरमे शुभ थी रसातल में चली गयी थी ।। १७ ।। हे देवि। उसने विष्णु देव नारायण प्रभु की आराधना की थी। उपवासों से—नियमों से जो पृथक् प्रकार के थे समाराधना की गयी थी ।। १८ ।। बहुत अधिक समय जब व्यतीत हो था तब भगवान् गरुड़ ध्वज उसके ऊपर प्रसन्न हुए थे। उस अविनाशी प्रभु ने पृथ्वी का उद्धार किया था और उसको स्थिति में स्थापित किया था ।। १६ ।। हे महा मुने ! धरणी ने कौन से व्रत को सञ्जीर्ण किया था और कौन से उपवास तथा व्रत किये थे—यह सब आप मुझे बताने के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लिये योग्य हैं ॥ २० ॥ जिस समय में मार्ग शीर्ष मास में दशमी तिथि में नियत आत्मा वाले श्रीमान् ने देव का अर्चन करके यथा विधि अग्नि का कार्य किया था ॥ २१ ॥

शुचिवासा प्रसन्नात्मा हव्यमन्नं सुसंस्कृतम् ।
स्पृष्ट्वा द्वारांणि सर्वाणि चिरंध्यात्वा जनार्दनम् ।
शंख चक्र गदापाणि पीताम्वरंधरं विभुम ॥२२
प्रसन्न वदनं देवं सर्वलक्षण पूजितम् ।
ध्यात्वा पुनर्जलं हस्ते गृह्यभावैर्जनार्दनम् ॥२३
दद्यादर्ध्यं च देवाय करतोयेन मानवः ।
एवमुच्चारयन्वाचं तस्मिन्काले महामुने ॥२४
एकादश्यां निराहारः स्थित्वा चैवापरेऽहनि ।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥२५
एवमुक्त्वा ततो रात्रौ देवदेवस्य सन्निधौ ।
जपन्नारायणायेति स्वपेत्तत्र विधानतः ॥२६
एवं दत्वा विधानेन द्वादश्यां विष्णुमर्च्य च ।
विप्राणां भोजनं दद्याद्यथाशक्त्या सदक्षिणम् ॥२७
अनेन विधिना यस्तु धरणीव्रत कृन्नरः ।
इह जन्मनि सौभाग्यं धनं धान्यं वराः स्त्रियः ।
भवन्ति विविधास्तस्य य उपोष्यति मानवः ॥२८

शुचि वस्त्र धारी—प्रसन्न आत्मा वाले ने सुसंस्कृत हव्य अन्न का स्पर्श किया था। सब द्वारों को वन्द करके चिर काल तक जनार्दन प्रभु का ध्यान किया था भगवान् के कैसे स्वरूप का ध्यान किया था यह बतलाया जाता है—भगवान् के करों में शंख—चक्र—गदा को धारण किये हुए हैं—पीताम्बर का परिधान करने वाले हैं—विभु अर्थात् सर्वत्र व्यापक हैं—आपके मुख पर प्रसन्नता खेल रही हैं और देव सभी सुलक्षणों से पूजित हैं। ऐसे प्रभु का ध्यान करके फिर हाथ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में जल लेकर भावों द्वारा जनार्दन को देवे। मानव हाथ के जल से देव को अर्घ्य देवे। हे महा मुने! इस प्रकार मे वाणी का उच्चारण करते हुए उससे मनमें ध्यान करना चाहिए ॥२२॥—॥२४॥ एकादशी में बिना आहार के रहे और दूसरे दिन में हे प्रणरी काक्ष! मैं भोजन करूंगा। हे अच्युत! आप मेरे शरण अर्थात् रक्षक होइए ॥२५॥ इस तरह से प्रार्थना करके रात्रि में देवों के देव की सन्निधि में नारायण के नाम का जाप करता हुआ विधान से शयन करे ॥ २६ ॥ इस तरह से विधान से देकर द्वादशी तिथि में भगवान् विष्णु का अभ्यर्धन करना चाहिए। फिर विप्रों को भोजन करावे और अपनी शक्ति के अनुसार उनको दक्षिणा देवे ॥ २७ ॥ जो इसी विधि से मनुष्य धरणी व्रत को करने वाला है वह इस जन्म में परम सौभाग्य—धन—धान्य और उत्तम स्त्रियाँ प्राप्त किया करता है तथा जो मानव उपवास किया करता है उसको अनेक पदार्थ प्राप्त हुआ करते हैं ॥२८॥

४०--कूर्म द्वादशी व्रत

तथैव पौषमासे तु अमृतं मथितं सुरैः।
तत्र कूर्मो भवेद्देवः स्वयमेव जनार्दनः ॥१
तस्येयं तिथिरुद्दिष्टा महती कूर्मरुपिणः।
पौषमासस्य या शुक्ला दशमीति निगद्यते ॥२
तस्यां प्रागेव संकल्प्य प्राग्वत् स्नानादिकाः क्रियाः।
निर्वर्त्या राधयेद्भक्त्या एकादश्यां जनार्दनम्।
पृथङ्मंत्रैः मुनिश्रेष्ठ देवदेवं जनार्दनम् ॥३
कूर्माय पादौ प्रथमं प्रपूज्य नारायणायेति हरेः कटिं च।
संकर्षणायेत्युदरं विशोकेत्युरोभवायेति तथैव कण्ठम् ॥४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुबाहवे चैव भुजो शिरश्च नमो विशालाय नमोऽस्तु देवः ।
स्वनाममंत्रेण सुगन्ध पुष्पैधूंपादि नैवेद्य फलैः विचित्रैं ॥५
अभ्यर्च्यं देवं कलशं तदग्रे संस्थाप्त मालासित वस्त्रयुक्तम् ।
समन्दरं कूर्मरुपेण कृत्वा संस्थाप्य ताम्रे घृतपूर्ण पात्रे ।
पूर्णे घटस्योपरि सन्निवेश्य तद्ब्राह्मणं पूज्य तथैव दद्यात् ॥७
एवं कृते विप्र समस्त पापं विनश्यते नात्रकुर्याद् विचारः ।
संसारचक्रं स विहाय शुद्धं प्राप्नोति लोकं च हरेः पुराणम् ॥८

उसी प्रकार से पौष मास में सुरगणों ने अमृत का मन्थन किया था वहाँ देव जनार्दन स्वयं ही कूर्म हुए थे ॥ १ ॥ कूर्म के रूप धारी उनकी यह बड़ी तिथि उाददृष्ट की गयी है। पौष मास की शुक्ल पक्ष की ज्योतिषी है वह दशमी कही जाती है ॥ २ ॥ उस तिथि में पहिले ही सङ्कल्प करके पूर्व की ही भाँति स्नान आदि क्रिया को करे और फिर एकादशी मे भक्ति की भावना से भगवान् जनार्दन का आराधन करना चाहिए। हे मुनि श्रेष्ठ देवों के देव जनार्दन का पृथक् मन्त्रों से आराधन करे सर्वप्रथम कूर्माय— कहकर चरणों का पूजन करे नारायणाय इससे हरि की कटिका अर्चनकरे सङ्कर्षणाय इससे उदर का विशोक इससे बुरः स्थल का, भवाय—इससे कण्ठ का, सुवाहव—इससे भुजों का और नमो मिशालाम—इससे शिर का अर्चन करके देवको नमस्कार है—यह कहे। नाम के सहित मन्त्र से सुगान्धित पुष्पों से, धूप आदि से और नैवेद्य से तथा विचित्र फलों से देवका अभ्यर्चन करे। फिर उनके आगे कलश की स्थापना करके उस कलश को माला और सित वस्त्र से युक्त करना चाहिए ॥३॥—॥६॥ फिर मन्दराचल के सहित कूर्म रूप से करके धृत से पूर्णताम्र पात्र में संस्थापित करे। उस घटके ऊपर सम्मिवेशित करके फिर ब्राह्मण का पूजन कर उसी भाँति दे देवे। हे विप्र ! इस तरह से करने पर समस्त पाप नष्ट हो जाता है—इसमें कुछ भी विचार नहीं करना चाहिए। वह फिर इस संसार के चक्र का त्याग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके वह भगवान् हरि के पुराण एवं शुद्ध लोक की प्राप्ति किया करता है ॥७॥८॥

वाराह द्वादशी व्रत

एवं माघे सितेपक्षे द्वादशी धरणीभृतः ।
वराहस्य शृणुष्वाद्यां मुने परम धार्मिक ॥१
प्रागुक्तेन विधानेन सङ्कल्पस्थान मेव च ।
कृत्वा देव समभ्यर्च्य एकादश्मां विचक्षणः ॥२
धूप नैवेद्य गन्धैश्च अर्चयित्वाच्युतं नरः ।
पश्चात्तस्याग्रतः कुम्भं जलपूर्णं तु विन्यसेत् ॥३
सौवर्णं रौप्य ताम्रे वा पात्रे विभव शक्तितः ।
सर्व वित्तैस्तु सम्पूर्णं स्थापयित्वा विचक्षणः ॥४
स्थाप्यार्चयेद् गन्धपुष्पैः नैवेद्यैर्विविधैः शुभैः ।
पुष्पमंडलिका कृत्वा जागरं तत्र कारयेत् ॥५
प्रादुर्भावाद् हरेस्तत्र वाचयेद् भावयेद् बुधः ।
एवं पूजा विधायाथ प्रभाते उदिते रवौ ॥६

हे मुने ! आपतो परम धार्मिक हैं। इसी प्रकार से माघ मास में शुक्लपक्ष में द्वादशी तिथि हैं जो धरणी के धारण करने वाले वाराह भगवान् की आद्य तिथि है—उसका आप श्रवण कीजिए । पूर्व में कहे हुए विधान से सङ्कल्प करके तथा स्थान निश्चित करके विचक्षण पुरुष एकादशी में अभ्यर्चन ॥ १ ॥ २ ॥ मनुष्य धूप—नैवेद्य और गन्ध से अच्युत भगवान् का अर्चन करे । इसके पीछे उनके आगे जल से भरा हुआ कलश का विन्यास करना चाहिए ॥ ३ ॥ अपने विभव की शक्ति के अनुसार सुवर्ण का चांदी का, ताम्र का पात्र रक्खे उसमें सभी वित्तों से समन्वित विचक्षण स्थापित करे ॥ ४ ॥ वहाँ पर संस्थापित करके गन्धाक्षत पुष्पों से तथा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अनेक शुभ नैवेद्यों से अर्चन करना चाहिए। पुष्प मण्डलिका की रचना करके वहाँ पर जागरण करावे ॥ ५ ॥ वहाँ पर हरि के प्रादुर्भाव से बुध पुरुष भावना करे और वाचन करे। इस तरह से पूजा करके प्रभात में जब सूर्य उदित होता है ॥ ६ ॥

शुचि स्नात्वा हरिं पूज्य ब्राह्मणाय निवेदयेत्।
वेदवेदाङ्गविदुषे साधु वृत्ताय धीमते ॥७
विष्णुभक्ताय शान्ताय श्रोत्रियाय कुटुम्बिने।
एवं सकुम्भकं दत्त्वा हरिं वाराहरूपिणम् ॥८
दत्त्वा चाथ लभद्येत्तु फल तन्मे निशामय।
इह जन्मनि सौभाग्यं श्रीः कान्तिस्तुष्टिरेव च ॥९
दरिद्रो वित्तवान्सद्य अपुत्रो लभते सुतम्।
अलक्ष्मीः नश्यते सद्यो लक्ष्मीः संविशतेबलात् ॥१०
इह जन्मनि सौभाग्यं परलोके निशामय ॥११

शुद्ध होवे और स्नान करके हरि का पूजन करे और फिर ब्राह्मण के लिये निवेदित कर देवे। वह ब्राह्मण वेदों और वेदों के अङ्ग शास्त्रों का विद्वान—साधु चरित्र वाला तथा श्री मान् होना चाहिए ॥ ७ ॥ वह विप्र भगवान् विष्णु का भक्त हो—शान्त स्वभाव वाला हो—श्रोत्रिय हो और कुटुम्बी होना चाहिए। इस तरह से कुम्भ के सहित वाराह रूपी हरि को उसे दे देवे ॥ ८ ॥ इसके दे देने पर जो इसका फल होता है उसे मुझसे श्रवण करो। वह मनुष्य इस जन्म में परम सौभाग्य—स्त्री—कान्ति—तुष्टि की प्राप्ति किया करता है ॥ ९ ॥ जो दरिद्री होता है वह तुरन्त ही वित्तवान् हो जाता है और पुत्रहीन पुत्र की प्राप्ति किया करता है। उसकी अलक्ष्मी नष्ट हो जाती है और लक्ष्मी उसके घर में बल पूर्वक प्रवेश किया करती है। इस जनम में सौभाग्य प्राप्त करता है परलोक में भी यही प्राप्त होता है ॥१०॥११॥

—:०:—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

४२–नरसिंह द्वादशी व्रत

तद्वत् फाल्गुन मासे तुया शुक्लैकादशी भवेत् ।
तामुपोष्य विधानेन हरिमाराधयेत्सुधीः ॥१
असुरध्वंसनायेति चक्रं तोयात्मने तथा ।
णंखभित्सेव गन्ध पुष्प फलं. तथा ।
तवग्रे घटमादाय सितवस्त्र युगान्वितम् ॥२
रत्नगर्भें घटे स्थाप्य तं सम्पूज्य च मानवः ।
द्वादश्यां वेदविदुषे ब्राह्मणाय निवेदयत् ॥३
एवं कृते फलं प्राप्त यत्पुरा पार्थिवेन तु ।
तस्याहं सम्प्रवक्ष्यामि वत्सनामा महामुने ॥४
आसीत् किम्पुरुषे वर्षे राजा परम धार्मिकः ।
भारतेयि विख्यातस्तस्य वत्सः सुतोऽभवत् ॥५
स शत्रुभिर्जितः संख्ये हृतकोशो द्विपादवान् ।
वनं प्रायात्सपत्नीको वसिष्ठस्याश्रमेऽवसत् ॥६
कालेन महता सोऽथ वसिष्ठेन महात्मना ।
किं कार्यमिति स प्रोक्तो वसस्यस्मिन्महाश्रमे ॥७

उसी भाँत फाल्गुन मास मे जो शुक्लपक्ष की एकादशी होती है । सुधी विधि पूर्वक उसमें उपवास करके हरि का आराधना करे ।.१।। असुरों के ध्वंसन के लिये चक्र की तथा तोपात्मा शंख की गन्ध—पुष्प और फलों से आराधान करे । उसके अग्रोघर को लाकर दो श्वेत वस्त्रों से युक्त करे ॥२॥ उसको रत्न गर्भ घर म संस्थापित करके मानव पूजा करे । द्वादशी तिथि में उसको वेदों के विद्वान् ब्राह्मण को निवेदित कर देना चाहिए ॥ ३ ॥ ऐसा ही करने पर पहिले समय में जो राजा ने फल प्राप्त किया था उसको मैं अब वतलाऊंगा । हे महामुने ! वत्सनाम वाला राजा किम्पुरुष वर्ष में परम धार्मिक था । भारत—इस नाम से विख्यात उसका वत्ससुत हुआ था ॥ ४ ॥ ५ ॥ वह शत्रुओं के द्वारा युद्ध में जीत लिया गया था । उसका सब्र कोश हरण कर लिया गया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था । द्विपादवान वह पत्नी के सहित वन मे चला गया था और वसिष्ठ मुनि के आश्रम में वास किया करता था ॥ ६ ॥ वहुत समय जब व्यतीत हो गया था तब महात्मा वसिष्ठ जी ने उससे कहा था—तुम्हारा यहाँ क्या कार्य है कि आप इस आश्रम में निवास कर रहे हैं ॥ ७ ॥

भगवन् हृतकोशोऽहं हृतराज्योऽमहायवान् ।
शत्रुभिः हृतः सर्वस्वो भवन्तं शरणं गतः ॥८
उपदेश प्रदानेन प्रसाद कर्तुमर्हसि ।
एवमुक्तो वसिष्ठस्तु तस्येमां द्वादशीं मुने ॥६
आदिदेश विधाने न सोऽपि सर्वमथा करोत् ।
तस्य व्रतान्ते भगवान्नरसिंहस्तुतोषह ॥१०
चक्रं प्रादाच्च शत्रूणां विध्वंसनकरं मृधे ।
तेनास्त्रेण स्वकं राज्यं जितवान्स नृपोत्तमः ॥११
एषा धन्या पापहरा द्वादशी भवता मुने ।
कथितां तां प्रसन्नेन श्रुत्वा कुरु यथेप्सितम ॥१२

उसने कहा—हे भगवन् ! मेरा सम्पूर्ण कोश छीन लिया गया है और मैं राज्य से भी च्युत कर गया हूँ । मैं इस समाय में सदाय शून्य हूँ । मेरा सर्वस्व शत्रुओं न ही छीन लिया है । अत एव इस समय में आप के शरण में समुपस्थित हुआ हूँ ॥ ८ ॥ आप मुझे अपना उपदेश प्रदान करगे के योग्य होत हैं । हे मुने ! जब इस रीत से उनके द्वारा वासष्ठ मुान से कहा गया था तो उसका वसिष्ठ जी ने यह नरसिंह द्वादशी के व्रत को कहा था । और इसका पूरा विधान बताया था । उसने भी जैसा आदेश दिया था वह सभी किया था । उसके व्रत के अन्त में भगवान् नरसिंह उससे परम प्रसन्न हुए थे ॥ ६ ॥ १० ॥ भगवान् नरसिंह न उसको एक चक्र प्रदान किया था जो युद्ध मे सबके विध्वंस करने वाला था । उस श्रेष्ठ राजा ने उस अस्त्र से अपना हरण किया हुआ राज्य जीत लिया था । हे मुने ! यह द्वादशी परम धन्या और पापों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के हरण करने वाली है। मैंने आपको बतला दी है। इसका श्रवण करके प्रयत्न पूर्वक जो भी अभीष्ठित हो उसे करिए ॥११ ॥१२॥

४३--वामन द्वादशी, ४४-परशुराम द्वादशी

एवमेव मुने मासि चैत्रे सङ्कल्प्य द्वादशीम् ।
उपोष्यराधयेद्भक्त्या देवदेवं जनार्दनम् ॥१
वामनायेति पदौ तु विष्णवेकारमर्चयेत् ।
वासुदेवाय जठरमुरः संकर्षणाय च ॥२
कण्ठं विश्वभृते पूज्य शिरो वै व्योमरूपिणे ।
वाहू विश्वजिते पूज्यौ स्वनाम्ना शंखचक्रकौ ॥३
अनेन विधिनाभ्यर्च्य देवदेवं सनातनम् ।
प्राग्वद्रत्नोदकं कुम्भं सम्पूतं पुरतो न्यसेत् ॥४
प्रागुक्तपात्रे संस्थाप्य कांचनं वामनं बुधः ।
यथाशक्त्या कृतं सर्वं सितयज्ञोपवीतनम् ॥५
कुंडिका स्थापयेत् पार्श्वे छात्रिका पादुके तथा ।
अक्षमालांच संस्थाप्य बृसिकां च विशेषतः ॥६
एतैरुपस्करेर्युक्तं प्रभाते ब्राह्मणाय च ।
दापयेत्प्रीयतां विष्णुर्ह्रस्व रूपीत्युदीरयेत् ॥७

हे मुने ! इसी प्रकार से चैत्र मास में संकल्प करके द्वादशी के दिन उपवास करे और भक्ति की भावना से देव देव जनार्दन भगवान् की आराधना करनी चाहिए ॥ १ ॥ वामनाय—इससे पावों को—विष्णवे—इससे कटि का अर्चन करना चाहिए। वासु देवाय—इससे जठर का और सङ्कर्षणाय—इससे उरः स्थल का अर्चन करे ॥२॥ विश्व भृते—इससे कण्ठ का पूजन करके व्योम रूपिणे—इससे शिर का यजन करे। विश्वजिते—इस से दोनों वाहुओं को पूजन करे। अपने नाम से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शंख और चक्र का व्यफंन करना चाहिए ।। ३ ।। इसी विधि से सनातन देव देव का अर्चन करके पूर्व की ही भाँति सम्पूत रत्नोदक कुम्भ को आगे रखना चाहिए ।। ४ ।। पूर्व मे बताये हुए पात्र में संस्थापित करके बुध पुरुष कञ्जन का निर्मित वामन को ही स्थापित करे । अपनी शक्ति के अनुसार सब करे और सित यज्ञोपवीत वाले बनावे ।। ५ ।। पार्श्व में कुण्डिका की स्थापना करे तथा घृत का और पादुकाएं रक्खे । अक्षों की माला संस्थापित करके विशेष रूप से हसिका की स्थापना करनी चाहिए ।। ६ ।। इन उपस्करों से युक्त करे और प्रभात में ब्राह्मण के लिये सबको दे देवे और ह्रस्वरूपी भगवान् विष्णु प्रसन्न होवे—यह कहना चाहिए ।। ७ ।।

मासानाम्ना तु संयुक्तं प्रादुर्भावाधिमिधानकश् ।
प्रीयतामिति सर्वत्र निधिरेष प्रकीर्तितः ।।८
अतुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनन् ।
भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं मृतो विष्णुतुरं व्रजेन् ।।९
वैशाखेऽप्येवमेवं तु संकल्प्य विधिना नरः ।
तद्वत् स्नानं मृदा कृत्वा ततो देवालयं व्रजेत् ।।१०
तत्राराध्य हरिं भक्तया एभिर्मन्त्रैः विचक्षणः ।
जामदाग्नाय पावौ तु चोदरं सर्वधारिणे ।
एवमभ्यर्च्य मेधावी प्राग्वत्तस्याग्रतो घटम् ।।११
विन्यसेत् स्थापितं तद्वद् वस्त्रयुग्मं विशेषतः ।
वैणवेन तु पात्रेण तस्मिन्स्तु स्थापतेद्हरिम् ।।१२
जामदग्न्येन रूपेण कृत्वा सौवणेमग्रतः ।
दक्षिणे परशुं हस्ते तस्य देवस्य कारपेत् ।।१३
अर्घगन्धैस्तु सम्पूज्य पुष्पैः नानाविधैस्तथा ।
ततस्तस्याग्रतः कृत्वा जागरं भक्तिभावितः ।।१४
प्रभाते विमले सूर्ये ब्राह्मणाव निवेदयेत् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवं नियमयुक्तस्य तत्फलं तु निबोध मे ।
सुपुत्रो जायते तस्य विद्या श्रीः कान्तिरुत्तमा ।।१५

मास के नाम से संयुक्त प्रादुर्भाव के अभिधान वाला प्रसन्न होवें—यही विधि सर्वत कही गयी है ।।८।। इसके प्रभाव से जो पुत्र रहित होता है वह पुत्र का लाभ किया करता है और जो धन की इच्छा वाला है वह धन का लाभ किया करता है । जिसका राज्य भ्रष्ट हो गया हो वह पुनः राज्य को प्राप्त किया करता है और अन्त में वह विष्णु के लोक में गमन किया करता है ।।९।। अव परशुराम द्वादशी का व्रत बताया जाता है-इसी प्रकार से वैशाख मासमें मनुष्य विधि से संकल्प करे । उसी भाँति मिट्टी से स्नानकर के फिर देवालय में गमन करे ।१०। वहाँ पर भगवान् हरि की आराधना करके विचक्षण पुरुष नीचे दिये हुए मन्त्रों से पूजन करना चाहिए—ज मदग्नाय—इससे पादों का यजन करे । सर्व धारिणे—इससे उदर का अर्चन करे—इस तरह से मेधावी अर्चन करे—इस तरह से मेधावी अर्चन करेके पूर्ण की ही भाँति उनके आगे घट का विन्यास करे ।। ११ ।। दो वस्त्रों से युक्त विशेष रूप से स्थापित करना चाहिए । वैष्णन पात्र के द्वारा स्थापन करके उसमें फिर भगवान् हरि की स्थापना करे ।। १२ ।। सुवर्ण से जादान्य के स्वरूप से निर्माण कराकर आगे रक्खे । उन देव दाहिने हाथ में परशु धारण करावें ।। १३ ।। फिर अर्ध—गन्ध और अनेक प्रकार के पुष्पां से भली भाँति अर्चन करना चाहिए । फिर भक्ति की भावना से भावित होकर उनके आगे जागरण करे ।। १४ ।। प्रातःकाल में जव सूर्य विमल होवें उसको ब्राह्मण को दे देना चाहिए । इस प्रकार से युक्त का जो फल होता है उसे मुझसे समझ लो । उसके सुपुत्र की उत्पत्ति होती है और विद्या—श्री तथा उत्तम कान्ति होती हैं ।। १५ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

४५—श्रीराम द्वादशी व्रत

ज्येष्ठ मासेऽप्येवमेव सङ्कल्प्य विधिना नरः ।
अयेर्चयेत्परमं देवं पुष्पैर्नानाविधैं शूभैः ।।१
नमोरामाभिरामाय पादौ पूर्वं समर्चयेत् ।
एवमभ्यर्च्य विधिवत्पप्राग्वत् कुम्भं तु विन्यसेत् ।।२
प्राग्वद्वस्त्रेण संछन्नं सौवर्णो रामलक्ष्मणौ ।
अर्चयित्वा विधानेन प्रभाते ब्राह्मणाय तौ ।।३
दातव्यौ मनसा काममहिता पुरुषेण तु ।
अपुत्रेण पुरा पृष्टो राजा दशरथेन च ।।४
पुत्र कामपरः पश्चाद्वसिष्ठः परमार्चितः ।
इदमेव विधानं तु कथयामास स द्विजः ।।५

इसी रीति से ज्येष्ठ मास में विधि से मानव से कल्प करके अनेक तरह के परम शुभ पुष्पों से देव का अर्चन करना चाहिए ।।१।। ॐ नमो रामविदा माय भूससे पूर्व में चरणों का अभ्यर्चन करे। इसी रीति से पूर्व की ही भाँति यजन करके विधि के साथ कुम्भ का न्यास करे ।।२।। पहिली ही तरह से उसको वस्त्र संछन्न करे फिर सुवर्ण निर्मित राम और लक्ष्मण की प्रतिमा तयार करावे और उनका विधान के साथ समर्धन करके विधान फिर पूर्व की ही भाँति उन दोनों प्रतिमाओं को प्रभात में किसी योग्य ब्राह्मण के लिये दे देना चाहिए। जो पुरुष मनमें कामना रखता हो उसको ही ऐसा करना चाहिए। प्राचीन समम में विना पुत्र वाले राजा दशरथ ने पुत्र की कामना में तत्पर वसिष्ठ मुनि की परम अर्चना की थी। उस ब्राह्मण ने यही विधान राजा दशरथ को बताया था ।।३।।४।।५।।

प्राग्रहस्यं विदित्वा तु स राजा कृतवानिदम् ।
तस्य पुत्रः स्वयं जज्ञे रामनामा महावली ।।६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चतुर्द्धा सोऽव्ययो विष्णुः परितुष्टो महामुने ।
एतदैहिकमाख्यानं पारत्रिकमयो श्टृणु ।।७
तावद्भोगान् भुंजते स्वर्गलोके यावदिन्द्रो देवसंघाश्च सर्वे ।
अतीत काले पुनरेत्य मर्त्यं भवेत्स राजा शतयज्ञयाजी ।।८
निष्काम एवं व्रतमस्य कृत्वा नश्यन्ति पापानि च तस्य पुंसः ।
प्राप्नोति निर्वाणमलं च शाश्वतम् ।।६

पहिले रहस्य का ज्ञान प्राप्त करके राजा दशरथ ने इस विधान को किया था। इसके प्रभाव से उसके पुत्र के रूप में महा बलवान् ने स्वयं ही जन्म ग्रहण किया था ।। ६ ।। हे महा मुने ! वे अविनाशी भगवान् विष्णु देव चार प्रकार से चार स्वरूपों में उस राजा पर प्रसन्न हुए थे। यह तो यहाँ का इस लोक का आख्यान है। उस पर लोक के आख्यान का श्रवण कीजिए ।। ७ ।। तब तक स्वर्ग लोक में भाव से इन्द्र और सब देवगण भोगों का उपभोग करते हैं जब काल व्यतीत हो जाता है तो वही पुनः इस मनुष्य लोक में आकर शत यज्ञों का यजन करने वाला राजा होता है ।। ८ ।। इस तरह से कामना से रहित होकर इस व्रत को करने पर उस पुरुष के सभी पाप नष्ट हो जाया करते हैं। और अन्त में वह पुरुष परम शाश्वत निर्वाण पद को प्राप्त किया करता ।। ६ ।।

४६—श्रीकृष्ण द्वादशी व्रत

आषाढ़ेऽप्येवमेव स्यात्संकल्प्य विधिना नरः ।
चक्रपाणयेति भुजौ कण्ठं भूपतये तथा ।।१
स्वनाम्ना शंखचक्रौ तु पुरुषायेति वै शिरः ।
एवमभ्यर्च्य मेधावी प्राग्वत्तस्याग्रतो घरम् ।।२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विन्यस्त वस्त्रसंयुक्तं तस्योपरि ततो न्यसेत् ।
कांचनं वासुदेवं तु चतुर्व्यूहं सनातनम् ॥३
तमभ्यर्च्य विधानेन गन्धपुष्पादिभिः क्रमात् ।
प्राग्वत्तं ब्राह्मणे दद्याद्वेदवादरते तथा ॥४
एवं नियमयुक्तस्य यत्पुण्यं तच्छृणुष्व मे ।
वसुदेवोऽभवत् श्रेष्ठो यदुवंश विवर्द्धनः ॥५
देवकी तस्य भार्या तु समान व्रतधारिणी ।
सा त्वपुत्राभवत्साध्वी पतिधर्मपरायणा ॥६
तस्य कालेन महता नारदोऽभ्यगमद्गृहम् ।
पूजितो वसुदेवेन भक्त्यासो वाक्यमब्रवीत् ॥७
वसुदेव श्रृणुष्वेदं देवकार्यं ममानघ ।
श्रुत्वैतां च कथां शीघ्रमागतोऽस्मि तवान्तिकम् ॥८
पृथ्वी देव समिति मया दृष्ट्वायदूत्तम ।
गत्वा च जल्पती भारं न शक्ता ऊहितुं सुराः ॥९
पीडयन्ति समेता मां तान् हनध्वं सुरोत्तमाः ।
एवमुक्ताः पृथिव्या ते देवा नारायणं गताः ।
मनसा ध्यातमात्रः स देवः प्रत्यक्षतां ययौ ॥१०

इसी तरह से आषाढ़ मास में मनुष्य विधि के साथ सङ्कल्प करे। चक्रपाणये—इससे दोनों भुजाओं को तथा भूपतये—इससे कण्ठ का यजन करे ॥ १ ॥ अपने नाम से शंख और चक्र का तथा पुरुषाय—इससे शिर का अर्चन करे। मेधावी पुरुष इसी से अभ्यर्चन करके पूर्व की ही रीति से उनके आगे घर की स्थापना करे ॥ २ ॥ उस घर को वस्त्र से समन्वित करे। उसके ऊपर सुवर्ण को स्थापित करना चाहिए ॥ ३ ॥ उन भगवान् वासुदेव का क्रम से विधि के साथ गन्ध—पुष्पादि उपचारों से अभ्यर्चन करे। उसको फिर जो वेदों के बाद में रति रखने वाला ब्राह्मण होवे उसको पहिली ही रीति से दे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दे देना चाहिए ।४। इस तरह विषय से युक्त पुरुष का जो महान् पुण्य होता है उसको मुझसे श्रवण कर लीजिए । महानुभाव वसुदेवजी परम श्रेष्ठ और यदुवंश के वर्धन करने वाले हुए थे । उनकी भार्या देवकी थी जो समान व्रत के धारण करने वाली हुई थीं । वह पति के व्रत में परायण साध्वी पुत्र रहित हुई थी । बहुत समय के अनन्तर उसके गृह में देवर्षि नारदजी समागत हुए थे । वसुदेव जी के द्वारा उन महर्षि की सविधि पूजा की गयीं थी । जब भक्ति भाव से वे समर्चित हुएतो उन्होंने यह वाक्य कहा था ।। ५—६—७।। हे वसुदेव ! आप तो परम शुद्ध निष्पाप हैं । आप अब मुझसे देवों के कार्य का श्रवण कीजिए । इस कथा का श्रवण करके ही मैं बहुत ही शीघ्र तुम्हारे पास आया हूँ ।।८।। यह पृथ्वी देवों की समिति में गई थी हे महूत्तम ! मैंने उसको देखा था । उसने जाकर यही कहा था कि हे सुरगणो ! सब असुर एकत्रित होकर मुझे पीड़ा दे रहे हैं । अतएव अब उनका हनन कीजिए । इस तरह से पृथ्वी के द्वारा कहे गये वे सभी देव पृथ्वी के ही साथ भगवान् नारायण के समीप में गये थे । जब मन के द्वारा ध्यान किया था तो भगवान् तुरन्त ही प्रत्यक्ष रूप में प्रादुर्भूत होगये थे ।। ९—१० ।।

उवाच स सुरश्रेष्ठः स्वयं कार्यमिदं सुराः ।
साधयामि न संदेहो मर्त्यङ्गता मनुष्यवत् ।।११
किन्त्वाषाढे शुक्ल पक्षे या नारी सह भर्त्तृणा ।
उपष्यति मनुष्येषु तस्या गर्भे भवाम्यहम् ।।१२
एवमुक्ता गता देवाः स्वयं चाहमिहागतः ।
उपदिष्टं तु भवतः अपुत्रस्य विशेषतः ।।१३
एतां च द्वादशीं कृत्वा वसुदेवो महायथाः ।
पुत्रं लेभे स कृष्णाख्यं महतीं च श्रियं तथा ।।१४
भुक्त्वा प्राज्यश्रिय सोऽथ गतिं परमिकां ययौ ।
एष ते विधिरुद्दिष्ट आषाढे मासि वै मुने ।।१५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उन भगवान् ने प्रत्यक्ष होकर उन देवगणो से कहा था—हे सुरोत्तमो ! मैं आपके इस कार्य को पूर्ण करूँगा—इसमें कुछ भी आप लोग सन्देह न करें। मैं मनुष्य की ही भाँति मर्त्यलोक में प्राप्त होऊँगा। ।। ११ ।। किन्तु आषाढ़ मास में जो नारी अपने भर्त्ता के साथ उपवास करेगी मनुष्यों में उसी के गर्भ में समुत्पन्न होऊँगा ।। १२ ।। ऐसा कहे जाने पर सब देवगण वहाँ से चले गये थे और मैं अब यहाँ पर आ गया हूँ। मैंने आपको जो पुत्र से हीन है—यह उपदेश दिया है और विशेष रूप से यही उपदेश देने के लिये मैं समागत हुआ हूँ ।।१३।। महान् यशस्वी वसुदेवजी ने इसी द्वादसी का व्रत किया था और उन्होंने पुत्र की प्राप्ति की थी। श्रीकृष्ण नाम वाले पुत्र को उन्होंने प्राप्त किया था तथा बहुत बड़ी श्री का भी लाभ लिया था ।।१४।। यहाँ इस लोक में महती श्री का उपभोग करके अन्त में वह परमगति को प्राप्त हुए थे। हे मुने ! यह आषाढ़ मास में होने वाले व्रत की विधि मैंने आपको बतलादी है ।।१५।।

४७—बुद्ध द्वादशी, कल्कि द्वादशी

श्रावणे मासि शुक्लायामेकादश्यां चरेद्व्रतम् ।
अर्चयेत्पूर्वविधिना गन्धपुष्पं जनार्दनम् ।।१
एवं सम्पूज्य संस्थाप्य कुम्भं पुर्ववदेव तु ।
संवेष्टच वस्त्र युग्मेन तस्यो ततो न्यसेत् ।।२
काञ्चमं देवदेवं तु दामोदर सनामकम् ।
तमभ्यर्च्य विधानेन गन्धापुष्पादिभिः क्रमात् ।।३
प्राग्वत्तं ब्राह्मणं दद्यद् वेदवेदाङ्गपारगे ।
एवं नियम युक्तस्य प्रभावं तच्छुणुष्व मे ।।४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एष वै विधिरुद्दिष्टः श्रावणे मासि वै मुने ।
यत्तस्याश्च प्रभावं तच्छृणु पाप प्रणाशनम् ।।५
तद्वद्भाद्रपदस्यापि या शुक्लैकादशी भवेत् ।
तस्यां सङ्कल्प्य विधिना देवदेवं समर्चयेत् ।।६
नमोस्तु कल्कि ने पादौ हृषिकेशाय वै करिम् ।
म्लेच्छविध्वंस नायेति जगन्मन्मूर्त्तौ तथोदरम् ।।७

यह श्रावण मास में शुक्ल पक्ष की एकादशी में व्रत का समाचरण करना चाहिए । पूर्व में बतायी हुई विधि से ही भगवान् जनार्दन का गन्ध—पुष्पों से समर्चन करना चाहिए ।।१।। इस रीति से अभ्यर्चन करके पहिली ही रीति से अभ्यर्चन करके पहिली ही रीति से कुम्भ की संस्थापना करनी चाहिए । उस कुम्भको दो वस्त्रों से संवेष्टित करे और फिर उसके ऊपर भगवान् की प्रतिमा का न्यास करना चाहिए ।।२।। वासुदेव की प्रतिमा सुवर्ण की निर्मित करावे और दामोदर नाम से युक्त करे । उसका अभ्यर्चन करने के पश्चात् पूर्व की ही भाँति उसको किसी वेद—वेदाङ्ग के पारगामी विद्वान् ब्राह्मण को दान कर दे देना चाहिए । इस तरह से नियमों से युक्त मानव का जो भी प्रभाव होता है उसका अब मुझसे श्रवण करिये ।।४।। हे मुने ! यह श्रावण मास में ही करे जिसका विधान के साथ उपदेश किया गया है । उसका प्रभाव यह है कि पापों का विनाश हो जाता है यह मुझसे श्रवण कीजिए ।।५।। उसी तरह से भाद्रपद मास में भी शुक्ल पक्ष में जो एकादशी होती है । उस दिन विधि के साथ संकल्प करके देवों के देव का समर्चन करना चाहिए ।।६।। नमोऽस्तु कन्मिके—इससे वरण्यों का यजन करे फिर हृषी के शाम—इससे काँटे का अर्चन करे । म्लेच्छ विध्वै सनाय—इससे जगन्मूर्त्ति के उदर का यजन करना चाहिए ।।७।।

शितिकण्ठाय कण्ठं तु खड्गपाणे तथा भुजौ ।
चतुर्भुजायेति हस्तौ विश्वमूर्ते तथा शिरः ।।८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवमभ्यर्च्य मेधावी प्राग्वत्तस्याग्रतो घटम् ।
विन्यसेत्त कल्किनं देवं सौवर्ण तत्र कारयेत ॥९
सितवस्त्रेण संयुक्तं गन्धपुष्पो शोभितम् ।
कृत्वा प्रभाते विप्राय प्रदेयं शास्त्रवित्तमे ॥१०
एवं कृते भवेद्यस्त् तन्निबोध महामुने ।
पर्वं राजा विशालोऽभूत् काशीपुर्यां महाबला ॥११
गोत्र जैर्हृतराज्योऽसौ गन्धमाहनमाविशत् ।
तस्य द्रोण्यां महाराज वदरी प्राय शोभनाम् ॥१२
हृतराज्यो विशेषेण गतश्रीको नरोत्तमः ।
कदाचिदानतौ तत्र पुराणा ऋषिसत्तमौ ।
नर नारायणौ देवौ सर्वदेव नमस्कृतौ ॥१३
एवमुक्त्वा नरस्तस्य इमामेवा ब्रवीन्मुनि' ।
द्वादशी कृतवान्सोऽपि चक्रवर्ती वभूव ह '
तस्यैव नाम्ना वदरी लिशालाख्या भवन्मुने ॥१४

शिति कण्ठाय—इससे कण्ठ का तथा स्वङ्ग पाणे—इससे दोनों भुजों का अर्चन करे । चतुर्भुजाय—इसमे दोनों हस्तों का अर्चन करे तथा विश्वमूर्त्ते—शिरसे शिर का यजन करे ॥८॥ इस प्रकार से मेधावी पुरुष अभ्यर्चन करके पूर्व की ही भाँति उनके आगे घट का विन्यास करे । कल्कि देव की प्रतिमा वहाँ पर सुवर्ण से निर्मित करावे ॥९॥ उसको श्वेत वस्त्र से समन्वित करे और गन्ध तथा पुष्पों से शोभित करना चाहिए । ऐसा करके प्रभात वेला में शास्त्रों के ज्ञाता विप्र के लिये उसका दान कर देना चाहिए ॥ १० ॥ हे महामुने ! ऐसा विधान करने पर जो भी इसका प्रभाव होता है उसको आप मुझसे श्रवण कीजिए । पूर्व समय में महान् बलवान् काशीपुर में एक विशाल राजा हुआ था । उसके जो व्रज पुरुषों के द्वारा उसके राज्य का हरण कर लिया गया था और फिर वह राज्यहीन होकर गन्ध मादन पर्वत पर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चला गया था । हे महाराज ! उसकी परम शोभन व दूरी द्रोण्या में प्राप्त हुआ था ॥ ११ ॥ १२ ॥ हृत राज्य वाला वह नरोत्तम विशेष रूप से श्री हीन हो गया था । किसी समय में वहाँ पर पुराण परम श्रेष्ठ दो ऋषि समागत हुए थे । वे दोनों नर—नारायण देव थे जिनको सभी देवगण नमस्कार किया करते हैं ॥ १३ ॥ इस प्रकार से उसको वरदान कहकर उन मुनियों ने यंही द्वादशी का व्रत कहा था । उसने भी इस द्वादशी का व्रत किया था और फिर वह चक्रवर्त्ती राजा हो गया था । हे मुने ! उसी के नाम वाली वदरी हो गई थी ॥ १४ ॥

४९--पद्मनाभ द्वादशी

तद्वदाश्वयुजे मासि द्वादशी शुक्लपक्षजा ।
तस्यामभ्यर्चयेद्देवं पद्मनाभं सनातनम् ॥१
तस्मिन्सौवर्णकं देवं पद्मनाभं तु विन्यसेत् ।
तमेव देवं सम्पूज्य गंधपुष्पादिभिः क्रमात् ॥२
प्रभातायां तु शर्वर्यां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
एवं कृते तु यत्पुण्यं तन्निबोध महामते ॥३
आसीत्कृतयुगे राजा भद्राश्वो नाम वीर्यवान् ।
यस्य नाम्नाभवद्वर्षं भद्राश्वं नाम नामतः ॥४
तस्यागस्त्यः कदाचित्तु गृहमागत्य सत्तमः ।
उवाच सप्तरात्रं तु वसामि भवतोगृहे ॥५
तं राजा शिरसा नत्वा स्थीयतमित्यभाषत ।
तस्य कान्तिमती नाम भार्या परमशोभना ॥६
राजा तु तस्या मुदितं मुखमेवान्वलोकयत् ।
एवम्भूतामथो दृष्ट्वा राज्ञीं परम शोभंनाम् ॥७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

साधु साधु जगन्नाथे त्याहागस्त्यः प्रहर्षितः ।
द्वितीये दिनसेऽप्येवं राज्ञीं दृष्ट्वा महाप्रभाम् ।।८

इसी भाँति आश्विन मास में शुक्ल पक्ष में होने वाली द्वादशी होती है। उस द्वादशी तिथि में सनातन प्रभु पद्म भस्म का अर्चन करना चाहिए ।। १ ।। उसमें सुवर्ण निर्मित पद्म नाम की प्रतिभा का विन्यास करे। उन देव की क्रम से गन्ध पुष्प आदि से पूजा करे ।। २ ।। प्रातः कालीन रात्रि में ही उसका दान ब्राह्मण को दे देना चाहिए। महामते ! ऐसा विधान करने पर जो पुण्य होता है उसका श्रवण आप मुझसे करिए। कृतयुग में एक भद्राश्व नामक वीर्य वाला राजा था। जिसके नाम से भद्राश्वभामक वर्ष हुआ है ।। ३ ।। ४ ।। किसी समय में उस राजा के गृह में परम श्रेष्ठ मुनि अगरस्त्य समागत हुए थे। और उनने आकर यही कहा था कि मैं सात रात्रि तक आपके घर में ही निबास करूंगा ।। ५ ।। राजा ने उनको शिर से प्रणाम किया और यही निवेदन किया था कि आप यहाँ पर ही रहिए। उस राजा की कान्तिमती नाम वाली परम सुन्दरी भार्या थी ।। ६ ।। राजा ने उसका प्रसन्न मुख ही देखा था इस प्रकार की परम शोभना सती को देखकर हे जन्माथ ! अच्छा है—अच्छा है—यही मर्हाषित होकर अगस्त्य मुनि ने कहा था। दूसरे दिन में भी इसी तरह से राज्ञी को जो महान् प्रभाव वाली थी देखा था ।।७।।८।।

अहो मुष्टमहो मुष्टं जगदेतच्चराचरम् ।
इत्यगस्त्यो द्वितीयेऽह्नि राज्ञीं दृष्ट्वाभ्युवाच ह ।।९
तृतीयेऽहनि तां दृष्ट्वा पुनरेवमुवाच ह ।
अहो मूढा न जानन्ति गोविन्दं परमेश्वरम् ।।१०
य एकेन दिनेनैव राज्ञस्तुष्टः प्रदत्तवान् ।
चतुर्थे दिवस हस्तावुत्क्षिप्य पुनरब्रवीत् ।।११
साधु साधु जगन्नाथ स्त्री शूद्राः साधु साध्विति ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

द्विजाः साधु नृपाः साधु वैश्या साधु पुनः पुनः ।।१२
साधु भद्राश्व साधुस्त्वं साधु भोऽगमस्त्य साधु ते ।
साधु प्रह्लाद साधुस्ते ध्रुव साधो महाव्रत ।।१३
एवमुक्त्वा ननर्त्तोच्चैरगस्त्यो राजसन्निधौ ।
एवम्भूतं च तं दृष्ट्वा सपत्नीको नृपोत्तमः ।।१४

द्वितीय दिन में राज्ञी को देखकर अगस्त्य मुनि ने यही कहा था कि यह चराचर जगत् ओहो ! भ्रष्ट हो गया है ।।६।। तीसरे दिन में भी उस रानी को देखकर फिर भी उन्होंने यही कहा था कि अहो ! ये मूढ़ जन हैं जो परमेश्वर गोविन्द को नहीं जानते हैं ।।१०।। वह एक एक ही दिन में राजा से बहुत प्रसन्न हुए और प्रदान किया था। चौथे दिन में मुनि ने दोनों हाथों को उठा कर फिर वे बोले थे ।।११।। हे हे जगन्नाथ ! साधु—साधु—स्त्री और शूद्र भी साधु हैं । द्विज साधु हैं । द्विज साधु हैं—नृप साधु हैं और वैश्य बारम्बार साधु हैं ।।१२।। हे भद्राश्व ! आप साधु (अच्छे) हैं । और तेरे यह अगस्त्य भी साधु हैं । हे महाव्रत ! प्रह्लाद साधु है और ध्रुव साधु हैं । इस प्रकार से कहकर वह अगस्त्य मुनि राजा के समीप में ही बड़े जोर से नृत्य करने लगे थे । इस प्रकार से नाचते हुए उनको देखकर पत्नी के साथ राजा को बड़ा विस्मय हुआ था ।।१३।।१४।।

किं हर्ष कारणम् ब्रह्मन्येनेत्थं नृत्यते भवान् ।
कथयस्व महाभाग यद्यनुग्रहकृद्भवान् ।।१५
इयं राज्ञी पुरा चाभूद्दासी वैशस्य वै गृहे ।
नगरे हरिदत्तस्य त्वमस्याः पतिरेव च ।।१६
तस्यैव कर्मकारोऽभूद् शूद्रः सेवनतत्परः ।
स वैश्यऽश्वयुजे मासि द्वादश्यां नियतः स्थितः ।।१७
स्वयंविष्णवालयं गत्वा पुष्पधूपादिभिर्हरिम् ।
अभ्यर्च्य स्वगृहं प्रायाद्भवन्तौ रक्षपालकौ ।।१८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्थाप्य द्वा पति दीपानां ज्वलनार्थं महामते ।
गतेवैश्ये भवन्तौ तौ दीपान्प्रज्वाल्य संस्थितौ ॥१६

राजा ने उनसे कहा था—हे ब्रह्मन् ! क्या कारण है जिससे आप इस तरह नृत्य कर रहे हैं ? यदि आप मेरे ऊपर कृपालु हैं तो हे महाभाग ! इसको मुझे बतलाइये ॥१५॥ मुनि ने राजा से कहा था—पहिले यह रानी वैश्य के गृह में दासी थी और यह हरिदत्त के नगर में रहती थी और आप ही इसके पति थे ॥१६॥ उसका ही कर्मकार सेवा में तत्पर शूद्र था। वह वैश्य आश्विन मास में द्वादशी में नियत होकर स्थित रहा था। वह स्वयं भगवान् विष्णु के आलय मे जाकर पुष्प गन्धादि के द्वारा हरि का अर्चन करने वाला हुआ था। वह फिर अपने घर में चला गया था। आप दोना रक्षा करने वाले पालक थे। द्वार पर दीपों को स्थापित करके जो हें महामते ! जलाने के ही लिये थे। उस वैश्य के चले जाने पर आपने दीपों को जलाया था और वहीं पर स्थित हो गये थे ॥१७॥१८॥१९॥

तेन पुण्येन ते जन्म प्रियव्रत गृहेऽभवत् ।
इयं पत्नी तु ते जाता पुरा वैशस्य दासिका ॥२०
परक्य स्यापि दीपस्य ज्वलितस्य हरेर्गृहे ।
यः पुनः स्वेन वित्तेन विष्णोरग्रे प्रदीपकम् ॥२१
ज्वालयेत्तस्त यत्पुण्यं तत्संख्यातुं न शक्यते ।
तेन साधोहरे साधु चेत्युक्तं वचनं मया ॥२२
द्वादशी पद्मनामस्य राजा स विधिना ततः ।
उपोष्य परमं काममिह जन्मनि चाप्तवान् ॥२३

उसी पुण्य के प्रभाव से आपका जन्म प्रिय व्रत को घर में हुआ था। जो पहिले वैश्य की दासी थी यही आपकी पत्नी हुई थी ॥२०॥ भगवान् हरि के गृह में पारक्य दीप के ज्वलित होने का ऐसा पुण्य है तो फिर अपने निमित्त से भगवान् विष्णु के आगे दीप जलावे उसका जो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुण्य होता है वह तो कहा ही नहीं जा सकता है ॥२१॥२२॥ इसी से मैंने यह कहा था कि साधो ! साधु है। आश्विन मास की द्वादशी को उस राजा ने विधि के साथ उपवास किया था और परम कामना उसने इसी जन्म में प्राप्त की थी ॥२८॥

५०-धरणी व्रत

गत्वा तु पुष्करं तीर्थमगस्त्यी मुनि पुङ्गवः ।
कार्त्तिक्यामाजगामाशु पुनर्धद्राश्व मंदिरम् ॥१
तमागतं मुनिं प्रेक्ष्य राजा परम धार्मिकः ।
अर्घपाद्यादिभिः पूज्य कृतासन परिग्रहम् ॥२
उवाच हृषितो राजा तमृषि संशितव्रतम् ।
भगवन् कथितं पूर्वं त्वया ऋषिवरोत्तम ॥३
अखिने मास द्वादश्यां विधानं तत्कृतं मया ।
इदानीं कार्त्तिके मासि यत्स्यात्पुण्यं वदस्व मे ॥४
कार्तिकी द्वादशी राजनरुक्ता परमपावनी ।
उपोष्य विधिनायेन यच्चास्याः प्राप्यते फलम् ॥५

मुनियों में परम श्रेष्ठ अगस्त्य की पुष्कर तीर्थ में जाकर कार्त्ति की पूर्णिमा में वे फिर भद्राश्व के मन्दिर में शीघ्र ही समागत हो गये थे ॥१॥ उन मुनिवर के समागत हुए देखकर परम धार्म्मिक राजा ने अर्घयाद्यादि मे मुनि की पूजा की थी और आसन पर विठाया था ॥२॥ उन संशित व्रत मुनि से परम प्रसन्न होकर कहा था—हे ऋषियों में श्रेष्ठ तथा उत्तम ! आपने पूर्व में कहा था ॥३॥ आश्विन मास में द्वादसी का ऐसा विधान है। मैंने उसको किया था अब इस कार्त्तिक मास में जो भी पुण्य कार्य हो अब आप मुझको उसे भीं वतलाइए ॥४॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मुनि ने कहा—हे राजन् ! यह कार्त्तिक मास की द्वादशीं भी परम पावनी होतीं है। इसमें उपवास करके और विधि के साथ सम्पन्न करने पर जो भी इसका फल प्राप्त किया जाता है ॥५॥

तदहं संप्रवक्ष्यामि श्रृणोत्वयहितो भवान्।
पूर्वोक्त विधिना सन्यक्संकल्प्य स्नानमाचरेत्।
तमेव पूजयेद्देवं नारायणमकल्मषम् ॥६
एवं दत्त्वा विधानेन द्वादश्या विष्णुमर्च्यं च।
विप्राणां भोजनं दद्याद्यायाशक्ति सदक्षणिम् ॥७
धरणी व्रत मेतद्धि पुराकृत्वा प्रजापतिः।
प्राजापत्यं तथा लेभे मुक्ति ब्रह्म च शाश्वतम् ॥८
य इदं श्रृणुयाद्भक्त्या यश्च कुर्यान्नरोत्तमः।
सर्वपाप विनिमुक्तो विष्णु सापुज्यमाप्नुपोत् ॥९

मैं उसको बतलाता हूँ आप परम सावधान होकर उसका श्रवण कीजिए। पूर्व में वर्णित विधि से ही भली भाँति संकल्प करके स्नान करना चाहिए। फिर उन्हीं अकल्मष नारायण देव की पूजा करनी चाहिए ॥ ६ ॥ इस तरह से विधान से लेकर और द्वादशी में भगवान् विष्णु का अर्चन करके अपनी शक्ति के अनुसार विप्रों को भोजन करावे तथा दक्षिणा देनी चाहिए ॥ ७ ॥ यह धरणी व्रत है। पूर्वकाल में प्रजापति ने इसको किया था। उसने इसी के प्रभाव में प्रजापत्य पद की प्राप्ति की थी। और फिर मुक्ति तथा शाश्वत ब्रह्म का लाभ प्राप्त किया था ॥ ८ ॥ जो इस धरणी ब्रत का भक्ति की भावना से श्रवण किया करता है और जो श्रेष्ठ नर इसको किया करता है वह सब पापों से मुक्त होकर भगवान् विष्णु के साम्राज्य की प्राप्ति करता है ॥ ९ ॥

—:※:—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

५१–अगस्त्य–गीता

बहुकल्प सहस्राणि व्रतस्यास्य सनातन ।
मय कृतस्य तपसस्तन्मया विस्मृतं प्रभो ॥१
इदानीं त्वत्प्रसादेन पाक्तनं स्मारितं मम ।
जातं जातिस्मरत्वं च विशोका परमेश्वर ॥२
अगस्त्य पुनरागत्य भद्राश्वस्य निवेशनम् ।
यच्चकार स राजा तु तन्ममाचक्ष्व भूधर ॥३
प्रत्यागतमृषिं दृष्ट्वा भद्राश्वः श्वेतवाहनः ।
वरासन गतं दृष्ट्वा कृत्वा पूजां विशेषतः ॥४
अपृच्छन्मोक्ष धर्माख्यं प्रश्नं सकल धारिणि ।
भगवन् कर्मणा केन छिद्यते भवसंसृतिः ॥५
किं वा कृत्वा न शोचन्ति मूर्त्तामूर्त्तोपपत्तिषु ॥६
शृणु राजन् कथां दिव्यां दूरासन्न व्यवस्थिताम् ।
दृश्यादृश्यविभागोत्थां समाहितमना नृपः ॥७

बहुत से सहस्र कल्प हो गये हैं । हे सनातन ! इस ब्रत को मेरे किये हुए तप से हे प्रभो ! मुझे विस्मरण हो गया है। अर्थात् मैं भूल गया हूँ ॥ १ ॥ इस समय में आपके ही प्रसाद से मुझे उसका स्मरण हो गया है । हे परमेश्वर ! आप तो विशोक हैं । मुझे अब जाति का स्मरण भी हो गया है ॥ २ ॥ हे भूधर ! अगस्त्य मुनि ने फिर भद्राश्व के घर में समागत होकर जो किया था और उस राजा ने जो कुछ किया था वह आप कृपा कर मुझे बतलाइये ॥ ३ ॥ श्वेत वाहन भद्राश्व ने पुनआगत हुए उनका दर्शन करके वरासन किया था और फिर विशेष रूप से उनका अभ्यर्चन किया था ॥ ४ ॥ हे संकल्पों को धारण करने वाली ! उसने उन मुनिवर से मोक्ष धर्म नामक प्रश्न पूछा था । उन्होंने पूछा था—हे भगवन् ! आप कृपा करके यह बतलाइये कि किस कर्म के करने से इस संसार का बन्धन का छेदन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

होता है ।। ५ ।। मूर्त्त और अमूर्त्त की उपपत्ति में क्या करके सोच नहीं किया करते हैं ।। ६ ।। हे राजन् ! दूरासन्न व्यवस्थित कथा का आप श्रवण कीजिए । राजा आप समाहित मन वाले होकर इस दृश्य अदृश्य के विभाग से उत्थित कथा को सुनिए ।। ७ ।।

नाहो न रात्रिर्न दृशो दिशश्च न द्यौर्न देवानदिनं न सूर्यः ।
तस्मिन्काले पशुपालेति राजा स पालयामास पशूननेकान् ।।८
तान्पालयन् स कदाचिद्दिदृक्षु पूर्वं समुद्रं च जगाम तूणम् ।
अनन्तपारस्य महोदधेस्तु नीरे वनं तत्र वसन्ति सर्पाः :।६
अष्टौ द्रुमाः कामवहा नदी च तीर्यक् चोर्द्धं वभ्रमुस्तत्र चान्ये ।
पंच पधानाः पुरुषास्तथैकः स्त्रियं विभ्रते तेजसा दीप्यमानाम्
।।६

सापि स्त्री स्वे वक्षासि धारयन्ती सहस्र सूर्यप्रतिमं विशालम् ।
तस्याधरस्त्रि विकारस्त्रि वर्णस्तं राजानं पश्य परिभ्रमन्तम् ।।१०
तूष्णीम्भुता मृतकल्पा इवासन्नृपोऽप्यसौ तद्वनं सविवेश ।
तस्मिन्प्रविष्टे विविशुः सर्व एते भयादैक्यं गतवन्तः क्षणेन । ११
तैः सर्पैः स नृपो दुर्विनीतैः संवेष्टितो दस्युभिश्चिन्तयानः ।
कथ चैते न भविष्यन्ति येन कथ चैते संस्मृतः सम्भवेयुः ।।१२
एवं राज्ञश्चिन्तयस्त्रिवर्णः पुरुषोऽपरः ।
श्वेतं रक्तं तथा पीतं त्रिवर्णं धारयन्नरः ।।१३
स संज्ञां कृतवान्मह्यमपरोऽथक्व यास्यसि ।
एवं तस्य ब्रुवाणस्य महन्नाम व्यजायत ।।१४

न दिन है—न रात्रि है—न दृश हैं और न दिशाऐं हैं—न द्यौ हैं—न देव हैं और न सूर्य ही है । उस समय में पशुपाल—इस नाम वाला राजा था जो अनेक पशुओं का पालन किया करता था ।। ८ ।। उनका पालन करते हुए उसको किसी समय में देखने की इच्छा हुई थी और वह शीघ्र ही समुद्र पर चला गया था । वह समुद्र अनन्त पार वाला

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

था। उसके तटपर सर्प वन में निवास किया करते हैं ।। ८ ।। वहाँ पर कामनाओं को वहन करने वाले आठ वृक्ष थे। और एक नदी थी! अन्य सब तिरछे और ऊपर श्रमण कर रहे थे। वहाँ पर पाँच प्रधान पुरुष थे और तेज से दीपभान एक स्त्री का विभरण करते थे ।। ९ ।। वह स्त्री भी अपने वक्ष. स्थल में सहस्र सूर्यों के समान विशाल को धारण किये हुए थी। उसका अधर तीन विकारों से युक्त था और तीन वर्णों वाला था। उसने जहाँ पर परिभ्रमण करते राजा को देखा था। वे सब चुप हुए मृत के समान ही हो गये थे। इस राजा ने भी उस वन में प्रवेश किया था। उस राजा के प्रवेश करने पर वे सब एक ही क्षण में एकता को भय के कारण प्राप्त हो गये ।। १० ।। ११ ।। दस्युओं से चिन्तन करते हुए उस राजा को उन दुर्विनीत सर्पों के द्वारा सर्वोपष्ट कर लिया था। ये कैसे नहीं होंगे—इन्होंने मेरा कैसे स्मरण किया है— इस तरह से राजा चिन्तन ही कर रहा था कि एक दूसरा तीमवर्णों वाला पुरुष वहाँ आया था जो रक्त—पीत और श्वेत तीन वर्णों का धारण किये हुए नर था। उसने मेरा नाम लिया था और पूछा था कि कहाँ जाओगें। इस तरह से बोलते हुए उसको एक महान् नाम उत्पन्न हो गया था ।। ११—१४ ।।

तेनापि राजा संवीतः स वुध्यस्वेति चाब्रवीत् ।
एवमुक्ते ततः स्त्री तु तं राजानं रुरोधह ।।१५
मायाततं तं मा भैष्ट ततोऽन्यः पुरुषोनृपम् ।
संवेष्टयास्थितवान्वीरस्ततः सर्वेश्वरेश्वरः ।।१६
ततोऽन्ये पंच पुरुषा आगत्य नृपसत्तमम् ।
संवेष्ट्य संस्थिताः सर्वे ततो राजावरोधितः ।।१७
रुद्धा राजन्नितः सर्वे एकीभूतास्तु दस्यवः ।
मथितं शस्त्रमादाय लीनान्योऽन्यं ततो भयात् ।।१८
तैर्लीनैर्नृपतेः वेश्म वभौ परम शोभनम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्येषामपि पापानां कोटि साग्राभवन्नृप ।।१६
गृहे भूः सलिलं वह्निः सुख शीतश्च मारुतः ।
सावकाशानि शुभ्राणि पंचैक्ये सुगुणानि च ।।२०
एकैव तेषां सुचिरं संवेष्टयासज्य संस्थितम् ।
एवं स पशुपालोऽसौ कृतवानञ्जसा नृप ।।२१

उसके द्वारा भी राजा संवीत कर लिया गया था । और समझो-यह उसने कहा था । ऐसा कहने पर उस स्त्री ने उस राजा को रोक लिया था ।। १५ ।। माया से घिरे हुए उस राजा से अन्य पुरुष ने कहा—डरो मत । वह वीरेश्वरेश्वर नीर ने राजा को संवेष्टित करके वह आस्थित हो गया था ।। १६ ।। इसके अनन्तर दूसरे पाँच पुरुषों ने वहाँ पर आकर उस नृप श्रेष्ठ को संवेष्टित कर लिया था और सब वहाँ पर संस्थित हो गये । तब राजा अवरोधित हो गया था ।। १७ ।। हे राजन् ! सब दस्युगण एकीभूत होकर रुद्ध हो गये थे । वे मथित शस्त्र को लेकर फिर वे भय से अन्य में लीन हो गये थे ।। १८ ।। उनके लीन होने से राजा का एक परम शोभन हुआ था । अन्य पापों का भी हे नृप ! कोटि साग्र हो गया था ।। १६ ।। गृह में भूमि—जल—अग्नि और सुखद शीत वायु था । सावकाश शुभ्र और सुगुण थे जब पौधों—का-—ऐका हो गया था । एक ही बहुत समय तक संवेष्टन और आसन्नम करके संस्थित था । हे नृप ! इस तरह से पशु पालने तुरन्त किया था ।। २०—२१ ।।

तस्य तल्लाघवं दृष्ट्वा रूपे च नृपतेमधे ।
त्रिवर्णः पुरुषो राजन्नब्रवीत् राजसत्तमम् ।।२२
अपुत्रोऽस्मि महाराज ब्रूहि किं करवणि ते ।
अस्माभिर्बद्धुमिच्छंद्भिः भवन्तं निश्चयः कृतः ।।२३
यदि नाम कृताः सर्वे वय देव पराजितः ।
एवमेव शरीरेषु लीनस्तिष्ठाम पार्थिव ।।२४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मय्येके तव पुत्रत्वं गते सर्वेषु सम्भवः ।
एवमुक्तस्ततो राजा तं नरं पुनरब्रवीत् ॥२५
पुत्रो भवति मे कर्ता अन्येषामपि सत्तम ।
पुष्यन् सुखैः नरैर्भावैर्नाहं लिप्से कदाचन ॥२६
एवमुक्त्वा स नृपतिस्तमात्मजमथाकरोत् ।
तैर्विमुक्तः स्वयं तेषां मध्ये स विरराम ह ॥२७

इसके अनन्तर उसके उस ताधव देखकर और राजा के रूप को देखकर हे राजन् ! वह तीन वर्णों वाला पुरुष राजा से बोला—॥२२॥ हे महाराज ! मैं पुत्र हीन हूँ। अब आप बतलाइये मैं आपका क्या करूँ। हमने आपको बाँधने का निश्चय किया है ॥ २३ ॥ हे देव ! हम सब पराजित किये हुए हैं। हे राजन् ! इसी प्रकार से शरीरों में लीन हुए हम स्थित रहा करते हैं ॥ २४ ॥ मुझमें तुम्हारे पुत्र त्व के प्राप्त होने पर सवों में सम्भव है। जब राजा से ऐसा कहा गया था तो उस मनुष्य ने कहा था ॥ २५ ॥ हे श्रेष्ठतम ! कर्त्ता मेरा पुत्र होता है और अन्यों का भी होता है। नरों को सुखों से और भावो से पोषण करते हुए होता है। मैं कभी भी नहीं चाहता हूं ॥२६॥ उस राजा ने ऐसा कहकर अपने आपको वैसा ही किया था। उनके द्वारा विमुक्त होकर उसने उनको मध्य में विराम किया था ॥ २७ ॥

५२—अगस्त्य गीता (२)

स त्रिवर्णो नृपः सृष्टः स्वतंत्रत्वाच्च पार्थिव ।
अहं नामानमसृजत्पुत्रं पुत्रस्त्रिवर्णक ॥१
तस्यापि च भवत् कन्याप्यवबोध स्वरूपिणा ।
सा तु विज्ञानदं पुत्रं मनोज्ञं विससर्ज ह ॥२
तस्यापि सर्वरूपाः स्युस्तनयाः पंचभोगिनः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यथा संख्येन पुत्रास्तु ते स्युरक्षाभिधानकाः ॥३
एते पूर्वं दस्यवस्तु ततो राज्ञा वशीकृताः ।
अमूर्त्ता इव ते सर्वे चक्रुराशतनं शुभम् ॥४
नवद्वारं पुरं तस्य त्वोक स्तम्भं चतुष्पथम् ।
नदी सहस्र संकीर्ण जलकृत्य समश्रितम् ॥५
तत्पुरं ते प्रविविशुरेकीभूताः ततो नव ।
पुरुषो मूर्तिमान् राजा पशुपालोऽभवत् क्षणात् ॥६
ततस्तत्पुर संस्थस्तु पशुपालो महानृपः ।
संसूच्यवाचकान् शब्दान् वेदान् सस्मार तत्पुरे ॥७
आत्म स्वरुपिणो नित्यांस्तदुक्तानि व्रतानि च ।
नियमान्क्रतवश्चैव सर्वान् राजा चकार ह ॥८

हे पार्थिव ! स्वतन्त्रता होने से वह त्रिवर्ण नृप सृजन किया गया था। त्रिवर्णक पुत्र ने अहं नाम वाले पुत्र का सृजन किया था। और उसके भी अब वोध स्वरूप वाली कन्या हुई थी। उसने मनोज्ञ विज्ञानद पुत्र का सृजन किया था ॥ १ ॥ २ ॥ उसके भी सब रूप पंच भोगी पुत्र हुए थे। यथा संख्य से वे पुत्र अक्षाभिधा तक हुए थे। ये सब पहिले दस्यु थे इसीलिये राजा के द्वारा वशीकृत हुए थे। वे सब अमूर्त्त की ही तरह थे और उन्होंने परम शुभ आयतन किया था ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ उसका पुर नौ द्वारों वाला था और लोक स्तम्भ तथा चतुष्य यथा नदी सहस्र से संकीण था तथा जल कृष्य के समाश्रित था ॥ ५ ॥ उसके पुर में वेनौ एकीभूत होकर प्रविष्ट हुए थे। पुरुष मूर्त्तिमान् क्षण भर में पशुपाल राजा हुआ था ॥ ६ ॥ इस अनन्तर उस पुर में समवस्थित पशुपाल महान् नृप था। उसके पुर में वाचक शब्दों वाले वेदों को संसूचित करके स्मरण किया था और आत्म स्वरूप नित्यों को और उनके कथित किये हुओं को वह प्रमाण मानता था। सब नियमों को और कतुओं को राजा किया था ॥७—८॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स कदाचिन्नृपः खिन्नः कर्मकाण्डमरोचयत् ।
सर्वज्ञो योगनिद्रायां स्थित्वा पुत्रं ससर्ज ह ॥६
चतुर्वक्त्रं चतुर्बाहु चतुर्वेदं, चतुष्पथम् ।
तस्मादारभ्य नृपतेर्विषयः स्वपदा स्थितः ॥१०
तस्मिन्समुद्रे स नृपो वने तस्मिंस्तथैव च ।
तृष्णादिषु नृपश्चैव हस्त्यादिषु तथैव च ॥११

किसी समय में वह राजा खिन्न हो गया था और उसने कर्म काण्ड को पसन्द किया था। वह सर्वज्ञ योग निद्रा में स्थित हो गया था और उसने पुत्र को सब छोड़ दिया था ॥ ६ ॥ चार मुख वाले—चार बाहुओं वाले—चार वेदों वाले—चार मार्ग वाले से आरम्भ करके उस नृपति का स्व पद में समास्थित विषय हो गया था ॥ १० ॥ वह राजा उस समुद्र में और उस वन में तृणादिक में और हस्ती आदि में उसी प्रकार का हो गया था ॥११॥

५३--पशुपाल आख्यान

मत्प्रश्न विषये ब्रह्मन् कथेयं कथिता त्वया ।
तस्याविर्भूतिरभवत् कस्य केन कृतेन ह ॥१
आगतेयं कथा चित्रा सर्वस्य विषये स्थिता ।
तद्देहे मम देहे च सर्वजन्तुषु सा समा ॥२
तस्याः सम्भूतिमिच्छन्त्यस्तस्योपायं स्वयं परम् ।
पशुपालात् समुत्पन्नो यश्चतुष्पाच्चतुर्मुखः ॥३
स गुरुः स कथायास्तु तस्यश्चैव प्रवर्तकः ।
तस्य पुत्रः स्वरो नाम सत्यमूर्तिरसौ स्मृतः ॥४
तेन प्रोक्तं तु यत्किंचिच्चतुर्णां साधनं नृप ।
ऋगर्थानां चतुर्भिस्तैः तद् भक्त्याराध्यतो ययः ॥५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चतुर्णां प्रथमो यस्तू चतु: शृंग: समास्थित: ।
वृष द्वितीयस्तत् प्रोक्त मार्गेणैव तृतीयका ।
चतुर्थस्तत्प्रणीतस्तां पूज्य भक्त्याशुतं व्रजेत् ॥६
सप्त मूर्त्तेस्तु चरितं शुश्रुवु: प्रथमं नृप ।
ब्रह्मचर्येण द्वितीयोऽस्य सनातन: ॥७

हे ब्रह्मन् ! आपने मेरे प्रश्न के दिषय में यह कथा कही है। उसकी आविर्भूति किससे हुई थी और किसने की थी ॥ १ ॥ यह कथा बहुत ही विचित्र आई है, यह तो सबके विषय में स्थित है। उसके देह में और मेरे देह में और वह सभी जन्तुओं में समान रूप से स्थित है ॥ २ ॥ जो उसकी सम्भूति की इच्छा करता हुआ उसका परम उपाय स्वयं किया था। जो चार पदो और चार मुखों वाला पशुपात से ही सतुत्पन्न हुआ था ॥ ३ ॥ वह उस कथा का गुरु था और उसी का प्रवर्त्तक था। उसका पुत्र स्वर नाम वाला था जो सत्य मूर्त्ति कहा गया था ॥४॥ हे नृप ! उसमें जो कुछ भी चारों का साधन कहा था। चार ऋृजाओं के अर्थों से वे भक्ति से आराध्यता को प्राप्त हुए थे ॥ ३—५ ॥ जो चारों में प्रथम था वह चार भृङ्ग समवस्थित था। वह द्वितीय वृष कहा गया है और मार्ग के द्वारा ही तृतीय का है। चतुर्थ उसका प्रणीत है उसका भक्ति से पूजन करके शीघ्र ही उसको गमन किया करता है ॥ ६ ॥ हे नृप ! सत्य मूर्त्ति का चरित प्रथम श्रवण किया था ब्रह्मा-चर्य से इसका द्वितीय सनातन है ॥ ७ ॥

ततो भृत्यादि भरणं वृषभारोहणं नृषु ।
वनवासश्च निर्दिष्ट आत्मस्थे वृषभे सति ॥८
अहमस्मिन् वदत्यन्यश्चतुर्द्धा चैकधा द्विधा ।
भेदभिन्नसहोत्पन्ना: तस्यापत्यानि जज्ञिरे ॥९
नित्यानित्य स्वरूपाणि दृष्ट्वा पूर्वं चतुर्मुख: ।
चिन्तयामास जनकं कथं पश्याम्यहं नृप ॥१०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मदीयस्य पितुर्ये हि गुणा ह्यासन्महात्मनः ।
न ते सम्प्रति दृश्यन्ते स्वरापत्येषु् केषुचित् ॥११
पितुः पुत्रस्य यः पुत्रः स पितामह नामकः ।
एवं श्रुतिः स्थिता चेयं स्वरापत्येषु नान्यथा ॥१२
क्वापि सम्पत्स्यते भावो द्रष्टव्यश्चापि ते पिता ।
एवं नीतेऽपि किङ्कार्यमिति चिन्तापरोऽभवत् ॥१३
तस्य चिन्तयतः शस्त्रं पैतृकं पुरतो वभौ ।
तेन पुत्रेण तं रोषान् ममन्थ स्वरमन्तिके ॥१४

वृषभ के आत्म रच होने पर इसके उपरान्त भृत्यादि का मरण-और नरों में वृषभ का आरोहण और वनवास निर्दिष्ट किया गया है ॥ ८ ॥ अन्य कहता है कि मैं इसमें मैं एक प्रकार से—दो प्रकार से और चार तरह से हूँ। उससे अभिन्न और साथ ही समुत्पन्न उसकी सन्ततियाँ गईं थीं ॥ ९ ॥ पूर्व में चतुर्मुख ने नित्य स्वरूपों को देखकर यह चिन्तन किया था कि हे नृप ! मैं जनक को कैसे देखूं ॥ १० ॥ जो मेरे पिता के गुण थे वे ही इस महात्मा के थे । वे इस समय में किन्हीं अपलों में नहीं दिखलाई देते हैं ॥ ११ ॥ पिता के पुत्र के जो पुत्र है वह पितामह नाम वाला है। इस प्रकार की श्रुति स्थित है और यह स्वरापत्यों में है अन्यथा नहीं है ॥ १२ ॥ कहीं पर भी यह भाव होगा और तेरे पिता को भी देखना चाहिए। इस तरह से लेने पर भी क्या करना चाहिए—इसी चिन्ता में वह तत्पर हो गया था ॥ १३ ॥ इस प्रकार से चिन्तन करते हुए उसके आगे पैशक शस्त्र शोभित हुआ था। उस पुत्र ने अन्तिक में स्वर को रोष से उसका मन्थन किया था ॥१४॥

तस्मिन् मथित मात्रे तु शिरस्तस्याति दुर्ग्रहम् ।
नारिकेल फलाकारं चतुर्वक्त्रोऽन्वपश्यत् ॥१५
तच्चावृतं प्रधानेन दशधा संवृतो वभौ ।
चतुष्पादेन शस्त्रेण चिच्छेद तिलकाण्डवत् ॥१६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रकामं तिलशश्छिन्ने तदमूलो न मे वभौ ।
अहं त्वहं वदन्भूतं तमप्येवमथाच्छिनत् ।।१७
तस्मिन् भागे दृशं कृत्वा ह्रस्वमन्यमवेक्षत ।
अहं भूतादिवः पञ्च वदन्तं भूतिमन्तिकात् ।।१८
तमप्येवमथो छित्व पञ्चासून्यान् ददर्श सः ।
कृत्वावकाशं ते सर्वे ज्वलन्त इदमन्तिकात ।।१९
तमप्य सङ्ग शस्त्रेण चिच्छेद तिलकाण्डवत् ।
तस्मिश्छिन्ने दशांशेन ह्रस्वमन्यमपश्यत ।।२०
पुरुषं रूपशस्त्रेण तंछित्त्वान्यमपश्यत ।
तद्वद् ह्रस्वं सितं सौम्यं तमप्येवं तथाकरोत् ।।२१

उसके मन्मथ करने मात्र में ब्रह्मा ने उसका दुर्ग्रह शिर भी जो नारियल के फल के आकार वाला था देखा था ।। १५ ।। और वह प्रधान से आवृत होकर दश प्रकार से संवृत होता हुआ शोभित हुआ था । उसको चतुष्पाद शस्त्र से तिलकाण्ड की तरह छेदन कर दिया था ।। १६ ।। खूब अच्छी तरह से तिल-तिल के छेदन कराने पर भी उसका मूल मुझें शोभित नहीं दिखाई नहीं दिया था । मैं —मैं इस तरह से कहते हुए उसका भी इस प्रकार से छेदन किया था ।। १७ ।। उसमें इस तरह का भाग करने पर अन्य को बहुत ह्रस्व देखा था । मैं आपके पाँच भूतादि है—ऐसा कहते हुए को समीप की भूति को देखा था । उसको भी इसी तरह से छेदन करके उसने पाँच प्राणों को देखा था ।। १८—१९ ।। उसको की असङ्ग शास्त्र के द्वारा तिल काण्ड के ही समान छिन्न कर दिया था । दशांश से उसके छेदन करने पर उसने एक ह्रस्व अन्य को देखा था । रूप शास्त्र से उस पुरुष के छेदन करके उसने एक अन्य को देखा था । वह भी उसी की तरह ह्रस्व —सौम्य—सित था । फिर उसको भी उसी तरह से किया था । ।।२०—२१।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवं कृते शरीरं तु ददर्श स पुनः प्रभुः ।
स्वकीयमेव तस्यान्तः पितरं नृप सत्तम ॥२२
त्रसरेणु समं मूर्त्त्या त्वव्यक्तं सर्वजन्तुषु ।
समे दृष्ट्वा परं हर्षं वुभौ हि स स्वरोऽभवत् ॥२३
एवं विधोऽसौ पुरुषः स्वरनामा महातपाः ।
मूर्तिस्तस्य प्रवृत्ताख्यं निवृत्ताख्यं शिरो महत् ॥२४
एतस्मादेव तस्याशु कथया राजसत्तम ।
सम्भूतिरभवद्राजा विवृतस्त्वेष एवत् ॥२५
एषेतिहास प्रथमः सर्वस्य जगतो भृशम् ।
य इमं वेत्ति तत्त्वेन साक्षात्कर्मपरो भवेत् ॥२६

इस प्रकार से करने पर उस प्रभु ने शरीर को देखा था। हे श्रेष्ठ नृप ! उसके अन्दर अपने ही पिता को देखा था जो मूर्त्ति से त्रसरेणु के समान था तथा सभी जन्तुओं में अव्यक्त था। वह मुझको देखकर परम हर्ष को प्राप्त हुआ था और निश्चय ही वह सस्वर हो गया था ॥ २२—२३ ॥ इस तरह का यह पुरुष था जो स्वर नाम वाला महातपस्वी था। उसकी मूर्त्ति प्रवृत्ताख्य और निवृताख्य महान् शिर था ॥ २४ ॥ हे राज श्रेष्ठ ! इसी से उसकी कथा से शीघ्र सम्भूति हुई थी। यह राजा विवृत ही था ॥२५॥ यह ही सबसे पहिला सम्पूर्ण जगत् का बड़ा इतिहास है जो इसको तात्विक रूप से जानता है वह साक्षात् कर्म परायण होता है॥२६॥

५४-उत्तम पति प्राप्त होने का व्रत

विज्ञानोत्पत्ति कामस्य क्व आराध्यो भवेद्द्विज ।
कथं चाराध्यतेऽसौ हि एतदाख्याहि भो द्विज ॥१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विष्णुरेव सदाराध्यः सर्वदेवैरपि प्रभुः ।
तस्योपायं प्रवक्ष्यामि ये नासौ वदरो भवेत् ॥२
रहस्यं सर्व वेदानां मुनीनां मनुजन्मनाम् ।
नारायणः परो देवन्तं प्रणम्य न सीदति ॥३
श्रूयते च पुरा राजन् नारदेन महात्मना ।
कथितं तुष्टिदं विष्णोर्व्रतमप्सरसां तथा ॥४
भगवन् ब्रह्मतनय भर्तृकामा वयं द्विज ।
नारायणश्च भर्त्ता नो यथा स्यात्तत्प्रचक्ष्व नः ॥५
प्रणाम पूर्वकः प्रश्नः सर्वत्र विहितः शुभः ।
स च मे न कृतो गर्वाद्युष्माभिः यौवनस्मयात् ॥६
तथापि देवदेवस्य विष्णोर्यन्नाम कीर्त्तितम् ।
भवतीभिस्तथा भर्त्ता भवत्विति वर कृतः ॥७

हे द्विज ! विज्ञान की उत्पत्ति की कामना वाले को कहाँ आराधना करने योग्य होता है और कहाँ पर किस प्रकार से आराधित किया जाया करता है—हे द्विज ! यही आप कहिए ॥ १ ॥ सभी देवों के द्वारा भीं वह प्रभु विष्णु ही समाराधन करने के योग्य होते हैं । अब मैं उसके आराधन करने का उपाय बतलाता हूँ जिससे वे प्रभु वरदान देने वाले होते हैं ॥ २ ॥ यह सब वेदों का रहस्य है और मुनियों का तथा मनुष्यों का भगवान् नारायण ही पर देव हैं । उनको प्रणाम करके मनुष्य कभी भी दुःख नहीं प्राप्त किया करता है ॥ ३ ॥ हे राजन् ! यह सुना जाता है कि पुराने समय में देवर्षि महात्मा नारदजी ने अप्सराओं को यह भगवान् विष्णु का व्रत बतलाया था । अप्सराओं ने नारद जी से कहा था—हे भगवन् ! आप तो ब्रह्माजी के पुत्र हैं । हम स्वामी की कामना वाली हैं । हे द्विज ! भगवान् नारायण हमारे भर्त्ता होवें—वही आप हमको बतलाइए ॥ ४—५ ॥ नारदजी ने कहा—प्रणामपूर्वक ही प्रश्न ही सर्वत्र शुभ करने वाला हुआ करता है । सो तुमने यौवन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के गर्व से मुझसे नहीं किया है। तो भी देवों के भी देव भगवान् विष्णु का जो नाम तुमने कहा है इसी से यह बर दिया जाता है कि आपके भर्त्ता नारायण होवेंगे ॥६—७॥

तन्नामोच्चारणा देव कृतं सर्वं न संशयः ।
इदानीं कथयाम्याशु व्रतं येन हरिः स्वयम् ।
वरदत्वमवाप्नोति भर्त्तृदत्वं नियच्छति ॥८
वसन्ते शुक्लपक्षस्य द्वादशी या भवेच्छुभा ॥९
तस्यामुपोष्य विधिवन्निशायां हरिमर्चयेत् ।
एवं कृत्वा प्रभाते तु दापयेद्ब्राह्मणाय च ॥१०
वेदवेदाङ्ग युक्ताय सम्पूर्णाङ्गाय धीमते ।
ब्राह्मणांश्च तथा पूज्य व्रतमेतत्समापयेत् ॥११

भगवान् के नाम के उच्चारण से ही यह सब देव के द्वारा किया हुआ होता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं हैं। इस समय में मैं एक व्रत वतलाता हूं जिसके करने से भगवान् हरि स्वयं ही शीघ्र ही वरदान दाता हो जाते हैं और भर्त्ता के देने वाले होकर वे भर्त्ता दिया करते हैं ॥ ८ ॥ बसन्त में शुक्ल पक्ष की जो शुभ द्वादशी होती है उसमें उपवास करके विधि-विधान के साथ उस दिन रात्रि में भगवान् हरि का भक्ति से अभ्यर्चन करे ऐसा करके प्रातःकाल में ब्राह्मण को दिलाना चाहिये जो ब्राह्मण वेदों और वेदाङ्गों का महान मनीषी हो तथा श्रीमान् और सम्पूर्ण अङ्गों से युक्त हो। ब्राह्मणों का पूजन करके ही इस व्रत को समाप्त करना चाहिए ॥ ९—११ ॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

५५–शुभ व्रत कथन

शृणु राजन्महाभाग व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
येन सम्प्राप्यते विष्णु शुभेनैव न संशयः ॥१
मार्गशीर्षस्य मासे तु प्रथमेऽह्नि समारभेत् ।
सिते पक्षे दशम्यां तु एकभक्तं समाचरेत् ॥२
ततो दशम्यां स्नात्वा तु मध्याह्ने विष्णुमर्चयेत् ।
भुक्त्वा सङ्कल्पयेत् प्राग्वद्द्वादशीमक्षतो नृप ॥३
विप्रेभ्यश्च यवान्दद्यात्तामुपोष्य विधानतः ।
सर्वदा च हरिर्वाच्यो दाने होमे तथार्चने ॥४
चातुर्मास्यमथैवं तु क्षपित्वा राजसत्तम ।
चैत्रादिषु पुनस्तद्वदुपोष्य प्रयतः सुधीः ॥५
सक्तु पात्राणि दद्यात्तु विप्रेभ्यः प्रीतिपूर्वकम् ।
श्रावणादिषु मासेषु शालीर्दद्यात्प्रयत्नतः ॥६
त्रिषु मासेषु यावच्च कार्तिकस्तादि रागतः ।
तमप्येवं क्षापित्वा तु दशम्यां प्रयय: शुचिः ॥७

हे महाभाग ! हे राजन् ! अत्र आप अतीव उत्तम व्रतों में अत्युत्तम व्रत का श्रवण कीजिए । जिस परम शुभ व्रत को करने से भगवान् विष्णु की प्राप्ति की जाती है—इसमें कुछ भी संशय नहीं हैं । ॥१॥ यह व्रत मार्ग शीष मास में प्रथम ही दिन मे आरम्भ करना चाहिए सित पक्ष में दशमीं तिथि में एक भक्त का समाचरण करना चाहिए । फिर दशमीं मे स्नान करके मध्याह्न काल में भगवान् विष्णु का अभ्यर्चन करे । भोजन करके पूर्व की ही भाँति हे धृप ! अक्षता द्वादशी का संकल्प करना चाहिए । उसका व्रत करके विप्रों को यव विधान से देवे । दान में—होम मे तथा अर्चन में सर्वदा हरि भगवान् का ही नाम बोलना चाहिए ॥२॥३॥४॥ हे नृप श्रेष्ठ ? चार मासो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को इसी तरह से बिताकर चैत्र आदि में पुनः सुधी प्रयत होकर उपवास करे। और उसी भाँति करना चाहिए। सक्तु के पात्रों को विप्रों के लिये प्रीति के साथ देना चाहिए। श्रावण आदि मासों में प्रयत्न से शाली देवें ॥५,।६॥ जब तक तीन मास होवे ऐसा करे। फिर कार्त्ति का आदि आ गया है। उसको भी इसी रीति से व्यतीत करे और दशमी में प्रपत होकर शुचि होवे ॥७॥

आसीदादियुगे राजा ब्रह्मवादी दृढ़व्रतः ।
स पुत्रकामः पप्रच्छ ब्रह्माणं परमेश्वरम् ।
तस्येदं व्रतमाचरव्यो ब्रह्मा स कृतवान्पुरा ॥८
तस्यं व्रतान्ते विश्वात्मा स्वयं प्रत्यक्षतां गतः ।
दृष्ट्वा प्रोवाच भो राजन्वरो मे व्रियतः नृप ॥९
पुत्र मे देहि देवेश वेदमंत्र विशारदम् ।
ताजकं यजनासक्तं कीर्त्या युक्तं चिरायुषम् ॥१०
असंख्यात गुणं चैव ब्रह्मभूत मकल्मषम् ।
एवमुक्त्वा ततो राजा पुनर्वचनमब्रवीत् ॥११
ममाप्येतच्छुभं स्थानं प्रपच्छ परमेश्वर ।
यत्तन्मुनिवरदं नाम गत्वा न शोचति ॥१२
एवमस्त्विति तं देवः प्रोक्त्वा चादर्शनं गतः ।
तस्यापि राज्ञः पुत्रोऽभूद् वत्सश्रीर्नाम नामतः ॥१३
वेद वेदाङ्ग सम्पन्नो यज्ञयाजी वहुश्रुतः ।
तस्य कीर्तिर्महाराज विस्तृता धरणी तले ॥१४

आदि युग में ब्रह्म व्रत दृढ़ व्रत राजा था उसको पुत्र के प्राप्त करने की कामना थी। उसने परमेश्वर ब्रह्माजी से पूछा था। उसको यह व्रत कहा था क्योंकि ब्रह्माजी ने पहिले इसको किया था ॥८॥ उस को व्रत के अन्त में विश्व की आतमा प्रभु स्वयं प्रत्यक्षत्य को प्राप्त हुये थे। उन्होंने उसको देखकर यह कहा था—हे नृप ! कोई भी वरदान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को मुझसे प्राप्त करलो ॥६॥ उस राजा ने प्रार्थना की थी—हे देवेश्वर ! मुझको पुत्र प्रदान कीजिए जो वेदों के मन्त्रों का विशारद होवे । जो याजक हो—याजक में आसक्त हो और कीर्त्ति से युक्त हो तथा चिरायु होवे ॥१०॥ वह पुत्र असंख्य गुणों से युक्त हो और ब्रह्म भूत तथा कल्म परहित होवे । इस प्रकार से कहकर राजा ने फिर कहा था—हे परमेश्वर ! मुझ को भी यह परम शुभ स्थान प्रदान कीजिए । जो वह मुनि पद हो जहाँ जाकर कुछ भीं चिन्ता नहीं किया करता है । ॥११।१२॥ ऐसा ही होगा—इतना ही कहकर वह देव अन्तर्धान हो गये थे । उस राजा के भी एक पुत्र ने जन्म ग्रहण किया था और उसका नाम वत्स श्री था ॥१३॥ वह वेद—वेदाङ्गों से सुसम्पन्न था और यज्ञों का यजन करने वाला तथा वहु श्रुत था । हे महाराज ! उसकी कीर्त्ति भू मण्डल में विस्तृत हो गई थी ॥१४॥

राजापि तं सुतं लब्ध्वा विष्णुदत्तां प्रतापिनम् ।
जगाम तपसे युक्तः सर्वद्वन्द्वसहः प्रभुः ॥१५
आराधयामास हरिं निराहरा जितेन्द्रियः ।
हिमवत्पर्वते रम्ये स्तुति चापि सदापठत् ॥१६
नमः कमल पत्राक्ष मूर्त्तामूर्त्त नमो हरे ।
शरणं त्वां प्रपन्नोस्मि संसारान्मां समुद्धर ॥१७
एवमुक्त स्तदा देवः शंखचक्रगदाधरः ।
वभौ तत्पुरतः सौमो वाक्यं चेदमुवाचह ॥१८
वरं वृणीष्व राजेन्द्र यत्तेमनसि वर्त्तते ।
मयि प्रसन्ने त्रैलोक्यं तिलमात्रामितिप्रभो ॥१९
एवमुक्तस्ततो राजा हृर्षोत्फुल्लित लोचनः ।
मोक्षं प्रयच्छ देवेशेत्युक्त्वा नोवाच किंचन ॥२०
एवमुक्त्वानृप देवः शंखाग्रेण जनार्दनः ।
स्पृश्य संस्पृष्टमात्रोऽसौ परं निर्वाणमाप्तवान् ॥२१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तस्मात्त्वमपि राजेन्द्र तं देवं शरणं व्रज ।
भूयः पुनः शोच्यपदवीं नो प्रयास्यसि ॥२२

राजा ने भी भगवान् विष्णु के द्वारा प्रदान किये हुए महान् प्रतापी पुत्र को प्राप्त करके वह प्रभु सबसे छुटकारा पाकर सभी द्वन्द्वों को सहन करता हुआ तपश्चर्या करने के लिये चला गया था ॥१५॥ अपनी इन्द्रियों को जीत कर बिना आहार के रहते हुए श्री हरि की आराधना की थी। हिमवान् सुरम्य पर्वत में उसने भगवान् की स्तुति का भी पाठ किया था ॥१६॥ उसने कहा था—हे कमल पत्राक्ष ! आपको नमस्कार है। हे हरे ! आप मूर्त्त और अमूर्त्त हैं आप को नमस्कार है। मैं आपकी शरणागति में प्राप्त हुआ हूँ। आप कृपा करके मेरा संसार के बन्धन से उद्धार कीजिए ॥१७॥ जब इस तरह से प्रार्थना की गयी थी तो उस समय में शंख चक्र और गदा को धारण करने वाले परम सौम्य उसके साम ने शोभित हुए थे और फिर वे यह वाक्य बोले थे ॥१८॥ हे राजेन्द्र ! वरदान माँग लो जो भी कुछ आपके मन में हो। मेरे प्रसन्न हो जाने पर यह त्रैलोक्य तल के ही समान है ॥१९॥ इस तरह से प्रभु ने कहा था तो उसका श्रवण करके राजा के नेत्र हर्ष से उत्फुल्लित हो गये थे। राजा ने कहा—हे देवेश्वर ! मोक्ष प्रदान कीजिये। इसके अतिरिक्त और कुछ भी नही कहा था।२०। ऐसा जब राजा ने कहा था तो जनार्दन प्रभु ने अपने शंख के अग्रभाग से उसका स्पर्श किया था। स्पर्श करने ही से इसने परम निर्वाण की प्राप्ति करली थी ॥२१॥ इससे हे राजेन्द्र ! आप भी देव की शरणागति में गमन करो। राजा फिर शोच्य पदवी को प्राप्त नहीं होओगे ॥२२॥

—:o:—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

५६–धन्य व्रत कथन

अतः परं प्रवक्ष्यामि धन्यव्रत मनुत्तमम् ।
येन सद्यो भवेद्धन्यस्त्वधनोऽपि हि यो भवेत् ॥१
मार्गशीर्षे सिते पक्षे प्रतिपद् या तिथिर्भवेत् ।
तस्यां नक्तं प्रकुर्वीत विष्णु मग्नि प्रपूजयेत् ॥२
तस्यैव पुरतः कुण्डं कारयित्वा विधानतः ।
होमं तत्र प्रकुर्वीत एभिर्मन्त्रैः विचक्षणः ॥३
ततः सयावकंचान्नं भुञ्जीयाद्घृत संयुतम् ।
कृष्ण पक्षेऽप्येवमेव चातुर्मास्यं तु यावता ॥४
चैत्रादिषु च भुंजीत पायसं सघृतं बुधः ।
श्रावणादिषु सक्तूंश्च ततश्चैतत् समाप्यते ॥५

इसके आगे परमोत्तम धन्य व्रत को वतलाता हूँ । जिसके करने से जो कोई अधम भी होता वह भी तुरन्त धन्य हो जाया करता है ॥१॥ मार्ग शीर्ष मास के शुक्ल पक्ष में जो प्रतिपदा तिथि होती है । उस दिन रात्रि में भगवान् विष्णु का और अग्नि का पूजन करना चाहिये । उन्ही देवेश्वर के आगे विधान से कुण्ड कीं रचना करे । विचक्षण पुरुष उसमें इन मन्त्रों के द्वारा होम करे । इसके उपरान्त यावक के सहित घृत से समन्वित अन्न का भोजन करे । कृष्ण पक्ष में भी इसी तरह से करे और जब तक चार मास होवें ऐसा ही किया करे ॥२॥३॥४॥ चैत्रादिमासों में बुध पुरुष घृत सहित पायस का भक्षण करे। और श्रावण आदि मासों में सक्तूओं को खावे । फिर इसकी समाप्ति की जाया करती है ॥५॥

समाप्ते तु व्रते वह्नि काञ्चनं कारयेद् बुधः ।
रक्त वस्त्र युगच्छन्नं रक्त पुष्पानु लेपनम् ॥६
पूजयित्वा विधानेन रक्त वस्त्र युगेन च ।
दद्यात्पिश्चाच्च तं तस्य मन्त्रेणानेन बुद्धिमान ॥७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

धन्योऽस्मि धन्यकर्मास्मि धन्यं चेष्टोऽस्मि धन्यवान् ।
धन्ये नानेन चीर्णेन व्रतेन स्यां सदा सुखो ।।८
एव मुच्चार्य तं विप्रे न्यस्य कोशं महात्मने ।
सद्यो धन्यत्वमाप्रोति योऽपि साद् भोग वर्जितः ।।९
इह जन्मनि सौभाग्यं धनं धान्यं च पुष्क कलम् ।
अनेन कृत मात्रेण जायते नात्र संशयः ।।१०

व्रत के समाप्त हो जाने पर सुवर्ण की वह्नि का निर्माण कराना चाहिए। दो रक्त वर्ण के वस्त्रों से उसको आच्छादित करे। रक्त पुष्प और रक्त अनुनेयन देवे ।।६।। फिर विधान पूर्वक पूजन करे। फिर दो रक्त वस्त्रों के साथ बुद्धमान इस मन्त्र के द्वारा उसे उसको दे देवे। मैं धन्य कर्मों वाला हूँ मैं धन्य चेष्टा वाला हूँ और धन्यवान् हूँ। इस धन्य व्रत के चीर्ण करने से मैं सदा सुखी होऊँगा ।। ७—८ ।। ऐसा उच्चारण करके उसको विप्र को जो महात्मा हो दे देवे। वह तुरन्त ही भोगों से वर्जित होकर धन्य त्व को प्राप्त हो जाया करता है। इस जन्म में उसका परम सौभाग्य होता है और धन तथा धान्य वहुत अधिक होता है। इस व्रत के करने ही भर से ऐसा फल हुआ करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।। ९ ।। १० ।।

५७–६० कांतिव्रत, सौभाग्यव्रत, अविघ्नव्रत, शांतिव्रत

अतः परं प्रवक्ष्यामि कन्तिव्रतमनुत्तमम् ।
नक्तं कुर्वी यत्नेन त्वर्चयन् बल केशवम् ।।१
रात्रौ स विप्रो भुंजीत यवान्नं सधृतं नरः ।
फाल्गुनादि चतुष्कं तु पायसं भक्षयच्छुचिः ।।२
शालिहोमं प्रकुर्वीत कार्तिके तु यवैस्तथा ।
आषाढ़ादिचतुष्के तु तिलहोमं तु कारयेत् ।
तद्वत्तिलान्नं भुंजीत एष एव विधि स्मृतः ।।३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

न विष्णोर्व्यतिरिक्तः स्याद्दैवतं नृपसत्तम ।
नाम भेदेन सर्वत्र संस्थितः पुरुषोत्तमः ।।४

इसके आगे मैं उत्तम कान्तिव्रत को बतलाता हूं । भगवान् वल और केशव का अर्चन करते हुए इसको रात्रि में करना चाहिए । और प्रपञ्च से करे ।। १ ।। वह विप्र घृत के साथ यवान्न का भोजन करे । फाल्गुन से आदि लेकर वह मनुष्य चार मास तक शुचि रहकर पापय का भोजन करे ।। २ ।। कार्त्तिक मास में शाली का तथा यवों का होम करे । आषाढ़ से लेकर चार मास तक तिलों से होम करावे । उसी तरह से तिलान्न का भोजन करे—यही इसकी विधि कही गयी है ।।३।। हे श्रेष्ठ नृप ! भगवान् विष्णु से व्यतिरिक्त कोई भी देव नहीं हैं । वही भगवान् विष्णु नामों के भेद द्वारा सवंत्र विराजमान रहा करते हैं ।। ४ ।।

अतः पर महाराज सौभाग्यकरणं व्रतम् ।
शृणु येनाशु सौभाग्यं स्त्री पुंसोरुपजायते ।।५
फाल्गुनस्य तु मासस्य तृतीया शुक्ल पक्षगा ।
उपासितव्या नक्तेन शुचिना सत्यवादिना ।।६
सस्त्रीक च हरिं पूज्य रुद्रं वाचोमया सह ।
या श्रीः सा गिरिजा प्रोक्ता यो हरिः स त्रिलोचनः ।।७
एवं ज्ञात्वा स लक्ष्मीकं हरिं सम्पूज्य यत्नतः ।
मन्त्रेणानेन राजेन्द्र ततस्तं परमेश्वरम् ।।८
एवमभ्यर्च्य मेधावी विष्णुं लक्ष्म्या समन्वितम् ।।९
हरं च गौरी संयुक्तं गन्धपुष्पादिभिः क्रमात् ।
ततस्तस्याग्रतो होमं कारपेस्मधु सर्पिषा ।।१०
तिलं सह महराज सौभाग्यपतपे परम् ।
ततस्त्व क्षार विरसं निस्नेहं धरणीतले ।
गोधूसान्नं तु भुंजीत कृष्णोऽप्येवं विधि स्मृतः ।।११

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे महाराज ! इससे आगे सौभाग्य के करने वाला व्रत कहता हूँ। इसका आप श्रवण कीजिए। जिसके करने से शीघ्र ही नर—नारी का परम सौभाग्य हो जाया करता है ॥ ५ ॥ फाल्गुन मास की शुक्ल-पक्ष की तृतीया तिथि का उपवास करना चाहिए। रात्रि में परम शुचि होकर और सत्यवादी रहकर इसको करे। स्त्री के सहित भगवान् हरि का पूजन करके अथवा उमा के साथ भगवान् रुद्र का अर्चन करना चाहिए। जो भी है वही गिरिजा कही गयी है और जो हरि हैं वे ही भगवान् त्रिलोचन हैं ॥ ६—७ ॥ ऐसा ही समझ कर लक्ष्मी के सहित भगवान् हरि का यत्नपूर्वक पूजन करे। हे राजेन्द्र ! इस मन्त्र से परमेश्वर उनका अर्चन करे ॥ ८ ॥ मेधावी पुरुष इस रीति से लक्ष्मी-देवी के साथ भगवान् विष्णु का अर्चन करे ॥ ९ ॥ भगवान् हरि का गौरी के सहित क्रम से गन्ध—पुष्पादिक से यजन करना चाहिए। फिर उनके आगे मधु और घृत से होम करना चाहिए ॥ १० ॥ सौभाग्य के पति के लिये तिलों के साथ ही हे महाराज ! होम करे। इसके उपराल क्षार रहित विरस और स्नेह (चिकनाई) से रहित धरणी तल में गोधूमान्न का भोजन करना चाहिए। कृष्णपक्ष में भी यही विधि कही गयी है ॥ ११ ॥

अथ विघ्नहरं राजन् कथयामि श्रृणुष्व मे।
सम्यक् कृतेन येनाशु न विघ्नैः परिभूपते ॥१२
चतुर्थ्यां फाल्गुने मासि ग्रहीतव्यं व्रतं त्विदम्।
नक्ताहारेण राजेन्द्र तिलान्नं पारणं स्मृतम् ॥१३
तदेवाग्नौ तु होतव्यं ब्राह्मणाय च तद्भवेत्।
एवंकृत्वा व्रतं चैतत्सर्वविघ्नैः विमुच्यते ॥१४
हयमेधस्य विघ्ने सञ्जाते सागरस्तथा।
एतदेव चरित्वा तु हयमेधं स आप्तवान् ॥१५
शूराय धीराय गजाननाय लम्वोदरायैकदंष्ट्राय चैव।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवं सम्पूज्य तद्दिने पुण्यकृद्भिर्होमं कुर्याद्विघ्ननाशस्य हेतोः ।१६
अनेन कृतमात्रेण सर्वं विघ्नैः प्रमुच्यते ।
विनायकस्य दानेन कृतकृत्यो नरो भवेत् ।।१७

इसके अनन्तर हे राजन् ! मैं विघ्न हर व्रत को कहता हूँ—आप मुझसे इसको सुनिए । इस व्रत को भली भाँति करने पर वह मानव कभी भी विघ्नों से परिभूत नहीं हुआ करता है ।। १२ ।। फाल्गुन मास में चतुर्थी तिथि में इस व्रत का ग्रहण करना चाहिए । हे राजेन्द्र ! रात्रि में आहार के द्वारा करे । इसका पारण तिलान्न कहा गया है । ।। १३ ।। उसी का अग्नि मे होम करे । और वह ब्राह्मण के लिये ही होता है । इस प्रकार से इस व्रत को करके वह सभी विघ्नों से विमुक्त हो जाया करता है ।। १४ ।। अश्वमेध यज्ञ में विघ्नों के होने पर राजा सगर ने इसी व्रत का समाचरण किया था और उसने अश्वमेध का फल प्राप्त किया था ।। १५ ।। शूर—धीर—गजानन—लम्बोदर—एकदंष्ट्र का भली भाँति पूजन करे और उस दिन में विघ्नों के विनाश के लिए होम करना चाहिए ।। १६ ।। इस व्रत के करने भर ही से मनुष्य सभी विघ्नों से छुटकारा पा जाया करता है । भगवान् विनायक कि दान से मनुष्य कृतकृत्य हो जाया करता है ।।१७।।

शान्तिव्रतं प्रवक्ष्यामि तव राजन् श्रृणुष्व तत्
येन चीर्णेन शान्तिः स्यात्सर्वदा गृहमेधिनाम् ।।१८
पञ्चम्यां शुक्लपक्षस्य कार्तिके मासि सुव्रत ।
आरंभे वर्षमेकं तु भुंजीयादुष्ण वर्जितम ।
नक्ते देवं तु सम्पूज्य हरिं शेषो परिस्थितम् ।।१६
ऐवं विष्णुगतं पूज्य पृथगेव च पूजयेत् ।
क्षीरेण स्नपनं कुर्यात्तनुर्दिश्य हरेः पुनः ।।२०
एवं यः कुरुते भक्त्या व्रतमेतन्नराधिपः ।
तस्य शान्तिर्भवेन्नूनं नागेभ्यो न भयं तथा ।।२१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हें राजन् ! अब मैं शान्ति व्रत के विषय में बतलाता हूँ । आप उसका श्रवण कीजिए । जिस व्रत के चीर्ण करने से गृहस्थियों को सर्वदा शान्ति हुआ करती है ।।१८।। हे सुव्रत ! कार्त्तिक मास में शुक्ल पक्ष की पञ्चमी में इसका आरम्भ करे और एक वर्ष तक उष्ण से रहित का भोजन करना चाहिए रात्रि में शेष के ऊपर विराजमान भगवान् हरि का अर्चन करना चाहिए । इस तरह से बिष्णुगत का पूजन करके पृथक् ही पूजन करना चाहिए । उनका उद्देश्य करके भगवान् हरि का क्षीर से स्तपन कराना चाहिए ।।१६।।२०।। जो तराधिप इस प्रकार से इस व्रत का भक्ति से समाचरण किया करता है उसको निश्चित रूप से शांति होतो है और उसको नागों से भी कभी भय नहीं होता है ।।२१।।

६१–६५ काम व्रत, आरोग्य व्रत, पुत्र प्राप्ति व्रत, शौर्यव्रत, सार्वभौम व्रत

कामव्रतं महाराज शृणु में गदतोऽधुना ।
येन कामाः समृद्धचन्ते मनसा चिन्तिता अपि ।।१
षष्ठ्यां धलाशनो यस्तु वर्य मेकं व्रतं चरेत् ।
पौषमासे सिते पक्षे पंचम्यां कृतभोजनः ।।२
षष्ठयां तु प्राशयेद्धीमान् प्रथमं तु फलं नृप ।
ततो भुंजीत यत्नेन वाग्यतः शुद्धमोदनम् ।।३
ब्राह्मणैः सह राजेन्द्र अथवा केवलैः फलैः ।
तमेकं दिवसं स्थित्वा सप्तम्यां पारयेन् नृप ।।४
अग्नि कार्यं तु कुर्वीत गुहरुपेण केशवम् ।
पूजयित्वा विधानेन वर्षमेकं व्रतं चरेत् ।।५
षड्वक्त्रः कार्तिकेयश्च सेनानीः कृत्तिकासुतः

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कुमारः स्कन्द इत्येवं पूज्यो विष्णुः सतामभिः ।
सर्वे कामाः समृद्धयन्तां मम देव कुमारक ॥६

हे महाराज ! अब कहते हुए मुझसे आप काम व्रत का श्रवण कीजिए । जिस व्रत के करने से मन के द्वारा चिन्तन किये हुए भी काम समृद्ध हुआ करते हैं ॥१॥ षष्ठी तिथि में फलों का अशन करने वाला रहकर जो एक वर्ष पर्यन्त इस व्रत को किया करता है । पौष मास में सित पक्ष में पञ्चमीं तिथि में भोजन करने वाला हे नृप ! षष्ठी तिथि में सर्व प्रथम फलों का प्राशन करे । इसके उपरान्त ही वाग्यत (मौन) होकर धीमान् फल का शुद्ध ओदन का भोजन करे ॥२॥३॥ हे राजेन्द्र ! अथवा ब्राह्मणों के साथ केवल फलों से भोजन किया करना चाहिए । हे नृप ! उस एक दिन स्थित होकर फिर सप्तमी में पारण करना चाहिए। ॥४॥ अग्नि का कार्य भी करना चाहिए । गुह के रूप से भगवान् केशव का पूजन करके एक वर्ष पर्यन्त इस व्रत का समाचरण करे ॥५॥ षड् वक्त्र—कार्त्तिकेय—सेनानी—कृत्तिका सुत—कुमार—स्कन्द—इस प्रकार से अपने नामों के द्वारा भगवान् विष्णु का अर्चन करना चाहिये । फिर यह प्रार्थना करे—हे कुमार ! हे देव ! मेरे सभी काम समृद्ध होवें ॥६॥

नथापरं महाराज व्रतमारोग्य संज्ञितम् ।
कथयामि परं पुण्यं सर्वपाप प्रणाशनम् ॥७
आदित्य भास्कर रवे भानो सूर्य दिवाकर ।
प्रभाकरेति सम्पूज्य एवं व्रतमुपाचरेत् ॥८
षष्ठयां चैव कृताहारः सप्तम्यां भानुमर्चयेत् ।
अष्टम्यां चैव भुंजीत एष एव विधिक्रमः ॥९
अनेन वत्सरं पूर्णं विधिना योऽर्चयेद्रविम् ।
तस्यारोग्यं धनं धान्यमिह जन्मनि जायते ॥१०

इसके अनन्तर हे महाराज ! आरोग्य संज्ञा वाला व्रत कहता हूँ जो परम पुण्यमय है और सभी पापों के विनाश करने वाला होता है ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

॥७॥ हे आदित्य—भास्कर—रवे—भानो—हे सूर्य—दिवाकर और हे प्रभा कर—यह उच्चारण करके सूर्य का भली भाँति पूजन करे और इस रीति से व्रत का ससाचरण करना चाहिए ॥८॥ षष्ठी तिथि में आहार करे और सप्तमी में भानुदेव का अर्चन करना चाहिए। फिर अष्ठमी में अशन क्रिया करे। यह ही इस व्रत का क्रम कहा गया है ॥६॥ इस व्रत के द्वारा जो पूरे एक वर्ष तक रविदेव का अर्चन किया करता है उसको इस जन्म में आरोग्य—धन—धान्य सभी कुछ हो जाया करता है ॥१०॥

मासे भाद्रपदे या तु कृष्णपक्षे नरेश्वर।
अष्टम्यामुपवासेन पुत्रप्राप्ति व्रतं हि तत् ॥११
सप्तम्यां चैव संकल्प्य अष्टम्यामर्चयेद्धरिम।
देवक्तुत्सङ्गगं विष्णु मातृभिः परिवेष्टितम् ॥१२
प्रभाते विमलेऽष्टम्यामर्चयेत्प्रयतो हरिम्।
प्राग्विधानेन गोविन्दमर्चयित्वा विधानतः ॥१३
ततो यवैः कृष्णतिलैः सघृतैर्होतयेद्द्विधि।
ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या यथाशक्त्या सदक्षिणम् ॥१४
ततः स्वयं तु भुंजीत प्रथमं विल्वमुत्तमम्।
पश्चाद्यथेष्टं भुंजीत स्नेहैः सर्वं रसैर्युतम् ॥१५
प्रतिमासमने नैव विधिनोपोष्य मानवः।
कृष्णाष्टम्यां व्रतं कृत्वा अपुत्रः पुत्रवान्भवेत् ॥१६

भाद्रपद मास में कृष्ण पक्ष में जो तिथि हे नरेश्वर! होती है उस अष्टमी तिथि में उपवास करने से पुत्र की प्राप्ति होती है—यही पुत्र प्राप्ति का व्रत होता है ॥११॥ सप्तमी में सङ्कल्प करके अष्टमी तिथि में भगवान् हरि का अर्चन करना चाहिए। देवकी माता की गोद में विराजमान हैं और विष्णु मातृगणों से परिवेष्टित हैं ॥ १२ ॥ ऐसे ही रूप में प्रभात वेला में जो परम विमल है अष्टमी तिथि में प्रयत

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

होकर हरि का अर्चन करना चाहिए। पृथक् विधान से गोविन्द का अभ्यर्चन करे ॥१३॥ फिर यवों से—काले तिलों से घृत के सहित होम करना चाहिए। फिर अपनी शक्ति के अनुसार भक्ति की भावना से ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये और उनको दक्षिणा भी देवे ॥१४॥ फिर स्वयं भोजन करे। सर्व प्रथम उतन विल्व का भोजन करे। इसके पीछे इच्छानुसार भोजन करना चाहिए। जो भोजन सभी रसों से और स्निग्धता से युक्त होवे ॥ १५ ॥ प्रत्येक मास में इसीविधि से मनुष्य उपवास करके तथा कृष्णाष्टमी में व्रत करता है वह पुत्र रहित भी पुत्र वाला हो जाया करता है ॥१६॥

अथापरं प्रवक्ष्यामि शौर्य व्रतमनुत्तमम्।
येन भीरोरपि महच्छौर्यं भवति तत्क्षणात् ॥१७
मासि चाश्वयुजे शुद्ध नवमीं समुपोषयेत्।
सप्तम्यां कृतसङ्कल्पः स्थित्वाष्टम्यां निरोदनः ॥१८
नवभ्यां प्राशयेत्पिष्टं प्रथमं भक्तितो नृप ॥१९
ब्राह्मणान् भोजयेद् भक्त्या देवीं चैव तु पूजयेत्।
दुर्गां देवीं महाभागां महामायां महाप्रभाम् ॥२०
एवं संवत्सरं यावदुपोष्येति विधानतः।
व्रतान्ते भोजयेंद्धीमान्यथाशक्त्या कुमारिकाः ॥२१
हेम वस्त्रादिभिस्तास्तु भूषयित्वा तु शक्तितः।
पश्चात्क्षमापयेंत्तां तु देवो मे प्रीयतामिति ॥२२
एवं कृते भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं न संशयः।
अविद्यो लभते विद्यां भीतः शौर्यं च विन्दति ॥२३

इसके अनन्तर शौर्य व्रत के विषय में वतलाता हूँ जो परम उत्तम व्रत है। जिसके करने से डरपोक मनुष्य को भी महान् शौर्य हो जाया करता है और उसी क्षण में शूरता सम्पन्न हो जाती है ॥१७॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आश्विन मास में शुद्ध नवमी को उपवास करना चाहिए। सप्तमी तिथि में सङ्कल्प करे और अष्टमी में निरोदन स्थित रहे ॥१८॥ हे नृप ! नवमी में पिष्ट का प्रथम भक्तिभाव से प्राशन करना चाहिए। फिर भक्ति से ब्राह्मणों को भोजन करावे और देवी का पूजन करना चाहिए। ॥१९॥ दुर्गादेवी—महाभागा—महामाया—महा प्रभा का अर्चन करे। इस रीति से जब तक एक वर्ष पूर्ण होवे तब तक विधान से उपवास करना चाहिये। व्रत के अन्त में धीमान अपनी शक्ति के ही अनुसार कुमारिकाओं को भोजन करावे ॥२१॥ अपनी शक्ति से सुवर्ण और वस्त्र आदि से उन कुमारिकाओं को विभूषित करे। फिर उस देवी से क्षमा की प्रार्थना करनी चाहिये और यह कहे—देवी मुझ पर प्रीणित होइये ॥२२॥ ऐसा करने पर जो राज्य से भ्रष्ट होवे वह राज्य को प्राप्त कर लेता है—इसमे संशय नहीं है। जो विद्या से रहित होता है वह विद्या को प्राप्त किया करता है और जो भीत होता है वह शूरता को प्राप्त कर लेता है ॥२३॥

सार्वभौम व्रतं चान्यत्कथयामि समासतः।
येन सम्यक्कृतेनाशु सार्वभौमो नृपो भवेत् ॥२४
कार्तिकस्य तु मासस्य दशमी शुक्ल पक्षगा।
तस्यां नक्ताशनो भूत्वा दिक्षु शुद्धवलिं हरेत् ॥२५
विचित्रैः कुसुमैर्भक्त्या पूजायित्वा द्विजोत्तमान्।
दिशां तु प्रार्थनां कुर्यान्मन्त्रेणानेन सुव्रतः ॥२६
सर्वा भवत्यः सिध्यन्तु मम जन्मनि जन्मनि।
एवमुक्त्वा वलिं ताभ्यो दत्त्वा शुद्धेन चेतसा ॥२७
ततो रात्रौ स भुंजीत दध्यन्नं तु सुसंस्कृतम्।
पूर्वं पश्चाद्यथेष्टं तु एवं संवत्सरं नृप ॥२८

अब संक्षेप में सार्व भौम व्रत के विषय में कहता हूँ जिसके भली भाँति से कर लेने पर नृप सार्व भौम हो जाता है ॥२४॥ कार्त्तिक मास

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि है उस तिथि में रात्रि में भोजन करने वाला रहकर दिशाओं में वलिका समाहरण करना चाहिए ॥२५॥ विचित्र पुष्पों से भक्ति भाव पूर्वक द्विजोत्तमों का अर्चन करके सुव्रत फिर दिशाओं की इस मन्त्र के द्वारा प्रार्थना करे ॥२६॥ आप सभी मेरे जन्म जन्म में सिद्ध होनें । ऐसा बोलकर शुद्ध चित्त से उनको वलि देवे इसके उपरान्त रात्रि में सुसंस्कृत दधि—अन्न का भोजन करना चाहिये। पूर्व और पीछे करे और इस प्रकार से सम्वत्सर पर्यन्त हे नृप करना चाहिए ॥२८॥

यः करोति नरो नित्यं तस्य दिग्विजयो भवेत् ।
एकादश्यां निराहारो नरः कुर्याद्यथाविधि ॥२९
मार्ग शीर्षे शुक्लपक्षादारभ्याब्दं विचक्षणः ।
तद्व्रतं धनदस्येष्टं कृतं वित्तं प्रयच्छाति ॥३०
एकादपयां निराहारो यो भुंक्ते द्वादशी दिने ।
शुक्ले वाप्यथवा कृष्णे तद् व्रतं वैष्णवं महत् ॥३१
एवं चीर्णं सुघोराणि हन्ति पापानि पार्थिव ।
त्रयोदश्यां तु नक्तेन धर्म व्रतम योज्यते ॥३२
शुक्ल पक्षे फाल्गुनस्य तथारभ्य विचक्षणः ।
रौद्र व्रतं चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे विशेषतः ॥३३

जो मनुष्य नित्य करता है उसका दिग्विजय होता है। एकादशी में मनुष्य निराहार रहकर इसको विधि के साथ करे ॥२९॥ मार्ग शीर्ष मास के शुक्ल पक्ष से आरम्भ करके विचक्षण पुरुष धनद के इस व्रत को करे तो देवता अभीष्ट धन का प्रदान किया करता है ॥३०॥ एकादशी में आहार न करने वाला जो द्वादशी में भोजन करता है। शुक्लपक्ष में या कृष्ण पक्ष में करे तो यह व्रत महान् वैष्णव होता है। ॥३१॥ हे पार्थिव ! इस प्रकार से चीर्ण किया हुआ व्रत सुघोर्ण पापों का हनन किया करता है त्रयोदशी में करने से धर्म व्रत होता है। इसके

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अनन्तर कहा जाता है ॥३२॥ फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष से आरम्भ करके विचक्षण पुरुष करे। रौद्र व्रत विशेष रूप से कृष्ण पक्ष में चतुर्दशी में होता है ॥३३॥

माघमासत्तथारभ्य पुर्णं संवत्सरं नृप।
इदं व्रतं तु पञ्चम्यां शुद्धायां नक्त भोजनं।
पितृ व्रतममायां स्यादिति राजन् तथेरितम् ॥३४
दश पञ्च च वर्षाणि य एवं कुरुते नृप।
तिथि व्रतादिकं तस्य फलं स्यात्तत्प्रमाणतः ॥३५
एकमेव कृतं घ्नन्ति व्रतं पापानि नित्यशः।
यः पुनः सर्वमेतद्धि कुर्यान्नर वरात्मजः।
स शुद्धो विरजाँल्लोकानाप्नोति सकलान्नृप ॥३६

हे नृप ! माघ मास से आरम्भ करके पूरे सम्बत्सर पर्यन्त करे। यह व्रत पंचमी में जो शुद्धा हो करे और रात्रि में भोजन करना चाहिए। पितृ व्रत अमावस्या में होता है। हे राजन् ! यह उसी तरह से कहा गया है।३४। हे नृप ! जो षन्द्रह वर्ष तक ऐसा किया करता है और तिथि व्रत आदि को किया करता है उसका फल उसके ही प्रमाण से होता है ॥३५॥ इसी रीति से करने पर जो नित्य ही किया करता है उसके पापों का हनन किया करता है। जो इस सबको ही नर श्रेष्ठ करता है। हे नृप ! वह शुद्ध होकर सब विराज लोकों की प्राप्ति किया करता है ॥३६॥

६६--नारदीय पंचरात्र

आश्चर्यं यदि ते किंचिद्विदितं दृष्टमेव च।
तन्मे कथय धर्मज्ञ परं कौतूहलं महत् ॥१
आश्चर्य रूपो भगवानेष एव जनार्दनः

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तस्यश्चर्याणि दृष्टानि बहूनि विविधानि वै । २
श्वेतद्वोपगतः पूर्वं नारदः किल पार्थिव ।
सोऽपश्यच्छंख चक्राब्जान पुरुषांस्तिग्मतेजसः ॥३
अयं विष्णुरयं विष्णुरेष विष्णु सनातनः ।
चिन्ताऽभूत्तस्य तान्दृष्ट्वा कोऽस्मिन्विष्णुरिति प्रभुः ॥४
एवं चिन्तयतस्तस्य चिन्ता कृष्ण प्रति प्रभो ।
आराधयामि च कथं शंख चक्र गदा धरम् ॥५
येन वेद्मि परं देवं कृष्णं नारायणं प्रभुम् ।
एव सञ्चिन्त्य दध्यौ स तं देव परमेश्वरम् ॥६
दिव्यं वर्ष सहस्रं तु साग्रं ब्रह्मसुतस्तदा ।
ध्यातस्तस्य स देवोऽसौ पारतोष जगाम ह ॥७

हे धर्म के ज्ञाता ! यदि आपको कोई आश्चर्य विदित होवे और देखा हो तो आप मुझसे कहिए क्योंकि मुझको हृदय में बड़ा भारी कौतूहल हो रहा है ॥१॥ यह भगवान् जनार्दन ही आश्चय स्वरूप है। उनके बहुत और अनेक आश्चर्य देखे हैं ॥२॥ हे पार्थिव ! पूर्व समय में देवर्षि नारदजी श्वेत दीप में गये थे। उतने वहाँ पर बहुत ही तेज की तीव्रता से समन्वित और शंख-चक्र और कमल धारियों पुरुषो को देखा था ॥३॥ यह विष्णु है—यही विष्णु है और यही सनातन विष्णु हैं। उनको देखकर उनके चित्त में यह चिन्ता उत्पन्न हो गई थी कि इनमें कौन से प्रभु विष्णु हैं ॥४॥ हे प्रभो ! इस तरह से चिन्तन करते हुए उसको बड़ी कृष्ण के प्रति चिन्ता हुई थी शंख चक्र और गदाधारी का से किस रीति से आराधना करूं ॥५॥ जिसके करने से मैं पर प्रभु कृष्ण नारायण का ज्ञान प्राप्त करूं। ऐसी चिन्ता करके उसने उस परमेश्वर देव का ध्यान किया था ॥६॥ उस समय में दिव्य एक सहस्र वर्षों तक और साग्र तक ब्रह्माजी के पुत्र नारदजी ने उन देव का ध्यान किया था। और वह देव इन पर परम प्रसन्न हुए थे ॥७॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उवाच स प्रसन्नात्मा प्रत्यक्षत्वं गतः प्रभुः ।
वरं ब्रह्मसुत ब्रूहि किं ते दद्मि महामुने ॥८
सहस्रमेकं वर्षाणां ध्यातस्त्वं भुवनेश्वर ।
त्वत्प्राप्तियेंन तद् ब्रूहि यदि तुष्टोऽसि मेऽच्युत ॥९
पौरुषंसूक्तमास्थाप ये यजन्ति द्विजाशु माम् ।
ते मां प्राप्स्तन्ति सततं संहिताध्ययनेन च ॥१०
अलाभे वेदशास्त्राणां पञ्चरात्रोदितेन हि ।
मार्गेण मां यजन्ते ये ते मां प्राप्स्यन्ति मानवाः ॥११
ब्राह्मण क्षत्रियविशां पञ्चरात्रं विधीयते ।
शूद्रादीनां तु मे क्षेत्र पदवी गमनं द्विज ॥१२

प्रत्यक्ष रूप में साक्षात् होकर उन प्रभु ने प्रसन्न होते हुए यह कहा था—हे महामुने ! आप मुझसे वरदान कर वरण कीजिए कि मैं तुमको क्या हूँ ॥८॥ हे भुवनेश्वर ! मैंने एक सहस्र वर्षों तक आपका ध्यान किया है। तभी आपकी प्राप्ति हुई है। हे अच्युत ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे बतलाइए ॥९॥ भगवान् ने कहा—जो पुरुष सूक्त में समास्थित होकर जो द्विजगण शुभ का यजन किया करते हैं। और संहिता के अध्यमन से वे मनुष्य मुझको निरन्तर प्राप्त करलेंगे। ॥ १० ॥ वेद शास्त्रों के लाभ न होने पर पञ्चारत्र में उदित मर्ग से जो यजन किया करते है वे मनुष्य युक्त को प्राप्त करलेंगे ॥ ११ ॥ यह पञ्चरात्र ब्राह्मण क्षत्रिय ओर वैश्यो के लियं किया जाता है और शूद्रादिकों को तो हे द्विज ! मेरी क्षेत्र पदवी का ही गमन करना चाहिए ॥१२॥

मन्नाम विहितं तेषां नान्यत्पूजादिकं चरेत् ।
एवं मयोक्तं विप्रेन्द्र पुपाकल्पे पुरातनम् ॥१३
पंचपात्रं सहस्राणां यदि कश्चिद् ग्रहीष्यति ।
कर्भ क्षये च मां कश्चिद्यदि भक्तो भविष्यति ॥१४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तस्य चेदं पंचरात्रं नित्यं हृदि वसिष्यति ।
इतर राजसैर्भावैः तामसैश्च समावृतः ॥१५
वेदे न पंचरात्रेण भक्त्या यज्ञेन च द्विज ।
प्राप्योऽहं नान्यथा वत्स वर्षकोटच युतैरपि ॥१६

उन लोगों के लिये मेरा नाम का विधान होता है और उनको अन्य पूजादिक का समाचरण नहीं करना चाहिए ॥१३॥ सहस्रों पञ्च-रात्रों को भी कोई ग्रहण करेगा। यदि कोई कर्मों के क्षय होने पर मुझको भक्त होकर ग्रहण करेगा उसके हृदय में यह पञ्चरात्र नित्य ही निवास करेगा। अन्य राजस और तामस भावों से समाहृत होकर वेद से—पञ्चरात्र से और हे द्विज ! यज्ञ से मैं प्राप्त होने के योग्य हूं। हे वत्स ! अन्य किसी भी प्रकार से दश हजार करोड़ वर्षों में भी मैं प्राप्त नहीं होता हूँ ॥१४॥१५॥

६७--विष्णु भगवान् के आश्चर्य

भगवन् सित कृष्णे द्वे ते जगति सत्तम ।
स्त्रियौ बभूवतुः के द्वे सिता कृष्णा च का शुभा ॥१
कश्चासौ पुरुषो ब्रह्मन्पावकः सप्तधाऽभवत् ।
कोऽसौ द्वादशधा विप्र द्विदेहः षट्शिराः प्रभुः ॥२
दाम्पत्यं च द्विज श्रेष्ठ कृतसूर्योदयादलम् ।
कस्मादेतज्जगदिदं विततं द्विज सत्तम ॥३
सितकृष्णे स्त्रियौ ये हि ते भगिन्यौ प्रकीर्तिते ।
सितासिता द्विवर्णा च नारी रात्रिरूदाहृता ॥४
यः पुमान् सप्तधा जात एकोभूत्वा नरेश्वर ।
स समुद्रस्तु विज्ञेयः सप्त चैको व्यवस्थितः ॥५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

य ऽसौ वादशधा राजन् द्विदेहः षट्शिरा प्रभः ।
संवतसरः स विज्ञेयः शरीरे द्वे गती स्मृते ।।६
ऋतवः षट् च वक्त्राणि एष संवत्सरः स्मृतः ।
दाम्पत्यं तदहोरात्र सूर्याचम्द्रमसौ यतः ।।७
ततो जगत्समुत्तस्थौ देवादस्माच्च सत्तम ।
स विष्णुः परमों देवो विज्ञेयो नृप सत्तम ।।८
न च वेद क्रियाहीनः पश्यते परमेश्वरम् ।। ६

हे श्रेष्ठतम ! जगत् में जो हे भगवन् सित और कृष्ण दो स्त्रियां हुई थीं वे दो कौन हैं ? और सिता तथा कृष्णा कौन शुभ हैं ।।१।। हे ब्रह्मन् ! वह कौन पुरुष है जो पावक सात प्रकार का हो गया था। हे विप्र ! यह कौन है जो वारह प्रकार से दो देह वाला तथा छै शिरों वाला प्रभु है ।।२।। हे द्विजश्रेष्ठ ! दाम्पत्य कृत सूर्योदय से पर्याप्त है । हे द्विज सत्तम ! किस कारण से यह जगत् विसृत किया गया हैं ।।३।। सित और कृष्ण जो स्त्रियाँ हैं वे भगिनियाँ कहीं गयी हैं और सितास्था असिता दो वर्ण से युक्त नारी रात्रि कही गयी है ।।४।। जो पुरुष सात प्रकार का समुत्पन्न हुआ था हे नरेश्वर ! वह एकी भूत होकर वह समुत्पन्न हुआ था हे नरेश्वर । वह एकीभूत होकर वह समुद्र ही जानना चाहिए और सात एक होकर व्यवस्थित हुआ है ।।५।। हे राजन् ! जो यह वारह प्रकार का—दो देहों वाला तथा छै शिरों से संयुत प्रभु है वह ही सम्वत्सर समझना चाहिए । दो शरीर गतियाँ कही गयीं है ।।६।। वह दाम्पत्य अहोरात्र हैं क्योंकि सूर्य और चन्द्रमा होते हैं ।।७।। हे श्रेष्ठतम ! इस देव से ही परम देव हैं ऐसा ही जानना चाहिए ।।८।। जो वेदों की क्रियाओं से हीन होता है वह परमेक्ष्वर को नहीं देखा करता है ।।९।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

६८—युग धर्म कथन

योऽसौ सर्वगतो देवः परमात्मा व्यवस्थितः ।
चतुर्युगे त्वसौ की दृग्विज्ञेयः परमेश्वरः ॥१
युगे युगे क आचारो वर्णानां भविता मुने ।
कथञ्च शद्धिः विप्राणामन्य स्त्री सङ्करे मुने ॥२
कृते युगे महीदेवैर्यूज्यते वेद कर्मणा ।
यजद्भिश्च सुरांस्त्रेता तद्वद्देवैश्च सत्तम ॥३
द्वापरे सत्त्वरजसा बहुले नृप सत्तम
यावद्धर्मसुतो राजा भविष्यति महामते ॥४
ततस्तमः प्रभविता कलिरूपो नरेश्वर ।
तस्मिन् कलौ वर्तमाने स्वमार्गात् च्याविता द्विजाः ॥५
राजानो वैश्य शूद्राश्च प्रायशो हीन जातयः ।
भविष्यन्ति नृपश्रेष्ठ सत्य शौच विवर्जिताः ॥६
ततो विनश्यते लोको वर्णधर्मश्च नश्यति ॥७
रजक्यादिषु चान्याश्च स्त्रियोऽगम्याः प्रकीर्तिताः ।
अगम्यागमनं चैतत्कृतं पापाय जायते ॥८
वियोनिगमनादाशु ब्राह्मणाय भवत्यलम् ।
शेषस्या शुद्धिरेषैवं प्राणायाम शतं भवेत् ॥९

जो यह सभी में अन्तर्यामी स्वरूप से रहने वाला देव परमात्मा व्यवस्थित है वह देव परमेश्वर चारों युगों में किस प्रकार का समझना चाहिये ॥१॥ युग-युग में हे मुने ! वर्णों का क्या आचार होगा । विप्रों की शुद्धि स्त्रियों के सङ्कट में कैसे होगी ॥२॥ इन प्रश्नों के उत्तर में कहा गया है कि कृत युग में मही देवों के (विप्रों के) द्वारा वेदोक्त कर्मों के द्वारा युक्त होंती है । त्रेता में उसी भाँति सुरों का यजन ,करने वालों के द्वारा शुद्धि होती है । हे नृपश्रेष्ठ ! द्वापर ऐसा युग है जिसमें सत्त्व और रजोगुण की बहुलता होती है । हे महामते ! जब तक धर्म पुत्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

(युधिष्ठिर) राजा होगा हे नरेश्वर तभी तक तमोगुण कलि के रूप वाला होकर प्रकट होगा। उस कलियुग के वर्त्तमान होने पर द्विजगण अपने मार्ग से च्युत कर दिये जाने वाले हो जाँयगे ॥३॥४॥५॥ राजा-वैश्य और शूद्र प्रायः करके हीन जाति वाले होंगे। हे नृप श्रेष्ठ! ये सभी सत्य-शौच से रहित हो जाँयगे ॥६॥ फिर तो यह लोक विनष्ट हो जाता है और वर्णों का भी धर्म्म विनष्ट हो जाया करता है ॥७॥ राज की आदि में और अन्य भी स्त्रियाँ अगम्य कही गयी हैं। अगम्या स्त्री के साथ गमन करना पाप कर्म ही होता है ॥८॥ वियोनि के गमन से शीघ्र ही ब्राह्मणत्व समाप्त हो जाया करता है। शेष की यही अशुद्धि है जो एक सौ बार प्राणायाम करना चाहिए ॥९॥

६९—नारायण आश्चर्य वर्णन

भगवंस्त्वच्छरीरे तु यद्वृत्तं द्विजसत्तम।
चिरजीवी भवांस्तन्मे वक्तुमर्हसि सत्तम ॥१
मच्छरीरमिदं राजन् बहुकौतूहलान्वितम्।
अनेक कल्प संस्थायि वेदविद्या विशोधितुम ॥२
अहन्नहं महीं सर्वां गतवानस्मि पार्थिव।
इलावृतं महावर्षं मेरो पार्श्वे व्यवस्थितम् ॥३
तत्र रम्यं सरो दृष्टं तस्य तीरे महाकुटी।
तत्रोपवास शिथिलं दृष्टवानस्मि तापसम् ॥४
अस्थि चर्मावशेषं तु चीरवल्कल धारिणम्।
तं दृष्टाहं नृपश्रेष्ठ एष कसतापसोत्तमः ॥५
विश्वस्य प्रतिप्रत्ययर्थं मयोक्तः स द्विजोत्तमः।
ब्रह्मन्मे दीयतां किंचिदागतोऽहं तवान्तिके ॥६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इति मां स मुनिः प्राह स्वागतं ते द्विजोत्तम ।
स्थीयतां स्थीयतां ब्रह्मन्नातिथ्य करवाणि ते ॥७

हे द्विज श्रेष्ठ आपके शरीर में हे भगवन् ! जो हुआ है । हे श्रेष्ठतम ! आप तो चिरजीवी हैं । अब आप यही मुझे बताने के योग्य होते हैं ॥१॥ हे राजन् ! मेरा यह शरीर बहुत से कौतूहलों से समन्वित है । यह अनेक कल्पों तक संस्थित रहने वाला है और वेद विद्या से विशोधन करने के लिये है ॥२॥ मैं सम्पूर्ण भूमि पर अटन करता हुआ हे पार्थिव ! मैं सर्वत्र गया हूँ । एक इलावर्त्त महान् वर्ष है जो मेरु पर्वत के पार्श्व में व्यवस्थित है ॥३॥ वहाँ पर एक परम सुरम्य सरोवर देखा था । उसके तट पर एक कुटी थी । उस महाकुटी में तपश्चर्या से शिथिली भूत हुए काक तपस्वी का मैंने दर्शन किया था । वह तपस्वी ऐसा था कि उसके शरीर में केवल अस्थियाँ और चर्म ही शेष रह गया था और वह चीर तथा छालों के धारण करने वाला था । उसका दर्शन करके मेरे मन में यह विचार हुआ था कि यह उत्तम तपस्वी कौन है ॥५॥ विश्व की प्रतिपत्ति के ही लिये मैंने उस परम श्रेष्ठ द्विज से कहा था । हे ब्रह्मन् ! आप कृपा करके मुझे भी कुछ प्रदान कीजिए क्योंकि मैं इस समय में आपकी सन्निधि में समागत हो गया हूँ ॥६॥ जब मैंने ऐसी प्रार्थना की थी तो उस मुनि ने मुझ से कहा था—हे द्विजोत्तम ! आपका स्वगात है । हे ब्रह्मन् ! आप यहाँ पर विराजिए । मैं आपका अतिथ्य करता है ॥७॥

एतच्छ्रुत्वा वचस्तस्य प्रविष्टोऽहं कुटीं तु ताम् ।
तावत्पश्याम्यहं विप्रं ज्वलन्तमिव तेजसा ॥८
भूमौ स्थितं तु मां दृष्ट्वा हुङ्कारमकरोद्द्विजः ।
तद्धुहुङ्काराच्च पातालं भित्त्वा पंच हि कन्यकाः ॥६
निर्ययुः कांचनं पीठमेका तासां तु गृह्य वै ।
सा मां प्रादात्तदा कन्या सलिलं कर संस्थितम् ॥१०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गृहीत्वान्या तु मे पादौ क्षालितुं चोपक्रमे ।
अन्ये द्वेव्यजनं गृह्य मत्पक्षाभ्यां व्यवस्थिते ॥११
ततो हुङ्कारम करोत्पुनरेव महातपाः ।
तच्छब्दानन्तरं हेमद्रोणीं योजन विस्तृताम् ॥१२
गृह्या जगाम अकरोत्प्लावं सरसि पार्थिव ।
तस्यां तु कन्या शतशा हेमकुम्भकराः शुभाः ॥१३
आययुस्ता अथो दृष्ट्वा स मुनिः प्राह मां नृप ।
स्नानार्थं कल्पितं ब्रह्मन्निदं ते सर्वमेव तु ॥१४

उस तपस्वी के इस वचन का श्रवण करके मैं फिर उसकी उस कुटी में प्रविष्ट हुआ था। उतने ही बीच में मैंने उस विप्र को तेज से देदीप्यमान देखा था ॥८॥ जब मैं अन्दर पहुँच कर भूमि में बैठ गया तो उसने हुङ्कार किया था और उस हुङ्कार से पाताल का भेदन करके पाँच कन्यायें देखी गयीं थी ॥ ६ ॥ जो वाहिर निकल आयीं थीं। उनमें से एक ने सुवर्ण की पीठ लेकर मुझे दी थी। फिर कन्या हाथ में जल लेकर आई थी और दूसरी ने मेरे चरणों के धोने का कार्य आरम्भ कर दिया था। अन्य जो दो थीं उन्होंने हाथों में पंखे लिये और मेरे दोनों ओर खड़ी हो गयीं थीं ॥१०—११॥ इसके अनन्तर फिर उस महातपस्वी ने हुङ्कार कीं थी। उसके शब्द के अनन्तर ही योजन के विस्तार वाली हेम की द्रोणी का ग्रहण करके वहाँ आगत हुई जो हे पार्थिव उस सरोवर प्लावन करती थी। उसमें सैकड़ों ही कन्याऐं थी जिनके हाथो में परम शुभ सुवर्ण के कुम्भ थे ॥१२॥१३॥ वे सब वहाँ पर आ गयी थीं और उनको देखकर उस मुनि ने मुझसे हे नृप! कहा था—हे ब्रह्मन्! आपके स्नान करने के लिये ही यह सब कल्पना की गयी है ॥१४॥

द्रोणीं प्रविश्य चैनां त्वं स्नातुमर्हसि सत्तम ।
ततोऽहं तस्य वचनात्तस्यां द्रोण्यां नराधिप ॥१५
विशामि तावत्सरसि साद्रोणी प्रत्यमज्जत ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

द्रोण्यां जले निमग्नोऽहं तमृषि तच्च वै परम् ॥१६
तावन्मेरुगिरेर्मूर्ध्नि पश्याम्यात्मान मात्मना ।
समुद्रान् सप्त पश्यामि तथैव कुलपर्वतान् ॥१७
सप्तद्वीपवतीं पृथ्वीं दृष्टवानस्मि पार्थिव ।
अद्यापि तं लोकवरं ध्यायंस्तिष्ठामि सुव्रत ॥१८
कदा प्राप्स्येऽथ तं लोकमिति चिन्तापरोऽभवम् ।
एवं ते कौतुक राजन् कथितं परमेष्ठिनः ॥१९
यद्वृत्तं माम देहे तु किमन्यच्छ्रोतुमिच्छति ॥२०

आप अब इस द्रोणी में प्रवेश करके स्नान करने के लिये योग्य होते हैं । हे नराधिप ! इसके उपरान्त मैं उन तपस्वी के बचन से उस द्रोणी में प्रवेश करता ही हूं कि उसी बीच में वह द्रोणी डूब गयी थी । मैं द्रोणी में निमग्न हो गया था और मैंने उस ऋषि को और उस सबको देखा था ॥१५॥१६॥ तभी तक मैंने अपने आपको मेरु पर्वत की शिखर पर देखा था । वहां पर मैंने सात समुद्रों को और कुल पर्वतों को भी देखा था ॥१७। हे पार्थिव ! मैंने सातों द्वीपों वाली पृथ्वी को भी देखा था । हे सुव्रत ! मैं इस समय में भी उस श्रेष्ठ लोक का ध्यान करके स्थित रहा करता हूं ॥१८॥ मैं उसी समय से इसी चिन्ता में तत्पर हो गया था कि उस लोक को मैं कब प्राप्त करूंगा । हे राजन् इस प्रकार से मैंने परमेष्ठी का कौतुक आपको बतला दिया है । जो मेरे शरीर में है वह कह दिया है । अब यह बतलाये कि आप क्या श्रवण करना चाहते हैं ॥१९॥२०॥

—:※:—

७०—चारों युग का वर्णन

भगवन किं कृतं लोकं त्वया तमनुपश्यता ।
व्रतं तयो वा धर्मोवाः प्राप्त्यर्थं तस्य वै मुने ॥१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अनाराध्य हरिं भक्त्या न लोकान् कामयेद् बुधः ।
आराधिते हरौ लोका सर्वे करतलेऽभवन् ।।२
एवं संचिन्त्य राजेन्द्र मया विष्णु सनातनः ।
आराधितो वर्ष शतं क्रतुभिर्भूरिदक्षिणैः ।।३
आहूता आगता देवः सममेव सवासवाः ।
स्वे स्वे स्थाने स्थिता आसन्यावद्देवा सवासवाः ।।४
तावत्तत्रैव भगवाना गतो वृषभध्वजः ।
महादेवो विरुपाक्षस्त्र्यम्बको नील लोहितः ।
सोऽपि रौद्रे स्थितः स्थाने बभूव परमेश्वरः ।।५
तानहं संस्थितान् देवान्नारदादीनृषींस्तथा ।
सनत्कुमाररुद्रौ च दृष्ट्वाहमिदम ब्रुवम् ।।६
क एषां भवतां याज्यो वरिष्ठश्च नृपोत्तम ।
एवमुक्ते तदोवाच रुद्रो मां सुरसन्निधौ ।।७

हे भगवन् ! आपने उस लोक देखते हुए क्या किया था ? हे मुने ! आपने तप—धर्म या व्रत—इनमें से क्या किया था ? ।।१।। भक्ति की भावना से भगवान् हरि की आराधना न करके बुध पुरुष लोकों की कामना नहीं करे। भगवान् की आराधना करने पर तो सभी लोक कर तल में ही हो जाया करते हैं ।।२।। हे राजेन्द्र ! इस प्रकार से चिन्तन करके मैंने सनातन भगवान् विष्णु का समाराधन किया था। विपुल दक्षिणा वाले क्रतुओं के द्वारा एक सौ वर्ष पर्यन्त आराधना की थी ।। ३ ।। आवाहन किये हुए सभी देवगण इन्द्रदेव के सहित एक ही साथ वहाँ पर समागत हुए थे । वे सब अपने-अपने स्थानों पर विराजमान हो गये थे । जितने भी इन्द्र के सहित देवगण थे । उसी बीच में वृषभध्वज भगवान् भी वहाँ पर ही समागत हो गये थे। विरूपाक्ष—त्र्यम्बक—नील लोहित महादेव भी अपने रौद्र स्थान पर परमेश्वर स्थित हो गये थे ।। ४—५ ।। मैंने उन समस्त देवगणों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को—तथा नारद आदि ऋषियों को—सनत्कुमारों को—रुद्रों को देख कर मैंने यही कहा था ॥६॥ हे नृपोत्तम ! आप सभी यहाँ पर विराजमान हैं आप यह बतलाइये कि आप सबमें परम वरिष्ठ कौन है जिसका यजन करना चाहिए। इस तरह से जब मैंने कहा था तो उस समय में सब देवों की सन्निधि में रुद्रदेव ने मुझसे कहा था ॥७॥

शृण्वन्तु विबुधाः सर्वे तथा देवर्षयोऽमलाः ।
ब्रह्मर्षयश्च विख्याता सर्वे शृणवन्तु मे वचः ॥८
त्वं चागस्त्य महाबुद्धे शृणु मे गदतो वचः ।
यो यज्ञैरिज्यते देवो यस्मात्सर्वमिदं जगत् ॥९
उत्पन्नं सर्वदा यस्मिल्लीनं भवति सामरम् ।
नारायणः परो देवः सर्वरूपो जनार्दनः ॥१०
त्रिधात्मानं स भगवान्ससर्ज परमेश्वरः ।
रजस्तमोभ्यां युक्तोऽभूद्रजः सत्त्वाधिकं विभुः ॥११
ससर्ज नाभिकमलाद् ब्रह्माणं कमलासनम् ।
रजसा तमसा युक्तः सोऽपि मामसृजद्विभुः ॥१२
यत्सत्त्वं स हरि र्देवो यो हरिस्तं परं पदम् ।
ये सत्त्वरजसी सोऽपि ब्रह्मा कमलसम्भवः ॥१३
यो ब्रह्मा सैव देवस्तु या देवः स चतुर्मुखः ।
यद्रजस्तमसोपेतं सोपेतं सोऽहं नास्त्यत्र संशयः ॥१४

सब देवगण तथा अमल सब देवर्षि गण और परम विख्यात ब्रह्मर्षि गण सभी मेरे इस वचन भी अब श्रवण कीजिए ॥८॥ हे महती बुद्धि वाले ! हे अगस्त्य ! आप भी जो मैं कह रहा हूँ उस वचन को सुनिए। जो देव यज्ञों के द्वारा यजन किया जाया करता है और जिससे इस सम्पूर्ण जगत की समुद्भूति होती है ॥९॥ जिसमें उत्पन्न होता है और जिसमें देवों के सहित यह विश्व लीन होता है वह सबसे परम देव भगवान् नारायण ही हैं जो जनार्दन सबके स्वरूप वाले हैं ॥१०॥ उ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भगवान् ने तीन रूपों में अपने आपको परमेश्वर ने सृजन किया है। वह रजोगुण और तमोगुण से मुक्त होकर विभु सत्त्वाधिक हुए हैं ॥ ११ ॥ उन्होंने अपनी नाभि में स्थित कमल से कमलासन ब्रह्माजी का सृजन किया था। उसी विभु ने रज और तम से युक्त मेरा सृजन किया था ॥१२॥ जो सत्त्व है वही देव हरि हैं और जो हरि हैं वही परम पद है। जो सत्त्व और रज हैं वह भी कमलासन ब्रह्मा हैं ॥ १३ ॥ जो ब्रह्मा है वही देव है और जो देव है वही चतुर्मुख हैं। जो रज और तम से उपेत है मैं भी वही हूँ—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ १४ ॥

रजसा सत्ययुक्तेन भवेत्सृष्टी रजोऽधिका।
तच्च पैतामहं वृत्तं सर्वशास्त्रेषु पठ्यते ॥१५
यद्वेदवाह्यं कर्म स्याच्छास्त्रमुदिद्श्य सेव्यते।
तद्रौद्रमिति विख्यातं तन्नेष्टं गदितं नृणाम् ॥१६
यद्वान रजसा कर्म केवलं तामसं तु यत्।
तद्दुर्गति परं नृणामिह लोके परत्र च ॥१७
सत्त्वेन मुच्यते जन्तुः सत्त्वं नारायणात्मकम्।
नारायणश्च भगवान् यज्ञरूपी विभाव्यते ॥१८
कृते नारायणः शुद्धः सूक्ष्म रूप उपास्यते।
त्रेतायां यज्ञरूपेण पंचरात्रैस्तु द्वापरे ॥१९
कलौ मत्कृतमार्गेण बहुरूपेण तामसैः।
दूज्यते द्वेषबुद्धया सः परमात्मा जनार्दनः ॥२०
न तस्मत्परतो देवो भविता न भविष्यति।
यो विष्णुः स स्वयं ब्रह्मा यो ब्रह्मासो महेश्वरः ॥२१

सत्त्वयुक्त रजोगुण से रजोधिका सृष्टि होती है और पैतामह वृत्त है जो सभी शास्त्रों में पढ़ा जाया करता है ॥ १५ ॥ जो वेदों से बाह्य कर्म है और जो शास्त्र का उद्देश्य लेकर सेवन किया जाता है

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वही रौद्र —इस नाम से विख्यात है वह मनुष्यों के लिए इष्ट नहीं कहा गया है ॥१६॥ जो कर्म रजोगुण से भी युक्त न होकर केवल तामस ही होता है वह मानवों के लिये परम दुर्गति के करने वाला इस लोक में और परलोक में भी हुआ करता हैं ॥ १७ ॥ जन्तु सत्त्व से ही मुक्त हुआ करता है क्योंकि यह सत्त्व ही नारायण के स्वरूप वाला होता हैं। और भगवान् नारायण ही यज्ञरूपी विभावित हुआ करते हैं ॥ १८ ॥ कृतयुग में शुद्ध नारायण ही सूक्ष्म रूप वाले उपासित हुआ करते हैं। त्रेता में यज्ञ के रूप से और द्वापर में पञ्चरात्रों के द्वारा उपासना की जाया करती है ॥१९॥ कलियुग में तामस जीवों के द्वारा मेरे किये हुए मर्ण के ही द्वारा जो बहुत रूपों वाला है उपासना की जाया करती है। वह परमात्मा जनार्दन द्वेष की बुद्धि से ही यजन किये जाया करते हैं। उनसे पर कोई भी देव होगा और न हुआ है। जो विष्णु है वही ब्रह्मा हैं और जो ब्रह्मा हैं वही महेश्वर हैं ॥२०—२१॥

वेदत्रये च यज्ञेऽस्मिन्पण्डितेष्वेष निश्चयः ।
यो भेदं कुरुतेऽस्माकं त्रयाणां द्विजसत्तम ॥२२

स पापकारी दुष्टात्मा दुर्गतिं समवाप्नुयात् ।
इदं च शृणु मेऽगस्त्य गदतः प्राक्तनं तथा ॥२३
यथा कल्पं हरेर्भक्ति न कुर्वन्तीह मानवाः ।
भूर्लोकवासिनः सर्वे पुरा यष्ट्वा जनार्दनम् ॥२४
भुवर्लोकं प्रपद्यन्ते तत्रस्था अपि केशवम् ।
आराध्य स्वर्गति यान्ति क्रमान्मुक्त्वा व्रजन्ति हि ॥२५
एवं मुक्तिपदे व्याप्ते सर्वं लोकैस्तथैव च ।
मुक्ति भाजस्ततो देवास्तं दध्युः प्रयता हरिम् ॥२६
सोऽपि सर्वगतत्वाच्च प्रादुर्भूत सनातनः ।
उवाच ब्रूत किं कार्यं सर्वे योगिवराः सुराः ॥२७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ते तं प्रणम्य देवेशमुचुश्च परमेश्वरम् ।
देव देव जनः सर्वे मुक्ति मार्गे व्यवस्थितः ।।२८
कथं सृष्टिश्च भविता नरकेषु च को वसेत् ।
एवमुक्तस्ततो देवैस्तानुवाच जनार्दनः ।।२६

तीनों वेदों में—इस यज्ञ में—और पण्डितों के द्वारा भी यहाँ निश्चय है जो भी हममें कोई भेद की बुद्धि रखता है जो हम तीन हैं हे द्विज श्रेष्ठ ! ।।२२।। वह बहुत ही दुष्टात्मा है और पाप करने वाला है। वह दुर्गति को प्राप्त हुआ करता है। हे अगस्त्य ! यह प्राक्तम सिद्धान्त मैं कह रहा हूँ उसको मुझमे आप श्रवण कीजिए ।।२३।। जैसी हरि की भक्ति के करने का कल्प है मानवगण उस प्रकार से नहीं किया करते हैं। पहिले भूलोक के निवासीगण जनार्दन प्रभु का यजन करके भुवर्लोक में प्राप्त हुआ करते थे और वहाँ पर भी केशव की आराधना करके स्वर्ग में गमन किया करते हैं। इस तरह से क्रम मे मुक्त होकर गमन किया करते हैं ।।२४।।२५।। उसी भाँति से सब लोकों के द्वारा मुक्ति पद के व्याप्त होने पर सभी मुक्ति के सेवन करने वाले होते हैं। देव भी प्रपत होकर उन हरि का चिन्तन किया करते थे ।।२६।। वह भगवान् भी सर्वगत होने से सनातन प्रभु का प्राहुर्भूत होते हैं और प्राहुर्भूत होकर फिर उन्होंने देवों से कहा था—हे सुरगणो ! हे योगिश्वरो ! वोलिए, आपका क्या कार्य है। भगवान् ऐसा कहा तो उन सब ने देवेश्वर को पहिले प्रणाम किया था और फिर उन्होंने परमेश्वर से कहा था—हे देवों के भी देव ! सभी जन मुक्ति के मार्ग में व्यवस्थित हैं। यह सृष्टि कैसे होगी और फिर नरकों में कौन निवास करेगा। इस प्रकार से देवों ने परमात्मा से कहा था तो उन जनार्दन प्रभु ने उनसे कहा था ।।२७।।२८।।२६।।

युगानि त्रीणि वहवो मामुपेष्यन्ति मानवाः ;
अन्त्ये युगे प्रविरला भविष्यन्ति महाश्रयाः ।।३०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एष मोहं सृजाम्याशु योजनं मोहयिष्यति ।
त्वं च रुद्र महाबाहो मोहशास्त्राणि कारय ।।३१
अल्पायासं दर्शयित्वा मोहयाशु महेश्वर ।
एव मुक्त्वा तदा तेन देवेन परमेष्ठिना ।।३२
आत्मा तु गोपिता सद्यः प्रकाशोऽहं कृतस्तदा ।
तस्मादारभ्य कालात्तु मत्प्रणीतेषु सत्तम ।।३३
शास्त्रेष्व भिरतो लोको बाहुल्येन भवेदतः ।
वेदानुवर्तिनं मार्गं देवं नारायणं तथा ।।३४
एकी भावं च पश्यन्तो मुक्ताश्चैव भवन्ति ते ।
मां विष्णोर्व्यतिरिक्तं ये ब्रह्मणश्च द्विजोत्तम ।।३५

तीन युग हैं। उनमें बहुत से मनुष्य मुझको प्राप्त करेंगे। अन्तिम जो कलियुग है उसमें विरले ही पुरुष मेरे आश्रय में पहुँचने वाले होंगे ।।३०।। मैं इस प्रकार के मोह का बहुत ही शीघ्र सृजन करता हूँ कि जो मनुष्यों को मोहित कर दिया करेगा। और हे रुद्र ! हे महा-बाहो ! आप ही मोहशास्त्रों को करिए ।।३१।। हे महेश्वर ! अल्प आभास दिखलाकर शीघ्र ही मोहित करिए। उन परमेष्ठी देव ने इस प्रकार से कहकर अपनी आत्मा का तुरन्त ही गुप्त कर लिया था और तब मैं प्रकाश किया गया था। उसी काल से आरम्भ करके हे श्रेष्ठ-तम ! मेरे द्वारा प्रणीत शास्त्रों में निरतलोक अधिकता से होंगे। वेदों का अनुवर्त्तन करने वाले मार्ग को तथा देव नारायण को एक ही स्वरूप में देखते हुए मनुष्य मुक्त होते हैं। हे द्विजोत्तम ! जो ब्रह्म के और विष्णु के व्यतिरिक्त मुझको अर्चित किया करते हैं ।।३२—३५।।

भजन्ते पापकर्माणस्ते यान्ति नरकं नराः ।
ये वेदमार्ग निर्मुक्तास्तेषां मोहार्थमे वच ।।३६
नय सिद्धान्त संज्ञाभिर्मया शास्त्रंतु दर्शितम् ।
पाशोऽयं पशुभावस्तु स यदा पतितो भवेत् ।।३७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तदा पाशुपतं शास्त्रं जायते वेदसंज्ञितम् ।
वेदमूर्ति रहं विप्र नान्य शास्त्रार्थं वादिभिः ॥३८
युगानि त्रीष्यहं विप्र ब्रह्मा विष्णुस्तथैव च ।
त्रयोऽपि सत्वादि गुणास्त्रयो वेदास्त्रयोऽग्नयः ॥३६
त्रयो लोकास्त्रयः सन्ध्यास्त्रयो वर्णास्तवैव च ।
सवनानि तु तावन्ति त्रिधा बद्धमिदं जगत् ॥४०
य एवं वेत्ति विप्रर्षे परं नारायणं तथा ।
अपरं पद्मयोनिं तु ब्रह्माणं त्वपरं तुमाम् ।
गुणतो मुख्य तस्त्वेक एवाहं मोह इत्युभे ॥४१

जो भी यजन किया करते हैं अर्थात् मुझसे अतिरिक्त का यजन करते हैं वे पाप कर्म करने वाले हैं और वे नर नरक में गमन किया करते हैं। जो वह के मार्ग से निर्मुक्त हैं उनके ही मोह के लिये यह है। ॥३६॥ भय के सिद्धान्तों की संज्ञाओं से मैंने शास्त्र को दर्शित किया है। वह जय पतित होता है तो यह पाप और पशुभाव ही होता है ॥३७॥ तब पाशुपत शास्त्र वेद संज्ञा वाला हो जाता है। हे विप्र ! मैं वेद मूर्त्ति हूँ। शास्त्र के अर्थ के वादियों के द्वारा अन्य नहीं है ॥३८॥ हे विप्र ! युग तीन हैं और मैं ब्रह्मा-विष्णु हूँ। तीनों सत्त्वादिगुण हैं—तीन वेद हैं और तीन अग्नियाँ हैं ॥३६॥ तीन लोक हैं—तीन सन्ध्यायें हैं—तीन वर्ण हैं। सब नभी उतने ही अर्थात् तीन ही हैं। यह सम्पूण जगत् तीनों से ही आवद्ध है ॥४०॥ हे विप्रर्षे ! जो इस तरह से ज्ञान रखता है कि पर नारायण—दूसरे पद्मयोनि—अन्य ब्रह्मा और अपर मुझको जानता है। गुण से मुख्य तथा एक ही हैं और वह मैं ही हूं यह मोह ही होया है ॥४१॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

७१--कलियुग में ब्राह्मणों की अधोगति

मोहनार्थं तु लोकानां त्वया शास्त्र पृथक् कृतम् ।
तत्त्वया हेतुना केन कृतं देव वदस्व नः ।।१
अस्त्येकं भारतेवर्षे वने दण्डक संज्ञितम् ।
नत्र तीव्र तपो घोरं गौतमो नाम वै द्विजः ।।२
चकार तस्य ब्रह्मा तु परितोषं गतः प्रभुः ।
उवाच तं मुनिं ब्रह्मा वरं ब्रूहि तपोधन ।।३
एवमुक्तस्तदा तेन ब्रह्मणा लोक कर्तृणा ।
उवाच सस्य पंक्ति मे धान्यानां देहि संगता ।।४
एवमुक्तो ददौ तस्य तमेवार्थं पितामहः ।
लब्ध्वा तु तं वरं विप्रः शतश्रृंगे महाश्रमम् ।।५
चकार तस्योषसि च पाकान्ते शालयो द्विजैः ।
लूयन्ते तेन मुनिना मध्याह्वे पच्यते तथा ।।६
सर्वाति घमसौ विप्रो ब्राह्मणेभ्यो ददात्यलम् ।
कस्यचित्तथ कालस्य महतो द्वादशाब्दिका ।।७

लोकों के मोहन करने के लिये आपने शास्त्र पृथक् किया है। यह आपने किस हेतु से ऐसा किया है ? कृपा करके यह हमको बतलाइए ।।१।। भारत वर्ष में एक दण्डक नाम वाला बन है। वहाँ पर द्विज गौतम नाम वाले ने परमाधिक तीव्र और घोर तप किया था ।।२।। उस पर ब्रह्माजी परम प्रसन्न हुए थे। ब्रह्माजी ने वहां पर समागत होकर उससे कहा था—हे तपोधन ! जो भी चाहते हो मुझसे वरदान बोलो ।।३।। जब लोकों की रचना करने वाले ब्रह्माजी ने उससे इस प्रकार से कहा था तो उसने यही कहा था कि मुझे धान्यों की सङ्गत सस्य पंक्ति मुझे दीजिए ।।४।। जब इस तरह से ब्रह्माजी ने कहा था तो पित्रामह ने उसको वही प्रदान किया था। उस विप्र ने उस वरदान की

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राप्ति करके फिर शत शृङ्ग में एक बड़ा आश्रम बनाया था ।।५।। प्रातःकाल में पाक के अन्त में द्विजों के द्वारा शालियों की लुनाई की जाती हैं और उस मुनि के द्वारा मध्याह्न में उनका पाचन किया जाया करता है ।।६।। यह विप्र सबका अतिथ्य दिया करता था और ब्राह्मणों के लिये पर्याप्त मात्रा में देता था। इसके अनन्तर किसी समय में बारह वर्ष पर्यन्त की भारी अनावृष्टि हुई थी ।।७।।

अनावृष्टिः द्विजवर ह्यभवल्लोम हर्षिणी ।
तां दृष्ट्वा मुनयः सर्वे अनावृष्टि वनेचराः ।।८
क्षुधया पीडयमानाश्च प्रययुर्गौतमं तदा ।
अथ तानागतान्दष्ट्वा गौतमः शिरसा नतः ।।९
उवाच स्थीयतां मह्यं गृहे मुनिवरात्मजाः ।
एवमुक्तास्तु ते तेन तस्थुर्विविध भोजनम् ।।१०
भुंजमाना अनावृष्टिर्यावत्सा निवृत्ताऽभवत् ।
निवृत्तायां च ते तस्यामना वृष्टयां तु ते द्विजाः ।।११
तीर्थयात्रानिमित्तं तु प्रयातुमनसोऽभवन् ।
तत्र शाण्डिल्य नामानं तापसं मुनिसत्तमम् ।।१२
प्रत्युवाचेति संचिन्त्य मारीचः परमो मुनिः ।
शाण्डिल्य शोभन वक्ष्ये पिता ते गौतमो मुनिः ।।१३
तमनुक्त्वा न गच्छामस्त पश्चतुं तपोवनम् ।
एवमुक्तेऽथ जहसुः सर्वे ते मुनयस्तथा ।।१४

हे द्विजवर ! वह अनावृष्टि वड़ी भारी लोम हर्षिणी हुई थी। वहाँ पर रहने वाले बहुत से मुनि और वनचरों ने उस अनावृष्टि को देखा था ।।८।। वे सभीं भूख से पीड़ित होकर उस गौतम के पास गये थे। उस गौतम ने उन सबको समागत हुये देखा था और शिर से सबको प्रणाम किया था ।।९।। उन सबसे उस गौतम ने कहा था—हे मुनिवरों के पुत्रो ! आप यहाँ पर ही मेरे गृह में ठहरिये। जब उसके द्वारा ऐसा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहा गया था तो वे सब वहाँ पर ही स्थित हो गये थे। और अनेक प्रकार के भोजनों का खाते हुए वहाँ पर तब तक रहे थे जब तक वह अनावृष्टि समाप्त हुई थी। जब अनावृष्टि निवृत्त हो गई थी तो वे सब द्विजगण तीर्थ यात्रा करने के लिये गमन करने के मन वाले हुए थे। उस समय में एक शाण्डिल्य नाम वाले श्रेष्ठ मुनि से जो महान् तपस्वी था एक महान् श्रेष्ठ मुनि मारीच ने कुछ सोच—विचार करके कहा था—हे शाण्डिल्य आपके पिता मुनि गौतम ने परम शोभन किया है। उनको कुछ भी न कहकर हम तपोवन में तपश्चर्या करने के लिये नहीं गमन करते हैं। ऐसा कहने पर वे सभी मुनिगण ने इस कथन का उपहास किया था ॥१०—१४॥

किमस्याभिः स्वको देहौ विक्रीतोऽस्यान्नभक्षणात् ।
एवमुक्त्वा पुनश्चोचुः सोपाधिं गमनं प्रति ॥१५
कृत्वा मायामयीं गां तु तच्छालायां व्यसर्जयन ।
तां चरन्तीं ततो दृष्ट्वा शालायां गौतमो मुनिः ॥१६
गृहीत्वा सलिलं पाणो 'प्राणिरुद्र' त्यंभाषत ।
ततो मायामयी सा गौः पपात् जल बिन्दुवत् ॥१७
तां ततो दृष्ट्वा मुनीन् जिगमिषूंस्तथा ।
उवाच गौतमो धीमांस्तान्मुनीन् प्रणतः स्थितः ॥१८
किमर्थं गम्यते विप्राः साधु शंसत मा चिरम् ।
मां विहाय सदा भक्तं प्रणतं च विशेषतः ॥१९
गोवध्यंयमिह ब्रह्मन्यावत्तव शरीरगा ।
तावदत्र न भुंजामों भवतोऽन्नं महामुने ॥२०
एवमुक्तो गौतमस्तु तानमुनीन्प्राह धर्मावित् ।
प्रायश्चिन्तं गोवधस्य दीयतां मे तपोधनाः ॥२१

क्या हमने अन्न के भक्षण करने से अपना शरीर बेच दिया है। ऐसा कहकर फिर उन्होंने गमन के प्रति सोपाधि कहा था ॥१५॥ उन्होंने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एक माया मयी गौ को बनाकर उसको शाला में छोड़ दी थी। इसके पश्चात् शाला में उस गौ को चरती हुई उस गौतम मुनि ने देखा था। ॥१६॥ उसने हाथ में जल ग्रहण करके "प्राणिरुद्र"—इसको बोला था। इसके उपरान्त वह मायामयी गौ जल की विन्दु के समान गिर गयी थी ॥१७॥ इसके अनन्तर गौतम ने उन गमन करने की इच्छा वाले मुनियों को देखकर उन धीमान् ने परम प्रणत स्थित होकर उनसे कहा था। हे विप्रो ! आप यहाँ से किस लिये जा रहे हैं--यह ठीक तरह से बतलाइये और इस वताने में विलम्व न कीजिए। मुझ सरीखे सदा परम प्रणत भक्त को छोड़ कर विशेष रूप से गमन कर रहे हैं ॥१८॥१९॥ उन्होंने उत्तर दिया था कि हे ब्रह्मन् ! यहाँ पर आपने गाय का वध किया है। वह हत्या जब तक आपके शरीर में है हे महा मुने ! तब तक यहाँ पर हम आपके अन्न को नहीं खायेंगे।२०। इस तरह से जब वह गौतम मुनि से कहा गया था तब वह गौतम बहुत धर्म के ज्ञाता थे उन सब मुनियों से बोले—हे तपोधनो ! इस गाय के वध के लिये आप मुझे कोई प्रायश्चित देने की कृपा करें ॥२१॥

इयं गौरमृता ब्रह्मन् मूर्च्छितेव व्यवस्थिता।
गंगाजल प्लुता चेयमुत्थास्याति न संशयः ॥२२
गतैस्तंगौतमो धीमान् हिमवन्तं महागिरम्।
आरिराधयिषु प्रायात्तप्तुं चाशु महातपः ॥२३
शतमेकं तु वर्षाणाम हमाराधितोऽभवम्।
तुष्टे न च मया प्रोक्तो वरं वरय सुव्रत ॥२४
सोऽब्रवीन्मां जटासंस्थां देहि गङ्गां तपस्विनीम्।
मया सार्द्धं प्रयात्वेषा पुण्या भागीरथी नदी ॥२५
एव मुक्ते जटा खण्डमेकं स प्रददौ शिवः।
तां गृह्य गतवासोन्सोऽपि पत्रास्ते सा तु गौर्मृता ॥२६
तज्जल प्लाविता सा गौर्गता चोत्थाय भामिनी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नदी च महती जाता पुण्यतोया शुचिह्लदा ।।२७
तं दृष्ट्वा महदाश्चर्यं तत्र सप्तर्षयोऽमलः ।
आजग्मुश्च विमानस्थाः साधु साध्विवति वादिनः ।।२८

हे ब्रह्मन् ! यह गौ मृता नहीं है। और यह मूर्च्छित की तरह ही स्थित है—इसमें संशय नहीं है। उनके चले जाने पर धीमान् गौतम महान् गिरि हिमवान् में आराधना करने की इच्छा वाला महान् तप का समाचरण करने के लिये शीघ्र ही चला गया था ।।२२।।२३।। एक सौ वर्ष तक मैं आराधित हुआ था। फिर मैंने प्रसन्न होकर उससे कहा था कि हे सुव्रत ! कोई भीं वरदान का वरण करलो ।।२४।। उसने मुझसे कहा था कि आप अपनी जटा में स्थित तपस्विनी गङ्गा को मुझे प्रदान कीजिए। यह परम पुण्य रूपा भागीरथी नहीं मेरे ही साथ गमन करे ।।२५।। इस तरह से कहने पर उन भगवान् शिव ने मुझको एक जटा का खण्ड दे दिया था। उसको ग्रहण करके वह भी वहाँ पर ही चला गया था जहाँ पर वह गौ मृत थी ।।२६।। वह गौ माता उसने जल से प्लवित होकर भामिनी उठ खड़ी हुई थी और वह नदी शुचि ह्लद वाली पुण्य तोया महती हो गई थी ।।२७।। उसको देख कर जो एक महान् आश्चर्य था अमल सप्तर्षिगण वहाँ पर समागत हुए थे। वे सब विमानों में स्थित थे और अच्छा हुआ—बहुत साधु हुआ—यही कह रहे थे ।।२८।।

साधु गौतम साधूनां कोऽस्ति वा सदृशं तव ।
यदेवं जाह्नवी देवी दण्डके चावतारिता ।।२९
एवमुक्तस्तदा तैस्तु गौतमः किमिदं त्विति ।
गोवध्याकारणं मह्यं तावत्पश्यति गौतमः ।।३०
ऋषीणां मायया सर्वमिदं जातं विचिन्त्य वैं ।
शशाप तान् जटाभस्ममिथ्याव्रत धरांस्तथा ।।३१
भविष्यथ त्रयी बाह्या वेदकर्म बहिष्कृताः ।
तच्छ्रुत्वा क्रूर वचनं गौतमस्य महामुनेः ।।३२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ऊचुः सप्तर्षयो मैवं सर्वं कालं द्विजोत्तम ।
एवन्तु किन्तु ते वाक्यं मोघं नास्त्यत्र संशयः ।।३३
यदि नाम कलौ सर्वे भविष्यन्ति द्विजोत्तमाः ।
उपकाराणि एते हि अपकर्त्तार एव तु ।।३४
इत्यम्भूता अपि कलौ भक्तिभाजो भवन्तु ते ।
त्वद्वाक्यवह्नि निर्दग्धाः सदा कलियुगे द्विजाः ।।३५

सबने कहा था—हे गौतम ! बहुत ही अच्छा किया है। साधुओं में आपके समान कौन है अर्थात् कोई भी नहीं है जिसने इस जाह्नवी देवी को इस दण्डक वन में अवतारित किया है ।।२६।। इस प्रकार से जब गौतम से कहा गया था तो वह गौतम ने कहा था-यह क्या हुआ है। तब तक गौ के वध्य होने का कारण गौतम ने देखा था कि यह सभी कुछ ऋषियों की माया से ही हुआ था—यह विचार करके उसने उन मिथ्या जटा और भस्म के धारण करने वालों को शाप दे दिया था। शाप यही दिया था कि आप लोग सब त्रयी से बाह्य और वेद कर्म से वहिष्कृत हो जाओगे। उस महा मुनि के इस क्रूर वचन का उन्होंने श्रवण किया था ।।३०।।३१।। हे द्विजोत्तम ! उन सप्तर्षियों ने कहा था--सब काल में ऐसा नहीं होना चाहिए। किन्तु इस तरह से आपका यह वाक्य मोघ (व्यर्थ) नहीं है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।३३।। यदि कलियुग में सभी द्विजगण ऐसे ही हो जाँयगे तो ये सब अपकार करने वाले होंगे ।।३४।। कलियुग में इस प्रकार के होते हुए भी वे भक्ति के सेवन करने वाले होवें। ये द्विजोत्तम सदा ही कलियुग में आपके नाम की अग्नि से निर्दग्ध हो जाँयगे ।।३५।।

भविष्यन्ति क्रिया हीना वेद कर्म बहिष्कृताः ।
अस्याश्च गौणनामेह नदी गोदावरीति च ।।३६
एवमुक्त्वाथ मुनयो ययुः कैलास पर्वतम् ।
यत्राहमुमया सार्द्धं सदा तिष्ठामो सत्तमाः ।
ऊचुर्मां ते च मुनयो भवितारो द्विजोत्तमाः ।।३७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कलौ तद्रूपिण: सर्वे जटामुकुट धारिण: ।
स्वेच्छया प्रेतवेषाश्च मिथ्यालिङ्गधरा: प्रभो ।।३८
त्वं तेषामनुग्रहार्थाय किंचिच्छास्त्र प्रदीयताम् ।
ये चास्मद्वंशजा: सर्वे वर्तेयु: कलि पीड़िता: ।।३९
एवमभ्यार्थितस्तैस्तु पुराहं द्विजसत्तम ।
वेद क्रिया समायुक्तां कृतवानस्मि संहिताम् ।।४०
नि:श्वासाख्यां ततस्तस्यां लीना वाभ्रव्य शाण्डिला: ।
अल्पापराधं श्रुत्वैव गतास्ते दाम्भिका भवन् ।।४१
क्षयं निनीषता दैत्यान्सोऽहृदासो मया कृत: ।
य: पुरा तत्र ते मह्यां पतिता अश्रू बिन्दव: ।
असंख्यातास्तु ते रौद्रा भविताऐ महीतले ।।४२

कलियुग में सभी द्विजगण क्रिया से हीन और वेदकर्म से वहिष्कृत हो जाँयगे और इस नदी का गोण नाम इस लोक में गोदावरी होगा ।। ३६ ।। इस तरह से कहकर सब मुनिगण कैलास पर्वत पर गमन करने गये थे। हे श्रेष्ठ तमो ! जहाँ पर मैं उमादेवी के साथ में सदा ही स्थित रहा करता हूँ । और उन मुनियों ने मुझसे कहा था कि हे प्रभो ! कलियुग में सभी द्विजगण उसी रूप के धारण करने वाले होंगे जो कि सब जटा और मुकटों के धारी और अपनी हीं इच्छा से प्रेत के वेष वाले झूठे चिह्नों के रखने वाले हो जाँयगे ।। ३७ ।। ३८ ।। उनके ऊपर अनुग्रह करने के लिये कोई सा शास्त्र का प्रदान कीजिए जो कि हमारे वेश में समुत्पन्न हुए सब कलि से पीड़ित होंगे । हे द्विजोत्तम ! जब उनके द्वारा मेरी इस प्रकार से प्रार्थना की गयी थीं तब मैंने पाहले वेद क्रिया से समायुक्त से हिता को किया था ।। ३९ ।। ४० ।। इसके अनन्तर नि:श्वासाख्या उसमें वाभ्रव्य शाण्डिल लीना हो गये थे। अल्प अपराध को सुनकर ही वे गये थे और दाम्भिक हो गये थे ।। ४१ ।। दैत्यों का क्षण करते हुए

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मैंने अट्टहास किया था। मैंने जो पहिले यह किया था वहां पर मही में अश्रुओं को विंदु गिर गयी थी। और वे असंख्य रौद्र महीजल में हो गये थे ॥ ४२ ॥

उच्छुष्मनिरता रौद्राः सुरामांस प्रियाः सदा।
स्त्रीलोलाः पापकर्माणः सम्भूता भूतलेषु ते ॥४३
तेषां गौतम शापाद्धि भविष्यन्त्यन्वये द्विजाः।
तेषां मच्छासनरताः सदा चाराश्च ये द्विजाः ॥४४
स्वर्गं चैवापवर्गं च इत्युक्ता संशयात्पुरा।
वैदान्तिकाऽधो यास्यन्ति मम सन्तति दूषकाः ॥४५
प्राग्गौतमाऽग्निना दग्धाः पुनर्मद्वचनाद्द्विजाः।
नरकं तु गमिष्यन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥४६
एवं मया ब्रह्मसुताः प्रोक्ता जग्मुर्यथा गतम्।
गौतमोऽपि स्वकं गेहं जगामाशु परन्तपः ॥४७
एतद्वः कथितं विप्रा मया धर्मस्ल यक्षणम्।
एतस्माद्विपरीतो यः स पाखंडरतो भवेत् ॥४८

वे रौद्र उच्छुष्म में निरत रहने वाले और सदा सुरा और मांस से प्यार करने वाले तथा स्त्रियों में चञ्चल और पापकर्मों के करने वाले भूतलों में हो गये थे ॥ ४३ ॥ गौतम के शाप से उनके वंश में द्विज होंगे। उनमें जो मेरे शासन में रति रखने वाले और जो सदाचारी द्विज हैं। उनसे संशय से पूर्व ये कहा गया था कि स्वर्ण और अपवर्ग दोनों हैं। जो वैदान्त्रिके हैं और मेरी सन्तनि के दूषक हैं वे अधोभाग में गमन करेंगे ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ पहिले गौतम मुनि की अग्गि से दग्ध हुए हैं और मेरे वचन से द्विजगण नरक में जांयगे—इस विषय मे कुछ भी विचार नहीं करना चाहिए अर्थात् यह निस्सन्देह ही है ॥ ४६ ॥ इस रीति से मेरे द्वारा ब्रह्माजी के सुरा कहे गये थे और जैसे समागत हुए थे वैसे ही चले गये थे। परन्तय गौतमभी शीघ्र ही अपने गृह को

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गमन कर गये थे ॥ ४७ ॥ हे विप्रो ! यह आपको बता दिया गया है जो भी धर्म्म का लक्षण है । इससे जो विपरीत है वह पाषण्ड में ही रत होता है ॥ ४८ ॥

७२–प्रकृति पुरुष निर्णय

सर्वज्ञं सर्वकर्तारं भवं रूद्रं पुरातनम् ।
प्रणम्य प्रयतोऽगस्त्यः पप्रच्छ परमेश्वरम् ॥१
भवान ब्रह्मा च विष्णुश्च त्रयमेतत् त्रयी स्मृता ।
दीपोऽग्निदीप संयोगैः सर्वशास्त्रेषु सर्वगः ॥२
कस्मिन् प्रधानो भगवान् काले कस्मिन्नधोक्षजः ।
ब्रह्मा वा एतदाचक्ष्व मम देव त्रिलोचन ॥३
विष्णुरेव परं ब्रह्म त्रिभेदमिह पठ्यते ।
वेद सिद्धान्त भार्गेषु तन्न जानन्ति मोहिताः ॥४
विश प्रवेशने धातुस्तत्र स्नुप्रत्ययादनु ।
विष्णुर्यः सर्वदेवेषु परमात्मा सनातनः ॥५
योऽयं विष्णस्तु दशधा कीर्त्यते चैकधा द्विजाः ।
स आदित्यो महाभाग योगैश्वर्य समन्वितः ॥६
यो देवकार्याणि सदा कुरूते परमेश्वरः ।
मनुष्य भाव माश्रित्य स मां स्तौति युगे युगे ॥७

सभी कुछ का ज्ञान रखने वाले—सभी की रचना करने वाले—भव-रुद्र और पुरातन के लिये प्रणाम करके स्वयं बहुत ही प्रयत होकर अगस्त्यजीं ने परमेश्वर से पूछा था ॥ १ ॥ हे भगवान् ! आप—ब्रह्मा और विष्णु—इन तीनों को ही त्रयी कहा गया है। सभी शास्त्रों में अग्नि दीप के संयोगों से दीप हैं और सब में गमन करके स्थित रहने वाले हैं ॥ २ ॥ किस में आप प्रधान हैं और किस काल में अधोक्षज

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रमुख हैं। अथवा ब्रह्माजी प्रधान है—हे त्रिलोचन देव ! यही आप मुझको वतलाने की कृपा करिए ॥ ३ ॥ इसके उत्तर में कहा था—कि भगवान् विष्णु ही परब्रह्म हैं। यहाँ पर त्रिभेद पढ़ा जाता है। वेदों के सिद्धान्त के मार्ग में जो मोहित होते हैं वे इसको नहीं जानते हैं ॥ ४ ॥ विश् प्रवेश में अर्थात् प्रवेश करने में एक धातु है। उसमें स्नुप्रत्यय होता है। इसमें ही पश्चात् 'विष्णु'—यह शब्द निस्पन्न हुआ करता है। नदी समस्त देवों में सनातन परमात्मा है ॥ ५ ॥ हे द्विज ! जो यह एक ही प्रकार के विष्णु भगवान हैं वे दश प्रकार से कीर्त्तित किये जाया करते हैं। हे महाभाग ! वह आदित्य है जो योग और ऐश्वर्य से समन्वित है ॥ ६ ॥ जो परमेश्वर सदा ही देवों के कार्यों को किया करते हैं। मनुष्य के भाव का समाश्रय ग्रहण करके ही देव कार्यों को किया करते हैं और युग-युग में मेरा स्तवन किया करते हैं ॥ ७ ॥

लोकमार्गं प्रवृत्त्यर्थं देव कार्यार्थं सिद्धये ।
अहं च तौ सदा स्तौमि श्वेतद्वीपे कृते युगे ॥८
सृष्टि काले चतुवक्त्रं स्तौमि कालो भवामि च ।
ब्रह्मा देवासुराः स्तौति मां सदा तु कृते युगे ॥९
लिङ्गमूर्तिं च मां देवा यजन्ते भोग कांक्षिणः ।
सहस्र शीर्षकं देवं मनसा तु मुमुक्षवः ॥१०
यजन्ते यं स विश्वात्मा देवो नारायणः स्वयम् ।
ब्रह्म यज्ञेन ये नित्यं यजन्ते द्विज सत्तम ॥११
ते ब्रह्माणं प्रीणयन्ति वेदो ब्रह्मा प्रकीर्तितः ।
नारायणः शिवो विष्णुः शङ्करः पुरुषोत्तमः ॥१२

लोकों के कार्यो की प्रवृत्ति के लिये और देवों के कार्य तथा अर्थ की सिद्धि के लिये मैं सदा ही कलयुग में श्वेतद्वीप में उन दोनों का स्तवन किया करता हूँ ॥ ८ ॥ लोकों की सृष्टि के काल में मैं चतुर्वक्त्र ब्रह्मा की स्तुति किया करता हूँ। और काल हो जाता हूँ। कृतयुग में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ब्रह्मा-देव-असुर सभी सदा मेरा ही स्तवन किया करते हैं ।। ९ ।। भोगों के उपभोग की काङ्क्षा रखने वाले देवगण लिङ्ग की मूर्त्तिधारी मेरा ही यजन किया करते हैं। सहस्र शीर्षों वाले देव को मुक्ति की इच्छा रखने वाले मन के द्वारा जिसका यजन किया करते हैं वही विश्वात्मा देव स्वयं नारायण हैं। हे द्विजश्रेष्ठ ! जो नित्य ही ब्रह्म यज्ञ के द्वारा यजन किया करते हैं वही नारायण-शिव-विष्णु-शङ्कर और पुरुषोत्तम हैं ।। १० ।। ११ ।। १२ ।।

एतेषु नामभिर्ब्रह्म परं प्रोक्तं सनातनम् ।
कर्मवेदयुजां विप्र ब्रह्मा विष्णुर्महेश्वरः ।।१३
वयं त्रयोऽपि मन्त्राद्या नात्र कार्या विचारणा ।
अहं विष्णुस्तथा वेदा ब्रह्म कर्माणि चाप्युत ।।१४
एतत्त्रयं त्वेकमेव न पृथग्भावयेत्सुधीः ।
योऽन्यथा भावयेदेतत्पक्षपातेन सुव्रत ।।१५
स याति नरकं घोरं तेनैव पाप पूरुषाः ।
अहं ब्रह्मा च विष्णुश्च ऋग्यजुः साम चैव तु ।।१६

इनमें नामों के द्वारा सनातन पर ब्रह्म कहे गये हैं। हे विप्र ! कर्म वेद के योग करने वालों के वह ही ब्रह्मा—विष्णु और महेश्वर हैं ।।१३।। हम तीनों की मन्त्राद्य हैं इस विषय में कुछ भी चर्चा नहीं करनी चाहिए। मैं तथा विष्णु और वेद तथा ब्रह्म कर्म्म समुदाय—यह तीनों एक ही हैं। सुधी इनकी पृथक् भावना नहीं करें। हे सुव्रत ! जो इनतीनों को अन्य प्रकार से भावित किया करता है और पक्षपात करता है वह निश्चय ही महान् घोर नरक में गमन किया करता है और इस प्रकार से इसी कारण से वे पाप पुरुष होते हैं। मैं ब्रह्मा तथा विष्णु और ऋग्वेद—सामवेद और यजुर्वेद हैं।। १४—१६ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

७३--विराट पुरुष वर्णन

शृणु चान्यद् द्विज श्रेष्ठ कौतूहल समन्वितम् ।
अभूतपूर्वं सलिले मग्नेन मुनि पुङ्गव ॥१
ब्रह्मणाहं पुरा सृष्टः प्रोक्तश्च सृज वै प्रजाः ।
अविज्ञानसमर्थोहं निमग्न सलिले द्विज ॥२
तत्र यावत् क्षणं चैके तिष्ठामि परमेश्वरम् ।
अंगुष्ठ मात्र पुरुष ध्यायन्प्रयतमानसः ॥३
तावज्जलात्समुत्तस्थुः प्रलयाग्नि सम प्रभाः ।
पुरुषा दश चैकश्च तापयन्तोंशुभिर्जलम् ॥४
मया पृष्टः के भवन्तो जलादुत्तीर्य तेजसा ।
तापयन्तो जलं चेदं क्व वा यास्यथ शंसत ॥५
एवमुक्ता मया ते तु नोचुः किंचन सत्तमाः ।
एव मेव गता स्तूष्णीं ते नरा द्विजपुङ्गवा ॥६
ततस्तेषामनु महापुरुषोऽतीव शोभनः ।
स तस्मिन्मेघसंकाश पुण्डरीक निभेक्षणः ॥७

हे द्विज श्रेष्ठ ! अब आप अन्य एक बात का श्रवण कीजिए जो महान् कौतूहल से युक्त है। हे मुनि श्रेष्ठ ! (अभूतपूर्व जो पहिले कभी न हुआ हो) जल में निमग्न ब्रह्माजी के द्वारा सबसे प्रथम मेरा सृजन किया गया था और मुझसे कहा गया था कि प्रजाओं का सृजन करो। हे द्विज ! अविज्ञान का यह अर्थ है इस विचार से मैं जल में निमग्न हो गया था ॥ १ ॥ २ ॥ वहाँ पर जब तक एक क्षणभर मैं परमेश्वर का जो एक अगुष्ठ मात्र प्रमाण वाले पुरुष हैं मैं प्रपतामन होकर ध्यान करता था तब तक उस जल से प्रलय काल की अग्नि के समाम प्रभा से समन्वित दश और एक पुरुष समुत्थित हुए थे। जो जल को अपने तेज की किरणों से ताप दे रहे थे ॥३॥४॥ मेरे द्वारा यह पूछा गया था कि आप कौन हैं जो जल से उत्तीर्ण होकर अपने तेज के द्वारा इस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जल को ताप दे रहे हैं। आप कहां जायगे—यह कृपाकर मुझे बतलाइए ॥५॥ वे परम श्रेष्ठ थे। उनसे जब मैंने पूछा था तो उन्होंने मुझको कोई भी उत्तर नहीं दिया था। हे द्विज प्रङ्गवो ! वे नर इसी प्रकार से चुप चाप वहाँ से चले गये थे ॥६॥ इसके अनन्तर उनके पीछे एक परमाधिक शोभन महापुरुष समुत्थित हुए थे। वे मेघ के समान नीलवर्ण वाले थे और उनके लोचन पुण्डरीक के सदृश थे ॥७॥

तमहं पृष्टवान्कस्त्वं के चेमे पुरुषा गताः।
किं वा प्रयोजनमिह कथ्यतां पुरुषर्षभ ॥८
य एते वै गताः पूर्वं पुरुषा दीप्ततेजसः।
आदित्यास्तेऽञ्जसा यान्ति ध्याता वै ब्रह्मणा भवन् ॥९
सृष्टिं सृजति यं ब्रह्मा तदर्थं यान्त्यमी नराः।
प्रति पालनाय तस्यास्तु सृष्टेर्देव न संशय, ॥१०
जानीयां भगवन्कथं महापुरुष सत्तमम्।
भवेति नाम्ना तत्सर्वं कथयस्व परो ह्यहम् ॥११
एवमुक्तस्तु रुद्रेण स पुमान् प्रत्यभाषत।
अहं नारायणो देवो जल शापी सनातनः ॥१२
दिव्यं चक्षुर्भवति वै तव मां पश्य यत्नतः।
एव मुक्त स्तदा तेन मावत्पश्याम्यहं तु तम् ॥१३
तावदंगुष्ठमात्रं तु ज्वलद्भास्कर तेजसम्।
तमेवाहं प्रपश्यामि तस्य नाभौ तु पंकजम् ॥१४

उन महापुरुष से भी मैंने यही पूछा था कि आप कौन हैं और जो अभी चले गये हैं वे पुरुष कौन थे। हे पुरुषों में परम श्रेष्ठ ! यहाँ पर उनका और आपका क्या प्रयोजन था—यही अनुग्रह करके मुझे बतलाइए ॥८॥ जो ये पूर्व में परम दीप्त तेज वाले पुरुष चले गये हैं वे सब आदित्य हैं वे ध्यान किये हुए होकर ही गमन किया करते हैं और ये सब ब्रह्माजी सृष्टि का सृजन किया करते हैं और उसी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के लिये ये नर जाते हैं। हे देव ! उसी सृष्टि के प्रति पालन करते के लिये ये जाते हैं—इसमें लेश मात्र भी संशय नहीं है ॥ ६—१० ॥ हे भगवन् ! परमश्रेष्ठ महापुरुष को कैसे ज्ञान प्राप्त करूँ। भव—इस नाम से वह सभी बतलाइए। भव नामक मैं ही पर हूँ ॥ ११ ॥ रुद्र के द्वारा इस तरह से कहे गये उसमें पुमान् यह उत्तर देते हुए कहा था। मैं नारायण देव हूँ जो सदा जल में शयन करने वाला और सनातन हूँ ॥१२॥ आपकी दिव्य चक्षु होती हैं तभी आप मुझको यत्नपूर्वक देखिए। उस समय इस तरह से कहा गया मैं जब तक उनको देखता हूं तब तक वह एक अंगुष्ठ प्रमाण वाले दिखाई दिये जिनका तेज जाज्वल्यमान भास्कर जैसा था। मैं उस समय में उन्हीं को देखता हूँ। उनकी नाभि में एक कमलनाल विद्यमान था ॥१३—१४॥

ब्रह्माणं तत्र पश्यामि आत्माने च तदंति के।
एवं दृष्ट्वा महात्मानं ततो हर्ष मुपागतः ॥१५
तं स्तोतुं द्विजशार्दूल मतिर्मे समजायत।
तस्यां मतौ तु जातायां स्तोत्रेणानेन सुव्रत ॥१६
स्तुतो मया स विश्वात्मा तपसा स्मृत कर्मणा ॥१७
नमोऽस्त्वनन्ताय विशुद्ध चेतसे सरूपरूपाय सहस्र बाहवे।
सहस्ररश्मिप्रवराय वेधसे विशाल देहाय विशुद्ध कर्मणे ॥१८
समस्त विश्वार्तिहराय शम्भवे सहस्रसूर्यानिल तिग्म तेजसे।
समस्त विद्या विधृताय चक्रिणे समस्तगीर्वाणनुते सदा नमः ॥१९
जलेशनारायण विश्व शंकर क्षितीश विश्वेश्वर विश्वलोचन।
शशाङ्क सूर्याच्युत वीर विश्वग प्रतर्क्यमूर्तेऽमृत मूर्तिरव्यय ॥२०
वक्त्राण्यनेकानि विभो तवाहं पश्यामि मध्यस्तगतं पुराणम्।
ब्रह्माणमीशं जगतां प्रसूतिं नमोऽस्तु मह्यं तु पितामहाय ॥२१

वहाँ पर मैंने ब्रह्माजी को देखा था और उनके ही समीप में अपने आपको देखा था। इस रीति से उन महान् आत्मा वाले का दर्शन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके मैं बहुत ही अधिक हर्ष को प्राप्त हो गया था ।।१५।। हे द्विज शार्दूल ! उस समय में उसकी स्तुति करने की मेरे हृदय में बुद्धि समुत्पन्न हुई थी । हे सुव्रत ! उस मति के समुत्पन्न होने पर मैंने स्तोत्र के द्वारा उनका स्तवन किया था ।।१६।। तपश्चर्या के द्वारा स्मृत कर्म वाले मेरे द्वारा उनका स्तवन किया गया था ।।१७।। स्तोत्र यह है—आप अनन्त हैं—विशुद्ध चित्त वाले हैं—सरूप रूप हैं और सहस्र बाहुओं वाले हैं । सहस्र रश्मियों से परम श्रेष्ठ हैं—आप विशुद्ध कर्मों से युक्त तथा विशाल देह वाले हैं ऐसे वेधा के लिए मेरा नमस्कार है ।। १८ ।। समस्त विश्व की पीड़ाओं के हरण करने वाले—सहस्रों सूर्य और अग्नि के समान तीव्र तेज वाले हैं—आप समस्त विद्याओं के धारण करने वाले चक्रधारी हैं और सब देवों के द्वारा प्रणाम किये गये हैं ऐसे आपके लिये सदा ही नमस्कार है ।।१९।। आप जल के ईश नारायण हैं—विश्व के कल्याण करने वाले शङ्कर हैं—आप क्षिति मण्डल के ईश हैं—आप सम्पूर्ण विश्व के स्वामी हैं और विश्व के लोचन हैं—आप ही सूर्य—शशाङ्क—अच्युत—वीर—विश्व में गमन करने वाले—अमृत मूर्त्ति—अव्यय और प्रतर्कमान करने योग्यमूर्त्ति वाले हैं ।।२०।। हे विभो ! आपके अनेक मुख हैं । मैं आपको मध्य में स्थित और परम पुराण को देख रहा हूँ आप ब्रह्मा—ईश और सब जगतों के प्रसव करने वाले हैं आप पितामह हैं आपके लिए मेरा नमस्कार हैं ।।२१।।

एकं भवन्तं प्रकृतेः परस्ताद्यो वेत्तिवा सर्व विदादिदेव ।
गुणानं तेषु प्रसभं विभेद्या विशालमूर्तिर्हि सुसूक्ष्मरुपः ।।२२
वाग्योनिमान्नो विगतेन्द्रियोऽसि विकर्मभावान्न विगतंव कर्म्मा ।२३
संसारविच्छित्तिकरैः यजादिभरतोऽवसीयेत चतुर्भुजस्त्वम् ।
संसार वांस्तं हि न तादृशोऽसि परं वपुर्देव विशुद्ध भावैः ।
परं न जानाति यतो वपुस्ते देवादयोऽप्यद्भुतकारणं तत् ।।२४
अतोऽवतारोक्ततनुं पुराणमाराधयेयुः कमलासनाद्याः ।
न ते वपुर्विश्वसृगब्जयोनिः एकान्ततो वेद महानुभावः ।।२५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परं त्वहं वेद्मि कविं पुराणं भवन्तमाद्यं तपसा विशुद्धः ।
पद्मासनो मे जनकः प्रसिद्धश्चेतः प्रसूतावसक्तत्पुराणैः ॥२६
सम्बुध्यते नाथ न मद्विधाऽपि विदुर्भवन्तं तपसा विहीनाः ।
ब्रह्मादिभिस्तत् प्रवरं रबोध्यं त्वां देवरुपाः समनन्तनत्या ॥२७
इति स्तुतस्तदा देवो रूद्रेणामित तेजसा ।
उवाच वाक्यं सन्तुष्टो मेघगम्भीर निःस्वनः ॥२८

प्रकृति से परे एक ही आपको जो जानता है आप सर्ववेत्त ओ के आदि देव हैं । उनमें गुण वल पूर्वक विभेदन के योग्य नहीं हैं ऐसे आप विशाल मूर्त्ति वाले और सुसूक्ष्त रूप से युक्त हैं ॥२२॥ आप वाक्योनि वाले हैं । आप विगत इन्द्रियों वाले नहीं हैं—विकर्म भाव से विगत एक कर्म वाले नहीं हैं । आप संसार वाले हैं और उसको उस प्रकार के नहीं हैं—आपका वपु परम है और हे देव ! आप विशुद्ध भावों वाले तथा संसार की विछित्ति करने वाले करों से युक्त है और यजन करने वालों के द्वारा चतुर्भुज है—ऐसे अवसित होते हैं । किन्तु वस्तुतः आप ऐसे परम हैं कि आपको कोई भी नहीं जानते हैं क्योंकि वपु ही ऐसा अद्भुत कारणों वाला है कि देवादिक भी नहीं जान पाते हैं ॥२३—२४॥ अत-एव जबकि वास्तविक आपके स्वरूप का कुछ भी ज्ञान नहीं है तो ब्रह्मा आदि सभी देवगण अवतारों में वर्णित ही आपके शरीर को परम जो पुण्यमय हैं आराधना किया करते हैं। आपके वपु की विश्व का सृजन करने वाले ब्रह्माजी भी जो महानाश हैं एकान्त रूप मे नहीं जानते हैं ॥२५॥ मैं तो आपको पर—कवि—पुराण—आद्य और तप से विशुद्ध ही जानता हूँ । मेरा जनक पद्मासन प्रसिद्ध हैं जो चेत प्रसूतावसक्तत् पुराणों के द्वारा हे नाथ ! आप सम्बुद्धित किये जाते हैं । और मुझ जैसे जो तप से हीन हैं आपको नहीं जानते हैं । परम दुवर ब्रह्मादिक के द्वारा जो आप अवोध्य हैं ऐसे आपको देवरूप अनन्त नमस्कारों के साथ ही प्रणत हुआ करते हैं ॥२६॥२७॥ इस प्रकार से अपरिमित तेज

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाले रुद्र के द्वारा उन देव की स्तुति की गयी थी। तब देवेश्वर परम प्रसन्न होकर मेघ के समान गम्भीर ध्वनि से वाक्य बोले थे ॥२८॥

वरं वरय भद्रं ते देवदेव उमापते ।
न भेदश्चावयोर्देव एकावावामुभावपि ॥२९
ब्रह्मणाहं नियुक्तस्तु प्रजाः सृज इति प्रभो ।
तत्र ज्ञानं प्रपच्छस्व त्रिविधं भूतभावन ॥३०
सर्वज्ञस्त्वं न सन्देहो ज्ञानराशिः सनातनः ।
देवानां च परं पूज्यः सर्वथा त्वं भविष्यसि ॥३१
एवमुक्तः पुनर्वाक्यमुवाचोमापतिः तदा ।
अन्यं देहि वरं देव प्रसिद्धं सर्व जन्तुषु ॥३२
मूर्त्तो भूत्वा भवानेव मामाराधय केशव ।
मां वहस्व स देवेश वरं मत्तो गृहाण च ।
येनत्वं सर्वदेवानां पूज्यात्पूज्यतरो भव ॥३३
देवकार्या वतारेषु मानुषत्वमुपागतः ।
त्वामे वाराधयिष्यामि त्वं च मे वरदो भव ॥३४
यत्त्वयोक्तं वहस्वेति देवदेव उमापते ।
सोऽहं वहामि देव त्वां मेघो भूत्वा शतं समाः ॥३५
एवमुक्त्वा हरिर्मेघः स्वयं भूत्वा महेश्वरम् ।
उज्जहार जलत्तस्माद्वाक्यं देवमुवाच ह ॥३६

हे उमापते ! आपका कल्याण हो। अब आप मुझ से वरदान का वरण कीजिए। आप देवों के भी देव हैं। हे देव ! हम दोनों ही एक ही हैं ॥२९॥ ब्रह्माजी के द्वारा मेरी नियुक्ति की गयी है कि हे प्रभो ! आप प्रजा का सृजन कीजिए। आप तो प्राणियों पर कृपा करने वाले हैं। उसमें तीन प्रकार का ज्ञान मुझे प्रदान कीजिए ॥३०॥ आप तो सर्वज्ञ हैं—इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। आप ज्ञान के समुदाय हैं और सनातन हैं। आप सभी देवों में परम पूज्य सर्वथा ही होंगे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

॥३१॥ इस तरह से जब कह गए थें तब उम पति पुनः यह वाक्य बोले थे। हे देव ! कोई अन्य वरदान प्रदान कीजिए जो सभी जन्तुओं में प्रसिद्ध होवे ॥३२॥ हे केशव ! आप मूर्त्त रूप वाले होकर मेरी आराधना कीजिए। उन देवेश्वर ने कहा—मेरा वहन करो और मुझसे वर ग्रहण करो जिससे आप सभी देवों मे पूज्य से भी अधिक पूज्य होंगे। ॥३३॥ देवों के कार्यों के जो भी मेरे अवतार होंगे और मनुष्य के स्वरूप में उपागत होऊँगा तब मैं आपका ही समाराधम करूँगा और आप मुझे वरदान देने वाले होगे ॥३४॥ हे उमापते ! आप तो देवों के भी देव महान् देव हैं। आपने जो यह कहा है कि मेरा वहन करो सो मैं आपका वहन करूँगा और मेघ होकर सौरर्ष पर्यन्त वहन किया करता हूँ। इस प्रकार से कहकर हरिमेघ हो गए थे और महेश्वर को ऊपर उठा लिया था जल से उठाकर देव से फिर वह वाक्य उन्होंने कहा था ॥३५॥३६॥

य एते दश चैकस्य पुरुषाः प्राकृताः प्रभो।
ते वैराजा महीं याता आदित्या इति संज्ञिताः ॥३७
मदंशो द्वादशो यस्तु विष्णुनामा महीतले।
अवतीर्णो भवन्तं तु आराधयति शंकर ॥३८
एवमुक्त्वा स्वकादंशात् सृष्ट्वा दिव्य घनं तथा।
नारायणः शब्दवच्चन विद्नः क्वलपं गतः ॥३९
एवमेष हरिर्देवः सर्वगः सर्वं भावनः।
वरदोऽभत्पुरा मह्यं तेनाहं देवतैर्वरः ॥४०
नारायणात्परो देवो न भूतो न भविष्यति।
एतद्रहस्यं वेदानां पुराणानां च सत्तमः ॥४१
मया वः कीर्त्तितं सर्वं यथा विष्णुरिहेज्यते ॥४२

जो ये एक के दश पुरुष हैं हे प्रभो ! ये सब प्राकृत हैं। वे वैराजा यहीं पर गये हैं और इनकी आदित्य ये ही संज्ञाये हैं ॥३७॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जो मेरा द्वादश वंश है वह महीतल में विष्णु नाम वाला है। वह अवतीर्ण होता है ॥३८॥ ऐसा कहकर अपने अंश से ही दिव्यघन का सृजन किया था। शब्द की ही भाँति वह नारायण हैं। हम नहीं जानते हैं कि वह कहाँ पर लय को प्राप्त हो गये थे ॥३९॥ इस प्रकार से यह ही हरि हैं जो देव सब में गमन करने वाले अन्तर्यामी हैं और सभी पर कृपा करने वाले हैं। इस प्रकार से पहिले ये मुझ को वरद हुए थे अर्थात् वरदान देने वाले हुए थे इसी कारण से देवों के द्वारा भी वरण किया गया हूँ। सबसे परम देव तो नारायण ही हैं। ऐसा न तो अतीत में कभी कोई भी हुआ है और न भविष्य में कोई ऐसा होगा। हे श्रेष्ठ तम! यह ही समस्त वेदों का रहस्य है और पुराणों का भी यह ही परम रहस्य होता है। मैंने यह सम्पूर्ण आपके सामने कह कर बतला दिया है कि जिस विधि—विधान से भगवान् का यजन किया जाया करता है ॥४०॥४१॥४२॥

७४--भुवन कोष वर्णन

पुनस्ते ऋषयः सर्वे तं पप्रच्छुः सनातनम्।
रुद्रं पुराण पुरुषं शाश्वतं क्रतुमव्ययम् ॥१
विश्वरूपमजं शम्भुं त्रिनेत्रं शूलपाणिनम्।
त्वं परः सर्वदेवानामस्माकं च सुरेश्वर ॥२
पृच्छामस्तेन त्वां प्रश्नमेकं तद्वक्तुमर्हसि।
भूमि प्रमाणं संस्थानं पर्वतानां च विस्तरम् ॥३
अस्माकं ब्रूहि कृपया देवदेव उमापते।
सर्वेष्वेव पुराणेषु भूर्लोकः परिकीर्त्त्यते ॥४
इदानीं च प्रवक्ष्यामि समासाद्वः क्षमातलम्।
तन्निबोधत धर्मज्ञा गदतो मम सत्तमाः ॥५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उन ऋषिगणों ने फिर उन सनायन—पुराण पुरुष—शाश्वत—क्रतु—अव्यय रुनुदेव से पूछा था ।।१।। जो शङ्कर यिश्व के स्वरूप वाले हैं—शम्भु अज अर्थात् अजन्मा हैं—तींन नेत्रों से युक्त हैं और हाथ में शूल धारण करने वाले हैं। ऋषियों ने कहा—हे मुरों के भी ईश्वर ! आप तो समस्त देवों से भी परे हैं और हम लोगों से भी पर हैं ।।२।। हम लोग एक प्रश्न इसी कारण से आप से पूछते हैं। और आप उसका उत्तर देने के लिये परम योग्य होते हैं। इस भूमण्डल का क्या प्रमाण है और इसका संस्थान कैसा है तथा पर्वतों का विस्तार कैसा है ।।३।। हे उमादेवी के स्वामिन् ! आप तो देवों के भी देव हैं। हम सबके सामने यह कृपा करके बतलाइए। समस्त पुराणों में भूर्लोक है—ऐसा ही कीर्त्तन किया जाता है ।।४।। महादेव जी ने कहा—इस समय मे मैं बहुत ही संक्षेप से आपके समक्ष में इस क्षमा तल का वर्णन करूँगा। हे श्रेष्ठगणो ! आप तो धर्म के ज्ञान रखने वाले हैं। अब मैं कह रहा हू मुझसे आप समझ लीजिये ।।५।।

योऽसो सकल विद्यावबोधित परमात्म रूपी विगत कल्मषः परमाणुचिन्त्यात्मा नारायणः सकल लोकव्यापी पीताम्बरोरुवक्षः क्षितिधरो गुणतः सूच्यते। तमस्त्व प्रपंचमदीर्घमह्रस्वमकृशम् लोहितमित्येवमाद्युपलक्षित विज्ञानमात्ररूपः स भगवांस्त्वप्रकारः सत्त्वरजस्तमोद्रिक्तः सलिलं ससर्ज। तत्सृष्ट्वा आदिपुरुषः परमेश्वरो नारायणः सकलजगन्मयः सर्वमयो देवमयो यज्ञमय आपोमय आपोमूर्त्तिः। योगनिद्रया सुप्तस्य तस्य नाभौ तदब्जं निःससार। तस्मिन्सकल वेदनिधिरचिन्त्यात्मा परमेश्वरो ब्रह्मा प्रजापतिरभवत्। मनुं स्वरयम्भुवस्य द्वौ पुत्रौ बभूवतुः प्रियव्रतोत्तनयादौ ।।६।।

प्रियव्रतस्य दश पुत्राः बभूव आग्नीध्रो अग्निबाहुः मेधो मेधतिथिः ध्रुवो ज्योतिष्मान् द्युतिमान् सव्यो वपुष्मान् सव-

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नान्ताः । द्वितीयः स च प्रियव्रतः सप्तद्वीपेषु सप्तपुत्रान् स्णापयामास । तत्र चाग्नीध्रं जम्बूद्वीपेश्वरं चक्रे मेधातिथिं ज्योतिष्मन्तं क्रौंचे द्युतिमन्तं शाल्मलौ गोमेदस्येश्वरं हव्यं वयुष्मन्तं प्लक्षद्वीपेश्वरं पुष्कराधिपतिं सवनमिति ॥७॥

जो यह समस्त विद्याओं से अव वोधित परमात्मा के रूप वाले तथा कल्मषों से रहित हैं और परमाणु के रूप में चिन्तन करने के योग्य स्वरूप वाले नारायण हैं वे सकल लोकों में व्यापक रहने वाले हैं पीत वस्त्रधारी और ऊरु वक्षःस्थल में क्षिति के धारण करने वाले हैं जा गुण से ही सूचित हुआ करते हैं । तमस्त्व—अप्रपञ्च—अदार्घ—अकृश- — लोहित—इत्यादि के द्वारा इस प्रकार से उपलक्षित विभावन्त के स्वरूप वाले वे भगवान् ने तो अप्रकार सत्त्व—रज—तमोद्रिक्त सलिल का सृजन किया था । उसका स्पर्श करके आदि पुरुष परमेश्वर नारायण सकल जगत् के स्वरूप से युक्त—सर्वमय—देवमय—यज्ञमय—आयोमव और आपो मूर्त्ति हैं । योग निद्रा से सोये हुए उनकी नाभि में वह एक कमल निकला था । उसमें सकल वेदों के निधि—अचिन्त्यात्मा—परमेश्वर ब्रह्मा प्रजापति हुए थे । मनु स्वायम्भुव के दो पुत्र हुए थे । उन दोनो के नाम प्रियव्रत और उत्तानपाद थे । प्रिय व्रत के दश पुत्र हुए थे । उनके नाम निम्न हैं—आग्नीध्र-अग्नि वाहु—मेध–मेधातिथि-ध्रुव—ज्योतिष्मान्—द्युतिमान्—दव्य—वपुष्मान्–सवन ये हैं । और जो दूसरा प्रिय व्रत था । उसने सात द्वीपों में सात पुत्रों को स्थापित किया था । और उसने आग्नीध्र को जम्वूद्वीप का अधीश्वर किया था । मेधातिथि और ज्योतिष्मान् को क्रौञ्च में तथा द्युतिमान को शाल्मलि में और गोमेध का ईश्वर बनाया था ॥७॥

एवं स्वायम्भुवेऽन्तरे भुवन प्रतिष्ठा । कल्पे कल्पे चैवमेव सप्त सप्त पार्थिवैः क्रियते भूमौ पालन व्यवस्था च । एष स्वभावः कल्पस्य सदा भवति । अत्र नाभेः सर्गं कथयामि । नाभिर्मेरुदेव्यां

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुत्रमजनयद्दषभ नामानं तस्य भरतो जज्ञे पुत्रश्च तावदग्रजः तस्य भरतस्य पिता ऋषभः हेमाद्रेः दक्षिणं वर्षं महद्भारतं नाम शशास भरतस्य पुत्रः सुमतिस्तस्य राज्यं दत्त्वा सोऽपि वनं यमौ ॥८—६॥

हव्य और ज्योतिष्मान् को प्लक्ष द्वीप का ईश्वर तथा सवन को पुष्कर का अधिपति बनाया था। इस तरह से स्वायम्भुव अन्तर में भुवनों की प्रतिष्ठा हुई थी। कल्प-कल्प में इसी प्रकार से सात-सात पार्थिवों के द्वारा भूमिका पालन किया जाया करता है। और इसी रीति से प्रतिपालन की व्यवस्था की जाती है। यही स्वभाव कल्प का सदा हुआ करता है। यहाँ पर नाभिका सब वर्णन करता हूँ। नाभि ने मेरु देवी में ऋषय नाम वाले पुत्र को जन्म ग्रहण कराया था। उसके भरत पुत्र उत्पन्न हुआ था। उसका अग्रज था। उस भरत का पिता ऋषभ हेमाद्रि के दक्षिण में महान् भारत वर्ष नाम वाले पर शासन किया था। भरत का पुत्र सुमति था। उस पुत्र को राज्य का भार सुपर्द करके वह भी वन में चला गया था ॥८॥६॥

तस्य पुत्र शतं जज्ञे तेनेमा वद्धिताः प्रजाः।
तंरिदं भारतेवर्षं सप्तद्वीपं समाङ्कितम् ॥१०
तेषां वंश प्रसूत्या तु भुक्तेयं भुमिरुत्तमा।
कृत त्रेतादि युक्त्या तु ह्युगाख्या ह्येकसप्ततिः ॥११
भुवनस्य प्रसंगेन मन्वन्तरमिदं शुभम्।
स्वायम्भुवं च कथितमपरं यन्निबोधत ॥१२

उसके एक सौ पुत्रों ने जन्म ग्रहण किया था। उन्हीं से यह प्रजा वद्धित हुई है। उन्हीं से भारत में यह वर्ष ज्ञात द्वीपों वाला समाङ्कित हुआ है ॥१०॥ उनके वंश की प्रसूति से ही यह उत्तम भूमि का उपभोग किया है। कृतयुग और त्रेता आदि की युक्ति से इकहत्तर युगों की आख्या है। भुवन के प्रसङ्ग से यह शुभ मन्वन्तर है। यह

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्वायम्भुव मन्वन्तर कह दिया है। इसके आगे जो भी है उसको समझ लीजिए ॥११॥१२॥

७५—जम्बूद्वीप और मेरु निरूपण

अत ऊर्द्ध्वं प्रवक्ष्यामि जम्बूद्वीपं यथातथम्।
संख्या चापि समुद्राणां द्वीपानां चैव विस्तरम् ॥१
यावन्ति चैव वर्षाणि तेषु नद्यश्च याः स्मृताः।
महाभूत प्रमाणं च गतिं चन्द्रार्कयोः पृथक् ॥२
द्वीपभेद सहस्राणि सप्तस्वन्तर्गतानि च।
न शक्यन्ते क्रमेणेह वक्तुं यैर्विततं जगत् ॥३
सप्त द्वीपान्प्रवक्ष्यामि चन्द्रादित्यग्रहैः सह।
येषां मनुष्यास्तर्केण प्रमाणानि प्रचक्षते ॥२४
अचिन्त्याः खलु ये भावा न तांस्तर्केण साधयेत्।
प्रकृतेश्च परं यत्तु तदचिन्त्यं विभाव्यते ॥५
नववर्षं प्रवक्ष्यामि जम्बूद्वीप यथातथम्।
विस्तारं मण्डलं चैव याजनैस्तन्निबोधत ॥६
शतमेकं सहस्राणां याजनानां समन्ततः।
नानाजन पदाकीर्णं योजनैः विविधैः शुभैः ॥७
सिद्ध चारण संकीर्णं पर्वतैरुप शोभितम्।
सर्वधातु विवृद्धैश्च शिलाजाल समुद्भवैः ॥८

इसके आगे जम्बूद्वीप का यथातथ वर्णन करूंगा। समुद्रों की संख्या तथा द्वीपों का पूर्ण बिस्तार बतलाऊँगा ॥ १ ॥ जितने भी वर्ष हैं और उन द्वीपों में जो नदियाँ बतलाई गयी हैं। महाभूतों का प्रमाण और चन्द्र एवं सूर्य की पृथक् गति होती है। द्वीपों के सहस्रों भेद होते हैं और सातों मे अन्तर्गत हैं।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जिनसे यह जगत् विस्तृत है उनको क्रम से यहाँ पर कहा नहीं जा सकता है ।।२।।३।। चन्द्र और आदित्य ग्रहों के साथ सात द्वीपों के विषय में मैं वर्णन करूँगा । जिनका मनुष्यगण तर्क के द्वारा प्रमाणों को कहा करते हैं ।।४।। जो भाव निश्चित रूप से अचिन्तनीय हुआ करते हैं उनको तर्क के द्वारा कभी भी साधित नहीं करना चाहिए । और जो प्रकृति के पेट होते हैं वे ही अचिन्त्य अर्थात् चिन्तन न करने के योग्य हुआ करते हैं । मैं नव वर्षों को बतलाऊँगा और जम्बूद्वीप का यथा तथा वर्णन करूँगा । विस्तार और मण्डल को योजनों के द्वारा कहूँगा । उनका आप ज्ञान प्राप्त करिए ।।६।। चारो ओर एक सौ सहस्र योजनों का विस्तार है । अनेक सिद्ध और चारणों से सङ्कीर्ण और पर्वतों से उपशोभित है । वे पर्वत सभी धातुओं से निवृद्ध हैं और वहाँ पर शिलाओं के जालों का समुद्भव है ।।७।।८।।

पर्वत प्रभवाभिश्च नदीभिः सर्वतश्चितम् ।
जम्बूद्वीपं पृथु श्रीमत्सर्वत. परिमण्डलम् ।।९
नवभिश्चावृतं श्रीमान्यत्रास्ते भूतभावनः ।
लवणेन समुद्रेण सर्वतः परि वारितः ।।१०
जम्बूदीपश्च विस्तारात्समेन तु समन्ततः ।
तस्य प्रागायता दीर्घाः षडेते वर्ष पर्वताः ।।११
उभयत्रावगाहाश्च समुद्रौ पूर्व पश्चिमौ ।
हिम प्रायश्च हिमवान्हेम कूटश्च हेमवान् ।।१२
सर्वं सुसुखश्चापि निषधः पर्वतो महान् ।
चतुर्वर्णः ससौवर्णो मेरुश्चोक्तो मया गिरिः ।।१३
वृत्ताकृति प्रमाणश्च चतुरस्रः समुत्थितः ।
नानावर्णः सुपार्श्वेषु प्रजापति गणान्वितः ।।१४

पर्वतों से समुद्भूत नदियों से सभी ओर चित है । जम्बूद्वीप बहुत विशाल है और श्री युक्त तथा सभी ओर परिमण्डल है ।।९।। इस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तरह से नौ के द्वारा आकृत जहाँ पर श्री सम्पन्न भूतों पर दया करने वाला तथा लवण समुद्र सब ओर परिवारित विस्तार से सभी ओर समान जम्बूद्वीप है। उसका प्रगामन करते हुए बहुत लम्बे चौड़े ये छै वर्ष पर्वत हैं ॥१०॥११॥ और दोनों में अवगाह हैं तथा पूर्वसागर और पश्चिम सागर हैं। हिमवान् प्रायः हिमवाला है अर्थात् वर्फ से समन्वित है और हेमकूट हेम से युक्त है ॥१२॥ सबको अच्छा सुखप्रद महान् निषध पर्वत है। चार वर्णों वाला, सुवर्ण से युक्त मेरु गिरि मैंने बतलाया है ॥१३॥ यह वृत्त की आकृति वाला—चौकोर समुत्थित है। यह अनेक प्रकार के वर्णों वाला है तथा सुपार्श्वों में प्रजायनियों के वर्णों से संयुत है ॥१४॥

नाभि मण्डल सम्भूतो ब्रह्मणः परमेष्ठिनः।
पूर्वतः श्वेतवर्णस्तु ब्राह्मण्यं तेन तस्य तत् ॥१५
पीतश्च दक्षिणेनासौ तेन वैश्यत्वमिष्यते।
भृङ्गपत्र निभश्चासौ पश्चिमेन यतोऽथ सः ॥१६
तेनास्य शूद्रता प्रोक्ता मेरोर्नामार्थकर्मणः।
पार्श्वमुत्तरस्तस्य रक्त वर्ण विभाव्यते ॥१७
तेनास्य क्षत्रभावः स्यादिति वर्णाः प्रकीर्तिताः।
वृत्तः स्वभावतः प्रोक्तो वर्णतः परिमाणतः ॥१८
नलिश्च वैदूर्यमयः श्वेतशुक्लो हिरण्मयः।
मयूर्वर्हिवर्णस्तु शातकौम्भस्य शृंगवान् ॥१६
एते पर्वतराजा वै सिद्ध चारण सेविता।
तेषामन्तर विष्कम्भो नवसाहस्र उच्यते ॥२०
मध्ये त्विलावृत्तं नाम महामेरोस्तु सम्भवः।
तेनैव तु सहस्राणि विस्तीर्णः सर्वतश्च सः ॥२१

परमेष्ठी ब्रह्माजी के नाभि मण्डल से इसका समुद्भव हुआ है। पूर्व की ओर यह श्वेत वर्ण वाला है। इसी से वह उसका ब्राह्मण्य माना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जाता है ॥१५॥ दक्षिण की ओर यह पीत वर्ण वाला है। इससे इसका वैश्यत्व इष्ट होता है। पश्चिम की ओर यह भृङ्ग पात्र के समान हैं क्योंकि यह ऐसे वर्ण वाला है इसी से ग्राम के अर्थ कर्म वाले मेरु की शूद्रता कही गई है। इसका उत्तर की ओर पाश्व रक्त वर्ण का विभावित किया जाता है ॥१६॥१७॥ उसी से इसका क्षात्र भाव होता है। ये इसके वर्ण कीर्त्तित किये गये हैं। वृत्त इसके स्वभाव से कहा गया है और वर्ण तथा प्रमाण से बताया है ॥१८॥ और मलि पर्वत वैदूर्यमणि से परिपूर्ण है। यह श्वेत, शुक्ल और हिरण्मय होता है। मयूर की वर्हि के वर्ण वाला और शांत कौम्भ के शिखर वाला है ॥१९॥ ये सब पर्वत राज हैं जो निश्चित रूप से सिद्धों तथा चारणों के द्वारा सेवित रहा करते हैं। उनके अन्तर का निष्कम्भ नौ सहस्र का बताया जाता है ॥२०॥ मध्य में इलावृत नाम वाला है जिसका महामेरु से समुद्भव होता है। इसी से ही वह सब ओर से सहस्रों के विस्तार से युक्त है ॥२१॥

मध्यं तस्य महामेरुर्विधूम इव पावकः।
वेद्यर्द्धं दक्षिणं मेरोरुत्तरार्द्धं तथोत्तरम् ॥२२
षडत्र वर्षाणि यानि तेषां ते वर्ष पर्वताः।
योजनाग्रं तु वर्षाणां सर्वेषां तद्विधीयते ॥२३
द्वे द्वे वर्षे सहस्राणां राजन्यानां समुच्छ्रयः।
जम्बूद्वीपस्य विस्तारस्तेषामायाम उच्यते ॥२४
योजनानां सहस्राणां शते द्वे चापि तौ गिरी।
नीलश्च निषधश्चैव ताभ्यां हीनाश्च ये परे ॥२५
वसन्ति तेषु सत्त्वानि नाना जातीनि सर्वश।
एतत् हैमवतं वर्षं भारती यत्र संतति ॥२६
हेम कूटे परं यत्र नाम्ना किम्पुरुषोत्तमः।
हेम कूटात्तु निषधं हरि वर्षं तदुच्यते ॥२७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हरि वर्षात्परं चैव हेम पार्श्वे इला वृनम् ।
इलावृतात्परं नीलं रम्यकं नाम विश्रुतम् ॥२८

उसके मध्य में महा मेरु है जो ठीक धूम से रहित अग्नि के ही सदृश है। मेरु का आधाभाग दक्षिण की ओर है और उत्तरार्ध उत्तर की ओर मैं जानता हूँ ॥२२॥ जो यहाँ पर छै वर्ष हैं उन्हीं के ये वर्ष पर्वत हैं। सभी वर्षों के योजनाग्र है वह किया जाता है ॥२३॥ सहस्रों राजन्मों के दो-दो वर्ष समुच्छ्रय हैं। यही जम्बू द्वीप का विस्तार होता है। अब उसका आयाम बतलाया जाता है ॥२४॥ दो सौ सहस्र योजनों के वे दोनों पर्वत हैं। वेदों में एक निषध है और दूसरा नील पर्वत है। जो दूसरे हैं वे इन दोनों से हीन हैं ॥२५॥ उनमें जीव निवास किया करते हैं जो सभी ओर अनेक जातियों वाले हैं। यह हैमवत वर्ष है जहाँ पर भारती सन्तति है ॥२६॥ हेमकूट में परम है जहाँ पर नाम से किम्पुरुषोत्तम रहते हैं। हेमकूट से निषध हैं जो हरिवर्ष कहा जाया करता है ॥२७॥ हरिवष से पर हेमपार्श्व में इलावृत है। इलाबृत से परनील है जिसका रम्यक नाम प्रसिद्ध है ॥२८॥

रम्यकाच्च परं श्वेतं विश्रुतम् तद्धिरण्मयम् ।
हिरण्मयात्परं चैव शृङ्गवन्तं कुरु स्मृतम् ॥२६
धनुः संस्थे तु द्वे वर्षे विज्ञेयं दक्षिणोत्तरे ।
द्वीपानां खलु चत्वारि चतुरस्रमिला वृतम् ॥३०
अव्यक्त पृथिवी पद्म मेरूस्तस्य च कर्णिका ।
चतुष्पत्रं समुत्पन्नं व्यक्तं पंच गुणं महत् ॥३१
ततः सर्वाः समुत्पन्ना वितता हि प्रवृत्तयः ।
अनेक कल्प जीवद्भिः पुरुषैः पुण्य कारिभिः ॥३२
कृतात्मभिर्महात्माभिः प्राप्यते पुरुषोत्तमः ।
महायोगी महादेवो जगद्धचयो जनार्दनः ॥३३
सर्वलोकगतोऽनन्तो व्यापको मूर्तिरव्ययः ।
न तस्य प्राकृता मूर्तिः मांसमेदोऽस्थि सम्भवः ॥३४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

योगित्वाच्चेश्वर त्वाच्च सर्व रूप.धरो विभुः ।
तन्निमित्तं समुत्पन्नं लोके पद्म सनातनम् ॥३५

रम्यक से पर श्वेत है जो हिरणमय इस नाम से विश्रुत है। हिरण्मय से पर शृङ्गवन्त है जो कुरु कहा गया है ॥२९॥ धनुः संस्थ दो वर्ष हैं जिनको दक्षिणोत्तर में जान लेना चाहिए। ये चार द्वीप हैं और इलावृत चतुरस्र अर्थात् चौकोर है ॥३०॥ यह पृथिवी एक अव्यक्त पद्म है और उसका मेरु कर्णिका है। इस के चार पत्र समुत्पन्न हुए हैं जो व्यक्त हैं और महत् पाँच गुणों वाला है ॥३१॥ फिर सभी समुत्पन्न हुए हैं और सभी प्रवृत्तियाँ विस्तृत हुई हैं। अनेक कल्पों तक जीवित रहने वाले—पुण्यकारी पुरुषो के द्वारा—और आत्म साक्षात्कार करने वाले महात्माओं के द्वारा ही पुरुषोत्तम प्रभु की प्राप्ति की जाया करती है ॥३२॥३ ॥ महायोगी महादेव—जगत् के ध्यान करने के योग्य भगवान् जनार्दन हैं। ये सब लोकों में रहने वाले हैं—अनन्त है तथा व्यापक मूर्त्ति और अविनाशी हैं। उनकी मूर्त्ति प्राकृत नहीं है जो माँस अस्थियों के योग से समुत्पन्न हुई हो ॥३४॥ योगी होने से और ईश्वर होने से विभु सभी रूपों के धारण करने वाले हैं। आपके ही निमित्त से लोक में सनातन पद्म समुत्पन्न हुआ है ॥३५॥

कल्प शेषस्य तस्यासौ कालस्य गतिरीदृशी ।
तस्मिन्पद्मे समुत्पन्नो देवदेवश्चतुर्मुखः ॥३६
प्रजापति पतिर्देव ईशानो जगतः प्रभुः ।
तस्य बीजनि सर्गं हि पुष्करस्य यथार्थ वत् ॥३७
कृत्स्नं प्रजा निसर्गेण विस्तरेणैव वर्ण्यते ।
पद्म कारा समुत्पन्ना पृथिवी सवनह्रदा ।
तत्तस्य लोकपद्मस्य विस्तरं सिद्ध भाषितम् ॥३८

इस काल की गति ही ऐसी है। उस कल्प के शेष में उस पद्म में यह देवों के भी देव चतुर्मुख (ब्रह्मा) समुत्पन्न हुए हैं ॥३६॥ प्रजा-

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पति के भी पति— ईशान—देव और जगत् के प्रभु हैं। उस पुष्कर के वीज का निमर्ग यथार्थवत् है ॥३७॥ सम्पूर्ण प्रजा निसर्ग से और विस्तर से ही वर्णन की जाती है। वनों और ह्रदों के सहित यह पृथ्वी पद्म के आकार वाली समुद्भूत हुई थी। वह उस लोक पद्म का विस्तार सिद्ध भाषित है ॥३८॥

७६–आठ दिक्पालों की नगरियाँ

तस्यैव मेरोः पूर्वे तु देशे परम वर्च्चसि।
चक्रपाद परिक्षिप्ते नाना धातु विराजते ॥१
तत्र सर्वामरपुरं चक्रपाद समुद्धतम्।
दुर्धर्ष वल दृप्तानां देव दानव रक्षसाम् ॥२
तत्र जाम्बूनदमयः सुप्राकारः सुतोरणः।
तस्याप्युत्तर पूर्वे तु देशे परम वर्चसे ॥३
अलोक जन सम्पूर्णा विमान शत संकुला।
महावापो समायुक्ता नित्यं प्रमुदिता शुभा ॥४
शोभिता पुष्प शवलैःपताकाध्व जमालिनी।
देवैर्यक्षोऽप्सरोभिश्च ऋषिभिश्च सुशोभिता ॥५
पुरन्दरपुरी रम्या समृद्धा त्वमरावती।
तस्या मध्येऽमरावत्या वज्रे वैदूर्य वेदिका ॥६
त्रैलोक्ये गुण विख्याता सुधर्मा नाम वै सभा।
तत्रास्ते श्रीपतेः श्रीमान्सहस्राक्षः शची पतिः ॥७

उसी मेरु पर्वत के पूर्व में जो देश है उसमें परम वर्चस से संयुत अनेक धातुओं वाला चक्रपादपरिक्षिप्त विराजमान है ॥१॥ वहाँ पर चक्रपाद से समुद्धत सब अमरापुर है। वह दुर्धर्ष बल से दप्त देव-दानव और राक्षसों का स्थान हैं ॥२॥ वहाँ पर वह स्थल सुवर्णमय है जिसका

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बहुत सुन्दर तोरण द्वार हैं। उसके भी उत्तर पूर्व में परम वर्चस वाला देश है ॥३॥ वहाँ पर एक महावापी है जो अलौकिक जनों से सम्पूर्ण है तथा सैकड़ों विमानों में संकुज है। वह महावापी समायुक्ता और नित्य हीं प्रमुदिता एवं शुभा है ॥४॥ उसकी सुषमा विभिन्न प्रकार के पुष्पों से हो रही है और उस पर पताकायें तथा ध्वजाओं की पंक्तियाँ हैं। वह देवगण--अप्सरायें और ऋषियों से परम शोभा वाली है ॥५॥ वहाँ पर परमाधिक समृद्ध इन्द्रदेव की पुरी अमरावती है जो बहुत ही रम्य है। उस अमरावती के मध्य में हीरों और वैदूर्य मणियों की निर्मित एक वेदिका है ॥६॥ तीनों लोकों में अपने गुणों के द्वारा विख्यात सुधर्मा नाम वाली सभा है। वहाँ पर ही सहस्र नेत्रों वाले शची (इन्द्राणी) के पति श्रीमान् इन्द्रदेव विराजमान रहा करते हैं ॥ ७ ॥

सिद्धादिभिः परि वृतः सर्वाभि र्देव योनिभिः ।
तत्र चैव तु वंशा स्पाद भास्करस्य महात्मनः ॥८
साक्षात्तत्र सुराध्यक्षः सर्वदेव नमस्कृतः ।
तस्याश्च दिक्षु विस्तीर्णा तत्तद् गुण समन्विता ॥६
तेजोवती नाम पुरी हुताशस्य महात्मनः ।
तद्वद्गुणवती रम्या पुरी वैवस्वतस्य च ॥१०
नाम्ना संयमनी नाम पुरी त्रैलोक्य विश्रुता ।
तथा चतुर्थे दिग्भागे नैर्ऋताधिपतेः श्रुता ॥११
नाम्ना कृष्णवती नाम विरूपाक्षस्य धीमतः ।
पंचमेह्युत्तर पुटे नाम्ना शुद्धवती पुरी ॥१२

वे सर्वदा सिद्धगणों से घिरे हुए रहा करते हैं और सभी देव-योनियों से परिवृत रहते हैं। वहाँ पर महान् आत्मा वाले भास्कर देव के ही समान सबका वेश है ॥८॥ वहाँ पर सुरों के अध्यक्ष इन्द्रदेव साक्षात् विराजमान रहते हैं जो सभी देवों के द्वारा नमस्कार किये गये

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हैं। उस इन्द्रपुरी की दिशाओं में अर्थात् इधर-उधर सभी ओर उन-उन गुणों से समन्वित पुरी हैं ॥९॥ वहाँ पर महात्मा अग्निदेव की तेजोवती नाम वाली पुरी हैं और उन-उन गुणों से युक्त परम रम्य वैवस्वत देवकी पुरी है ॥१०॥ यमराज अथवा धर्मराज की पुरी का नाम संयमनी है जो पुरी तीनों लोकों में परम प्रसिद्ध है। फिर चौथे दिग्भाग में नैर्ऋतों के अधिपति की प्रसिद्ध पुरी है ॥११॥ धीमान् विरुपाक्ष की कृष्णवती नाम वाली पुरी है। पाँचवें उत्तरपुर में नाम से शुद्धवती पुरी हैं ॥१२॥

उदकाधिपतेः ख्याता वरुणस्य महात्मनः।
तथा पंचोत्तरे देवस्यास्योत्तरपुटे पुरी ॥१३
वायोर्गन्धवती नाम ख्याता सर्वगुणोत्तरा।
तस्योत्तर पुटे रम्या गुह्यकाधिपतेः पुरी ॥१४
नाम्ना महोदया नाम शुभा वैडूर्य वेदिका।
तथाष्टमेऽन्तरपुटे ईशानस्य महात्मनः ॥१५
पुरी मनोहरा नाम भूतैर्नानाविधैर्युता।
पुष्पैर्धर्म्यैश्च विविधैर्वनैराश्रम संस्थितैः।
प्रार्थ्यते देवलोकोऽयं स स्वर्ग इति कीर्त्तितः ॥१६

जो जलों के अधिपति महात्मा वरुणदेव की पुरी विख्यात है। इसदेव उत्तर पुट पञ्चोत्तर में इस देव की पुरी है ॥१३॥ वायुदेवकी पुरी सभी गुणों से समन्वित गन्धवती नाम वाली पुरी प्रसिद्ध है। उस पुरी के उत्तर पुट में परम रम्य गुह्यकों के अधिपति कुबेर देव की पुरी है। इसका नाम शुभोदया है और इसमें परम शुभ वैदूर्य मणियों की वेदिका है। फिर आठवें अन्तर पुर में महात्मा ईशान की पुरी है। इसका नाम मनोहरा हैं जो अनेक प्रकार के भूतगणों से समन्वित है। इसमें विविध, आश्रम हैं तथा बन हैं और परम धन्य अनेक तरह के पुष्प हैं। यही देवलोक है जिसकी प्रार्थना की जाया करती है और वही स्वर्गलोक— इस नाम से कीर्त्तित किया गया है ॥१४॥१५॥१६॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

७७--मेरु पर्वत वर्णन

यदेतत्कर्णिपका मूलं मेरोर्मध्यं प्रकीर्तितम् ।
तद्योजन सहस्राणि संख्यया मानतः स्मृतम ।।१
चत्तारिंशत्तथा चाष्टौ सहस्राणि तु मण्डलैः ।
शैल राजस्य तत्तत्र मेरुमूल मिति स्मृतम् ।।२
तेषां गिरि सहस्राणा मनेकानां महोच्छ्रयः ।
दिगष्टौ च पुनस्तस्य मार्यादा पर्वता शुभाः ।।३

जठरो देवकूटश्च पूर्वस्यां दिशि पर्वतौ ।
मर्यादा पर्वता नेतानष्टा बाहुः मनीषिणः ।।४
योऽसौ मेरुः द्विज श्रेष्ठाः प्रोक्ता कनक पर्वतः ।
दिक्स्थानस्य तु वक्ष्यामि शृणुध्वं गदतस्ततः ।।५

मर्यादा यास्तु चत्वारो मेरोरग्रं चतुर्दश ।
येना चचाल विष्टब्धा सप्तद्वीपवती मही ।।६
दश योजन साहस्रं व्यायाम स्तेषु शङ्कयते ।
तिर्यगूर्द्ध चरचिता हरिताल तलैर्वृता ।।७

जो मेरु पर्वत का मध्य कर्णिका का मूल कीर्त्तित किया गया है वह एक सहस्र योजन संख्या के द्वारा और मान से कहा गया है ।।१।। अड़तालीस सहस्र मण्डलों के द्वारा वहां पर शैलराज का मूल है—ऐसा बताया गया है ।।२।। उन अनेकों सहस्र पर्वतों का समेच्छ्रय है । फिर उसके आठों दिशाओं में परम शुभ मर्यादा पर्वत हैं ।।३।। पूर्व दिशा में जठर और देवकूट दो पर्वत हैं । मनीषीगण इन आठों को मर्यादा पर्वत ही कहा करते हैं ।।४।। हे द्विजश्रेष्ठो ! जो यह मेरु पर्वत हैं वह कनक पर्वत कहा गया है इसके दिशाओं में जो स्थित हैं उनका भी मैं वर्णन करूँगा । आप कहते हुए मुझ से उनका श्रवण करिए ।।५।। मेरु के चारों दिशाओं में मर्यादा के चार दण्ड हैं । जिसके द्वारा यह सात द्वीपों वाली मही

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विष्टब्ध होकर चलायमान नहीं होती है ॥६॥ उनमें दस सहस्रयोजन का व्यायाम शाङ्कित किया जाता है । ऊपर की ओर तिरछी ओर रचित हरिताल के तलों से वृता है ॥७॥

मनःशिला दरीभिश्च सुवर्ण मणि चित्रिता ।
अनेक सिद्ध भवनैः क्रीडास्थानैश्च सप्रभा ॥८
पूर्वेण मन्दरस्तस्य दक्षिणे गन्धमादनः ।
विपुल पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तरे स्थितः ॥९
तेषां शृंगेषु चत्वारो महावृक्षाः प्रतिष्ठिताः ।
देवदैत्याप्सरोभिश्च सेविताः सुसमृद्धिभिः ॥१०
मन्दरस्य गिरे शृंगे कदम्बो नाम पादयः ।
प्रलम्ब शाखाशिखरः कदम्बश्चैव पादयः ॥११
भद्राश्वो नाम वृक्षोऽयं वर्षद्भिः केतुसम्भवः ।
कीर्तिमान रूपवान् श्रीमान्महापादय पादयः ॥१२
यत्र साक्षात् हृषीकेशः सिद्धमन्त्रैः निषेवितः ।
तस्य लोकसहस्रस्य तथा स्ववदनो हरिः ॥१३
दक्षिणस्यापि शैलस्य शिखरे द्वे च सेविते ।
जम्बूसंघः पुष्प फल महाशाखोप शोभितः ॥१४

मैनासिल की बहुत सी दरियां हैं उनसे और सुवर्ण मणियों से चित्रित है । वहां अनेक सिद्धों के भवन हैं और क्रीड़ा के स्थान हैं । इनसे यह प्रभा से समन्वित है ॥८ । उस मेरु के पूर्व दिशा की ओर मन्दराचल हैं तथा दक्षिण में गन्धमादना पर्वत है । पश्चिम में यह विपुल है तथा उत्तर में पार्श्व में सुहार्श्व स्थित है ॥९॥ उनके शिखरों में चार महान् वृक्ष प्रतिष्ठित हैं । वे सुसमृद्धियों के द्वारा देवों-दैत्यों और अप्सराओं के द्वारा सेवित हैं ॥१०॥ मन्दराचल के शिखर पर कदम्ब नाम वाला एक महान् वृक्ष है । वह वृक्ष अपनी शाखाओं से पर्वत की शिखर को परिवृत किये हुए हैं । यह भद्राश्व नाम वाला वृक्ष है जो केतु से सम्भूत है ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जो वर्षाओं से हुआ है । यह बड़ी कीर्त्ति वाला-रूप से युक्त-श्री से सम्पन्न महान् पादय है ।।११।।१२।। जहां पर साक्षात् हृषीकेश भगवान् सिद्ध मन्त्रों के द्वारा निषेवित हुए विराजमान हैं । उन सहस्रों लोकों के भगवान् हरि स्ववदन हैं ।।१३।। उस शैल के दक्षिण भाग में भी दो शिखर सेवित हैं । वहां पर जम्बूओं का संघ है और वह महा शाखाओं से तथा पुष्प और फलों से शोभित है ।।१४।।

सदा ह्यति सनामानि स्वादूनि सुरभीणि च ।
फलान्यमृत कल्पानि पतन्ति गिरिमूर्धनि ।।१५
तस्माद् गिरिवर श्रेष्ठान् फल प्रस्तर वाहिनीः ।
तत्र जाम्बूनदं नाम सुवर्णमनल प्रभम् ।।१६
देवालंकार मतुलमार्त सुन्दर वचोसम् ।
देव दानव गन्धर्व यक्षराक्षस गुह्यकाः ।।१७
पिबन्त्यमृतकल्पं च प्रीत्या जम्बू फलासवम् ।
मोक्षते दक्षिणे वर्षे जम्बूलोकेति विश्रुता ।।१८
यस्य नाम्ना समाख्याता जम्बूद्वीपेति मानवैः ।
विपुलस्य च शैलस्य दक्षिणेन महात्मनः ।।१६
जाति शृङ्गोऽति सुमहानश्वत्थश्चोति पादवः ।
महोच्छ्रायो महास्कन्धो नैकसत्त्व गुणालयः ।।२०
केतुमालेति यः ख्यातो नाम्ना तत्र प्रकीर्तितः ।
तन्निबोधत विप्रेन्द्रा नि रुक्तं तेन वर्षके ।।२१

वहां पर पर्वत के मस्तक पर सर्वदा अत्यधिक स्वाड्ड और सुगन्धित फल जो अमृत के ही समान हैं गिरा करते हैं ।।१५।। उस परम श्रेष्ठ गिरिवर से फलों और प्रशस्तरों के वहन करने वाली नदी है । वहां पर अग्नि के समान प्रभा वाला जाम्बूमह नाम वाला सुवर्ण है ।।१६।। वह अतुल देवों का अलङ्कार है और अत्यन्त सुन्दर वर्चस वाला है । देवगण-दानव-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस और गुह्यक अमृत के समान जम्बू फलों के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आभव को प्रीति से पिया करते हैं। दक्षिण वर्ष में जम्बू लोक-इस नाम से विश्रुत है ॥१७॥१८॥ जिसके नाम से मानवों के द्वारा जम्बूद्वीपा-यह समाख्यान है महात्मा विपुलशैल के दक्षिण में अति महान् जाति श्रृङ्ग अश्वत्थ का पादव है। यह महान् उच्छ्राय वाला और महान् स्कन्ध वाला है तथा अनेक जीवों को गुणों का उपलय है ॥१६॥२०॥ जो केतुमाल इस नाम से ख्यात है वहां पर वह कीर्त्तित किया गया है। हे विप्रेन्द्रो ! उससे वर्ष कहा गया है उसे आप समझ लीजिए ॥२१॥

सुपार्श्वं स्योत्तरे श्रृंगे वटो नाम महाद्रुयः
न्यग्रोधो विपुल स्कन्धो यस्त्रि योजन मण्डलः ।
माल्यमानः कलापैश्च विविधैस्तु समन्ततः ॥२२
सप्त तत्र महाभागाः कुरवो नाम विश्रुताः ।
तत्र स्थिरगतैः क्षान्तैः नीरजस्कैः महात्मभिः ॥२३
अब्दैः स्वपक्ष पर्यन्तैः खंप्राप्तास्ते सनातनाः ।
तस्य नामांकितं वर्षं सप्ततिर्वै महात्मनः ।
दिवि देवे च विख्याता भर्त्तारः कुरवः सदा ॥२४

सुपार्श्व के उत्तर श्रृङ्ग (शिखर) पर वय नाम वाला एक महान् वृक्ष है। वह न्यग्रोध विपुल स्कन्ध वाला है और जो तीन योजन मणुल वाला है ॥२२॥ चारों ओर विविध कलापों से वह माल्पमा रहा करते है। वहां पर सात महाभाग हैं जो कुरवो नाम से विश्रुत हैं। वहां पर स्थिरगत-क्षान्त-नीरबस्त्र-स्व पक्ष पर्यन्त महात्मा अद्वों से वे सनातन प्राप्त हुए थे। उस महात्मा के नाम से अङ्कित वर्ष सप्तति तक विश्रित रूप से दिव और देव लोक में सदा कुरव स्वामी विख्यात हुए थे ॥२३॥२४॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

७८–७९ मन्दराचल आदि पर्वतों का वर्णन

तथा चतुर्णा वक्ष्यामि शैलन्द्राणां यथा क्रमम् ।
अनुविन्ध्यानि रम्याणि विहंगैः कूजितानि च ॥१
अनेक पक्षियुक्तात्म शृंगाणि सु बहूनि च ।
देवानां दिव्यनारीभिः समं क्रीडामयानि च ॥२
चतुः दिक्षु विराजन्ते नामतः शृणुता नदीः ।
पूर्वे चैत्ररथं नाम दक्षिणे गन्धमादनम् ॥३
प्रभावेण सुतोयानि नवखण्डयुतानि च ।
वनषण्डांस्तथाक्रम्य देवता ललनायुताः ॥४
यत्र क्रीडन्ति चोद्देशे मुदा परमया युताः ।
रत्नौघ कीर्ण तीर्थानि महापुण्य जलानि च ॥५
कमलोत्पल कल्हार शोभितानि सरांसि च ।
चतुर्षु तेषु गिरिषु नाना गुणयुतेषु च ॥६
अरुणोदं तु पूर्वेण दक्षिणे मानसं स्थितम् ।
असितोदं पश्चिमे महाभद्रं तथोत्तरे ॥७

इसके अनन्तर चार शैलेन्द्रों के विषय में मैं क्रम के अनुसार बतलाऊँगा जिनके अनुवन्ध्य शृङ्ग (शिखर) बहुत से हैं जो परम सुरम्य हैं जिनमें पक्षीगण कूजन कर रहे है तथा देवों की परम दिव्यनारियों की क्रीड़ाओं से परिपूर्ण हैं ॥१॥२॥ उनकी चारों दिशाओं म नदियाँ विराजित हैं अब आप उन नदियों का नाम श्रवण कीजिसे । पूर्व में तो चत्ररथ नाम बाला है तथा दक्षिण में गन्धमादन है ॥३॥ प्रभाव से सुन्दर जलों और नवखण्डों से युक्तों को तथा वन खण्डों का आक्रमण करके अपनी ललनाओं से समन्वित देवगण जहाँ पर क्रीड़ा किया करते हैं उस उद्देश में परम आनन्द से युक्त होते हुये केलि करते हैं । वे रत्नों के ओघ से कीर्ण तीर्थ हैं जिनके जल परम पुण्यमय हैं ॥४॥५॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और सरोवर ऐसे हैं जो कमलों और उत्पल्पों से परम शोभित हैं। उन चारों पर्वतों में जो अनेक गुणों से संयुत हैं। उनके पूर्व में अरुणाद हैं और दक्षिण में मान सरोवर स्थित है। पश्चिम में असितोद हैं और उत्तर में महाभद्र है ।।७।।

कुमुदैः श्वेतकपिलैः कडारैर्भूषतानि च ।
अरूणोदस्य ये शैला प्राच्या वै नामतः स्मृता ।।८
सीतान्तस्याचलेन्द्रस्य कुमदस्यान्तरेण च ।
द्रोण्यां विहङ्गजुष्टायां नानासत्त्व निषेविताम् ।।६
त्रियोजन शतायामां शतयोजन विस्तृताम् ।
सुरसामल पानीयां रम्यां तत्र सुरोचनीम् ।।१०
द्रोणमात्र प्रमाणैश्च पुण्डरीकैः सुगन्धिभिः ।
सहस्र शतपत्रैश्च महापद्मैरलं कृतम् ।।११
प्रसन्न सलिलैः पूर्णं शरण्यं सर्व देहि नाम् ।
तत्र त्वेकं महापद्मं मध्ये पद्मवनस्य च ।।१२
कोटि पत्र प्रकलितं तरुणादित्य वर्चासम ।
तस्मिन्मध्ये साक्षात् श्रीः नित्यमेव हि ।।१३
सदा पुष्पफलं रम्यं तत्र बिल्ववनं महत् ।
शतयोजन विस्तीर्णं द्वियोजन शतायताम् ।।१४

वे सब कुमुदों के द्वारा-श्वेत कपिलों से और कडारों से भूषित है अरुणोद के जो शैल हैं वे नाम प्राच्य कहे गये हैं ।।८।। अचलेन्द्र सीत्यन्त के अन्तर में एक द्रोणी है जो विहङ्गों के द्वारा जुष्ट है तथा अनेक जीवों द्वारा निषेवित है ।।६।। तीन सौ योजन उस आयात है तथा सौ योजन के विस्तार वाली है। उसका जल परम सुरस और विमल है एवं रम्य तथा सुरोचनी है ।।१०।। द्रोणमात्र प्रमाण वाले—सुगन्धित पुण्डरी को सहस्रों शतमत्रों से और महा पद्मों से अलङ्कृत है ।।११।। परम स्वच्छ जलों के द्वारा वह पूर्ण रूप से समस्त देह धारियों को शरण देने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाला है। और पद्म वनों के मध्य एक महा पद्म है। वह करोड़ों पत्रों से प्रकल्पित है और तरुण सूर्य के समान वर्चस वाला है। उसमें मध्य में नित्य ही साक्षात् श्री विराजमान रहती हैं ॥१२॥१३॥ वहां पर सर्वदा पुण्य और फल रहते हैं और वहाँ परम रम्य महान् विल्व वृक्षों का वन है। वह एक सौ योजन के विस्तार युक्त है तथा दो सौ योजन आयत है ॥१४॥

अर्द्ध कोशोच्च शिखरैः महावृक्षैः समन्ततः ।
शाखासहस्र कलितैर्महास्कन्धैः समाकुलम् ॥१५
फलैः सहस्र संकाशैः हरितैः पाण्डुरैस्तथा ।
अमृत स्वादु सदृशैः भेरी मात्रैः सुगन्धिभिः ॥१६
शीर्यद्भिश्च पतद्भिश्च कीर्ण भूमि वनान्तरम् ।
नाम्ना तत् श्रीवनं नाम सर्वलोकेषु विश्रुतम् ॥१७
तत्र श्रीः संस्थिता नित्यं सिद्धसंघ निषेविता ।
एकैकस्या चलेन्द्रस्य मणिशैलस्य चान्तरम् ॥१८
शतयोजन विस्तीर्णं द्वियोजन शतायतम् ।
विमलं पङ्कजवनं सिद्ध चारण सेवितम् ॥१९
विराजते वनं सर्वं मत्तभ्रमर नादितम् ।
तद्वनं दानवैः देवैः गन्धर्वैर्यक्ष राक्षसैः ॥२०
किन्नरैरप्सरोभिश्च महाभोगैश्च सेवितम् ।
तत्राश्रमो भगवतः कश्यपस्य प्रजापतेः ॥२१

आधे को तक शिखर है जिनमें चारों ओर महान् वृक्ष हैं। वे सहस्रों शाखाओं से कलित और महान् स्कन्धों से समाकुल है ॥१५॥ सहस्रों पाण्डुट फलों से युक्त हैं। उनका प्रमाण भेरी के सदृश हैं अमृत के सदृश हैं अमृत के सदृश स्वाद्रु वाले तथा महान् सुगन्ध से युक्त हैं। ॥१६॥ शीर्ण होकर गिरते हुए उनसे भूमि और बनान्तर कीर्ण हैं। नाम से वह श्रीवन है जो सभी लोकों में विश्रुत ॥१७॥ वहां पर भी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

श्री देवी नित्य ही संस्थिता रहा करती हैं और वे सिद्धों के संघ के द्वारा निषेवित रहा करती हैं। एक-एक अचलेन्द्र और मणि शैल का अन्तर है ॥१८॥ सौ योजन का विस्तार है और दो सौ योजन आयत है। पङ्कजों का वल बहुत ही विमल है तथा सिद्धों और चरणों के द्वारा सेवित है ॥१९॥ वह सम्पूर्ण वन मद मत्त भ्रमरों के नाद से विनन्दित शोभा दे रहा है। उस वन का सभी देव—दानव—गन्धर्व—यक्ष—राक्षस—किन्नर आसरागण तथा महाभोगों के द्वारा सेवन किया जाता है। वहां पर ही प्रजापात कश्यप भगवान् का एक आश्रम है ॥२०॥२१॥

मध्ये सुखा नदीनाम तस्यास्तीरे महद्वनम् ।
पञ्चाशत् योजतायामं त्रिशत् योजन मंडलम् ॥२२
रम्यं तालवनं श्रीमत् क्रोशर्द्धोच्छ्रितपादपम् ।
ऐरावतस्य करिणस्तत्रैव सुमहाकृतिः ॥२३
ऐरावतस्य रुद्रस्य देशशीलस्य चान्तरे ।
सहस्रयोजनायामः शतयोजन विस्तृतः ॥२४
सर्वा ह्येक शिला भूमिः वृक्ष वीरुध वर्जिता ।
इत्येता अन्तरे द्रोण्यो नानाकाराः प्रकीर्त्तिताः ॥२५

उस आश्रम के मध्य में सुखा नाम वाली है और उस नदी के तट पर एक महात् वन है। जिस वन का आयाम पचास योजन है तथा तीस योजन का उसका मण्डल है ॥२२॥ वहाँ पर एक बहुत ही सुरम्य ताल वन है जो श्री से सुसम्पन्न है। उसके जो वृक्ष हैं उनका ऊँचाई आधा कोश तक है। वहाँ पर ही ऐरावत गज की सुन्दर महान् आकृति है ॥२३॥ ऐरावत—रुद्र और देश शील के अन्तर में एक सहस्र योजन का आयाम है। तथा एक सौ योजन का विस्तार है ॥२४॥ वहां की सभी भूमि एक ही शिला के समान है जिसमें न तो कोई वृक्ष ही हैं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और न वीरुध हैं। ये ही इतने अन्तर पर दोणियाँ हैं जो अनेक आकारों वाली कही गयी हैं ॥२५॥

८०—मेरु पर्वत की घाटियाँ

अथ दक्षिण दिग्व्यवस्थिताः पर्वत द्रोण्यः सिद्धाचरिताः कोर्त्यन्ते। शिशिर पतङ्गयोर्मध्ये शुक्ला भूमिः स्त्रिया मुक्ता गलितपादपा। इक्षुक्षेये च शिखरे पादपै रुप शोभिते। उदुम्बर वनं रम्यं पक्षिसंघ निषेवितम् ॥१॥

फलितं तद्वनं भाति महाकूर्मोपमैः फलैः तद्वनं देवयान्योऽष्टौ सेवन्ते सर्व एव हि ॥२॥

तत्र प्रसन्नस्वादुसलिला बहूदका नद्यो वहन्ति। तत्राश्रमो भगवतः कर्दमस्य प्रजापतेः नाना मुनि जनाकीर्ण स्तब्ध शतयोजनमेकं परिमण्डलं वनं च। तथा च ताम्राभस्य शैलस्य पतङ्गस्य चान्तरे शतयोजन विस्तीर्णं द्विगुणायतं बालार्कसदृश्य राजीव पुण्डरीकैः समन्वतः सहस्रपत्रैः विरलीलकृतं महत्सरोऽनेक गन्ध सिद्ध गन्धर्वाध्युषितम् ॥३

इसके अनन्तर दक्षिण दिशा में व्यवस्थित पर्वत की द्रोणियाँ हैं जो सिद्धों के दण्ड समाचरित कही गयी हैं। शिशिर और पतङ्ग के मध्य में शुक्ल भूमि है जो स्त्रियों के द्वारा मुक्त तथा गलित वृक्षों वाली हैं इक्षु क्षेय में और शिखर में जो पादवों द्वारा उपशोभित हैं। उनमें परम सुरम्य उदुम्वरों का वन है जो पक्षियों के समुदाय के द्वारा सेवित रहा करता है ॥१॥ वह वन फलों से युक्त है और परम शोभित रहता है। वे फल भी ऐसे बड़े हैं जैसे महान् कूर्म होते हैं। उस वन को आठों प्रकार की देव योनियाँ सभी सेवन किया करते हैं ॥२॥ वहां

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पर स्वच्छ और स्वादिष्ट जल वाली जिनमें बहुत अधिक जल रहा करता है ऐसी नदियाँ वहा करती हैं। वहाँ पर प्रजादति भगवान् कर्दम का एक आश्रम है जो अनेक मुनि गणों के द्वारा घिरा हुआ रहता है। और स्तब्ध है। एक सौ योजन एक परिमण्डल वाला वन है। ताम्राभ उस शैल के और पतङ्ग के अन्तर में सो योजन विस्तीर्ण है और दुगुना आयत है वाल सूर्य के सदृश राजीव पुण्डरी कों से और सभी ओर सहस्र पत्रों से विरल हैं वह अलङ्कृत एक महान् सर है जो अनेक गन्धर्व, सिद्धों के द्वारा अध्यषित हैं। अर्थात् गन्धर्व और सिद्ध निवास किया करते हैं ।।३।।

तस्य च मध्ये महाशिखरः शतयोजनायमः त्रिंशद् योजन विस्तीर्णोऽनेक धातु रत्न भूषित । तस्य चोपरि महती रथा रत्न प्राकार तोरणा । तस्यां महद् विधाधरपुरम् । तत्र पुलोम नामा विद्याधर राजः शतसहस्त्र परीवारः ।।४।।

विल्वस्थली नाम तत्र फलानि महाकुम्भ सङ्काशानि तैश्च पतद्भिः स्थलमृत्तिका क्लिन्ना तां च स्थली सुगुह्यकादयः सेवन्ते बिल्व फलाशिनः। तथा च वसुधाररत्नधारयोर्मध्ये सुगन्धि किशुकवनं सदा कुसुमचयस्य गन्धेन वासयते योजन शतम्। तच्च सिद्धाध्युषितं जलोयेतञ्च ।।५।।

उसके मध्य में एक महान् शिखर है जिसका सौ योजन आयाम है और तीस योजन विस्तार है तथा वह अनेक धातुयें और रत्नों से भूषित है। और उसके ऊपर रत्नों के आकार और तोरणों वाली वहुत बड़ी रथ्पा (गली) है। उसमें महान् विद्याधरों का पुट है। वहां पर पुलोम नामक विद्याधरों का राजा है जिसके सैकड़ों सहस्र परिवार हैं ।।४।। वहाँ पर विल्व स्थली नाम का एक स्थान है। उसमें महान् कुम्भों के समान फल हैं। वे जब गिरते हैं तो उस स्थली का सेवन गुह्यक गण सेवन किया करते हैं। और वे विल्व फलों का अशन किया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करते हैं। तथा वसुधा और रत्नधार के मध्य में परम सुगन्धित किंशुकों का वन है। वहां पर सर्वदा पुष्पों के समुदाय की गन्ध से एक सौ योजन तक सुवासित हो जाता है। और वह स्थल सिद्धों का आबास स्थान है और जल से युक्त है ॥५॥

तत्र चादित्यस्य देवस्य महदायतनम्। सं मासे मासे भगवानवतरति सूर्यः। प्रजापतिं लोक जनकं देवादयो नमस्यन्ति। तथा च पंचकूटस्य कैलासस्य चान्तरे सहस्त्रयोजनायाम विस्तीर्णं शतयोजनं हंस पाण्डुरं क्षुद्रस्वत्त्वैरनाधृष्यं स्वर्ग सोपानमिव भूमण्डलम् ॥६॥

अथ पश्चिमो दिग्भागे व्यवस्थिता गिरिद्रोण्यः कीर्त्यन्ते। सुपार्श्वशिखिशैलयोर्मध्ये समन्ताद्योजन शतमेकं भौमशिलातलं नित्य तप्तं दुस्पर्शं तस्य मध्ये त्रिशद्योजन विस्तीर्णं मण्डलं वह्निस्थानम्। स च सर्वकालमनिन्धनो भगवांल्लोकक्षयकारी संवर्त्तको ज्वलते। अन्तरे च शैलवरयो कुमुदाञ्जनयोः शतयोजनविस्तीर्णा मातुलुङ्गस्थली सर्वसत्त्वानामगम्या पीतवर्णैः फलैरावृता सा स्थलो शोभते। तत्र च पुण्यो ह्रदः सिद्धैरुपेतः। बृहस्पतेस्तद्वनम्। तथा च शैलयोः पिञ्जरगौरयोरन्तरे सरोद्रोण्यो ह्यनेकशतयोजनापताः। महद्भिश्च षट्पदोद्घुष्टैः कुमुदैरूप शोभिताः। तत्र च भगवतो विष्णोः परमेश्वर स्यायतनम् ॥६॥

वहाँ पर आदित्यदेव का एक महान् आयतन है। वहाँ पर प्रतिमास में भगवान् भास्कर देव उतरा करते हैं। उन प्रजापति लोकों के जनक को देवगण आदि नमस्कार किया करते हैं। और पञ्चकूट तक था कैलास के अंतर में एक सहस्र योजन का आकास है तथा सौ योजन का विस्तार है। हंस के समान पांडुर क्षुद्र जीवों से वह अनाधृष्य है और भू मंडल स्वर्ग के सोपान की ही भांति है ॥६॥ इसके अनन्तर पश्चिम दिशा के भाग में गिरि की द्रोणियाँ व्यवस्थित कही जाया करती हैं। सुपार्श्व शिखि और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शैल के मध्य में सब ओर एक सौ योजन हैं और भौम शिला तल नित्य तप्त रहता है। जिसका स्पर्श करना कठिन है। उसके मध्य में तीस योजन के विस्तार वाला मंडल वह्नि का स्थान हैं। और वह सभी समय में बिना ईंधन भगवान संवर्त्तक लोकों से क्षय के करने वाले ही प्रज्वलित रहते हैं। और कुमुदाज्जन शैल श्रेष्ठों के अन्तर में एक सौ विस्तार वाली मातुलंग स्थली है जो सभी प्राणियों के द्वारा अगम्य है अर्थात् गममन करने के योग्य है। पीत वर्ण के फलों से वह स्थली घिरी हुई है। और परम शोभित हो रही है। और वहां पर पुष्पा ह्द है जो सिद्धों से सिद्धों से उपेत है। वह वन वृहस्पति का है। तथा पिज्जर गौर शौर शैलों के अन्तर में सर द्रोणियाँ है जो अनेक शत योजनों की आयत हैं। बड़े कुमुदो से उपशोभित है जिन पर भ्रमर उद्घोष कर रहे हैं। और वहाँ पर भगवान् विष्णु परमेश्वर का आयतन है ।।७।।

तथा शुक्ल पाण्डुरयोरपि महागिर्योरन्तरे त्रिंशद्योजन विस्तीर्णो नवत्यायत एकशिलोद्देशो वृक्षविवर्जितः । तस्याश्च मध्ये पञ्चयोजन प्रमाणो न्यग्रोधो वृक्षः । तस्मिश्चन्द्रशेखरो-मापतिर्नीलवासाश्च देवो निवसति यक्षादिभिरीड्यमानः ।।८।।

तथा शुक्ल और पाण्डुर नामक महान् पर्वतों के अन्तर में तीस योजन का विस्तार वाला और नव्वे आयत एक शिला का उद्देश है जिस पर कोई भीं वृक्ष नहीं है। और उसके मध्य में पाँच योजन प्रमाण वाला एक न्यग्रोध (वड़) का वृक्ष है और वहां पर उमा देवी के पति चन्द्रशेखर नीले वस्त्रधारी देव विराजमान हैं जो यक्ष आदि कों के द्वारा स्तुत हो रहे हैं ।।८।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

८१-पर्वतों पर रहने वाले देवों का स्थान

अतः परं पर्वतान्तेषु देवानामवकाशा वर्ण्यन्ते। तत्र योऽसौ सीतारव्यः पर्वतस्तस्योपरि महेन्द्रस्य क्रीडास्थानम्। तत्र देवराजस्य पारिजातिक वृक्ष वनम्। तस्य पूर्वपार्श्वे कुञ्जरो नाम गिरिः। तस्योपरि दानवानामष्टौ पुराणि च ॥१॥

तथा वज्रके पर्वते राक्षसानामनेकानि पुराणि। तेच नाम्ना नालकाः कामरूपिण.। महा नीले च शैलेन्द्रे पुराणि पंचदश सहस्राणि किन्नराणां ख्यातानि। तत्र देवदत्त चन्द्रादयो राजानः पंचदश किन्नराणां गर्विताः। वेणुमत्यपि विद्याधरपुर त्रयं त्रिशद्योजनशत विस्तीर्णमेकैक तावदायतम्। उलूक रोमश महवेत्रादयो राजानो विद्याधराणां च ॥२॥

कुञ्जरे तु पर्वत वरे नित्यं पशुपतिः व्यवस्थितः। वसुधारे च पुष्पवतां वसूनां समवासः ॥३॥

वसुधाररत्नधारयोः मूर्ध्नि अष्टौ सप्त च संख्यया पुराणि वसुसप्तर्षीणां चेति। एकश्रृंगे च पर्वतोत्तम प्रजापते स्थानं चतुर्वक्त्रस्य ब्रह्मणः। गज पर्वते च महाभूतपरिवृता स्वयमेव भगोवती तिष्ठतीति ॥४॥

इसके आगे पर्वतों पर देवों के अवकाश अर्थात् स्थानों का वर्णन किया जाता है। वहाँ पर जो सीता नामक पर्वत उसके ऊपर महेन्द्र देव का क्रीड़ा करने का स्थान है। वहां पर देवराज इन्द्र का पाहिजातों का बन है। उस के पूर्व पार्श्व में एक कुज्जर नाम वाला पर्वत है। उसके ऊरर दानवों के आठ पुर हैं॥ १॥ तथा वजुक पर्वत पर राक्षसों के बहुत से पुर हैं। और वे नाम से नालक काम रूपी हैं और महानीलेन्द्र शैल (पर्वत) पर किन्नरों के पन्द्रह सहस्रा पुर स्थित हैं। वहां पर देवदत्त चन्द्र आदि नृप पन्द्रह किन्नरों के गर्वित हैं। वेण्डमती विद्याधर पुर तैंतीस सौ योजन के विस्तार से युक्त है

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और एक-एक उतना ही आयत है। अलूक-रोमश यह वेत्रादिक राजा विद्याधरों के हैं ॥ २ ॥ पर्वतों में श्रेष्ठ कुज्जर में तो नित्य ही पशुपति व्यवस्थित हैं और वसुधार में पुष्पवान् वसुओं का आवास है ॥ ३ ॥ वसुधार रत्नधारों के मस्तक पर पन्द्रह पुर हैं जो संख्या में हैं। और वसु सप्तर्षियों कि हैं। पर्वतों में उत्तम एक भृङ्ग पर्वत पर प्रजापति चतुर्मुख का ब्रह्माजी का स्थान है। गज पर्वत पर महाभूतों से परिवृकर घिरी हुई। स्वयं ही भगवती विद्यमान रहा करती हैं ॥४॥

वसुधारे च पर्वतवरे मुनिसिद्धविद्याधराणामायतनं चतुराशीत्यं वरपुर्रमिह प्राकार तोरणाः। तत्र चानेकपवता नाम गन्धर्वा युद्धशालिनो निवसन्ति। तेषां चाधिपतिर्देवो राज राजैकपिङ्गलः। सुर राक्षसाः पंचकूटे दानवाः शतशृंगे दानव यक्षाणां पुरः शतम ॥५॥

प्रभेदकस्य पश्चिमेदले देवदानव सिद्धादि पुराणि। तस्य गिरेर्मूर्ध्नि महती नाम शिला तिष्ठति। तस्यां च पर्वणि पर्वणि सोमः स्वयमेवा वतरति। तस्यै वोत्तरपार्श्वे त्रिकूटं नामा तत्र ब्रह्मा तिष्ठति क्वचित्तत्र तथा च वह्नि आयतनम्। मूर्तिमान् वह्निरुपास्यत देवैः ॥६॥

और वसुधार श्रेष्ठ पर्वन पर मुनियों का—सिद्धों का—विद्याधरों का आयतन (निवास स्थान) है। यहां पर चौरासी पुर हैं जिनके आकार और विशाल तोरण द्वार हैं। वहां पर अनेक पवता नाम वाले गंधर्व निवास किया करते हैं उनका अधिपति देव राजराजैक पिंगल हैं। पंचकूट पर—राक्षस और दानवों के पुर हैं तथा शत शृक पर दानवों और पक्षों के सौ पुर हैं ॥५॥ प्रभेदक के पश्चिम दल में देव दानव सिद्ध आदिक के पुर हैं उस पर्वत के मस्तक पर एक बहुत बड़ी शिला स्थित है। और उस पर पर्व-पर्व पर सोम (चन्द्रदेव) स्वयं ही अवतीर्ण हुआ करते हैं। और उसके उत्तर पार्श्व में वहां पर त्रिकूट नाम वाले ब्रह्मा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहीं पर स्थित रहा करते हैं और उसी भाँति वह्नि देव का आयतन अर्थात् निवास स्थान है। औरदेवगणों के द्वारा मूर्त्तिमान् वह्नि देव की यहां पर उपासना की जाया करती है ॥६॥

उत्तरे च शृङ्गाख्ये पर्वतवरे देवतानामायतनानि पूर्वेण नारायणस्यायतनम्। मध्ये: ब्रह्मण: शङ्करस्य पश्चिमे ॥७॥

इत्येतेऽष्टौ देव पर्वता विज्ञेया:। ते चानुक्रमेण हेमरजत वैदूर्य मन:शिलादि वर्णा:। इयं च पृथ्वी लक्ष कोटि शतानेक-संख्याता पूर्णा तेषु च सिद्ध विद्याधराणां निलया: तद्यथा मेरो: पार्श्वत: केसर वलयालवालं सिद्धलोकदति कीर्त्यंते। इयं च पृथ्वी पद्माकारेण व्यवस्थिता। एष सर्वपुराणेषु क्रम: सामान्यत: प्रति-पाद्यते ॥८॥

और उत्तर में शृङ्ग नाम वाले परमश्रेष्ठ पर्वत पर देवताओं के आयतन हैं पूर्व की ओर भगवान् नारायण का आयतन है। मध्य में ब्रह्माजी का और पश्चिम में शङ्कर भगवान् का आयतन है ॥७॥ इस रीति से ये आठ देवों के पर्वत जान लेने चाहिए। और वे अनु क्रम से सुवर्ण—रजत अर्थात्, चाँदी—वैदूर्य और मैंन सिल के वर्ग हैं। और इस प्रकार से यह पृथ्वी सैकड़ों लाख करोड़ की अनेक संख्या से पूर्ण है। और उनमें सिद्ध—विद्याधरों के निलय (गृह) हैं। वह इस प्रकार से हैं—जैसे मेरु के पार्श्व में केसर वनपाल वाल सिद्ध लोक हैं—ऐसा कहा जाया करता है। और यह पृथ्वी पद्म के आकार से व्यवस्थित है। इन सभी पुराणों में क्रम सामान्य रूप से प्रतिपादन किया जाया करता है ॥८॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

८२-८३—नदियों का वर्णन

अथ नदीनामवतारं शृणुत । आकाश समुद्रो यः प्रोच्यते तस्मादाकाशगामिनि नदी प्रवृत्ता । सा चानवरतमिन्द्र गजेन क्षोभ्यते । सा च चातुरशोति सहस्रोच्छ्रायान् मेरोरुपरि पतित । सा च मेरुकुट तटान्तेभ्यः । प्रस्खलिता चातुर्द्धा सञ्जाना षष्टि-सहस्रयोजनान्निरालम्बा पतमाना प्रदक्षिणमनु सरन्तो चातुर्द्धा जगाम सीता चालकनन्दा चक्षुर्भद्रा चेतिनामभिः । तांसां एक-शीति सहस्त्र पर्वतान्दारयन्ती गांगता गंगेत्युच्यते ॥१॥

अथ गन्धमादन पार्श्वेऽमरगण्डिका वर्ण्यते । एकत्रिंश-द्योजन सहस्राणि आयामश्चतुः शत विस्तीर्णम् । तत्र केतुमालः सर्वे जनपदाः कृष्णवर्णाः पुरुषा महावलिन उत्पलवर्णाः स्त्रियः शुभदर्शनाः । तत्र च महावृक्षाः पनसाः सन्ति । तत्रेश्वरो ब्रह्म-पुत्रस्तिष्ठति । माल्यवतः पूर्वपार्श्वे पूर्वगण्डिका एकश्रृगाद्द योजन सहस्त्राणि मानसः ते च भद्राश्वा नाम जनपदाः ॥२॥

इसके अनन्तर नदियों का अवतारित होना श्रवण कीजिए । जो समुद्र कहा जाता है उससे आकाश में गमन करने वाली नदी प्रवृत्त हुई है । और वह अनवरत इन्द्रराज के द्वारा क्षोभ को प्राप्त हुई कही जाती है । और वह चौरासी सहस्र उच्छ्राय (ऊँचाईं) वाले मेरु के ऊपर पतित है । और वह मेरुकूट के तटान्तों से प्रस्वलित हुई चार प्रकार से हो गई है । साठ हजार योजनों से बिना किसी अवलम्व के गिरतो हुई प्रदक्षिण का अनुसरण करती हुई चार प्रकार के मार्गों से गमन करने वाली हुई थी । और उनके ये नाम प्रसिद्ध हुए थे—सीता--अलकनन्दा--चक्षु—भद्रा और वह इक्यासी सहस्र पर्वतों को विदारण करती हुई गा अर्थात् भूमि में गयी हुई थी इसीलिये उसको गङ्गा—इस नाम से कहा जाया करता है ॥१॥ इसके अनन्तर गन्धमादन के पार्श्व में अमर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गाण्डिका का वर्णन किया जाता है। उसका इकतीस सहस्र योजन आयाम है और चारसो का विस्तार है। वहाँ पर केतुमाल है। सब जनपद कृष्ण वर्ण वाले पुरुष हैं और वे महान् बल वाले हैं और उत्पल वर्ण वाली स्त्रियाँ हैं जो बहुत ही शुभ दर्शन वाली हैं। और वहाँ पर बड़े वृक्ष पनस हैं। वहाँ पर ईश्वर ब्रह्मपुत्र स्थित रहते हैं। मरुपवान् के पूर्व पार्श्व में पूर्व गण्डिका है जो एक श्रृङ्ग वाली है और सहस्र योजन का मानस्र है। और वे भद्राश्व नाम वाले जनपद हैं ॥२॥

भद्ररसालवनं च तत्र व्यवस्थितम्। तत्र च पंच कुलपर्वताः ते च शैलवर्णो मालाख्यः कोरजस्कः त्रिपर्णः नीलश्चेति तद्वि-निर्गताः। तदम्भः स्थितानां देशानां ताम्येव नामान ॥३॥

ते च देशा एता नदीः पिबन्ति तद्यथा सीता सुवाहिनी हंसवती कासा महावक्त्रा चन्द्रवती कावेरी सुरसाख्यावती इन्द्र-वती अङ्गार वाहिनी हरित्तोया सोमावर्ता शतह्रदा वनमाला वसुमतो हंसा सुपर्णा पंचगंगा धनुष्मती मणिवप्रा सुब्रह्मभागा विलासिनी कृष्णतोया पुण्योदा नागवती शिवा शैवालिनी मणि-तटा क्षीरोदा वरुणताली विष्णुपदी महानदीनां पयो ये पिबन्ति ते दशवर्षसहस्त्रायुषो रुद्रोमा भक्ता इति ॥४॥

और भद्र रसाल बन है जो वहाँ पर व्यवस्थित है। और वहाँ पर पाँच कुल पर्वत हैं। और वे शैलवर्ण — माल्याख्य—कोरजस्क—त्रिपर्ण और नील उससे विनिर्गत हुए हैं। उस अम्भ (जल) में स्थित देशों के वे ही नाम हैं ॥३॥ और वेदेश इन नदियों को पीया करते हैं। वह इस प्रकार से हैं—सीता—सुहाहिनी—हंसवनी—कासा—महावक्त्रा—चन्द्रवती—कावेरी—सुरसाख्यावती—इन्द्रवती—अङ्गार वाहिनी—हरितोमा—सोमावती—शतहृदा—वनमाला—वसुमती—हंस्त—सुपर्णा—पन्न गङ्गा—धनुस्मतीं—मणि वप्रा—सुब्रह्मभागा—विलासिनी—मणितटा—क्षीरोदा—वरुणताली—विष्णु-

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पदी—इन महा नदियों का जल पीया करते हैं। वे दश सहस्र आयु वाले पुरुष रुद्रोया के भक्त हैं। इति ।।४।।

नैषधस्या चलेन्द्रस्य पश्चिमेन कुलाचल जनपद नद्यः कीर्त्यन्ते। तथा च विशाख कम्वल जयन्त कृ:णहरिताशोक वर्द्धमान इत्येते सप्त कुल पर्वतानां कोटिशः प्रसूतिः। तन्निवासिनो जनपदास्तन्नामान एव द्रष्टव्याः ।।५।।

तद्यथा सौरग्रामान्तसातपः कृतसुराश्रावण कम्बलमाहेयाचाल कूटवास मूलतप क्रौञ्चा कृष्णाङ्ग मणिपंकज चूडमल सोमीप समुद्रांतक कुरकुञ्ज सुवर्णतट कुह श्वेताङ्ग कृष्णपादविद कपिल कर्णिक महिष कुब्ज करनाट महोत्कट शुक नाक सगज भूम ककुरंजन महानाह किकिसपर्ण भौमक चोरक धूमजन्माङ्गारज जीवलौकिता वाचांसहाङ्ग मधुरेय शुकेग् चकेय श्रवण मत्तकाशिक गोदावान कुलपञ्जाव वर्जाह मोद शालका एते जनपदास्तत्पर्वतस्था नदीः पिवन्ति ।।६ ।

नैषध अचलेन्द्र के पश्चिम में कुलाचल जनपद हैं नदियाँ हैं जिनका कीर्तन किया जाता है। तथा विशाल—कम्वल—जयन्त—कृष्ण—हरिता शोक—वर्द्धमान ये सब सात कुल पर्वतों की सन्ततियाँ हैं। जो करोड़ों हैं। उनके निवासी जनपद उन्हीं के नाम वाले देखने चाहिए ।।५।। वह इस प्रकार से हैं—सौरशमान्त सप्तय—कृतसुरा श्रवण—कम्बल या हेमाचल—कूटवास—भूलस्त्य—क्वौञ्च—कृष्णाङ्गमणि—पङ्कज—चूड़मल—सोमीष—समुद्रान्तक—-कुरकुल—सुवर्णतट—कुह श्वोताङ्ग—-कृष्णयादविद—-कपिल—-कणिक—-महिष—कुब्ज—कर्णादि--महोत्कर--शुक—नाक--सजग--भूमा--ककुरंजन—महानाह—किकिसर्पण—भौमक—चोरक—घूमअन्मा—-अङ्गाराज—जीवलोकिला—-वार्त्रा मधुरेम— शुकेय-—चकेय— श्रवण-—मत्तकाशिक—गोदावान—कुल पज्जान—वर्जाह—मोद शालक—ये जनपद उन पर्वतों पर स्थित हैं जो नदियों का याम किया करते हैं ।।६।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तद्यथा प्लाक्षा महाकदम्बा मानसी श्यामा सुमेधा वहुला विवर्णा पुंखा माला दर्भवती भद्रनदी शुकनदी पल्लवा भीमा प्रभंजना काम्बा कुशावती दक्षा कासवती तुंगा पुण्योदा चन्द्रावती समूलावती ककुपद्मिनी विशाला करण्टका पीवरी महामाया महिषी मानुषी चण्डा एताः नदी प्रधानाः । शेषाः क्षुद्रनद्यः सहस्त्रश्चेति ॥७॥

वे इस प्रकार है—प्लाक्ष—महाकदाब—मानसी—श्यामा—सुमेधा--बहुला--विवर्ण--पुंखा-माला-दर्भवती भद्रनदी--शुकनदी--पल्लवा-भीया—प्रमज्जना—काम्य—कुष्णवती—दक्षा—कासवती—येप्रधान—तुंगा-पुण्योदा-चन्द्रावर्ता--ककुपादमनी-समूलावती—बिशाला-करणका—पीवरी—महामाया—महिषी—मानुषी—चण्डा—पुद्याने नदियाँ हैं। शेष सब छोटी नदियां हैं और सहस्रों हैं ॥७॥

८४ ८५–अरम्यक और जम्बूद्वीप वर्णन

उत्तराणां च वर्षाणां दक्षिणानां च सर्वशः ।
आचक्षते यथान्यायं ये ये पर्वत वासिनः ॥१
तत् श्रणुध्वं मया विप्राः कीर्त्य मानं समाहिताः ।
दक्षिणेन तु मेरोश्च श्वेतस्य चोत्तरेण च ॥२
वायव्यं रम्यकं नाम जायन्ते तत्र मानवाः ।
मतिप्रधाना विमला जरादुर्गति वर्जिताः ॥३
तत्रापि सुमहान्वृक्षो न्यग्रोधो रोहितः स्मृतः ।
तत्फलरस पानाच्च दश वर्ष सहस्रिणा ॥४
आयुषा सर्व मनुजा जायन्ते देव रूपिणः ।
उत्तरेण च श्वेतस्य त्रिश्रृङ्गस्य दक्षिणे ॥५
वर्षं हिरणमयं नाम तत्र हैरण्वती नदी ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यक्षा वसन्ति तत्रैव बलिनः कामरूपिणः ॥६

उत्तरों और दक्षिण वर्षों के सब ओर जो—जो पर्वत वासीगण हैं उनको यथा न्याय कहा जाता है—हे विप्रो ! उसको मेरे द्वारा आप लोग सुनिए। और परम सावधान होकर श्रवण कीजिए। मेरे द्वारा वे सब कीर्त्तित किये जाते हैं ॥११॥ मेरु के दक्षिण की ओर श्वेत के उत्तर की ओर हैं ॥२॥ वहां पर वायका रम्यक नाम वाले मानव समुत्पन्न होते हैं। वे सब बुद्धि मे परम प्रधान होते हैं—विमल होते हैं और वे जरा (बुढ़ाया) की दुर्गति से रहित हुआ करते हैं अर्थात् सामान्य तथा वृद्धता में जो मनुष्यों की इन्द्रियों की शिथिलता से वुरी गति हो जाया करती है वैसी उनकी नहीं होती है ॥३॥ वहाँ पर भी एक बहुत बड़ा न्यग्रोध के नाम वाला वृक्ष है जो रोहित कहा गया है। और उस वृक्ष के फलों के रस के पान से दश सहस्र वर्ष की आयु तक सभी मनुष्य देवरूपी हो जाया करते हैं। श्वेत के उत्तर की ओर तथा त्रिशृङ्ग के दक्षिण की ओर हिरण्यक नामक एक वर्ष है वहाँ पर हिरण्वती नदी है। वहाँ पर ही कामरूप वाले वलीयक्ष निवास किया करते हैं ॥४॥५॥ ॥ ६ ॥

तथा त्रिश्रृंगे च मणिकांचन सर्वरत्न शिखरोरुक्रमेण तस्य चोत्तरश्रृङ्गाद्दक्षिण समुद्रान्तं चोत्तर कुरवः। तत्र च क्षीर वृक्षास्रास वासन्ति तेषु वृक्षेष्वेव वस्त्राण्या भरणानि च। मणिमयी भूमिः सुवर्ण ाबलुका ॥७॥

तस्यैव द्वीपस्य पश्चिमेन चतुर्योजनसहस्रमतिक्रम्य देवलोकाच्चन्द्रद्वीपो भवति योजन सहस्र परिमण्डलः तस्य मध्ये चन्द्रकान्त सूर्यकान्त नामानौ गिरि प्रस्रवणौ। तयोर्मध्ये चंद्रावर्ता नाम महानदी ॥१०॥

एतत् कुरु वर्षान्तस्योत्तरपाश्वें समुद्रोर्मि मालाढ्यं पंच योजन सहस्र मतिक्रम्य देवलोकात्सूर्य द्वीपो भवति योजन सहस्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

परिमण्डलः। तस्य मध्ये गिरिवरः शत् योजन विस्त्तीर्णस्तदुच्छ्रितः। तस्मात् सूर्यावर्तनामा नदी निर्गता। तत्र च सूर्यस्याधिष्ठानम् ॥११॥

उसी भाँति त्रिश्रृङ्ग में मणि—कांचन—सब रत्न शिखरो के अरु क्रम से और उसके उत्तर श्रृङ्ग से दक्षिण में समुद्र के अन्त तक उत्तर कुरव हैं। और उनमें क्षीर वृक्ष आम्रा सब हैं। उन वृक्षों में ही वस्त्र और आमरण हैं। वहाँ की भूमि मणियों से परिपूर्ण है वालुका सुवर्ण मयी है ॥७॥ उसी द्वीप के पश्चिम की ओर चार सहस्र योजन अतिक्रमण करके देवलोक से चन्द्र द्वीप होता है जिसका एक सहस्र योजन का परिमण्डल है। उसके मध्य में चन्द्रकान्त और सूर्यकान्त नाम वाले दो गिरि प्रस्रवण हैं। उन दोनों के मध्य में चन्द्रावती नाम वाली एकं महा नदी है ॥८॥९॥१०॥ यह कुरु बर्षान्त के उत्तर पार्श्व में समुद्र की उर्मियों की माला से आढ्य पाँच सहस्र योजन का परिमण्डल है। उसके मध्य में एक श्रेष्ठ गिरि है उससे उच्छ्रित सौ योजन के विस्तार वाला है। उससे सूर्यावती नाम वाली नदी निकली है। और वहाँ पर सूर्य का अधिष्ठान है ॥११॥

तस्य च द्वीपस्य पश्चिमेन चतुर्योजन सहस्रमतिक्रम्य योजन साहस्र परिमण्डलेन द्वीपो भद्राकारो नाम तत्र च भद्रासनं वायोरनेकरत्न शोभितम् ॥१२॥

इयं भू पद्मव्यवस्था कथिता। इदानीं भारतं नवभेदं श्रृणुत। तद्यथा इन्द्रः कसेरुः ताम्रवर्णो गभस्तिः नागद्वपी तथा सौम्यो गन्धर्वो वारुणो भारतं चेति। सागर संवृतमेकंकं योजन सहस्र प्रमाणम्। तत्र च सप्त कुलपर्वतः सन्ति ॥१३॥

तद्यथा महेन्द्रो मलय सह्यः शुक्तिमान् ऋक्ष पर्वतः, विन्ध्यश्च पारियात्रश्च इत्येते कुलपर्वताः ॥१४॥

उस द्वीप के पश्चिम की ओर चार सहस्र योजन का अतिक्रमण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके सहस्र योजन वाले परिमण्डल से युक्त द्वीप है जिसका नाम भद्राकार है। और वहाँ पर भद्रासन वायु देवका है जो अनेक रत्नों से शोभित है ॥१२॥ यह भू पद्म व्यवस्थिता कही गयी है। इस समय में भारत नौ भेदों वाला है—उसका श्रवण करिए। वह इस तरह से है—इन्द्र—कशेरु—नाम्रवर्ण—गभस्ति—वाक द्वीप—सौम्य—गन्धर्व—वारुण और भारत ये हैं। सागर से संवृत एक—एक सहस्र योजन का प्रमाण है। और वहाँ पर सात कुल पर्व हैं ॥१३॥ वे इस प्रकार से हैं—महेन्द्र—मलय—सह्य—शक्तिमान्—ऋक्ष पर्वत—विन्ध्य—पारिपात्र—ये कुल पर्वत हैं ॥१४॥

अन्ये च मन्दर शारदर्दु र कैलासामैनाक वैद्युत वारन्धम पाण्डुरतु गप्रस्थ कृष्ण गिरि जयन्तैरावत ऋष्यमूक गोमन्ता चित्रकूट श्री पर्वत चकोरकुट श्रीशैल कृतस्थला इत्येते क्षुद्रपर्वताः एतेषामपि क्षुद्रतराः। तेषा मार्यां म्लेच्छा जनपदा वसन्ति। पिबन्ति चैतासु नदीषु पानीयम्। तद्यथा गंगा सिन्धुः सरस्वती शतद्रुः वितस्ता वियाशा चन्द्रभागा सरय्र्यमुना इरावती देविका कुहूः गोमती धूतपापा वाहुदा दृषद्वती कौशिकी नि स्वीरा गण्डकी चक्षुष्मतीं लोहिता इत्येता हिमवत्पाद निर्गताः। वेदस्मृतिः वेदवती सिन्धुपर्णा चन्द नाभा नाशदाचारा रोहिपारा चर्मण्वती विदिशा वेदत्रयी वपन्ती इत्येता पारियात्रोद्भवाः ॥१५

और अन्य मन्दर—शार—दर्दुर—कैलास—मैं नाक—वैद्युत—वारन्धम—पाण्डुर—तुङ्गप्रस्थ कृष्णगिरि—जयन्त—ऐरावत—ऋठय मूक—गोमन्त—चित्रकूट—श्री पर्वत—चकोर कुट—श्री शैल—कृत स्थल—ये इतने क्षुद्र (छोटे) पर्वत हैं। इनसे भी अधिक क्षुद्र है उनमें आर्या—म्लेच्छ जन पद निवास किया करते हैं। और इन नदियों मे पानी का पान किया करते हैं। वे इस तरहसे हैं—गङ्गा—सिन्धु—सरस्वती—शतद्रु—वितस्ता—वियाशा—चन्द्रभागा—सरयू—यमुना—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इरावती—देविका—कुहू —गोमती—धूतपाया—-वाहुदा— -दृषद्वती—कौशिकी—निस्वीरा—गण्ड की—चक्षुष्मती—लोहिता—ये सब हिमवान् के पाद से निर्गत हुई हैं। वेद स्मृति—वेदवती सिन्धुपर्णा—चन्द्रभागा—नाशदाचारा—रोहिपरा—चर्मण्वती—विदिशा—वेदत्रयी--त्रयन्ती—ये पारिपात्र से उद्भव वाली हैं ॥१५॥

शोणो ज्योतीरथा नर्मदा सुरसा मन्दाकिनी दशार्णा चित्रकूटा तमसा पिप्पला करतोया पिशाचिका चित्रोत्पला विशाला वंजुका बालुवाहिनी शुक्तिमती विरजा पंकिनी रात्री इत्येताः ऋक्ष प्रसूताः। मणिजाला शुभा तापी पयोष्णी शीघ्रोदा वेष्णो पाशा वैतरणी वैदिपाला कुमुद्वती तोया दुर्गा अन्त्या गिरा एता विन्ध्य पादोद्भवाः। गोदावरी भीमरथी कृष्णा वेणी वंजुला तुंगभद्रा सु प्रयोगा वाह्यकावेरी इत्येत: सह्यपादोद्भवाः ॥१६॥

शोण—ज्योतीरथा—नर्मदा--सुरसा—मन्दाकिनी--दशार्णा—चित्रकूटा—-वमसा—पिप्पला—-करतोया—-पिशाचिका—-चित्रोत्पला—विशाला—वंजुका—वासु वाहिनी—शुक्तिमती—विरजा—पङ्किनी—रात्रि—ये इतनी नदियाँ ऋक्ष पर्वत से समुत्पन्न हुई हैं। मणिजाला—शुभा—तापी—पयोष्णी—शीघ्रोदा—-वेष्णा—पाशा—वैतरणी—वैदिपाला—कुमुद्वती—तोया—दुर्गा—अनूपा—गिरा—ये सब नदियाँ विन्ध्य के पाद से समुद्गत हुई है। गोदावरी—भीमरथी—कृष्णा—वेणी—वञ्जन—तुङ्ग भद्रा—सुप्रयोगा—वाह्य कावेरी—ये इतनी नदियाँ सह्य पर्वत से समुद्भत हुई हैं ॥१६॥

शतमाला ताम्रपर्णी पुष्पावती, उत्पलावती इत्येता मलयजाः। त्रियामा ऋषि कुल्या इक्षुला त्रिविन्दाल मूलिनी वंशवरा महेन्द्रत भयाः, ऋषिका लूसती मन्दगामिना पलाशिनी इत्येताः शुक्तिमत्प्रभवाः। एताः प्राधान्येन कुल पर्वत नद्यः। शेषाः श्रुद्र नद्यः एष जम्बू द्वीपो योजन लक्ष प्रमाणः ॥१७॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शत माला—ताम्रयर्णी—पुष्पावती—उत्पलावती—ये इतनी नदियाँ मलय पर्वत से समुत्पन्न हुई हैं। त्रियामा—ऋषि कुलषा—इक्षुला—त्रिविन्दाल—मूलिनी—वंश वरा—ये सब महेन्द्र पर्व की तनया है। अर्थात् महेन्द्र नामकपर्वत से समुत्पम्न हुई हैं। ऋषिका—तू सती—मन्दाणात्रिनी—पलाशिनी—ये नदियाँ शक्तिमान् नामक पर्वत से समुद्वत हुई हैं। ये सब प्रधान तया कुल पर्वतों की नदियाँ हैं। शेष सब क्षुद्र नदियाँ ही हैं। यह जम्बूद्वीप एक लाख योजन के प्रमाण वाला है।१७।

८६–८७ शाक और कुशद्वीप वर्णन

जम्बूद्वीपस्य विस्तारादृद्विगुणपरीणाहाल्लवणोदकश्च जम्बूद्वीपसमः। तत्र च पुण्याः जनपदाः चिरात्मानः ते दुर्भिक्षा-जराव्याधि रहिताश्च। देशेऽत्र सप्तैव कुल पर्वतास्तावत्तिष्ठन्ति तस्य चोभयतो लवण क्षीरोदधी व्यवस्थितौ ॥१॥

तत्र च प्रागायता शैलेन्द्र उदयो नाम पर्वतः तस्यापरेण जलधारो नाम गिरिः स एव चन्द्रेति कीर्त्तितः। तस्य जलं च इन्द्रो गृहीत्वा वर्षति। तस्यापरः श्वेत को नाम गिरिः। तस्मिन् षट्चेति कीर्तिताः। प्रजा अनेक विधाः क्रीडन्ति तस्यापरो रजतो गिरिः स एव शाको नाम्नोच्यते। तस्य परेणाम्बिकेय स च विभ्राजसो भण्यते ॥२॥

जम्बूद्वीप के विस्तार से द्वि गुण परिणाहसे लवणोदक है जो जम्बूद्वीप के ही समान है। और वहां पर परम पुण्यमयजनपद हैं जो चिर आत्मा वाले हैं। उनको दुर्भिक्ष (अकाल) और वृद्धता व्याधियाँ कभी नहीं हुआ करती हैं। इस देश में सात ही कुल पर्वत हैं जो वहाँ तक स्थित रहा करते हैं। उनके दोनों ही ओर क्षार समुद्र और क्षीर सागर व्यवस्थित हैं। और वहाँ पर प्राक् आयया शैलेन्द्रगृदय नामक

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पर्वत है। उसके दूसरे भाग में जलधार नाम वाला गिरि है। वह ही चन्द्र इस नामसे कीर्त्तित किया गया है। उसके ही नल को इन्द्रदेव ग्रहण करके वर्षा किया करते हैं। उसके दूसरी ओर श्वेतक नाम वाला पर्वत है? उसमें छै हैं ऐसे कीर्त्तिन किये गये हैं। वहाँ पर अनेक प्रकार की प्रजा क्रीडा किया करती है। उसके आगे दूसरा रजत नामक गिरि है। वह ही शाक—इस नाम से कहा जाया करता है। उसके आगे आराम्बिकेय है और वह विभ्राजस कहा जाया करता है ॥१॥२॥

स एव केसरीत्युच्यते। ततो वायुः प्रवृत्तते। गिरीनामान्येव वर्षाणि। तद्यथा उदयसुकुमारो जलधार क्षेमक महाद्रुमा इति प्रधाननामनि। द्वितीय पर्वतनामभिरपि वक्तव्यानि तस्य च मध्ये शाकवृक्षः तत्र च सप्त महानद्यो द्विनाम्न्यः तद्यथा सुकुमारी कुमारी नन्दा वेणिका धेनुरिक्षुमती गभिस्तिारित्येता नद्यः ॥३॥

अथ तृतीयं कुशद्वीप श्रृणुत कुशद्वीपेन क्षोरोदः परिवृतः शाकद्वीपस्य विस्तारद्विगुणेन। तत्रापि सप्त कुल पर्वताः सर्वे च द्विनामानः तद्यथा कुमुदः विद्रुमेति च उच्यते स उन्नतो हेम पर्वतः स एव द्रोथः पुष्पवान् स एव कङ्कश्च पर्वतः स एव कुशेशयोऽग्निमान् स एव तथा षष्ठो महिष नामा स एव हरिसच्यते तत्राग्निः वसति ॥४॥

वह ही केसरी—इस नाम से कहा जाता है। इसके अनन्तर वायु प्रवृत्त होता है। गिरियों के नाम ही वर्ष होते हैं। वह इस प्रकार से है—जैसे—उदयसुकुमार जलधार—क्षेमक—महाद्रुम—ये प्रधान नाम हैं। दूसरे पर्वतों के नामों से भी कहने चाहिये और उसके मध्य में शाक वृक्ष है और वहाँ पर सात महा नदियाँ हैं। वे दो नामों वाली हैं। वह इस प्रकार से हैं जैसे—सुकुमारी—कुमारी—नन्दा—वेणिका—धेनु—इक्षुमयी—भभास्ति—ये इतनी ही नदियाँ हैं ॥३॥ इसके अनन्तर तीसरा कुश द्वीप है। उसका श्रवण कीजिए। क्षीरोद कुश द्वीप से परिवृत है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जो शाक द्वीप केविस्तारा से दुगुना है । वहाँ पर भी सात कुल पर्वत है । और वे सब दो नामों वाले हैं। वह इस तरह से है—कुमुद और विद्रम-मन्यहा कहे जाते हैं । वह देम पर्वत उन्नत है । और वह भी द्रोण पुष्पवान् है । और वह भी कङ्क पर्वय है । वह ही कुशेशय अग्निमान् है । वह ही छटा यहिष नाम वाला है। वह ही हरि—इस नाम में कहे चाते हूं । वहाँ पर अग्निदेव निवास किया करते हैं ॥४॥

सप्तमस्तु ककुध्रनामा स एव मन्दरः कीत्त्यंते इत्येते पर्वताः कुशद्वीपे व्यवस्थिताः । ऐतेषां वर्षभेदो भवति द्विनाम-संज्ञः ! कुमुदस्य श्वेतमुद्भिदं तदेवादौ कीर्त्यंते उन्नतस्य लोहितं वेणुमण्डलं तदेव भवति बलाहकस्य जीमूतं तदेवास्य रथाकार इति । द्रोणस्य हरिं तदेव वलाधनं भवति ॥५॥

शाकद्वीपोऽपि द्विगुणसन्निवेशश्च कथितः । तस्य च मध्ये महाकुशस्तम्बः । एष च कुशद्वीपः दधिमण्डोदेनामृत सम्मितेन क्षीरोदाद्विगुणेन संवृतः ॥६॥

सप्तयाँ तो ककुध्र नाम वाला है । और वह ही मन्दर नाम वाला कीत्तित किया जाता है । ये इतने पर्वत हैं जो कुश द्वीप में व्यवस्थित हैं । इनका दो नाम संज्ञा वाला वर्ष भेद होता है । कुश का श्वेत उद्-भद है । वह ही आदि में कीर्त्तित किया जाता है । उन्नत का लोहित वेणुमण्डल है और वही होता है । वलाहक का जीमूत है वही इसका रथाकार है । द्रोण के हरि हैं वह ही वलाधन होता है ॥५॥ शाक द्वीप की द्विगुण और सन्निवेश कहा गया है । और उसके मध्य में महाकुश स्तम्भ है और यह कुश द्वीप है । अमृत सम्मित दधिमणोह हो क्षींरोह दुगुना संवृत है ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

८८-८९ क्रौंच और शाल्मली द्वीप

अथ क्रौंचो भवति चतुर्थः कुशद्वीपाद्द्विगुण मानतः समुद्रः क्रौंचेन विगुणेनावृतः । तस्मिश्च सप्तैव प्रधान पर्वताः । प्रथमः क्रौंचो विद्युल्लतो रैवतो मानसः स एव पावकः तथैवान्धकारः स ऐवाच्छोदकः । देवावृत्तो देवावृत्तः स च सुरापोभण्यते । ततो देविष्ठ स एव काञ्चनशृंगो भवति ।।१।।

देवानन्दात्परो गोविन्दो द्विविन्द इति । ततः पुण्डरीकः स एव तोयासहः । एते रत्नमयाः पर्वताः क्रौंचद्वीपे व्यवस्थिताः सर्वे च परस्परेणोच्छ्रयाः ।।२।।

तत्र वर्षाणि । तथा क्रौंचस्य कुशलो देशः स एव माधवः स्मृतो वामकस्य मनोऽनुगः स एव संवर्त्तकः । ततः उष्णवान स सप्रकाशः । ततः पावकः स एव सुदर्शनः तथा चान्धकारः स एव संमोहः । ततो मुनि देशः स च प्रकाशः ततो दुन्दुभिः स एवानर्थ उच्यते ।।३।।

इसके अनन्तर क्रौंचि चौथा होता है जो कुश द्वीप से मान से द्विगुण है । दुगुने क्रौच से समुद्र आ वृत है । और उसमें सात ही प्रधान पर्वत हैं । प्रथम क्रौच—विमुल्लत—रैवत—मानस वह ही पावक है, उसीं भाँति अन्धकार है वह ही अच्छोदक है—देवाकृत और देवावृत और वह सुरण्य कहा जाता है । फिर देविष्ठ है वह ही काञ्त्तन शृंग है ।।१।। देवानन्द से पर गोविन्द-गिविन्द है । इसके अनन्तर पुण्डरीक है । वह ही तोयासह है । ये रत्नमय पर्वत है जो क्रौच द्वीप में व्यवस्थित हैं । और सब परस्पर में उच्छ्रय अर्थात् ऊँचे हैं ।।२।। उसमें वर्ष हैं तथा क्रौञ्ज कुशल देश है । वह हीं माधव कहा गया है। कमर का मन अनुग है और वह ही संवर्त्तक है । इसके अनन्तर उष्णवान् है । वह ही स्वप्रकाश है । इसके उपरान्त पावक है । वह ही सुदर्शन है । तया अन्धकार है । वह ही

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

संमोह है । इसके अनन्तर मुनि देश है । और वह प्रकाश है । फिर दुन्दुभि है । वह ही अनर्थ है ऐसा कहा जाया करता है ।।३।।

तत्रापि सप्तैव नद्यः गौरी कुमुद्वती चैव संध्या रात्रिर्मनोजवा । ख्यातिश्च पुण्डरीक च नद्यः सप्त विधाः स्मृताः । क्रौंचद्वोपो घृताङ्केनावृतो घृतोदः । शाल्मलनेति ।।४।।

त्रिषु शिष्टेषु वक्ष्यामि द्वीपेषु मनुजानथ । शाल्मलि पंचमं वर्षं प्रवक्ष्यन्तं निबोधत । क्रौंचद्वीपस्य विस्तारात् शाल्मलो द्विगुणोमतः ।।५।।

घृतसमुद्रमावृत्य व्यवस्थितः । तद्विस्तारो द्विगुणः । तत्र च सप्त पर्वताः प्रधानाः । तावत्यो नद्यः । तत्र च पर्वताः सुमहान्पीतशातकौम्भात् सर्वगुणसौवर्ण रोहित सुमन स कुशल जाम्बूनद वैद्युता इत्येते कुलपर्वताः वर्षाणि चेति ।।६।।

वहां पर भी सात ही नदियाँ हैं—यथा--गौरी, कुमुद्वती, सन्ध्या, रात्रि, मनोजवा, ख्यात्ति पुण्डरीका नदियाँ हैं जो सात प्रकार की कही गयी हैं । कौञ्चद्वीप घृताङ्क से आवृत घृसोह है । अथवा शाल्मल है । ।।४।। इसके अनन्तर शेष तीनों मे द्वीपों में मनुजों के विषय में बतलाऊंगा । शाल्मति पाँचवाँ द्वीप वष है उसको प्रवक्ष्यन्त समझ लीजिए । कौञ्चद्वीप के विस्तार से शाल्मल दुगुना माना गया है ।।५।। यह घृत समुद्र को आवृत करके व्यवस्थित है । उसका विस्तार दुगुना है । और वहां पर सात पर्वत हैं । और प्रधान उतनी ही नदियाँ हैं । उसमें पर्वत सुमहान्—पीतशाल कुम्भ से सर्वगुण—सौवर्ण रोहित—सुमनस—कुशल—जाम्बूनद और वैद्युत—ये ही कुल पर्वत और वर्ष हैं ।।६।।

अथ षष्ठं गोमेदं कथ्यते । शाल्मलं यथा सुरोदेनावृतं तद्वत्सुरोदोऽपि तत् द्विगुणेन गोमेदेनावृतः । तत्र च प्रधान पर्वतौ द्वावेद । एकश्च तावतावसरः अपरश्च कुमुद इति । समुद्र इक्षुरसः । तत् द्विगुणेन पुष्करेणावृतः तत्र च पुष्कराख्ये मानसो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नाम पर्वतः तदपि द्विधाच्छिन्नं वर्ष तत्प्रमाणेन च स्वादूकेनावृतम् ।।७।।

ततश्च कटाहम् । एतत्पृथिव्याः प्रमाणम् । एतानि कल्पे कल्पे भगवान् नारायणः क्रोडरूपी रसातलान्तः प्रविष्टान् दंष्ट्रयैकयोद्धृत्य स्थितौ स्थापयति ।। स्वस्ति वोऽस्तु गमिस्यामि कैलास निलयं द्विजाः ।।८

इसके उपरान्त छटवाँ जो भेद कहा जाता है जिस तरह से शाल्मत सुरोह से आवृत से उसी तरह से सुरोह भी उससे दुगुने के भेद से आवृत है । और उसमें प्रधान पर्वत दो ही हैं । और एक तो तावतावसर है ? दूसरा कुमुद है समुद्र इक्षुरस है । उससे दुगुने पुष्कर से आवृत है । और वहां पर पुष्कर नामक में मानस नाम वाला पर्वत है । वह भी दो भेदों में छिन्न है और वर्ष है । उसके प्रमाण वाले स्वाहु उदक से आवृत है ।।७।। और इसके पश्चात् कटाह है । यह पृथिवी के प्रमाण वाला है । इनको कल्प-कल्प में भगवान् नारायण फोड़ रूपी रसातल के अन्दर प्रविष्टहुओं को एक दण्ड से उद्धत करके स्थिति में स्थापित किया करते हैं । हे द्विजो ! आपका कल्याण होवे-अब मैं कैलासनिलाम में गमन करूँगा ।।८।।

९०--९१ त्रिशक्तिगत सृष्टि माहात्म्पर्म्

परमात्मा शिवः पुण्य इति के चिद्भवं विदुः ।
अपरे हरिमीशान मिति केचिच्चतुर्मुखम् ।।१
एतेषां कतमो देवः परः को वाथ वापरः ।
एतत्र् देव ममाचक्ष्व परं कौतूहलं हि मे ।।२
परो नारायणो देवस्ततस्त स्मात् चतुर्मुख ।
तस्माद् रुद्रोऽभवद्देवि स च सर्वज्ञतां गत ।।३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तस्याश्चर्याण्यनेकानि विविधानि वरानने ।
श्रृणु सर्वाणि चार्वङ्गि कथ्यमानं मयानघे ॥४
कैलास शिखरे रम्ये नानाधातु विचित्रते ।
वसत्यनुदिनं देवः शूलपाणिः त्रिलोचन ॥५
सैकस्मिन्दिवसे देवः सर्वभूत नमस्कृतः ।
गणैः परिवृतो देव्या महानासोत्पिनाकधृक् ॥६
तावद्ब्रह्मा स्वयं देवैरुपायात्सह सत्वरः ।
तमागतमथो दृष्ट्वा पूजयित्वा विधानतः ।
उवाच परमो देवो रुद्रो ब्रह्माणमव्ययम् ॥७

परमात्मा शिव परम पुण्यमय हैं—ऐसा कोई भगवान् भव को जानते हैं। दूसरे हरि को ईशान और कुछ चतुर्मुख को जानते हैं ॥१॥ इन सब में कौन सा देव पर है अथवा कौन सा अपर है। यह ही आप अब कृपा करके मुझे बतलाइए। मेरे हृदय में यह बहुत बड़ा कौतूहल होता है ॥२॥ इस प्रश्न के उत्तर में कहा गया था कि सबसे देव नारायण हैं। फिर उनसे पीछे चतुर्मुख (ब्रह्मा) हैं। हे देवि! उनसे भी पीछे रुद्रदेव हुए हैं और वे सर्वज्ञता को प्राप्त हो गये थे ॥ ३ ॥ हे वरानने! उनके अनेक और नाना प्रकार के आश्चर्य हैं। हे सुन्दर अङ्गों वाली! उन सबको हे अनघे! मेरे द्वारा कहे जाने वालों का आप श्रवण कीजिए ॥४॥ एक परम सुरम्य कैलास गिरि है जो अनेक प्रकार की धातुओं से विचित्र है उसमें वे त्रिशूल को हाथ में धारण करने वाले त्रिलोचन देव नित्य ही निवास किया करते हैं ॥५॥ वे देव सभी देवगणों के द्वारा वन्द्यमान हैं। एक दिन में वे देवगणों से से परिवृत थे और पिनाकधारी देवी के साथ महान् थे ॥६॥ उतने ही अन्तर में ब्रह्माजी स्वयं देवगणों के साथ शीघ्रता से वहां पर समागत हुए थे। इसके अनन्तर उन ब्रह्माजी को वहां पर आये हुए देखकर विधान से उनका अर्चन किया था और फिर परमदेव रुद्र उन अविनाशीं ब्रह्माजी से बोले थे ॥७॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किमागमन कृत्यं ते ब्रह्मन् ब्रूहि ममाचिरम् ।
किंच देव त्वरायुक्त आगतो मम सन्निधौ ॥८
अस्त्यन्धको महादैत्यस्तेन सर्वे दिवौकसः ।
अर्द्दिता मत्समीपं तु दृष्ट्वा मां शरणैषिणः ॥९
ततश्चैते मया प्रोक्ता सर्वे देवा भवं प्रति ।
गच्छाम इति देवेश ततस्त्वेते समागताः ॥१०
एव मुक्त्वा स्वयं ब्रह्मां वीक्षाञ्चक्रे पिनाकिनम् ।
नारायणं च मनसा सस्मार परमेश्वरम् ॥११
ततो नारायणो देवो द्वाभ्यां मध्ये व्यवस्थितः ।
ततस्त्वे को कृतास्ते तु ब्रह्म विष्णुमहेश्वराः ॥१२
परस्परं सूक्ष्म दृष्ट्या वीक्षाञ्चक्रुः मुदा युताः ।
ततस्तेषां त्रिधा दृष्टि भूत्वैका समजायत ॥१३
तस्यां दृष्टयां समुत्पन्ना कुमारी दिव्य रूपिणी ।
नीलोत्पलदलश्यामा नीलकुंचितमूर्द्धजा ॥१४

हे ब्रह्माजी ! यहां पर आपके आगमन का क्या प्रयोजन है—यह आप मुझको शीघ्र ही बतलाइए । हे देव ! यह भी बताइए कि आप इतनी शीघ्रता से युक्त होते हुए मेरे समीय में किस कारण से समागत हुए हैं ॥८॥ ब्रह्माजी ने कहा था कि एक अन्धक नामधारी बड़ा भारी दैत्य है । उसके द्वारा सभी ये देव उत्पीड़ित हो रहे हैं । ये शरण की इच्छा वाले मेरे पास मुझको रक्षक समझ कर समागत हुऐ हैं । फिर इन सबसे मैंने कहा था कि सब देव अभय की ओर भव प्रभु के पास चलें । हे देवेश ! इसके अनन्तर ये सब और मैं आपके समीप में समागत हुए हैं ॥९॥१०॥ इस प्रकार से निवेदन करके ब्रह्माजी ने भगवान् शम्भु को देखा था और मनके द्वारा परमेश्वर नारायण का स्मरण किया था ॥११॥ इसके उपरान्त देवेश्वर नारायण उन दोनों के मध्य में व्यवस्थित हो गए थे । इसके उपरान्त वे ब्रह्मा—विष्णु और महेश्वर सभी एकीकृत

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुए थे और आनन्द से युक्त होते हुए उन्होंने परस्पर में सूक्ष्म दृष्टि से देखा था। इसके पश्चात् तीन प्रकार की उनकी दृष्टि होकर एक ही हो गयी थी ॥१२॥१३॥ उस दृष्टि में एक परम दिव्य कुमारी समुत्पन्न हुई थी। जो नील उत्पल के समान श्याम वर्ण वाली तथा नीले और कुञ्चित केशों वाली थी ॥१४॥

तत्सर्वमेकतः संस्थं कन्यापां सम्प्रदृश्यते ।
अथ तां दृश्य कन्यां तु ब्रह्म विष्णु महेश्वराः ॥१५
ऊचुः कासि शुभे ब्रूहि किं वा कार्यं विपश्चिते ।
त्रिवर्णा च कुमारी सा कृष्णा शुक्ला च पीतिका ॥१६
उवाच भवतां दृष्टेर्योगाज्जातास्मि सत्तमाः ।
किं मां नवेत्थ सुश्रोणीं स्वशक्ति परमेश्वरीम् ॥१७
ततो ब्रह्मादयस्ते च तस्यास्तुष्टा वरं ददुः ।
नाम्नासि त्रिकला देवी पाहि विश्वं च सर्वदा ॥१८
अपराण्यपि नामानि भविष्यन्ति तवानघे ।
गुणोत्थानि महाभागे सर्व सिद्धि कराणि च ॥१९
अन्यच्च कारणं देवि त्रिवर्णासि वरानने ।
मूर्ति त्रयं त्रिभिः वर्णैः कुरु देवि स्वकं द्रुतम् ॥२०
एवमुक्ता तदा देवैः करोत्त्रिविधां तनुम् ।
सितां रक्तां तथा कृष्णां त्रिमूर्ति त्वं जगाम सा ॥२१

वह सब एक ही रूप में समवस्थित होते हुए उस कन्या में दिखलाई दिये थे। इसके अनन्तर उस दिखाई देने वाली कन्या से वे ब्रह्मा—विष्णु और महेश्वर सबने कहा था—हे शुभे ! आप कौन हैं। हे विपश्चिते ! आप यह बतलाइए कि आपका क्या कार्य है। और वह कुमारी तीन वर्णों वाली थी जो कि कृष्ण—पीत और शुक्ल थे। ॥१५॥१६॥ उसने इसके उत्तर में कहा था—हे श्रेष्ठ तयो ! मैं आप लोगों की दृष्टि के योग से ही समुत्पन्न हुई हूँ। क्या आप लोग मुझको

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुश्रोणी को जो आप लोगों की ही अपनी शक्ति परमेश्वरी हूँ नहीं जानते हैं ? ॥१७॥ इसके अनन्तर उन ब्रह्मादिक सबको परम प्रसन्नता हुई थी और प्रसन्न होकर उन्होंने वरदान दिया था। आप देवी नाम से त्रिकला हैं और इस विश्व का सर्वदा हरिपालन कीजिये ॥१८॥ हे अनघे अर्थात् हे पाप रहिते ! आपके दूसरे भी नाम होंगे। हे महा भागे ! जो आपके गुणों से ही समुचित होगे और सब प्रकार की सिद्धियों के करने वाले होंगे ॥१९॥ हे वर आनन वाली देवि ! और इसका अन्य भी कारण है कि आप तीन वर्णों वाली है। आप इन तीन वर्णो से शीघ्र ही अपनी तीन मूर्त्तियों को करिए ॥२०॥ इस प्रकार से जब वह उनके द्वारा कही गयी थी तो देवों के द्वारा कहे जाने पर उसने अपना कलेवर तीन प्रकार का कर लिया था। वह सिता व्यक्ता और कृष्णा—इन तीन मूर्त्तियों के स्वरूप को प्राप्त हो गई ॥२१॥

या सा ब्राह्मी शुभा मूर्तिस्तया सृजति वै प्रजाः।
सौम्य रूपेण सुश्रोणी ब्रह्मसृष्टि विधानतः ॥२२
या सा रक्तेन वर्णेन सुरूपा तनुमध्यमा।
शंख चक्र धरा देवी वैष्णवी साकला स्मृता ॥२३
सा पाति सकलं विश्वं विष्णुमायेति कीर्त्यते।
या सा कृष्णेन वर्णेन रौद्रामूर्तिः त्रिशूलिनी ॥२४
दंष्ट्रा करालिनी देवी सा संहरति वै जगत्।
या सृष्टिः ब्रह्मणो देवी श्वेत वर्णा विभावरी ॥२५
सा कुमारी महाभाग विपुलाब्जदलेक्षणा।
सद्यो ब्रह्माणमामन्त्र्य तत्रैवान्तर धीयत ॥२६
सान्तर्हिता ययौ देवी वरदा श्वेत पर्वतम्।
तपस्तप्तुं महत्तीव्रं सर्व ज्ञत्वमभीप्सती ॥२७
या वैष्णवी कुमारी तु साप्यनुज्ञाय केशवम्।
मन्दराद्रिं ययौ तप्तुं तपः परम दुश्चरम् ॥२८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वह जो शुभा ब्राह्मी मूर्त्ति थी उससे वह प्रजाओं का सृजन किया करती। उस सुश्रोणी ने सौम्य स्वरूप से ब्रह्म सृष्ठि की थी। ।।२२।। और जो रक्त वर्ण से कृश मध्य भाग वाली उसने जो रक्त वर्ण से सुन्दर रूप वाली थी और शंख चक्र के धारण करने वाली देवी थी वह वैष्णवी कला कही गयी थी ।।२३।। बह सम्पूर्ण विश्व का पालन किया करती है और विष्णुमाया—इस नाम से कीर्त्तित की जाया करती है। जो वह कृष्ण वर्ण से युक्त थी वह त्रिशूल के धारण करने वाली रौद्रा मूर्त्ति थी ।।२४।। वह अपनी दृष्ट्राओं से परम कराल रूप वाली थी जो समस्त प्रजाओं का संहार किया करती है। जो ब्रह्माजी की सृष्टि देवी थी वह विभावरी श्वेत वर्ण वाली थी ।।२५।। हे महाभाग ! वह कुमारी विपुल अब्ज के दल के समान लोचनों वाली थी। उसने तुरन्त ही ब्रह्माजी को आमन्त्रित किया था और वहाँ पर ही वह अन्तर्हित हो गयी थी ।।२६।। वह बरदान देने वाली देवी श्वेत पर्वत में अन्तर्धामता को प्राप्त हो गई थी। उसने महान् तहस्या के तपन करके सर्वज्ञता के प्राप्त करने की इच्छा वाली हुई थी ।।२७।। जो वैष्णवी कुमारी थी उसने भी केशव भगवान् की अनुज्ञा प्राप्त करके परम दुश्चर तप करने के लिये मन्दर पर्वत पर चली गयी थी ।।२८।।

या सा कृष्णा विशालाक्षी रौद्री दंष्ट्रा करालिनी।
सा नील पर्वत वरं तपश्चत्तु ँ ययौ शुभा ।।२९
अथ कालेन महता प्रजाः सृष्टुं प्रजापतिः।
आरब्धवान्न तास्तस्य ववृधुः सृजतः प्रजाः ।।३०
मदान ववृधु स्तस्य ब्रह्मणो मानस प्रजाः।
तदा दध्यौ किमेतन्मे न तथा वर्द्धते प्रजाः ।।३१
ततो ब्रह्मा हृदा दध्यौ योगाभ्यासेन सुव्रते।
चिन्तयन् बुबुधे देवस्तां कन्यां श्वेत पर्वते ।।३२
ततो ब्रह्मा ययौ तत्र यत्र सा कमलेक्षणा।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तुष्टोऽस्मि ते विशालाक्षि वरं वरण कन्य के ॥३३
भगवन्ने कदेशस्था नोत्सहे स्थातु मज्जसा ।
अतोऽर्थं त्वां वरं याचे सर्वगत्वमभीप्सती ॥३४
एवमुक्तस्तदा देव्या सृष्ट्वा ब्रह्मा प्रजापतिः ।
उवाच तां तदा देवीं सर्वगा त्व भविष्यसि ॥३५

जो वह कृष्ण वर्ण वाली रौद्री और दाढ़ों से कराल स्वरूप वाली थी वह भी शुभा तपश्चर्या करने के लिये नील पर्वत पर चली गयी थी। ॥२६॥ इसके अनन्तर महान् काल में प्रजापति ने प्रजाओं के सृजन करते हुए भी उसकी वह प्रजा वृद्धि को प्राप्त नहीं हुई थीं ॥३०॥ जब उन ब्रह्माजी की मानस प्रजाओं की वृद्धि नहीं हुई थी उस समय में उनसे ऐसा चिन्तन किया था कि यह क्या कारण है कि मेरी यह प्रजा नहीं बढ़ रही है ॥ १॥ हे सुव्रते ! उस समय में ब्रह्माजीं ने अपने योगाभ्यास से हृदय के द्वारा चिन्तन किया था और चिन्तन करते हुए उनदेव ने श्वेत पर्वत में उस रक्त वर्ण वाली कन्या का ज्ञान प्राप्त किया था ॥३२॥ इसके अनन्तर ब्रह्माजी वहाँ पर ही गये थे जहाँ पर वह कमल के समान नेत्रों वाली देवी थी। ब्रह्माजी ने कहा था—हे कन्यके ! मैं आपकी तपस्या से परम प्रसन्न हो गया हू अब हे विशाल लोचनों वाली ! आप मुझसे वरदान प्राप्त करलीजिए ॥३३॥ उस देवी ने ब्रह्माजी से कहा था—हे भगवन् ! मैं अब एक ही देश में स्थित होती हुई ऐसा स्थित रहना नहीं चाहती हूँ। अतएव शीघ्र ही मैं आपसे यही वर की याचना करती हूँ कि मैं सर्वत्र गमन करने वाली होऊँ ॥३४॥ उस समय में जब वह देवी के द्वारा इस रीति से कहे गये थे तो उस सृष्टि से प्रजापति ने उस देवी से कहा था कि आप सर्वत्र गमन करने वाली हो जाओगी ॥३५॥

एवमुक्ता तदा तेन सृष्टिः सा कमलेक्षणा ।
तस्यह्यङ्के लयं प्राप्ता सा देवी पद्म लोचना ॥३६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तस्मादारभ्य कालात्तु ब्रह्म सृष्टिः व्यवर्द्धत ।
ब्रह्मणो मानसाः सप्त तेषामन्ये तपोधनाः ॥
तेषामान्ये ततस्त्वन्ये चतुर्द्धा भूतसंग्रहः ॥३७
शृणुचान्यं वरारोहे तस्या देव्या महाविधिम् ।
तत्र सृष्टिः पुरा प्रोक्ता श्वेतवर्णा सुरूपिणी ।
एकाक्षरेति विख्याता सर्वाक्षरमयी शुभा ॥३८
वागीशेति समाख्याता क्वचि देवो सरस्वती ।
सैव विघेश्वरी देवी सैव क्वाप्यामिताक्षरा ॥३९
सैव ज्ञाननिधिः क्वापि सैव देवी विभावरी ।
यानि सौम्यानि नामानि यानि ज्ञानेद्भवानि च ॥४०
तानि तस्या विशालाक्षि दृष्ट व्यानि वरानने ।
या वैष्णवी विशालाक्षी रक्त वर्णा सुरूपिणी ॥४१
अपरा सा समाख्याता रौद्री चैव परायणा ।
एतास्त्रयोऽपि सिध्यन्ति यो रुद्रं वेत्ति तत्त्वतः ॥४२
सर्वा सेयं वरारोहे एकैव त्रिविधा स्मृता ।
एषा सृष्टिः वरारोहे कथिता ते पुरातनी ॥४३
तया सर्वमिदं व्याप्तं जगत्स्थावर जङ्गमम् ।
या सादौ वर्द्धिता सृष्टिर्ब्रह्मणोऽव्यक्त जन्मनः ॥४४

इसके अनन्तर उन ब्रह्माजी के द्वारा जब वह देवी सृष्टि जिसके नेत्र कमल के सदृश थे इस तरह से कही गयी थी तो वह पद्म लोचना स्वयं ही उनकी गोद में लय कों प्राप्त हो गई थी ॥३६॥ उसी काल से आरम्भ करके ब्रह्माजी की सृष्टि बढ़ने लग गयी थी । ब्रह्माजी सात मानस पुत्र हुए थे और उनके अन्य तप के ही धन वाले समुत्पन्न हुए थे । फिर उनके और हुए । इस प्रकार से चार प्रकार का भूत संग्रह हुआ था ॥३७॥ हे वरारोहे ! अब उस देवी की अन्य महा विधि का श्रवण कीजिए । वहाँ पर पहिले सृष्टि श्वेत वर्ण वाली सुरूप से युक्त

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सृष्टि कही गयी है। वह परम शुभा सब अक्षरों से परिपूर्ण एकाक्षरा-इस नाम से विख्यात हुई है ॥३८॥ कहीं पर देवी सरस्वती वागीश्वरी-इस नाम से विख्यात है। वह ही विश्वेश्वरी देवी है और यह ही कहीं पर अमिताक्षरा है ॥३९॥ वही कहीं पर ज्ञान निधि और कहीं पर वह ही देवी विभावरी—इस नाम से कही जाया करती है। जो भी परम सौम्य नाम हैं और जो ज्ञान से उद्भव वाले हैं ॥४०॥ हे वरानने ! आप नेत्रों वाली हैं वे सभी उस देवी के देख लेने के योग्य हैं। जो विशाल लोचनों वाली वैष्णवी है जो रक्त वर्ण से युक्त सुन्दर रूप वाली है ॥४१॥ दूसरी वह रौद्री और परायण समाख्यात हुई है। जो भगवान् रुद्रदेव को तात्त्विक रूप से जानता है अर्थात् रुद्रदेव का ज्ञान रखता है उसको ये तीनों ही सिद्ध हुआ करती हैं ॥४२॥ हे वर आरोह वाली ! वह यह सब एक ही हैं जो तीन प्रकार की कही गयी है। हे वरारोहे ! यह पुरातनी सृष्टि है जो कि आपके सामने कहकर समझा दी गयी है। ॥४३॥ उसी के द्वारा यह स्थावर और जङ्गम चराचर सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है। अर्थात् सम्पूर्ण जड—चेतन जगत् में व्यापक रूप से विराजमान है। जो आदि में अव्यक्त जन्मा ब्रह्माजी वह सृष्टि वर्धित हुई है ॥४४॥

९२—वैष्णवी माहात्म्य

या मन्दरगता देवी तपः कर्तुं तु वैष्णवी।
राजसी परमा शक्तिः कौमार व्रत धारिणी ।१
सँकाकिनी तपस्तेते विशालायां तु शोभना।
तस्यास्त पन्त्याः कालेन महता क्षुभितं मनः ।।२
तस्मात् क्षोभात् समुत्तस्थुः कुमार्यः सौम्य लोचनाः।
नील कुञ्चित केशान्ता बिम्बोष्ठयायत लोचनाः ।।३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दृष्ट्वा कुमार्यः सा देवी तस्मिन्नेव गिरौ शुभाः ।
तपसा निर्ममे देवि पुरं हर्म्यशता कुलम् ।
विशाल रथ्यं सौवर्ण प्रासादैरुप शोभितम् ।।४
असंख्यतानि हर्म्याणि तथा कन्या धराधरे ।।५
देव्या अनुचराः सर्वाः पाशांकुश धरा शुभाः ।
ताभि परिवृता देवो सिंहासनगता शुभा । ६
सुसितैः चामरैः स्त्रीभिर्वीज्यमाना विलासिनी ।
कौमारं व्रत मास्थाय तपः कर्तुं समुद्यता ।।७

जो देवी मन्दर पर्वत में तपश्चर्या करने के लिये गई थी वैष्णवी देवी है। कौमार व्रत को धारण करने वाली परमा शक्ति राजसी है ।। १ ।। उस अकेली ही ने जो परम शोभना है और जिसने विशाला में तपश्चर्या का समाचरण किया था। तपस्या करती हुई उसका वहुत समय में मन क्षुभित हुआ था ।। २ ।। उस मन के क्षोभ से सौम्य लोचनों वाली कुमारियाँ समुत्थित हुई थीं। जिनके नीले और केशों के छोर थे—विम्ब फल के समान लाल ओष्ठ थे—और विशाल लोचन थे ।। ३ ।। उसी गिरि में उस देवी ने परम शुभ कुमारियों का दर्शन करके हे देवि ! उसने परम सुन्दर एक हर्म्यों (धनियों का वास स्थान) के सैकड़ों की संख्या से समाकुल पुर का निर्माण किया था। वह पुर ऐसा ही बनाया था जिसमें विशाल रथ्यायें (गलियां) थी और वह सुवर्ण से निर्मित प्रासादों (महलों) से उपशोभित था ।।४।। कन्या धराधर में ऐसे अगणित हर्म्य थे। देवी के सभी अनुचर पाश और अंकुश के धारण करने वाले थें तथा परम शुभ थे। उन सबने वह देवी परिवृत्त थी और वह शुभा एक विशाल सिंहासन पर विराजमाना थी। ।।५।।६।। वह विलासिनी स्त्रियों के द्वारा सुसित चमढ़ों से वीज्यमान थी अर्थात् स्त्रियाँ उन देवी पर चमर छुरा रहीं थीं। वह कौमार व्रत में समास्थित होकर तपश्चर्या का समाचरण करने के लिए समुद्यत थी ।।७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तावदागत वोंस्तत्र नारदो ब्रह्मणः सुतः ।
तं दृष्ट्वा सहसा देवी ब्रह्म पुत्रं तपोधनम् ।।८
विद्युत्प्रभामुवाचेदमासनं दीयता मिति ।
पाद्यमाचमनीयं च क्षिप्रमस्मं प्रदीयताम् ।।६
ततः कृतासनं दृष्ट्वा प्रणतं नारदं मुनिम् ।
उवाच देवी वचनं हर्षेण महतान्विता ।।१०
स्वागतं भो मुनि श्रेष्ठ कस्मात् लोकादिहागतः ।
किं कार्यं वद ते कृत्यं मा ते कालत्ययो भवेत् ।।११
एवमुक्तस्तदा देव्या नारदः प्राह लोकवित् ।
ब्रह्मलोकादिन्द्रलोकं तस्माद्रौद्रमथाचलम् ।।१२
ततस्त्वामिह देवेशि द्रष्टुमभ्यागतः शुभे ।
एवमुक्त्वा मुनिः श्रीमांस्तां देवीमन्ववैक्षत ।।१३
दृष्ट्वा मुहूर्त्तं देवेशि विस्मितो नारदोऽभवत् ।
अहो रूपमहो कान्तिरहो धैर्यमहो वयः ।।१४

इसी बीच में वहाँ पर ब्रह्माजी के पुत्र देवर्षि श्री नारदजी वहाँ पर सामागत हो गये थे । उन देवर्षि का दर्शन करके जो तप के ही धन वाले परम तपस्वी और ब्रह्माजी के पुत्र थे वह देवी सहसा विद्युत्प्रभा से कहने लगीं--इनको आसन दो । इसके पश्चात् इनको पाद्य अर्थात् चरणों के प्रक्षालानार्थ जल और बाद में आचमनीय दीजिए । और यह कार्य शीघ्रता के साथ ही सम्पन्न करिए ।।८।।६।। इसके उपरान्त आसन पर विरजमान प्रणाम करते हुए मुनि को देखकर देवी ने परमाधिक हर्ष के साथ उनसे कहा था—।।१०।। हे मुनि श्रेष्ठ ! आपका स्वागत है। अब यह बतलाइए कि किस लोक से यहाँ पर आपने पदार्पण किया है । आपके यहां पर पधारने का क्या प्रयोजन एव कार्य है ? इसके बताने में काल का अत्यय नहीं होना चाहिए ।।११।। उस समय में इस रीति से कहे गये देवर्षि नारदजी ने जो लोकों का पूर्ण

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ज्ञान रखने वाले थे कहा था । मैं ब्रह्मलोक से चलकर इन्द्रलोक में आया और फिर वहाँ से चलकर रौद्र पर्वत पर आया था ।।१२।। हे देवेशि ! वहाँ से हे शुभे ! यहाँ पर आपके दर्शन करने के लिये समागत हुआ हूँ । इस प्रकार से कहकर उस मुनि ने जो श्री से सुसम्पन्न थे उस देवी की ओर देखा था ।।१३।। हे देवेशि ! मुहूर्त्त भर तक देखकर नारदजी परम विस्मित हो गये थे । उनके विस्मय का कारण यही था कि उनके चित्त में ऐसा विचार समुत्पन्न हो गया था कि ओहो ! कैसा परम सुन्दर रूप है—कैसी उद्भुत कान्ति है और कैसा धैर्य है तथा क्या अवस्था है ।।१४।।

एव संचिन्त्य मनसा नारदो विस्मयान्वितः ।
प्रणम्य देवीं सहसा उत्पपात नभस्तलम् ।
गतश्च त्वरया युक्तः पुरीं दैत्येन्द्र पालिताम् ।१५
महिषाख्येन भूतेशि समुद्रान्तः स्थितां पुरीम् ।
तत्रासमाद भगवान सुरं महिषा कृतिम् ।।१६
दृष्ट्वा लब्धवरं वीरं देवसैन्यान्तकं महत् ।
स तेन पूजितो भक्त्या तदा लोक रो मुनि ।।१७
प्रीतात्मा नारदस्तस्मै देव्या रूप मनुत्तमम् ।
आचचक्षे यथान्यायं यद् वृत्तं देवता पुरे ।।१८
तत्र प्रधाना या कन्या तापसी व्रतचारिणी ।
सा देव दैत्य यक्षाणां मध्ये काचिन्न दृश्यते ।।१९

नारदजी ने मन में यही चिन्तन किया था और इन्हीं विचारों से वे विस्मय से समन्वित हो गये थे । इसी विचार में निमग्न होकर वे सहसा उठे और देवी को प्रणाम करके आकाश की ओर ऊपर चले गये थे । बड़ी शीघ्रता से युक्त होकर वे गये थे और दैत्येन्द्र के द्वारा परिपालित पुरी में उन्होंने गमन किया था ।। १५ ।। हे देवेशि ! महिषासुर नामक दैत्य के द्वारा निर्मित पुरी समुद्र में स्थिति थी । वहाँ पर भगवान् नारद

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जी पहुँच गये थे और महिष की आकृति वाले असुर को प्राप्त हुए थे ॥ १६ ॥ वहाँ पर उन्होंने वरदान प्राप्त करने वाले—वीर और देवों की बड़ी सेना के विनाशक दैत्य को देखा था। उसके द्वारा उन मुनि का पूजन किया गया था और बड़ी भक्ति की भावना से सत्कार किया था। उस समय में लोकों में चरण करने वाले नारद मुनि परम प्रसन्न हुए थे और उन्होंने उस दैत्य से परमोत्तम देवी के स्वरूप का वर्णन किया था। न्याय के अनुसार जो भी देवतापुर में हुआ ॥१७॥१८॥ उन्होंने कहा था वहाँ पर जो एक कन्या है वह तापसी हैं और कौमार व्रत का समाचरण करने वाली है। वह ऐसी सुन्दरी है कि कहीं पर भी वैसी देवी—दैत्यों और यक्षों के मध्य में दिखाई नहीं देती है ॥१६॥

याद्दशी सा मया दृष्ट्वा ताद्दशी काण्ड मध्यतः ।
भ्रमता चेदृशी द्दष्टा न कदाचिन्मया सती ॥२०
तस्याश्च देव गन्धर्वा ऋषयः सिद्ध चारणाः ।
उपासाञ्चक्रिरे सर्वे येऽप्यन्ये दैत्य नायकाः ॥२१
तां दृष्ट्वा वरदां देवीमहं तूर्ण मिहागतः ।
अजित्वा देवगन्धर्वान्न तां जयति कश्चन ॥२२
एवमुक्त्वा क्षणं स्थित्वा तमनुज्ञाप्य नारदः ।
यथागतं ययौ धीमानन्तर्द्धा नेत तत्क्षणात् ॥२३

जैसी मैंने देखी है वैसी अत्यधिक सुन्दरी काण्डों के मध्य में भ्रमण करने वाले मैंने कहीं पर भी कभी भी ऐसी सती नहीं देखी थी ॥ २० ॥ उसकी उपासना सभी देव—गन्धर्व—ऋषि—सिद्ध—चारण और जो भी अन्य दैत्यों के नायक है वे सभी किया करते हैं और करने चले आये हैं ॥२१॥ उस वरदा देवी का दर्शन करके ही मैं बहुत शीघ्रता से यहाँ पर समागत हुआ हूँ। देवों और गन्धर्वों को न जीतकर कोई भी उसको नहीं जीतता है ॥२२॥ इस तरह से कहकर थोड़ी देर ठहर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कर उसको अनुरोपित कर नारदजी जैसे आये थे वैसे ही धीमान उसी समय अन्तर्हित हो गये थे ॥२३॥

९३-९४ महिषासुर द्वारा स्वर्ग विजय

गते तु नारदे दैत्यः चिन्तयामास तां शुभाम् ।
कथितां नारद मुखान् श्रुत्वा विस्मित मानसः ॥१
तामेव चिन्तयन् शर्म न लभे दैत्य सत्तमः ।
मंत्रिणं चामयानास अलं शर्माण मुत्तमम् ॥२
तस्याष्टौ मंत्रिणः शूरा नीतिमन्तो बहुश्रुतः ।
ते दानवेन्द्रमास निमुचुः कृत्यं विधीयताम् ॥३
तेषां तद्वचनं श्रुत्वा दानवेन्द्रो दानवेन्द्रो महाबलः ।
उवाच कन्यालाभार्थं नारदा वाप्त निश्चयः ॥४
कथं सा लभ्यते बाला कथं देवाश्च निर्जिताः ।
भवेयुरिति तत्सर्वं कथयन्तु द्रुतं मम ॥५
एवमुक्तास्ततः सर्वे कथयामा सुरञ्जसा ।
एवमुक्तस्तथावोच प्रघसो दानवेश्वरम् ॥६
या सा ते कथिता दैत्य नारदेन महासती ।
सा शक्तिः परमा देवी वैष्णवी रूपधारिणी ॥७

देवर्षि नारदजी के चले जाने पर उस दैत्यराज ने अपने मन में उस शुभा के विषय में चिन्तन किया था। नारदजी के मुख से जिसके विषय में वर्णन किया था उसका श्रवण करके महिषासुर के मनमें बड़ा विस्मय हो गया था ॥१॥ वह दैत्यराज निरन्तर उसी का चिन्तन करता रहा और वह मेष दैत्य ने शान्ति प्राप्त नहीं की थी। उसमें अत्व शर्म्मा उत्तम मन्त्री को बुलाया था ॥ २ ॥ उसके आठ मन्त्री थे जो बहुत ही

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शूर—नीति के ज्ञाता और बहुश्रुत थे। वे सब दैत्येन्द्र के समीप में आकर बोले—अब आप कर्त्तव्य कीजिए ॥ २—३ ॥ उन मन्त्रियों के उस वचन को सुनकर महा बलवान् दानवेन्द्र ने कहा—नारदजी से सुन कर उस देवी को प्राप्त करने का निश्चय किया है ॥४॥ आप लोग यही बताइए कि वह बाला कैसे प्राप्त की जा सकती है और सब देवगण किस तरह से जीते जा सकते हैं। आप सब लोग मुझे शीघ्र ही यह बतलाइये ॥५॥ इस तरह से जब उनसे कहा गया था तो उन सबने शीघ्र ही दैत्यराज से कहा था। उनमें जो सर्व प्रथम मन्त्री था उसने दानवेश्वर से कहा था। हे दैत्यराज ! नारदजी ने जिसके विषय में आप से कहा था वह महासती है और परमादेवी वैष्णवी रूप धारण करने वाली परमा शक्ति है ॥६—७॥

गुरुपत्नी राजपत्नी तथा सामन्तयोषितः ।
जिघृक्षन् नश्यते राजा तथागम्यागमेन च ॥८
प्रघसेनैवमुक्तस्तु विघसो वाक्यमब्रवीत् ।
सम्यगुक्तं प्रघसेन तां देवी प्रति पार्थिव ॥९
यदि नाम मतंक्यन्तु बुद्धिः स्मरण मागता ।
वरणीया कुमारी तु सर्वदा विजिगीषुभिः ॥१०
न स्वतंत्रेण कन्यायाः कार्यं क्वापि प्रकर्षत्तम् ।
यदि वो रोचते वाक्यं मदीयं मंत्रिसणमाः ॥११
तदानीं तां शुभां देवीं गत्वा माचन्तु मंत्रिणः ।
यो महात्मा भवेत्तस्या बन्धुस्तं याचयामहे ॥१२
साम्नैवादौ ततः पश्चात् करिष्यामः प्रदानकम् ।
ततो भेदं करिष्यामस्ततो दण्डं क्रमेण च ॥१३
अनेन क्रमयोगेन यदि सा नैव लभ्यते ।
ततः सन्नह्य गच्छामो बलाद् गृह्णीम तां शुभाम् ॥१४

हे दैत्यराज ! नीति यही बतलाती है कि जो गुरु की पत्नी है--राजा की पत्नी है--तथा सामन्तों की योषितायें हैं—इनके ग्रहण करने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

की इच्छा किया करता है वह राज नष्ट हो जाया करता है तथा जो गमन न करने योग्य नारी का गमन करता है वह भी नाश को प्राप्त हो जाता है ।।८।। प्रघस के द्वारा जब ऐसा कहा गया था तो विघस नाम वाले ने कहा था—हे राजन् ! प्रघस नामक मन्त्री ने जो कहा है वह बहुत ही ठीक कहा है क्योंकि वह देवी है उसके प्रति ऐसा विचार कभी भी नहीं करना चाहिए । उससे विनाश ही हुआ करता है ।।१६।। यदि सबका मत एक ही हो जावे तो बुद्धि स्मरण को समागत हो गई है । जो जीत लेने की इच्छा वाले हैं सर्वदा उनके द्वारा कुमारी का वरण करना चाहिए। किन्तु स्वतन्त्र रूप से कहीं पर भी वलात् कन्या की प्रकर्षण नही करना चाहिए । हे श्रेष्ठ मन्त्रियो ! यदि आप सबको मेरा कथन अच्छा लगता है तो आप सब मन्त्रीगण उस परम शुभ देवी के समीप में जाकर उस से याचना करिए कि वह स्वयं राजा का वरण कर लेवे । जो महान् आतमा वाला होता है वह उसके वन्धु से याचना किया करते हैं ।।१०।।११।।१२।। सबके आदि में साम से काम लेना चाहिए । इससे जब काम न होवे तो कुछ प्रदान करेंगे । दाम से भी कार्य नवनेजा तो तीसरा उपाय भेद है अर्थात् परस्पर में भिन्नता कर देनी चाहिए । उसे हम करेंगे । जब इससे भी सफलता न होवे तो फिर दण्ड करेंगे । क्रम से ही करना चाहिए और वही हम करेंगे ।।१३।। इस चारों साम-दाम—भेद और दण्ड से भी सफलता नहीं प्रप्त की जाती है तो फिर हम सभी सन्नद्ध होकर जावेंगे और शुभा देवी का बल पूर्वक ग्रहण करेंगे । जब इससे भी सफलता न होवे तो फिर दण्ड करेंगे । क्रम से ही करना चाहिए और वही हम करेंगे ।।१३।। इस चारों साम--दाम भेद और दण्ड से भी सफलता नहीं प्राप्त की जाती है तो फिर हम सभी सन्नद्ध होकर जावेगे और शुभा देवी का बल पूर्वक ग्रहण करेंगे ।।१४।।

विघसेनैवमुक्तासु शेषास्तु मंत्रिणो वचः ।
शुभमूचः प्रशंसन्तः सर्वे हर्षित मानसाः ।।१५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

साधूक्तं विघसे नेदं यत्तां प्रति वराननाम् ।
तदेव क्रियतां शीघ्रं दूतस्तत्र विसर्ज्यताम् ॥१६
विद्युत्प्रभं महाभागं बहुमायाविदं शुभम् ।
विसर्जयित्वतं दूतं विघसो वाक्य मब्रवीत ॥१७
क्रियतां विजयस्तावद्देव सैन्यं प्रति प्रभो ।
सन्नत्पन्तां दानवेन्द्राश्चतुरङ्ग बलेन ह ॥१८
असुरेन्द्र सुरैः भग्नैस्त्वत्पराक्रम भीषितैः ।
सा कन्या वशतामेति त्वयि शक्र समागते ॥१९
एवमुक्तस्तदा दैत्यः सेनापति मुवाचह ।
विरूपाक्षं महामेघ वर्णं नीलाञ्जन प्रभम् ।
आनीयतां द्रुतं सैन्यं हस्त्यश्वरथ पत्तिनाम् ॥२०
येन देवान्सगन्धर्वान् क्षयामि युधि दुर्ज्जयान् ।
एवमुक्ते विरूपाक्षे तदा सेनापतिः द्रुतम् ॥२१

जब विघस नामक मन्त्री के द्वारा इस तरह से कहा गया तो उसके इस वचन को सभी शेष मन्त्रिकों ने शुभ बतलाया था। सबने उसके कथन की प्रशंसा की थी और सभी का मन परम हर्षित हो गया था ॥१५॥ सबने कहा—विद्यसभे यह ठीक कहा है जो कि उस वरानना के विषय में उसने अपना मत दिया है वह उत्तम है। इसी को शीघ्रता से करिये और बहुत शीघ्र उस देवी के पास एक दूत भेज देना चाहिए ॥१६॥ विघस ने यह बाक्य कहा था कि विद्युत्प्रभ महाभाग है और बहुत अधिक माया तीत था शुभ हैं। उसी को दूत बनाकर वहां पर भेज देना चाहिए ॥१७॥ हे प्रभो! तब तक देवों की सेना के प्रति विजय कीजिए और बड़े २ दानवों को तुरङ्गों केवल के साथ सन्नद्ध करिए। देवगण तो असुरों की सेना से भग्न हैं और पराजय से डरे हुये हैं। इन्द्र के समान आपके समागत होने पर वह कन्या वश में प्राप्त होगी इस रीति से जब दैत्य राज से कहा गया तो उसने अपने सेनापति

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

से कहा था। विरुपाक्ष—महामेघ वर्ण और नीलाज्जन प्रभ सेना को नोहा थीं—अश्व और पैदलों वाली है शीघ्र ले आइए। जिसके द्वारा मैं देवों और गन्धर्वों को जो दुर्जय है युद्ध स्थल में विनष्ट कर दूँगा। विरुपाक्ष से ऐसा कहने पर उसी समय में सेनापति शीघ्र वहाँ पर ससैन्य आ गया था ॥१८—२१॥

आनियाय महत् सैन्यमनन्तम पराजितम् ।
एकं को दान वस्तत्र वज्रहस्त समो युधि ॥२२
ततो महिष दैत्यस्तु काम रूपी महावलः ।
मत्तहस्तिन मारुह्य यियासुमेरु पर्वतम् ॥२३
तत्रेन्द्र पुरमासाद्य देवैः सह शत क्रतुम ।
अभि दुद्राव दैत्येन्द्रो देवान् क्रोध समन्वितः ॥२४
आदाय स्वानि शस्त्राणि वाहनानि विशेषतः ।
अधिष्ठा सुरानाजौ दद्रुवुः मुदिता भ्रशम ॥२५
स्वयं महिषदैत्यस्तु इन्द्रं दुद्राव वेगतः ।
स चापि वलवान्दैत्यो ब्रह्मणो वरदर्पितः ।
अवध्य पुरुषेणाजौ यद्यपि स्यात् पिनाकधृक ॥२६
गतवन्तो ब्रह्मलोकमसुरैर्दिताः सुरा ॥२७

वह बहुत महान् सैन्य को वहाँ ले आया था जो अनन्त थी और कभी भी पराजित नहीं हुई थी। उसमें एक-एक दानव युद्ध में वज्रहस्त के ही समान था। अर्थात् इन्द्र के तुल्य था ॥२२॥ इसके अनन्तर महिष दैत्य जो काम रूपी था अर्थात् अपनी इच्छा ही से रूप धारण कर लेने वाला था और महान् वलवान् था। एक मदमत्त हाथी पर सवार हो गया था और मेरु पर्वत पर गमन करने की इच्छा वाला हो गया था ॥ २३ ॥ वहाँ इन्द्र के पुर में पहुँच कर देवों के साथ इन्द्र के ऊपर उस दैत्येन्द्र ने आकर आक्रमण किया था। देवों पर भी उसने क्रोध से युक्त होकर धावा वोल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दिया था। और उनको खदेड़ दिया था ॥२४॥ अपने शस्त्रों को लेकर और विशेष रूप से वाहनों को लेकर सुरों को युद्ध में भगा दिया था और सैनिक परम प्रसन्न हुए थे। महिषासुर ने स्वयं इन्द्र को वेग के साथ खदेड़ दिया था। वह दैत्य बड़ा भारी बलवान् था और ब्रह्माजी के वरदान से बहुत दर्प (घमण्ड) था। वह पुरुषों के द्वारा अवध्य था यद्यपि पिनाकधारी हो क्यों न होवें। असुरों के द्वारा पीड़ित सुरगण सब ब्रह्म लोक में भाग कर चले गये थे ॥२४—२७॥

९५—महिषासुर वध

अथ विद्युत्प्रभो दैत्यस्तथा दूतो विसर्जितः।
प्रणम्य प्रयतो भूत्वा कुमारी शतसंकुलाम् ॥१
अस्थाने विजयापन्न स्ततो वचनम ब्रवीत्।
देवि पूर्वं मृषिस्त्वा सीदादि सर्गैक सम्भवः ॥२
सखा सारस्वतो जातः सुपार्श्वो नाम वै विभुः।
तस्या भवन्महातेजाः सिन्धु द्वीप प्रतापवान् ॥३
स हि तीव्रं तपस्तेपे माहिष्मत्यां पुरोत्तमे।
कुर्वतस्तु तपो घोरं निराहारस्य शोभने ॥४
आद्या तु विप्रचित्तैः सा सुता परम शोभना।
माहिष्मतीति विख्याता रूपेण सदृशी भुवि ॥५
सा सखीभिः परिवृता विहरन्ती यदृच्छया।
आगता मन्दर द्रोणीं तत्रापश्य तपोवनम् ॥६
दृष्ट्वाश्रमपदं रम्यं साऽसुरी कन्यका शुभम्।
माहिष्मती वरारोहा चिन्तयामास भामिनी ॥७

इसके अनन्तर विद्युत्प्रभ दैत्य दूत बनाकर भेजा गया था। उसने प्रणाम करके और प्रयत होकर सैकड़ों से संकुल कुमारी से अस्थान में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विजयानन्द वह था। वहाँ जाकर यह वचन कहा था। हे देवि! पूर्व में ऋषि था और आदि सर्ग के यहाँ जन्म ग्रहण करने वाला था ॥१॥ उसका सखा सारस्वत उत्पन्न हुआ था जो विभु सुपाश्र्व नाम वाला था। उसका महान् तेज वाला प्रतापवान् सिन्धुद्वीप हुआ था ॥३॥ उसने उत्तम माहिष्मती पुर में तीव्र तप किया था। हे शोभने! इस तरह से बिना आहार के घोर तप करते हुए विप्रा चित्ति की आद्य सुता परम शोभना थी। वह महिष्मती इस नाम से विख्यात थी। वह भूमि में रूप के सदृश थी ॥ ४—५ ॥ वह सखियों से परिवृत होकर यदच्छा मे बिहार करती हुई मन्दर पर्वत की द्रोणी पर समागत हो गई थी। वहाँ पर उसने एक तपोवन देखा था ॥ ६ ॥ वहाँ पर एक परम रम्य और शुभ आश्रम पद को उस असुर की कन्या ने देखा था। उस भामिनी वरारोहा महिष्मती ने सोचा था ॥६—७॥

भीषयित्वाऽहमेनं तु तापसं त्वाश्रमे स्वयम्।
तिष्ठामि क्रीडती सार्द्धं सखीभिः परमार्च्चिता ॥८
एवं सञ्चित्य सा देवी महिषी सम्बभूव ह।
सखीभिः सह विश्वेशि तीक्ष्ण श्रृंगाग्र धारिणी ॥६
तमृषिं भीषितुं ताभिः सह गत्वा वरानना।
असौ विभीषितस्ताभिस्तां ज्ञात्वा ज्ञान चक्षुषा ॥१०
आसुरीं क्रोध सम्पन्नः शशाप शुभ लोचनाम्।
यस्माद् भीषय सेमां त्वं महिषी रूप धारिणी ॥११
अतोभव महिष्येव पाप धर्मे शतं समाः।
एवमुक्ता ततः सा तु सखीभिः सह वेपती ॥१२
पादयोर्न्यपतत्तस्य शापान्तं कुरु जल्पती।
तस्यास्तद् वचनं श्रुत्वा स मुनिः करुणान्वितः ॥१३
शापान्तम करोत्तस्य वाक्यं चेद मुवाच ह।
अनेनैव स्वरूपेण पुत्रमेकं प्रसूप वै ॥
शापान्तो भविता भद्रे मद् वाक्यं न मृषा भवेत् ॥१४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

इस तपस्वी को डरा कर मैं स्वयं ही इस आश्रम में सखियों के साथ क्रीड़ा करती हुई परम अर्चित होती हुई ठहरूँगी ॥ ८ ॥ उस देवी ने इस प्रकार से चिन्तन करके वह देवी महिषी हो गई थी। हे विश्वेसि सखियों के साथ क्रीड़ा करती हुई वह तीक्ष्ण भृङ्गों के धारण करने वाली हो गई थी। उस वरानना ने उन सखियों के साथ उस ऋषि को डराने के लिये वहां पर गमन किया था। यह विभीषित हुआ था किन्तु उनके साथ ज्ञान की चक्षु से उसको जानकर कि यह आसुरी है उसे क्रोध आ गया था और उसने उस शुभ लोचना को शाप दे दिया था कि क्योंकि तू मुझको महिषी के स्वरूप को धारण करने वाली होकर मुझको डग रही है इसीलिये तू महिषी ही होना और पाप कर्म में रह कर सौ वर्ष तक इसी रूप में रहेगी। जब उसको इस तरह से शाप दिया गया तो वह सखियों के साथ काँपने लग गयी थी ॥११—१२॥ फिर वह उसके चरणों में गिर गयी थी और यह कहने लगी थी कि इस शाप का अन्त करे दीजिये। उसके इन करुणा भरे वचनों को उस मुनि ने सुना तो उसके हृदय में भी दया आ गई थी। क्योंकि वह परम दयालु थे। उसने शाप का अन्त कर दिया था और उससे यह वचन कहा था कि इसी स्वरूप से तू एक पुत्र का प्रसव करेगी तभी इस शाप का अन्त होगा ॥१३॥१४॥

एव मुक्ता गतां सा तु नर्मदा वीर मुत्तमम् ।
तत्र तेपे तपो घोरं सिन्धु द्वीपो महातपाः ॥१५
यत्र चेन्दुमती नाम दैत्य कन्याति रूपिणो ।
सा दृष्टा तेन मुनिना विवस्त्री मज्जती जलै ॥१६
चस्कन्द स मुनिः शुक्रं शिला द्रोण्यां महातपाः ।
तच्च माहिष्मती दृष्ट्वा दिव्यगंधि सुगंधि च ॥१७
ततः सखीरूवाचेदं पिवामीदं जलं शुभम् ।
वए मुक्त्वा तु सा पीत्वा तच्छुक्रं मुनि सम्भव वम ॥१८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राप्ता गर्भं मुनेर्वीर्यात्सुषुवे च तदा सती ।
तस्या पुत्रोऽभवद्धीमान् महावल पराक्रमः ॥१६
महिषेति स्मृतो नाम्ना ब्रह्म वंश विवर्धनः ।
स त्वां वरयते देवि देव सैन्य विमर्द्दिनः ॥२०
स सुरानपि जित्वाजौ त्रैलोक्यं च तवानघे ।
दास्पते देवि सुप्रीतस्तव सर्वं महासुरः ॥२१

मुनि ने कहा था—हे भद्रे ! तभी शाप का अन्त होगा । और मेरा वाक्य कभी भी मिथ्या नहीं होता । इस प्रकार से कही गयी वह फिर नर्मदा के उत्तम तीर पर चली गयी थी । जहाँ पर महान् तपस्वी सिन्धु द्वीप ने अतीव घोर तपस्या का तपन किया था ॥१५॥ वहां पर अत्यधिक रूप वाली इन्दुमती नाम वाली दैत्य की कन्या थी । उस मुनि ने बिना वस्त्रों वाली जल में मज्जन करती हुई उसको देखा था ॥१६॥ उस महा तपस्वी मुनि ने शिला द्रोणी में शुक्र (वीर्य) को स्कन्दित किया था । और उसको महिष्मती ने देखा था जो दिव्य गन्ध तथा सुगन्ध से संयुत था ॥१७॥ इसके पश्चात् उसने सखी से कहा था मैं इस परम शुभ जल का पान करती हूँ । इस तरह से कह कर उसने मुनि से सम्भूत उस शुक्र का पान कर लिया था । मुनि के वीर्य से वह गर्भ को प्राप्त करने वाली हो गई थी और उस समय में उस सती ने प्रसव किया था । उसका पुत्र बहुत धीमान्-महान् वल और पराक्रम वाला हुआ था ॥१६॥ ब्रह्मा के वंश का विशेष वर्धन करने वाला नाम से महिष हुआ था । हे देवि ! वह आपका वरण करना चाहता है अर्थात् आपके साथ विवाह करके आपको अपनी पत्नी बना रहा है जो कि देवों की सेना का विमर्दन करने वाला है ॥२०॥ हे अनघे ! वह सुरों को भी युद्ध में जीतकर वह महान् असुर परम प्रसन्न होकर आपको तीनों लोकों को दे देगा ॥२१॥

तस्यात्मोप प्रदानेन कुरु देवि महत् कृतम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवमुक्ता तदादेवी तेन दूतेन शोभना ।।२२
जहास परमा देवी वाक्यं नो वाच किंच न ।
तस्या हसन्त्या दूतोऽसौ त्रैलोक्यं सचराचरम् ।।२३
ददर्श कुक्षौ सम्भ्रान्तस्तत्क्षणात् समजायत् ।
ततो देव्या प्रतीहारी जमाख्या अति तेजना ।।२४
देव्या हृदि स्थित वाक्य मुवाच तनुमध्यमा ।
कन्यार्थी वदते यत्तु तत्त्वया समुदीरिताम् ।।२५
यदि नाम व्रतं चास्याः कौमारं सार्वं कालिकम् ।
अपि चान्याः कुमार्योऽत्र संति देव्याः पदामुगाः ।।२६
तासामेकापि नोलभ्या किमु देवी स्वयं शुभा ।
याहि दूत त्वरन्मा ते किंचिदन्यद् भविष्यति ।।२७
एवमुक्तो गतो दूतस्तावद् व्योम्नि महामुनिः ।
आयातो नारदस्तूर्णं गृह्णनरुच्चैः महातपाः । २८

हे देवि ! उसको अपने आपको प्रदान करने के द्वारा महान कार्य को आप करिये । इस तरह से उस समय में कही दूत द्वारा वह देवी जो परम शोभन थी ।। २२ ।। बहुत ही हँसी थी और उसने इसका कुछ भी उत्तर नही दिया था अर्थात वह इस पर कुछ भी नहीं बोली थी हँसती हुई उसकी कुक्षि में उस दूत ने सम्पूर्ण चर और अचर त्रैलोक्य को देखा था और उसी क्षण में परम सम्भ्रान्त हो गया था । इसके अनन्तर उस देवी की जो प्रतीहारी अति तेजना जया नाम वाली थी ।।२४।। उस तनुमध्य वाली ने जो उत्तर वाक्य देवी के हृदय में था वही कहा था । कन्या के चाहने वाला जो भी कुछ कहा करता है वही आपने कहा है ।।२५।। यदि इस देवी का कौमार व्रत सार्व कालिक है अर्थात् अगर यह सर्वदा ही कुमारी रहने का व्रत वाली है तो यहाँ पर देवी के पदगुणों वाली अन्य भी कुमारियाँ हैं ।।२६।। उनमें एक भी प्राप्त करने के योग्य नहीं है फिर स्वयं शुभा देवी के विषय में तो कहना ही क्या है । हे दूत ! तुम यहाँ से बहुत ही शीघ्रता करते हुए चले जाओ ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तेरा कुछ अन्य न होगा ॥२७॥ इस प्रकार से कहा गया वह दूत चला गया था। तभी आकाश में महामुनि नारदजी जो महान् तपस्वी थे शीघ्र ही ऊंचे स्वर से ग्रहण करते हुए वहाँ पर समागत हो गये थे ॥२८॥

दिष्टचा दिष्टचेति चागत्य तां कन्यां प्रणिपत्य च।
उपविष्टो जगादाथ आसने परमेर्च्चितः ॥२६
प्रणम्य देवीः सर्वास्ता उवाच च महातपाः।
देवि देवैरहं प्रीतः प्रेषितोऽस्मि तवान्तिकम् ॥३०
महिषाख्येन दैत्येन युधि देवा विनिर्ज्जिताः।
त्वां गृहीतुं प्रयत्नं स कृतवान्देवि दैत्यराट् ॥३१
एवमुक्तोऽस्मि देवैस्त्वां बोधयामि वरानने।
स्थिरीभूता महादेवि तं दैत्यं प्रतिघातम ॥३२
उक्त्वैवान्तर्हितः सद्यो नारदः स्वेच्छया ययौ।
देवी च कन्यास्ताः सर्वा सन्नह्यन्ता मुवाच ह ॥३३
ततः कन्या महाभागाः सर्वास्ता देवि शासनात्।
वभूवुः घोररूपिण्यः खड्ग चर्मधनुर्धराः ॥३४
संग्राम हेतोः संतस्थुर्दैत्य विध्वंस नापताः।
तावद् दैत्यवलं सर्वं मुक्त्वा देव चमूं द्रुतम् ॥३५

वे दिष्टचा—दिष्टचा अर्थात् खेद की बात है यह कहते हुए वहाँ पर आये थे और उन्होंने उस कन्या को प्रणिपात किया था। वे वहाँ पर परमोत्तम आसन पर बिराजमान हो गये थे और उनकी अर्चना की गयी थीं। इसके अनन्तर उन्होंने कहा था। महा तपस्वी उन्होंने उन देवियों को प्रणाम किया था। और वे बोले थे। हे देवि! परम प्रसन्न में देवों के द्वारा ही आपके समीप में भेजा गया हूँ ॥२६—३०॥ महिष नामक दैत्य ने युद्ध में सभी देवों को जीत लिया है। हे देवि! अब वह दैत्यराज आपको ग्रहण करने के लिए प्रयत्नवान् हो गया है। अर्थात्

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उसने ऐसा ही प्रयत्न किया है कि अब आपको भी ग्रहण कर लेवे ।३१। हे वरानने ! देवों के द्वारा इस प्रकार से मुझको कहा गया है उसी को मैं आपको बतलाता हूं—हे महादेवि ! आप स्थिरी भूत होकर उस दैत्य का प्रतिघात करिए ।।३२।। यह कहकर ही देवर्षि नारदजी तुरन्त ही अन्तर्धान हो गये थे और अपनी इच्छा से ही चले गये थे । और देवी ने उन सब कन्याओं को सम्वद्ध करके उनसे कहा था ।। ३३ ।। इसके अनन्तर वे सब कुमारिकाऐं जो महान् भाग वाली थीं देवी के शासन से बहुत ही घोर रूप वाली हो गयी थीं और सबने तलवार और ढाल धारण करली थीं ।।३४।। वे सब संग्राम के लिये संस्थित हो गयी थीं और दैत्य के विध्वंस करने के लिये उन्होंने निश्चय कर लिया था । तभी तक वह दैत्य की सम्पूर्ण सेना देवों की सेना को छोड़कर देवी की सेना के समीप में शीघ्रता से समागत होगई थी ।।३५।।

आपयौ यत्र तद्देव्याः सन्नद्धं स्त्री वलं महत् ।
ततस्था युयुधुः कन्या दानवैः सह दर्पिताः ।।३६
क्षणेन तद्वलं ताभिश्चतुरङ्गं निपातितम् ।
शिरांसि तत्र केषाञ्चिच्छिन्नानि पति तानि च ।।३७
अपरेषां विदार्योरः क्रव्यादाः पान्ति शोणितम् ।
अन्ये कवन्ध अभूतास्तु ननृतुः दैत्य नापकाः ।।३८
एवं क्षणेन ते सर्वे विद्रुताः पाप चेतसः ।
अपरे विद्रुताः सर्वे यत्रासौ महिषा सुरः ।।३९
ततो हाहाकृतं सर्वं तथा दैत्य वलं महत् ।
एवं तदाकुलो दृष्ट्वा महिषो वाक्यम ब्रवीत् ।।४०
सेनापते किमेतद्धि वलं भग्नं ममाग्रतः ।
ततो यज्ञहनुर्नामा दैत्यो हस्तिस्वरूपवान् ।।४१
उवाच भग्नमेतद्धि कुमारीभिः समन्ततः ।
ततो दुद्राव महिषस्ताः कन्याः शुभ लोचनाः ।।४२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दैत्यराज की पूरी सेना वहीं पर आ गयी थी जहाँ पर यह स्त्रियों की बड़ी भारी सेना सन्नद्ध हो रही थी। इसके अनन्तर वे कन्याऐं दर्पित दानवों के साथ युद्ध करने लगी थीं ॥ ३६ ॥ क्षण भर में ही उन कुमारिकाओं ने उस दैत्यराज की सेना को जो चतुरङ्गिणी थी भूमि पर गिरा दिया था और उसमें कुछ सैनिकों के शिर कट गये थे और गिर गये थे ॥ ३७ ॥ और अन्यों के उरःस्थल को विदीर्ण करके क्रव्याद रक्त को पी रहे थे। अन्य दैत्यों के नायकों के धड़ नृत्य कर रहे थे ॥३८॥ इस तरह से एक ही क्षण में सभी पापी चित्त वाले दैत्यगण विद्रुत कर दिये थे। दूसरे सभी वहाँ से भाग गये थे और जहाँ पर वह महिषासुर था वहाँ जाकर पहुँच गये थे ॥३६॥ इस प्रकार से उस महान् दैत्यों की सेना में सभी हाहाकार करने लग गये थे। इस प्रकार से देख कर वह महिष समाकुल होकर यह वाक्य बोला था ॥४०॥ हे सेनापति! यह मेरी बहुत बड़ी सेना मेरे ही आगे क्यों भग्न हो रही है—यह क्या कारण है? इसके अनन्तर एक यज्ञ हनु नाम वाला दैत्य जो हाथी के स्वरूप वाला था, बोला था कि कुमारियों के द्वारा यह सभी ओर से भग्न कर दी गयी है। इसके उपरान्त वह महिष ने उन शुभ लोचनों वाली कन्याओं पर आक्रमण कर दिया था ॥४१--४२॥

गदा मादाय तरसा घातितुं तास्ततोऽसुरः।
यत्र तिष्ठति सा देवी देव गन्धर्व पूजिता। ४३
तत्रैव सोऽसुरः प्रापाद्यत्र देवी व्यवस्थिता।
स च दृष्ट्वा तमायान्तं विशद्धस्ता बभूव ह ॥४४
धनुः खङ्गं तथा शक्ति शरान् शूलं गदां तथा।
मुसलं च तथा चक्रं भिन्दिपालं तथैव च ॥४५
दण्डं पाशं ध्वजं चैव पद्मं चेति च विंशतिः।
भूत्वा विंशद् भुजा देवी सिंह मास्थाय दंशिता ॥४६
सस्मार रुद्रं देवेशं रौद्रं संहार कारणम्।
ततो वृषध्वजः साक्षाद् द्रुतं तत्रैव आययौ ॥४७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तया प्रणम्य विज्ञप्तः सर्वान् दैत्यान् जयाम्यहम् ।
त्वयि सन्निधिमात्रे तु देव देव सनातन ।।४८
एव मुक्त्वाऽसुरान् सर्वान् जिगाय परमेश्वरी ।
मुक्त्वा तमेकं महिषं शेषं हत्वा तमभ्ययात् ।।४६

वह असुर गदा हाथ में ग्रहण करके सबका घात करने के लिये बड़े वेग के साथ वहाँ पर समागत हुआ था। वह वहीं पर आ पाया था जहाँ पर वह देवो देवों और गन्धर्वों के द्वारा सेवित होती हुई विद्यमान थी ।।४३।। वह असुर उसी स्थान पर आ गया था जिस जगह पर वह देवी समवस्थित थी । उस देवी ने उस दैत्य को अपनी ही ओर आता हुआ देखकर स्वयं वह बीस भुजाओं वाली तुरन्त ही हो गई थी ।।४४।। धनुष—खड्ग—शक्ति—शर—शूल—गदा—मुशल--चक्र-—भिन्दियात-दण्ड—पाश—ध्वज—पद्म—इन बीसों आयुधों को ग्रहण कर बीस भुजाओं वाली देवी सिंह पर समारूढ़ हुई दर्शित हुई थी ।। ४५—४६ ।। उस देवी ने उसी समय में देवेश्वर रुद्र का स्मरण किया था जो संहार करने के कारण स्वरूप है। इसके उपरान्त वृषध्वज साक्षात् ही शीघ्र समागत हो गये थे ।।४७।। उस देवी ने उनको प्रणिपात करके निवेदन किया था कि मैं इन दैत्यों पर विजय करना चाहती हूं। हे देवों के देव! आप तो सनातन हैं केवल आपकी सन्निधि से ही ऐसी विजय हो सकेगी ।।४८।। इस प्रकार से रुद्रदेव से प्रार्थना करके उस परमेश्वरी ने उन सभी असुरों पर विजय प्राप्त करली थी। केवल उसी एक महिष को छोड़ दिया था और फिर वह देवी उस दैत्य के भी समीप में गयी थी ।।४६।।

यावद् देवी ततः सापि तां दृष्ट्वा सोऽपिदुद्रुवे ।
क्वचिद् युध्यति दैत्येन्द्रः क्वचिच्चैव पलायते ।।५०
क्वचित् पुनर्मृधं चक्रे क्वचित् पुनरुपारमत् ।
एवं वर्ष सहस्राणि दश तस्य तया सह ।।५१,

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दिव्यानि विगतानि स्युर्युध्यतश्चैव शोभने ।
बभ्राम सकलं त्वाजौ ब्रह्माण्ड भीतमानसम् ।।५२
ततः कालेन महता शत शृंगे महागिरौ ।
पद्भयामाक्रम्य शूलेन निहतो दैत्य नायकः ।।५३
शिरश्चिच्छेद खड्गेन तत्र चान्तः स्थितः पुमान् ।
निर्गत्य विगतः स्वर्गं देव्याः शस्त्र निपातनात् ।।५४
ततो देवगणाः सर्वे महिषं वीक्ष्य निर्जितम् ।
स ब्रह्म काः स्तुतिं चक्रुः देव्यास्तुष्टेन चेतसा ।।५५

जैसे ही वह देवी के पास गया था और उस देवी ने उसको देखा था वैसे ही उस दैत्य ने उस पर आक्रमण किया था । कहीं पर तो दैत्येन्द्र युद्ध करता था और कहीं पर युद्ध भूमि से भाग जाया करता था ।।५०।। कहीं पर वह पुनः युद्ध किया करता था और किसी समय विराम ले लिया करता था । उस देवी के साथ उसका युद्ध होते हुए एक दश सहस्र वष व्यतीत हो गये थे ।। ५१ ।। हे शोभने ! युद्ध करते हुए इसके साथ दिव्य दश सहस्र व्यतीत हो गये थे । उस युद्ध में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भयभीत चित्त वाला होकर भ्रमण करने लग गया था ।। ५२ ।। इसके अनन्तर बहुत अधिक काल में शत शृङ्ग महागिरि में अपने चरणों से आक्रान्त करके शूल के द्वारा उस दैत्यों के नायक को देवी ने निहत किया था ।। ५३ ।। खड्ग के द्वारा उसके शिर का छेदन कर दिया था । उसके अन्दर एक पुमान स्थित था । वह देवी के शस्त्र के गिराने से उसके शरीर से निकल कर स्वर्ग को चला गया था ।।५४।। इसके उपरान्त सभी देवगणों ने उस महिषासुर को निर्जित हुआ देखा था । फिर परम तुष्ट हुए चित्त से उस देवी की ब्रह्मा के सहित समस्त देवों ने स्तुति की थी ।।५५।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

६६–त्रिशक्ति रहस्य में रौद्री-चरित्र

या सा नील गिरिं याता तपसे धृत मानसा ।
रौद्री तमोद्भवा शक्ति स्तस्या श्रृणु धरे व्रतम् ॥१
तपः कृत्वा चिरं कालं पालयाम्यखिफं जगत् ।
एवमुद्दिश्य पंचाग्नि साधयामास भामिनी ॥२
तस्याः कालान्तरे देव्यास्तपन्त्यास्तप उत्तमम् ।
रुरुर्नाम मह्यते जाः ब्रह्मदत्तवरोऽसुरः ॥३
समुद्रमध्ये रत्नाढ्यं पुरमस्ति महावनम् ।
तत्र राजा स दैत्येन्द्रः सर्वं देव भयङ्करः ॥४
अनेक शतसाहस्र कोटिकोत्यु त्तरोत्तरैः ।
असुरै रन्वितः श्रीमान् द्वितीयो न मुचिर्यथा ॥५
कालेन महता चासौ लोकपाल पुराण्यथ ।
जिगीषुः सैन्य संवीतो देवैर्युद्ध मरोचयत् ॥६
उत्तिष्ठ तस्तस्य महासुरस्य समुद्रतोयं ववृथेऽतिमात्रम् ।
अनेक नक्रग्रहमीन जुष्टमाल्पावयत् पर्वत सानु देशान् ॥७

वह जो नीलगिरि में तपश्चर्या के करने के लिये अपने मन मे निश्चय करके गयी थी हे धरे ! वह रौद्री तम से उद्भूत शक्ति थी। अब तुम उसके व्रत के विषय में श्रवण करो ॥ १ ॥ उस भामिनी ने तपश्चर्या करके चिर काल पर्यन्त सम्पूर्ण जगत् का परिपालन करूं— इस तरह का उद्देश्य लेकर पञ्चाग्नि का साधन किया था ॥२॥ उस देवी को उत्तम तप का तपन करती हुई थी और उसको बहुत काल व्यतीत हो गया था। एक रुरु नामधारी महान् तेजस्वी असुर था जो ब्रह्माजी के द्वारा वरदान प्राप्त किये हुए था ॥ ३ ॥ समुद्र के मध्य में रत्नों से संयुत महावनपुर है। वहाँ पर समस्त देवगणों को भय देने वाला वह दैत्येन्द्र राजा था। वह अनेक सौ सहस्र और करोड़ों करोड़ उत्तर असुरों से समन्वित था और श्रीमान् वह जैसे दूसरा नमुचि हो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ऐसा ही था ॥ ४—५ ॥ बहुत समय में वह लोकपालों के पुरों को जीत लेने की इच्छा वाला होकर बहुत सी सेना से समन्वित होकर उसने देवों के साथ युद्ध करना पसन्द किया था ॥ ६ ॥ उठते हुए उस महासुर के समुद्र का जल अत्यधिक बढ़ गया था जो बहुत से नक्र—ग्राह—मीनों से सेवित था । उसने अर्थात् समुद्र के बढ़े हुए जल ने पर्वतों के शिखरो के देशों को भी प्लावित कर दिया था ।।७।।

देवेषु चैव भग्नेषु विनिर्गत्य जलात्ततः ।
चतुरंगबलोपेतः प्रायादिन्द्रपुरं प्रति ।।८
युयोध च सुरैः सार्द्ध रुरुः दैत्य पतिस्तथा ।
मुग्दरैः मुसलैः घोरैः शरैदण्डायुधैस्तथा ।।६
जघ्नुः दैत्याः सुरान्सख्यं सुराश्चैव तथा सुरान् ।
एवं क्षणमथो युध्वा तदा देवाः सवा सवाः ।।१०
ततो देवगणः सर्वे द्रवन्तो भय विह्वलाः ।
नीलं गिरिवरं जग्मुर्यत्र देवी व्यवस्थिता ।
रौद्री तपोरता देवी तामसी शक्ति रुत्तमा ।।११
संहार कारिणी देवी कालरात्रीति नां विदुः ।
सा दृष्ट्वा तान् तदा देवान् भयत्रस्तान्विचेतसः ।।१२
मा भैष्टेत्युच्चकैर्देवी तानुवाच सुरोत्तमान् ।
किमियं व्याकुला देवा गतिर्वं उपलक्ष्यते ।।१३
कथयध्वं द्रुतं देवाः सर्वथा भयकारणम् ।
अयमायाति दैत्येन्द्रो रुरुर्भीम पराक्रमः ।।१४

इस तरह से देशों के भान होने पर फिर जल से निकल कर चतुरङ्गिणी सेना से समुपेत होकर वह इन्द्र पुरी की ओर गया था । उस दैत्यों के स्वामी रुरु ने सुरगणों के साथ परम घोर युद्ध किया था । मगदरों—मुशलों--घोर शरों तथा दण्डा युधों के द्वारा दैत्यों ने सुरों का निहनन किया था तथा असंख्यों असुरों को देवों ने मार दिया था । इस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रकार से कुछ समय तक युद्ध करके इन्द्र के सहित समस्त देवगण भय से विह्वल होकर भागते हुए गिरियों में परम श्रेष्ठ नील पर्वत पर गये थे जहां पर वह देवी समबस्थित थी। वह रौद्री देवी तपश्चर्या में निरत थी जो परम उत्तम तामसी शक्ति थी ॥८--११॥ वह संहार के करने वाली देवी थी जिसको काल रात्री इस प्रकार से जानते थे। उस देवी ने उन देवगणों को देखा था जो भय से वहुत ही भीत और चेतना से शून्य चित्तों वाले थे ॥१२॥ उस देवी ने बड़े ही उच्च स्वर से उन सुरगणों से कहा था--आप लोग डरो मत अर्थात् किसी का भी भय मत करिए। हे व्याकुल हुए देवगणो ! आप लोगों की यह गति किस कारण से दिखलाई देरही हैं ? ॥१३॥ हे देवगणो ! सम्पूर्ण रूप से जो भी आपके भय का कारण हो उसे शीघ्र ही आप लोग मुझसे कहिए। इसके उत्तर में देवगणों ने कहा था--बहुत भीषण पराक्रम वाला दैत्यों का स्वामी रुरु यहाँ आ रहा है ॥१४॥

एतस्य भातान् रक्षस्व त्वं देवान्परमेश्वरि ।
एवमुक्ता तदा देवैर्देवी भीम पराक्रमा ॥१५
जहास परमा प्रीत्या देवानां पुरतः शुभा ।
तस्या हसन्त्या वक्त्रात्तु बह्वचो देव्यो विनिर्ययुः ॥१६
सर्वाः शूलधरा भीमाः सर्वाश्चाप धराः शुभाः ।
ता सर्वाः कोटिशो देव्यस्तां देवीं वेष्ट्य सस्थिताः ॥१७
युयुधुर्दानवैः सार्द्धं बद्ध तूणा महावलाः ।
क्षणेन दानव बलं तत्सर्वं निहतं तु तैः ॥१८
देवाश्च सर्वे सम्पन्ना युयुधुर्दानवं बलम् ।
कालरात्र्या बलं चैव यच्च देव बलं महत् ॥१९
तत्सर्वं दानव वलमनपद्य मसादनम् ।
एक एव महादैत्यो रुरुस्तस्थौ महामृधे ॥२०
स च मायां महारौद्रीं रौर वीं विससर्ज ह ।
सा माया ववृधे भीमा सर्व देव प्रमोहिनी ॥२१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे परमेश्वरि ! इस दैत्य के भय से डरे हुए देवों की आप ही रक्षा कीजिए। देवों के द्वारा उस समय में इस प्रकार से कही गयी देवी को हंसी आ गयी थी क्योंकि वह देवी भी भीषण पराक्रम से समन्वित थी ॥१५॥ वह शुभा परम प्रीति के साथ देवताओं के सामने हँसी थी और हँसती हुई उसके मुख से बहुत सी देवियां निकल आयी थीं ॥१६॥ वे सभी शूल धारणी थीं और परम भयानक स्वरूप वालीं थीं तथा सबके पास पाश थे। वे सब संख्या में करोड़ों ही थीं और सब देवियों ने उस महादेवी को वेष्टित कर लिया था तथा वहीं पर संस्थित हो गयीं थीं ॥१७॥ उन्होंने दानवों के साथ युद्ध किया था और वे सब तणों को बांधे हुई बहुत ही अधिक बल वाली थीं। एक ही क्षण में उन्होंने उस सम्पूर्ण दानवों की सेना का निहनन कर दिया था ॥१८॥ और सभी सम्पन्न हो गये थे तथा दानवों की सेना के साथ उन्होंने युद्ध किया था और जो बड़ा देवों का बल था वह सभी काल रात्री का बल था ॥१९॥ वह सम्पूर्ण दानवों की सेना समाप्त हो गयी थी तथा केवल एक ही रूरु महादैत्य उस महान् युद्ध स्थल में स्थित रह गया था ॥२०॥ और उसने महा रौद्री माया को छोड़ दिया था और बहुत ही भयानक थी जो बढ़ गयी थी और सभी देवों को प्रमोहन करने वाली हो गयी थी ॥२१॥

तमा विमोहिता देवाः सर्वे निद्रां तु लेभिरे।
देवी च त्रिशिखेनाजौ तं दैत्यं समताऽयत् ॥२२
तया तु ताडितस्यास्य दैत्यस्य शुभ लोचने।
चर्म मुण्डे उभे सम्यक् पृथग्भूते वभूवतुः ॥२३
रुरोस्तु दानवेन्द्रस्य चर्ममुण्डे क्षणाद्यतः।
अपहृत्याहरद्देवी चामुण्डा तेन साऽभवत् ॥२४
दृष्ट्वा रुरुं च सबलमसुरेन्द्र निपातितम्।
येतुर्ति चकार भगवान स्वयं देवस्त्रि लोचनः ॥२५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जयस्व देवि चामुण्डे जय भूताप हारिणि ।
जय सर्व गते देवि कालरात्रे नमोऽस्तु ते ।।२६
विश्वमूर्ते शुभे शुद्धे विरूपाक्षि त्रिलोचने ।
भीमरुपे शिवे वेद्ये महामाये महोदये ।।२७
मनोजवे जये जृम्भे भीमाक्षि क्षुभितक्षये ।
महामारि विचित्राङ्गे जय नृत्यप्रिये शुभे ।।२८

उस माया के द्वारा विमोहित हुए देवगणों ने निद्रा प्राप्त करली थी और देवीं ने त्रिशिख से बहुत ही शोघ्र उस दैत्य को ताड़ित किया था ।।२२।। हे शुभलोचने ? उस समय में ताड़ित हुए इस दैत्त के चर्म और मुण्ड दोनों अच्छी तरह से पृथक् भूत होकर रह गये थे ।।२३।। दानवों के स्वामी रुरु के चर्म और मुण्ड एक ही क्षण में देवी ने अपहरण करके हरण कर दिये थे इसी कारण से वह देवी तभी से चामुण्डा हो गई थी अर्थात् उसका चामुण्डा--यह नाम हो गया था ।।२३।। सेना के सहित असुरेन्द्र रुरु को निपतित हुआ देख कर भगवान् त्रिलोचन देव ने स्वयं देवी का स्तवन किया था ।।२५।। भगवांन् शिव ने उस समय में यही कहा था---हे देवि ! हे चामुण्डे ! आपकी जय होवे । आप सब भूतों के अपहरण करने वाली हैं। हे देवि ! आप सब में रहने वाली हैं। हे कालरात्रे ! आपकी सेवा में मेरा नमस्कार है। हे विश्वमूर्ति वाली ! आप शुद्ध और परम शुभ हैं। हे विरुपाक्षि ! आप तीन लोचनी वाली हैं। हे शिवे ! आप वन्द्य चरना हैं और आपका रूप बड़ा ही भयानक हैं। आप महामाया है तथा आपका महान् उदय है। हे जृम्भे ! आपका मन के भी समान वेग है। आप भीम नेत्रों वाली तथा क्षुभितों के क्षय करने वाली हैं। हे महामारि ! आपकि अङ्ग विचित्र हैं तथा हे शुभे ! आप नृत्य को प्रिय जानने वाली हैं। आपकी जय हो ।।२६।।२७।।२८।।

विकराले महाकालि कालिके पाप हारिणि ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पाशहस्ते दण्डहस्ते भीमरूपे भवान के ।।२६
चामुण्डे ज्वलमानास्ये तीक्ष्णदंष्ट्रे महाबले ।
शतयानि स्थिते देवि प्रेतासन गते शिवे ।।३०
भीमक्षि भीषणे देवि सर्वभूत भयङ्करि ।
कराले विकराले च महाकाले करालिनि ।।३१
काली कराली विक्रान्ता कालरात्रि नमोऽस्तु ते ।
इति स्तुता तदा देवी रुद्रेण परमेष्ठिना ।।३२
तुतोष परमा देवी वाक्यं चेद मुवाच ह ।
वरं वृणीष्व देवेश यत्ते मनसि वर्त्तते ।।३३

हे महाकालि ! हे कालिके ! आप परम विकराल हैं और पापों के हरण करने वाली हैं। आप हाथ में पाश और दण्ड रखने वाली हैं और आप का रूप बहुत ही भयानक है आप स्वयं भी भयानक हैं। हे चामुण्डे ! आपका मुख ज्वलमान है--आपकी दाढ़ें परम तीक्ष्ण हैं और आप बहुत बल वाली हैं। हे शत्तयानि ! हे शिवे ! हे देवि ! हे शिवे ! आप प्रेत के आसन पर विराजमान हैं। हे देवि ! आपके नेत्र परम भीषण हैं और आप स्वयं भी भीषण हैं। आप सभी प्राणियों के लिये भयङ्कर हैं। आप कराल हैं और विशेष रूप से कराल हैं। हे महाकाले ! आप करालिनी है ।।२६—३१।। आप काली—कराली—विक्रान्ता और काल रात्रि हैं। आपके लिये मेरा नमस्कार है। इस प्रकार से परमेष्ठी रुद्र देव के द्वारा स्तवन की हुई उस देवी को परम प्रसन्नता हुई थी और फिर वह इस प्रकार से यह बोली थी। हे देवेश्वर ! अब आप मुझ से कोई भी वरदान माँगलो जो भी आपके मन में मनोरथ होवे ।।३२।।३३।।

स्तोत्रेणनेन ये देवि त्वां स्तुवन्ति वरानने ।
तेषां त्वं वरदा देवि भव सर्वगता सती ।।३४
यश्चेमं त्रि:प्रकारं देवि तु भक्त्या समन्वितः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स पुत्र पौत्र पशुमान् समृद्धिमुप गच्छति ॥३५
पश्चोमं शृणुयाद्भक्त्या त्रिशक्त्यास्तु समुद्भवम् ।
सर्वं पाप दिविर्मुक्तो पदं गच्छत्य नामयम् ॥३६
एवं स्तुत्वा भवो देवीं चामुण्डां च सुरेश्वरीम् ।
क्षणादन्तर्हितो देवस्ते च देवा दिवं ययुः ॥३७

शिवजी ने यही वरदान चाहा था कि हे देवि ! हे वरानने ! इस स्तोत्र के द्वारा जो भी पुरुष आपकी स्तुति किया करें हे देवि उस स्तवन से आप उनके लिये सबमें रहने वाली सती आप वरदा हो जावें । ॥३४॥ जो भी इस स्तोत्र को तीन प्रकार से कहे अर्थात् पाठ करे और आपकी भक्ति से समन्वित होवे वह पुत्र—पौत्र और पशुओं वाला होवे और समृद्धि को प्राप्त किया करता है ।॥३५॥ जो यह त्रिशक्ति देवी का समुद्भव है वह सभी पापों से निर्मुक्त होकर अनामय पद को गमन किया करता है ॥३६॥ इस रीति से भगवान् ने देवी का स्तवन किया था जो सुरेश्वरी चामुण्डा देवी थी । फिर क्षण भर में ही भगवान् शिव अन्तर्धान हो गये थे और वे देवगण सब स्वर्ग लोक को चले गये थे ॥३७॥

९७—रुद्र माहात्म्य

अथ रुद्र व्रतोत्पत्ति शृणु देवि वरानने ।
येन ज्ञातेन पापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥१
ब्रह्मणा तु यदा सृष्टः पूर्वं रुद्रो वरानने ।
तृतीयं जन्मनि विभुः पिङ्गाक्षो नील लोहितः ॥२
तदा कौतूहलाद् ब्रह्मा स्कन्धे तं जगृहे प्रभुः ।
स्कन्धा रूढस्तदा रुद्रो ब्रह्मणोऽव्यक्त जन्मनः ॥३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

जन्मतश्च शिरो यद्धि पंचमं तज्जगाद ह ।
मन्त्रमाथर्वणं रुद्रो येन सद्यः प्रमुच्यते ।।४
कपालिन रुद्र बभ्रोऽथ भव कैरात सुव्रत ।
पाहि विश्वं विशालाक्ष कुमार वर विक्रम ।।५
एवमुक्तस्तदा रुद्रो भविष्यैः नाम भिर्भवः ।
कपाल शब्दात् कुपि तस्तच्छिरो विचकर्त्त ह ।।६
वामां गुष्ठन खेनाद्यं प्राजापत्यं विचक्षणः ।
तन्निकृत्तं शिरो धात्रि हस्त लग्नं बभूव ह ।।७

हे वरानने ! हे देवि ! इस समय में आप रुद्र देवि ! व्रत की उत्पत्ति का श्रवण कीजिए जिसके ज्ञान प्राप्त कर लेने से प्राणी पापों मे छुटकारा पा जाया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।१।। हे वरानने ! ब्रह्माजी ने जिस समय में पूर्व रुद्र का सृजन किया था । तृतीय जन्म में विभु पिङ्गाक्ष और नील लोहित हुए थे । उस समय कौतूहल से प्रभु ब्रह्माजी ने उसको स्कन्ध पर ग्रहण किया था । उस समय में अव्यक्त जन्मा ब्रह्माजी के स्कन्ध पर रुद्र आरूढ़ हुए थे ।।२।। ।।३।। और जन्म से जो पाँचवां शिर है उससे रुद्र ने आथर्वण मन्त्र को बोला था जिसके द्वारा मनुष्य नुरन्त ही प्रयुक्त हो जाया करता है ।।४।। कपालिन ! हे रुद्र ! बभ्रो—भव—कैरात—सुलत—विशालाक्ष—कुमार—वरविक्रम, इस विश्व की रक्षा करो ।।५।। उस समय में इस तरह से आगे होने वाले नामों से रुद्रदेव कह गये थे तो चेक पाल शब्द से कुपित हो गए थे और उन्होंने ब्रह्मा जी का शिर काट दिया था । ।।६।। विचक्षण ने वाम अंगुष्ठ के नख से आद्य प्राजापत्य के उस शिर को काटा था हे धात्रि ! वह हाथ में लग्न हो गया था ।।७।।

तस्मिन्निकृत्तो शिरसि प्राजापत्यं त्रिलोचनः ।
ब्रह्माणं प्रयतो भूत्वा रुद्रो वचनम ब्रवीत् ।।८
कथं कपालं मे देव करात्पतित सुव्रत ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नश्यते च कथं पापं ममैतद्वद सुव्रत ॥९
इदमेव व्रतं देव चर कापालिकं विभो ।
समयाचार संयुक्तं कृत्वा स्वेनैव तेजसा ॥१०
एवमुक्तस्तदा रुद्रो ब्रह्मणाऽव्यक्त मूर्तिना ।
आजगाम् गिरिं गन्तुं माहेन्द्रं पाप नाशनम् ॥११
तत्र स्थित्वा महादेवस्तच्छिरो विभिदे त्रिधा ।
तस्मिन् भिन्ने पृथक् केशान्गृहीत्वा भगवान्भवः ॥१२
यज्ञोपवीतं केशं तु महास्थनाक्षमणींस्तथा ।
कपाल शकलं चैकमसृक्पूर्णं करे स्थितम् ॥१३
अपरं खण्डशः कृत्वा जटाजूटे न्यवेशयत् ।
एवं कृत्वा महादेवो बभ्रा मेमां वसुन्धराम् ॥१४

उस शिर के कट जाने पर त्रिलोचन रुद्र प्राजापत्य ब्रह्माजी से प्रयत होकर वचन बोले थे ॥८॥ हे देव ! हे सुव्रत ! मेरा कपाल किस तरह से कर से गिर गया और पाप कैसे नष्ट होता है ? हे सुव्रत ! मुझको यह बतलाइए ॥८॥ हे विभो ! यह ही कापालिक व्रत का समाचरण करिए । समयाचार से संयुक्त अपने ही तेज से करिए ॥१०॥ उस समय में इस तरह से रुद्र देव अव्यक्त मूर्त्ति वाले ब्रह्माजी के द्वारा कहे गए थे । वे पापों के नाश करने वाले या इन्द्र गिरि पर गमन करने को आ गए थे ॥११॥ वहाँ पर स्थित होकर महादेव जी ने उस शिर को तीन भागों में भेदन किया था । उसके भिन्न हो जाने पर भगवान् भवने केशों को पृथक् ग्रहण करके केश को तो यज्ञोपवीत तथा महान अस्थियों के अक्ष मणियों को और एक खण्ड को जो कपाल का था रूधिर से परिपूर्ण कर में स्थित किया था और दूसरे को खन्ड २ करके जटा जूट में निवेशित कर दिया था । महादेव ने इस प्रकार से करके वे इस वसुन्धरा पर भ्रमण करने लगे थे ॥१२॥१३॥१४॥

सप्त द्वीपवतीं पुण्यां मज्जस्तीर्थेषु नित्यशः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समुद्रे प्रथमं स्नात्वा ततो गंगां व्यगाहत ।।१५
सरस्वती ततो गत्वा यमुना संगमं ततः ।
शतद्रु च ततो गत्वा देविकां च महानदीम् ।।१६
वितस्तां चन्द्रभागां च गोमतीं सिन्धु मेव च ।
तुङ्गभद्रां तथा गोदामुत्तरे गण्ड की तथा ।।१७
नेपालं च ततो गत्वा ततो रुद्र महालयम् ।
ततो दारुवनं गत्वा केदार गमनं पुनः ।।१८
भद्रेश्वरं ततो गत्वा गयां पुण्या मथागमत् ।
तत्र फल्गुकृत स्नानः पितृन्सन्तर्प्य यत्नतः ।।१९
एवं वेगे न सकलं ब्रह्माण्डं भूतधारिणि ।
बभ्राम सर्वं देवेशः षष्ठेऽब्दे तस्य चापतत् ।।२०
परिधानं तु कौपीनं नग्नः कापालिकोऽभवत् ।
भ्रमतः परिधानं तु कौपीनं रशनागतम् ।।२१

यह सात द्वीपों वाली पृथ्वी पर भ्रमण किया था और नित्य ही तीर्थों पर जाकर मज्जन किया था। सबसे प्रथम समुद्र में स्नान करके फिर गङ्गा में अवगाहन किया था ।।१५।। इसके उपरान्त सरस्वती नदी पर पहुँचे थे और फिर यमुना के सङ्गम पर गए थे। इसके पश्चात् शतद्रु पर गए थे और इसके पश्चात् वे महा नदी देविका पर गए थे। ।।१६।। इसके उपरान्त वे वितस्ता—चन्द्रभागा—गोमती—सिन्धु—तुङ्ग भद्रा—गोदावरीं औरु उत्तर में गण्डकी नदी पर पहुँचे थे ।।१७।। इसके अनन्तर नेपाल में जाकर फिर रुद्र महालय में गये थे। इसके अनन्तर दारुवन में जाकर फिर केदारवन में गये थे ।।१८।। हंस के अनन्तर भद्रेश्वर में जाकर परम पुण्य मयी गया में पहुंचे थे। इसके उपरान्त फल्गु में स्नान करके पितृगण के लिये पिण्ड दान समर्पित किया था ।।१९।। हे भूतों के धारण करने वाली ! इस रीति से बड़े ही वेग से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में उन्होंने भ्रमण किया था। उन सर्व देवेश्वर को

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

छै वर्ष हो गये थे ॥२०॥ उनका परिधान केवल एक कोपीन हीं था और वे नग्न होकर कापालिक हो गये थे। इस प्रकार से भ्रमण करते हुए उनकीं कोपीन रशनागत हो गई थी ॥२१॥

तस्मिंस्तु पतिते देवि नग्नः कापालिकोऽभवत् ॥२२
पुनरब्दद्वयं भ्रान्तस्तीर्थे तीर्थे हरः स्वयम् ।
कपालं त्यक्तु कामः सन्तद्धस्तात्तत्तु नापतत् ॥२३
कस्यचित्त्वथ कालस्य द्वादशेऽब्दे धराधरे ।
वाराणसीं गतो देवस्तत्र स्नान मथारभत् ॥२४
गंगायां देवदेवेशो यावन्मज्जति भामिनि ।
भघेत् कपालं पतितं हस्ताग्राद् ब्रह्मणः पुरा ॥२५
कपाल मोचनं तीर्थं ततो जातंमघापहम् ।
गङ्गाम्भसि ततः स्नाप्य विश्वेशं पूज्य भक्तितः ॥२६
रुद्रं विशुद्धि मापन्नो मुक्तः स ब्रह्म हत्यया ।
कपाल मोचनं तीर्थं त्रैलोक्य विश्रुतम् ॥२७

हे देवि ! उस कोपीन के पतित हो जाने पर वे देवेश्वर सर्वथा ही नग्न हो गए थे ॥२२॥ इसके उपरान्त फिर भी वे शिव दो वर्ष तक भ्रमण करते हुए तीर्थ-तीर्थ में हर स्वयं भ्रमण करने वाले हुए थे। वे उस कपाल को भी त्याग करने की इच्छा वाले हो गए थे किन्तु वह उनके हाथ से नहीं गिरा था ॥२३॥ हे धराधरे ! उनको भ्रमण करते हुए काल का बारहवाँ वर्ष हो जाने पर वे देवेश्वर वाराणसी में गए थे और वहां पर उन्होंने स्नान करना आरम्भ कर दिया था। हे भामिनि ! वे देव देवेश्वर जैसे ही गङ्गा में मज्जम करते हैं वैसे हो ब्रह्मा के हाथ से वह कपाल पतित हो गया था ॥२५॥ इसके पश्चात् वह अघों का अपहरण करने वाला कपाल मोचन तीर्थ हो गया था। इसके पश्चात् गङ्गा के जल में स्नान किया था और भक्ति भाव से विश्वेश्वर का पूजन किया था ॥२६॥ रुद्र इस प्रकार से विशुद्धि को प्राप्त हुए थे और वे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ब्रह्म हत्या से युक्त विमुक्त हो गए थे। वह कपाल मोचन नामक तीर्थ तीनों लोकों में प्रसिद्ध हो गया था ॥२७॥

९८–पर्वाध्याय

योऽसौ सत्यतपा नाम लुब्धो भूत्वा द्विजौ वभौ ।
येनारुणिः व्याघ्रभयाद् रक्षितो यः स्व शक्तितः ॥१
दुर्वासाः संश्रुतार्थश्च हिमवन्तं नगं ययौ ।
तस्योपरि महच्चित्रं भवतीति त्वयेरितम् ॥२
कीदृशं तन्ममाक्ष्चव महत्कौतूहलं विभो ।
सहि सत्यतपः पूर्वं भृगुवंशोद्भवो द्विजः ॥३
दस्यु संसर्ग सम्भूतो दस्युवत् समजायत ।
ततः कालेन महता ऋषि सङ्गात् पुनः द्विजः ॥४
वभौ दुर्वाससा सम्यग्बोधितश्च विशेषतः ।
हिमाद्रेरुत्तरे पादे पुष्पभद्रा नदी शुभा ॥५
तस्यास्तीरे शिला दिव्या नाम्ना चित्र शिला धरे ।
न्यग्रोधश्च महांस्तत्र नाम्ना भद्रो महावटः ॥६
तत्र सत्यतपाः स्थित्वा तपः कुर्वन् महातपाः ।
स कदाचित् कुठारेण चकर्त्त समिधः किल ॥७

जो यह सत्य तपा नामक लुब्ध द्विज होकर शोभित हुआ था। जिसके द्वारा जो अपनी शक्ति से व्याघ्र के भय से आरुणि की रक्षा कीं गयी थी दुर्वासा और संश्रुतार्थ हिमवान् पर्वत पर गया था। उसके ऊपर महान् विचित्र होता है यह आपने कहा था ॥१॥२॥ हे विभो ! वह किस प्रकार का है—यह आप कृपा करके मुझे बतलाइए। मेरे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हृदय में उसके ज्ञान प्राप्त करने का बड़ा भारी कौतूहल हो रहा है। वह सत्य तप पूर्व में भृगु के वंश में समुत्पन्न होने वाला द्विज था। वह दस्यु के ससर्ग से समुद्भूत हुआ था और दस्यु के ही समान हो गया था। इसके उपरान्त वहुत काल में ऋषि के संसर्ग से फिर द्विज हो गया था ॥३॥४॥ वह विशेष रूप से भली भाँति दुर्वासा के द्वारा वीर परम शोभित हुआ था। हिमाचल पर्वत के उत्तर पाद में परम शुभ पुष्पभद्रा नदी है ॥५॥ हे धरे! उसके तीर पर एक दिव्य शिला है जिसका नाम चित्र शिला है। वहाँ पर एक न्यग्रोध है जिसका नाम भद्र महावा है ॥६॥ वहाँ पर स्थित होकर सत्य तपा ने जो महा तपा था तपश्चर्या की थीं। उसने किसी समय में कुठार से समिधाओं को काटा था ॥७॥

विच्छेद चांगुलीमेकां वाम तर्जनिकां मुनिः।
छिन्नाया मंगुली तस्य भस्म चूर्ण भवत्किल ॥८
न लोहितं न मासं तु न मज्जा तत्र दृश्यते।
अंगुली संधिता तेन पूर्ववच्चा भवत् क्षते ॥९
तस्मिन् भद्रवटे चैकं मिथुनं किन्नरं स्थितम्।
रात्रौ सुप्तमृषेस्तस्य दृष्ट्वा तन्महदद् भुतंम् ॥१०
प्रभाते विमले प्राप्तमिन्द्र लोक मिति स्मृतिः।
अथेन्द्रेण सुराः सर्वे यक्ष गन्धर्व किन्नरैः ॥११
पृष्टाः किंचिदाश्चर्यमपूर्वं कथ्यतामिति।
तत्ररुद्रसरस्तीरे यदेतन्मिथुनं शुभम् ॥१२
स्थितं किन्नर योस्तच्च वाक्यं चेद मुवाच ह।
दृष्टं तु महदाश्चर्यं पुष्प भद्रा तटे शुभे ॥१३
यदेत्सत्य तपसः समवोचस्ततः शुभे।
स्रवणं भस्मनश्चैव श्रुतं सर्वं शशंस ह।
तत् श्रुत्वा सहसा शक्रो विस्मितो विष्णुम ब्रवीत् ॥१४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उस मुनि ने बाँए हाथ की तर्जनी अंगुलि को भी काट डाला था। उसकी अंगुलि के कट जाने पर भस्म चूर्ण हो गया था ॥८॥ उसमें न तो लोहित—न मांस और मज्जा भी नहीं दिखलाई देती थी। उसने अँगुलि को सन्धित कर दिया था और ऐसा करने पर वह पूर्व की ही भाँति हो गई थी ॥६॥ उस भद्र तट पर एक किन्नरों का जोड़ा स्थित था। रात्रि में सुप्त हो गया था। उस ऋषि का एक महान् अद्भुत दृश्य देखा था। विमल प्रभात में इन्द्र लोक को प्राप्त हुआ—यह स्मृति हुई थी। इसके अनन्तर इन्द्रदेव ने यक्ष गन्धर्व और किन्नरों के साथ सुरगणों से पूछा था ॥१०॥११॥ क्या अपूर्व आश्चर्य है—उसे बतलाओ—यही पूछा था। वहाँ पर रुद्र सरोवर के तीर पर जो एक परम शुभ मिथुन (जोड़ा) है ॥१२॥ वह किन्नरों का स्थित है। और यह वाक्य कहा था—एक महान् आश्चर्य शुभ पुष्प भद्रा के तट पर देखा था ॥१३॥ जो भी सत्य तप का कहा था हे शुभे ! रक्त का स्रवण और भस्म होना—यह सब सुना है—जो कहा था। यह श्रवण करके सहसा इन्द्र परम विस्मित हुआ था और उसने भगवान् विष्णु से कहा था ॥१४॥

आगच्छ विष्णो गच्छामो हिमवत् पार्श्वमुत्तमम् ।
तत्राश्चर्यमपूर्वं में कथितं किन्नरेण ह ॥१५
एवमुक्तस्ततो विष्णुः वाराहं रूपमग्रहीत् ।
मृगयुश्च तथैवेन्द्रो जग्मतुस्तमृषिं प्रति ॥१६
विष्णुः वाराह रूपेण ऋषि दृष्टि यथे स्थितः ।
भूत्वा दृश्योऽप्यदृश्योऽभूत् पुनरे व च दृश्यते ॥१७
तावदिन्द्रो धनुष्पाणिः तीक्ष्ण सायक धृग्वने ।
आगत्य सत्यतपसमृषि मेन मुवाच ह ॥१८
भगवन्निह दृष्टस्ते वराहः पृथुलो महान ।
येन तं हन्मि भृत्यानां पोषणाय महामुने ॥१६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवमुक्तो मुनिस्तेन चिन्तयामास तत्क्षणात् ।
यदि तं दर्शयाम्यस्मै वराह्रं हन्यते तदा ॥२०
नो चेत् कुटुम्बः क्षुधया सीदत्यस्य न संशयः ।
जाया पुत्र समायुक्तो लुब्धकोऽयं क्षुधान्वितः ॥२१

हे भगवन् विष्णु देव ! आइए, हिमाचल के उत्तम पार्श्वभाग में चलें। वहाँ पर एक अपूर्व आश्चर्य की बात किन्नर ने मुझको बतायी है ॥१५॥ इस प्रकार से कहे गये भगवान् विष्णु ने वाराह के रूप को ग्रहण कर लिया था। उसी भाँति इन्द्र ने मृगयु का रूप धारण किया था और वे दोनों ही उस ऋषि की ओर गमन कर गये थे ॥१६॥ भगवान् विष्णु वाराह के स्वरूप से उस ऋषि की दृष्टि के मार्ग में स्थित हो गये थे। कभी वे दृश्य होते थे और कभी दृश्य होकर रह जाते थे। इसीं रीति से वह दिखाई दे रहे थे ॥१७॥ तब तक इन्द्र हाथ में धनुष लिये हुये आये थे जो बहुत ही तीक्ष्ण सायक को धारण किये हुये वन में थे। वहाँ आकर उस सत्य तपा ऋषि से कहा था। ॥१८॥ हे भगवन् ! क्या आपने बहुत बड़ा स्थूल वराह यहाँ देखा है ? आप मुझे ठीक बतला दीजिये। हे महामुने ! जिससे मैं उसका हनन करूँ और अपने भृत्यों का उसके मांस से पोषण करूँ ॥१९॥ इस तरह से जब उससे कहा गया था तो उसने एक क्षण तक चिन्तन किया था कि यदि मैं इस वराह को इसे दिखला देता हूँ तो वराह विचारा मारा जाता है ॥२०॥ और यदि नहीं कहता हूँ तो यह क्षुधा से कुटुम्ब सहित बिचारा दुःखित होता है—इसमें संशय नहीं है। यह लुब्धक अपनी स्त्री और पुत्रों के सहित क्षुधा से युक्त है ॥२१॥

सशल्यश्च वराहोऽयं ममाश्रम मुपागतः ।
एवं गते तु किं कार्य मथासौ चिन्तयन् प्रभुः ॥२२
नाध्यगच्छत बुद्धिश्च क्षणात्तस्य व्यजायत ॥२३
दृष्टं चक्षुर्निहितं जंगमेषु जिह्वा वक्तुं मृगयौ तद् विसृष्टम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

द्रष्टुं चक्षुर्नास्ति जिह्वेह वक्तुं जिह्वायाः स्यात्तत्त्वतोऽस्तीह चक्षुः ॥२४
एवं श्रुत्वा द्वावपि तस्य तुष्टौ इन्द्रा विष्णु दर्शयन्तौ स्वमूर्तिम् ।
वाक्यं चेदमूचतुः ब्रूहि नौ ते तुष्टौ धन्यं वरमेकं वदस्व ॥२५
न चातिरिक्तोऽस्ति वरः पृथिव्यां यद्दृष्टो मे पुरतो देव देवाः ।
बलं वरेणापि कृतार्थ तासीत् तथापीदं ये सदा पर्वकाले ॥२६
विप्रा विप्रांश्चार्चयन्तीह भक्त्या तेषां पापं नश्यतां मासमेकम् ।
यत्संचितं त्वेष एको वरोऽस्तु ह्यभीष्टो मे सांप्रतं देहि मह्यम् ॥२७
मुक्ति चाहं व्रजामीति द्वितीयोऽस्तु वरो मम ।
तथेत्युक्त्वा तु तौ देवौ दत्त्वा तस्य वरं शुभम् ॥२८

यह सशल्य वराह मेरे आश्रम में समागत हो गया है। ऐसा होने पर अब क्या करना चाहिये—उस प्रभु ने यही चिन्तन किया था। ॥२२॥ उस ने कुछ भी नहीं समझ पाया था किन्तु एक ही क्षण में उसको बुद्धि उत्पन्न हो गई थी ॥२३॥ जगमों में चक्षु निहित देखी है। भृगयु (शिकारी) में कहने को जिह्वा है वह विसृष्ट है। चक्षु देखने के लिये नहीं है और जिह्वा कहने को नहीं है। जिह्वा के तात्त्विक रूप से यह चक्षु है ॥२४॥ इस रीति के उत्तर का श्रवण करके वे दोनों ही इन्द्र और विष्णु परम प्रसन्न हुए और अपनी वास्तविक मूर्त्तियों को दिखला दिया था। उन दोनों ने यह वाक्य कहा था—हम दोनों आप पर बहुत ही प्रसन्न है धन्य हैं, अब आप एक वरदान माँग लो ॥२५॥ उसने उत्तर दिया था कि पृथिवी में इनसे अतिरिक्त कोई भी वरदान नही है कि मैंने अपने सामने आप दोनों का दर्शन प्राप्त कर लिया है। यदि वर से ही कृतार्थता है तो भी यही है कि जो सदा पर्व काल में यहाँ पर विप्रों का अर्चन करते हैं और भक्ति भाव से किया करते हैं उनके एक मास तक करने से पाप नष्ट हो जावें। जो भी सञ्चित हैं—यह तो एक वर है और जो भी मुझे अभीष्ट है वह अब

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मुझे दीजिए ॥२६॥२७॥ मैं मुक्ति को प्राप्त करूँ यही मेरा द्वितीय वर है। ऐसा ही होगा उन दोनो देवों ने उसको शुभ वरदान दिया था ॥२८॥

अदर्शनं गतौ देवो सोऽपि तत्र व्यवस्थितः।
लब्ध्वा वरं सत्य तपा ब्रह्मभूतोऽभवत् हृदि ॥२६
यावदास्ते शुभे देशे कृतकृत्यो महामुनिः।
तावत्तस्य गुरुस्तत्र त्वारुणिः समदृश्यत ॥३०
पृथ्वीं प्रदक्षिणी कृत्य तीर्थं हेतो र्विचक्षण।
तेन चासौ महाभक्त्या पूजितो मुनिपुंगवः ॥३१
पाद्याचमन गोदानैः कृतासन परिग्रहः।
ज्ञात्वा स शिष्यं सिद्धं तु तपसा दग्धकिल्विषम् ॥३२
उवाच विनयापन्नं प्रांजलि पुरतः, स्थितम्।
पुत्र सिद्धोऽसि तपसा ब्रह्मभूतोऽसि सुव्रत ॥३३
इदानी मात्मना सार्द्धं मुक्तिकालो मतोऽस्ति ते।
उत्तिष्ठ गम्यतां पुत्र मया सार्द्धं परं पदम् ॥३४
एवमुक्त्वा तु तौ सिद्धौ उभौ सत्यतपारुणी।
ध्यात्वा नारायणं देवं तद्देहे तौ लयं गतौ ॥३५

वे दोनों देव अदर्शन को प्राप्त हो गये थे और वह भी वहाँ पर व्यवस्थित हो गया था। सत्यतपा वर प्राप्त करके हृदय में ब्रह्म भूत हो गया था ॥२६॥ उस शुभ देश में जब तक वह महामुनि कृत कृत्य होकर रहता है तब तक वहाँ पर गुरु आरुणि उन्हें दिखलाई दिये थे ॥३०॥ वह विचक्षण सम्पूर्ण पृथ्वी की परिक्रमा करके तीर्थ के लिये वहाँ आ गए थे उसने बड़ी भारी भक्ति से उन श्रेष्ठ मुनिवर का पूजन किया था।३१। पाद्य—आचमन और गोदान आदि के द्वारा उनका समर्थन क्रिया गया था। जब उन्होंने आसन ग्रहण कर लिया था उनको यह भी ज्ञान हो गया था कि मेरा शिष्य तप के द्वारा किल्विषों को दग्ध करके सिद्ध हो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गया है ॥३२॥ फिर उन्होंने विनय से मुक्त—हाथ जोड़ कर सामने स्थित शिष्य से कहा था—हे सुव्रत ! हे पुत्र ! तुम सिद्ध हो गये हो और तप के द्वारा ब्रह्म भुत बन गये हो । इस समय में आत्मा के साथ आपका मुक्तिकालगते है। हे पुत्र ! उठो, मेरे साथ परम पद को चलो ॥३३॥३४॥ इस प्रकार से कह कर वे दोनों सिद्ध सत्य तपा और आरुणि देव नारायण का ध्यान करके उस देह में वे दोनों लय कों प्राप्त हो गये थे ॥३५॥

९९—तिलधेनु माहात्म्य

या सा माया शरीरात्तु ब्रह्मणोऽव्यक्त जन्मनः ।
गायत्र्यष्ट भुजा भूत्वा चैं त्रासुरमयोधयत् ॥१
सैव नन्दा भवेद् देवी देवकार्यं चिकीर्षया ।
महिषाख्या सुर वधं कुर्वती ब्रह्मणेरिता ॥२
वैष्ण व्याख्या ततो देव कथमेतद्धि शंस मे ।
इयं जगद्धिता देवी गङ्गा शंकर सु प्रिया ॥३
क्वचित् किंचित् भवेद्वृत्तं स्वपदं वेद सर्ववित् ।
स्वायम्भुवे हतो दैत्यो वैष्णव्या मन्दरे गिरौ ॥४
महिषाख्य परः पश्चात्स वै चैत्रासुरो हतः ।
नन्दया निहतो विन्ध्ये महावल पराक्रमः ॥५
अथवा ज्ञानशक्ति सा महिषोऽज्ञान मूतिमान ।
अज्ञानं ज्ञान साध्यं तु भवतीति न संशयः ॥६
मूर्तिपक्षे चेतिहासममूर्ते चौकवद् हृदि ।
ख्याष्यते वेद वाक्यैश्च इह सा वेदवादिभिः ॥७

अव्यक्त जन्म वाले ब्रह्माजी की जो माया थी वह गायत्री आठ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भुजा वाली होकर स्थित हुई और चैत्रा सूर के साथ उसने युद्ध किया था ।।१।। देवों के कार्य को करने की इच्छा से वह ही नन्दा देवी हो गयी थी। ब्रह्मा के द्वारा प्रेरित होती हुई उसने ही महिषासुर का वध किया था ।।२।। हे देव ! यह वैष्णवी नाम वाली कैसे हुई थी—यही आप कृपा करके मुझे बतलाइए। यह देवी जगत् के हित करने वाली है और गङ्गा भगवान् शङ्कर सुरों की प्रिया है ।।३।। कहीं पर कुछ दिया हुआ है वेद सर्ववित् अपने पद को देती है। स्वायम्भुव मन्वन्तर में वैष्णवी ने मन्दर पर्वत पर दैत्य का हनन किया था ।।४।। दूसरा महिषाख्य था फिर चैत्रासुर का वध किया गया था। नन्दा ने विन्ध्या पर्वत में महान बल और पराक्रम वाले का हत किया था ।।५।। अथवा यों समझ लीजिये कि वह ज्ञान शक्ति थी और महिष मूर्तिमान अज्ञान था। जो अज्ञान है वह तो ज्ञान द्वारा साध्य होता ही है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।६।। मूर्त्ति के पक्ष में इतिहास है और अमूर्त्ति के पक्ष में हृदय में एक ही की तरह है। यहाँ पर वह वेदों के ज्ञाताओं के द्वारा वेदों के वाक्यों से ख्यायित किया जाता है अर्थात् कहा जाया करता है ।।७।।

इदानीं श्रृणु मे देवि पंच पातक नाशनम् ।
यजनं देव देवस्य विष्णोः पुत्र वसुप्रदम् ।।८
इह जन्मनि दारिद्रय व्याधि कुष्ठादि पीडितः ।
अलक्ष्मीवान पुत्रस्तु यो भवेत् पुरुषो भुवि ।।९
तस्य सद्यो भवेल्लक्ष्मीरायुः वित्तं सुतः सुखम् ।
दृष्ट्वा तु मण्डल गतं देवं देव्या समन्वितम् ।।१०
नारायणं परं देवं यः पश्यति विधानतः ।
आचार्य दर्शितं देवि मन्त्र मूर्ति मयो निजम् ।।११
कार्ति के मासि शुक्लायां द्वादश्यां तु विशेषतः ।
सर्वासु वा यजेद्देवं द्वादशीषु विधानतः ।।१२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

संक्रांत्यां वा महाभागं चन्द्र सूर्य ग्रहे तथा ।
यः पश्यति हरिं देवि पूजितं गुरूणा शुभे ।।१३
तस्य सद्यो भवेत्तुष्टिः पाप ध्वंसश्च जायते ।
सामान्य देवतानांच भवतीति न संशयः ।।१४

हे देवि ! अब मुझ से आप पाँचपातकों का विनाश श्रवण कीजिए। देवों के देव भगवान् विष्णु का यजन करना पुत्र और धन के प्रदान करने वाला होता है ।।८।। यहाँ पर जन्म में जो दरिद्रता व्याधि— और कुष्ठ आदि से पीड़ित होता है और जो पुत्र रहित तथा लक्ष्मी से रहित पुरुष इस भू मण्डल में होता है उसको देवी से समन्वित देवका मण्डल गत दर्शन करके तुरन्त ही लक्ष्मी—आयु—वित—सुत तथा सुख हो जाता है ।।६।।१०।। जो पुरुष विधान के साथ पर देव नारायण का दर्शन किया करता है। हे देवि ! अयोनिज और मन्त्र की ही मूर्त्ति वाले वे देव हैं जो कि आचार्य के द्वारा दर्शित हुआ करते हैं ।।११।। कार्त्तिक मास में शुक्ल पक्ष की द्वादशी तिथि में विशेष रुप से अथवा सभी तिथियों में यजन करे या खास तौर से द्वादशी में करे। तथा विधि विधान के ही साथ करे ।।१२।। अथवा सक्रान्ति में महाभाग का यजन करे या चन्द्र एवं सूर्य के ग्रहण के समय में करें। हे देवि ! जो गुरु के द्वारा हे शुभे ! पूजित श्री हरि का दर्शन किया करता है उसकी तुरन्त ही तुष्टि हो जाती है और पापों का विनाश भी हो जाया करता है। सामान्य देवताओं के यजन करने से भी ऐसा ही हो जाता है—इसमें लेशमात्र भी संशय नहीं है ।।१३।।१४।।

दीक्षितात्मा पुनर्भूत्वा वराहं शृणुयाद्यदि ।
तेन वेद पुराणानि सर्वे मन्त्रः स संग्रहाः ।।१५
जप्तः स्युः पुष्करे तीर्थे प्रयागे सिन्धु सङ्गमे ।
देवागारे कुरुक्षेत्रे वाराणस्यां विशेषतः ।।१६
ग्रहणे विषु वे चैव यत्फलं जपतां भवेत् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तत्फलं द्विगुणं तस्य दीक्षितो यः श्रृणोति च ।।१७
देवा अपि तपः कृत्वा ध्यायंति च वदन्ति च ।
कदा नो भारतेवर्षे जन्म स्याद् भूत धारिणि ।।१८
दीक्षिताश्च भविष्यामो वराहं श्रृणुमः कथम् ।
वराहं षोडशात्मानं त्यक्त्या देहं कदा वयम् ।।१९
यास्यामः परमं स्थानं यद् गत्वा न पुनर्भवेत् ।
एवं जल्पन्ति विबुधा मनसा चिन्तयन्ति च ।।२०
अत्राप्यु दाहरन्तीम मितिहासं पुरातनम ।
वसिष्ठस्य च संवादं श्वेतस्य च महात्मनः ।।२१

अपनी आतमा को दीक्षित करके जो कोई भी यदि वाराह पुराण का श्रवण किया करता है उसने सभी पुराणों को-वेदों को और मन्त्रों के संग्रहों को सुन लिया है तथा जाप कर लिया है पुष्कर तीर्थ में—प्रयाग में—सिन्धु—सङ्गम में—देवागार में— कुरुक्षेत्र में और विशेष रूप से वाराणसी में—ग्रहण में—विषुव में जापर करने पर जो भीं फल हुआ करता है उससे दुगुना फल हुआ करता है जो दीक्षा करके दीक्षित होकर इसका श्रवण करता है ।।१५।।१६।।१७।। हे भूतों के धारण करने वाली ! देवगण भी दुष्कर तपश्चर्या करके यही ध्यान किया करते हैं और कहा भी करते हैं कि कौन सा वह शोभन समय आयेगा जब हमारा जन्म भारतवर्ष देश में भूमण्डल में होगा ।।१८।। हम वहां जन्म ग्रहण करके दीक्षित होंगे और परम शुभ वाराह पुराण का श्रवण करेंगे । ऐसा कैसे और कब होगा—यही चिन्तन सुरगण किया करते हैं । हम इस देह का त्याग करके वराह को जो षोड़शात्मा है सुनेंगे ।।१९।। इसके श्रवण करने पर हम परम पद को प्राप्त होंगे जहां जाकर फिर दूसरा जन्म ही नहीं हुआ करता है । इसी तरह से देवगण कहा करते हैं और मन भी चिन्तन किया करते हैं ।।२०।। यहाँ पर भी एक परम पुरातन इतिहास को उदाहृत करते हैं । वह वसिष्ठ मुनि और महात्मा श्वेतका सम्वाद है ।।२१।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्वर्ग वासे स्थितो ह्यासीन् श्वेतो राजा महायशाः ।
आसोदिल वृते वर्षे श्वेतो राजा बृहत्तपाः ।।२२
स महीं सकलान् देवि स पल्लव वन द्रुमाम् ।
दातुमिच्छन्स चोवाच वसिष्ठं तपसां निधिम् ।।२३
भगवन् दातुमिच्छामि ब्राह्मणेभ्यो वसुन्धराम् ।
देह्य नुज्ञां स चोवाच वसिष्ठो राजसत्तमम् ।।२४
अन्नं देहि सदा राजन् सर्व काल सुखा वहम् ।
अन्नेन चैव दत्तेन किं न दत्तं महीतले ।।२५
सर्वेषामेव दाना नामन्नदानं विशिष्यते ।
अन्नाद् भवन्ति भूतानि अन्ने नैव च वर्द्धते ।।२६
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन अन्न दानं ददस्व भोः ।
वसिष्ठस्य वचः श्रुत्वा स राजा न तथा करोत् ।।२७
रत्न वस्त्र मलंकारान श्रीमन्ति नगराणि च ।
यत् किञ्चति कोश जातं स द्विजानाहूय तद्ददौ ।।२८

महान् यशस्वी श्वेतराजा स्वर्ग के निवास में स्थित था । वृहत्तपा श्वेतराजा इलावर्तवर्ष में था ।।२२।। हे देवि ! वह राजा सम्पूर्ण भूमि को जो पल्लव वनों द्रुमों के सहित थी दान देने की इच्छा करता हुआ तपों की निधि वसिष्ठ मुनि से बोला था—।।२३।। हे भगवन् ! मैं ब्रह्मणों के लिये इस भूमि को दान देने की इच्छा करता हूँ । आप मुझे अपनी अनुज्ञा प्रदान कर दीजिए । तब वसिष्ठ मुनि ने उस श्रेष्ठ राजा से कहा था ।।२४।। हे राजन् ! सदा अन्न का दान कीजिए । यह सभी कालों में सुख का आवाहन करने वाला है अन्न के ही दान देने से सभी का दान हो जाया करता है । जिसने अन्न दे दिया उसने इस महीतल में क्या नहीं दिया है ।।२५।। दान तो अनेक प्रकार हुआ करते हैं परन्तु अन्य सभी दानों से बड़ा अन्न का दान होता है । अन्न ऐसा है कि इसी से भूतों की उत्पति होती है और उत्पन्न हो जाने पर इसी अन्न के द्वारा वर्धित हुआ

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करते हैं ॥२६॥ इस कारण सम्पूर्ण प्रयत्नों के द्वारा आप अन्न का ही दान दीजिए। वसिष्ठ मुनि के वचन को सुनकर भी उस राजा ने वैसा नहीं किया था अर्थात् अन्न दान नहीं दिया था ॥२७॥ उस राजा ने अन्न का दान न देकर रत्न—वस्त्र—अलङ्कार—श्री सम्पन्न नगर और जो भी कुछ कोष में था वह सभी द्विजों को बुला-बुला करके दान में दे दिया था ॥२८॥

प्रदत्तं ब्राह्मणस्याथ कुंजरान जिनानि च।
स कदाचित् नृपः पृथ्वीं जित्वा परम धर्म वित् ॥२६
पुरोहित मुवाचेदं वसिष्ठं जपतां वरम्।
भगवन्न श्वमेधानां सहस्रं कर्तु मुत्सहे ॥३०
सुवर्ण रौप्य ताम्राणि यागं कृत्वा द्विजातिषु।
दत्तानि तेन राज्ञा वै नान्नं दत्तं तथा जलम् ॥३१
वस्तु स्वल्प मिति ज्ञात्वा प्रभुः सोऽन्नं तु नाददत्।
एवं विभव युक्तस्य तस्य राज्ञो महात्मनः ॥३२
काल धर्मवशात् देवि मृत्यु समभवत्तदा।
परलोके वर्तमानः स च राजा महामनाः ॥३३
क्षुधया पीडितो ह्यासीत्तृषया च विशेषतः।
आनि नायांप्सरो भागं गत्वा श्वेताख्य पर्वतम् ॥३४
तत्र प्राग्जन्ममूर्तिश्च पुरा दग्धा महात्मनः।
तत्रास्थीनि स संगृह्य लिहन्नास्ते स पार्थिवः ॥३५

उस राजा ने ब्राह्मणों को कुंजरों का तथा अजिनों का दान दिया था। परम धर्म का ज्ञान रखने वाला वह राजा था। उसने किसी समय में भूमि को जीतकर जापकों में परम श्रेष्ठ पुरोहित वसिष्ठ जी को बुलाकर यह कहा था—हे भगवन्! मैं सहस्र अश्वमेध यज्ञों के करने का उत्साह करता हूँ ॥२६॥३०॥ सुवर्ण—चाँदी—ताम्र इन सबका याग करके द्विजातियों को दान दिया था किन्तु उस राजा ने यह सबका दान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तो बहुत बड़ी मात्रा में किया किन्तु अन्न और जल का दान बिल्कुल भी नहीं किया था ।।३१।। राजा ने मन में यही विचार किया था कि अन्न और जल तो बहुत छोटी वस्तुऐं हैं इसी विचार से अन्न का दान उसने नहीं किया था । वह राजा इतने अधिक वैभव से युक्त तथा महान् आत्मा वाला था ।।३२।। तो भी काल तो बड़ा बलवान् है उसके धर्म का जब समय आया तो हे देवि ! उस समय में उसकी मृत्यु हो गई थी । वह राजा परलोक में पहुँच गया था और वहाँ पर वह क्षुधा से तृषा से विशेष रूप से पीड़ित हुआ था । उसको अप्सरा भाग में लाया गया था और शेषाख्य पर्वत में गया था ।।३४।। वहाँ पर पहिले महात्मा की प्राक् जन्म की मूर्त्ति दग्ध की गयी थी । उसने वहाँ पर अस्थियों को संगृहीत करके वह पार्थिव उन्हें चाटता हुआ रहा था ।।३५।।

पुनर्विमान मारुह्य दिवमा चक्रमे नृपः ।
अथ कालेन महता स राजा संशित व्रतः ।।३६
तान्यस्थीनि लिहन्दृष्टो वसिष्ठेन महात्मना ।
उक्तश्च तेन किञ्च त्वं स्वास्थि भुंक्षे नराधिप ।।३७
भगवन् क्षुधितश्चास्मि अन्नपानं पुरा मया ।
न दत्तं मुनि शार्दूल तेन मां बाधते क्षुधा ।।३८
एव मुक्त स्ततो राजा वसिष्ठो मुनि पुनवः ।
उवाच च मुनिर्भूयः श्वेतं वाक्यं महानृपम् ।।३६
किं ते करोमि राजेन्द्र क्षुधितस्य विशेषतः ।
अदत्तं नोपतिष्ठेत कस्याचित् किञ्चिदुत्तमम् ।।४०
रत्नहेम प्रदानेन भोगवान् जायते नरः ।
अन्नपान प्रदाने न सर्वं कामैस्तु पितः ।।४१
तन्न दत्तं त्वया राजन् स्तोकं मत्वा नराधिपः ।
अदत्तस्य च सम्प्राप्ति स्तन्ममाचक्ष्व पृच्छात् ।।४२

फिर वह एक विमान पर समोहण करके वह नृप स्वर्गलको में गया था । इसके अनन्तर बहुत बड़े काल में वह राजा संशित व्रत वाला

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुआ था ।।३६।। महात्मा वसिष्ठजी ने उस राजा को अस्थियों को चाटते हुए देखा था । और उन्होंने उससे कहा था कि हे नराधिप ! कुछ आप अपनी अस्थि को खाइए ।। ३७ ।। उस राजा ने कहा था—हे भगवन् ! मैं भूखा हूँ क्योंकि पहिले मैंने अन्न दान नहीं दिया था । इसी कारण से क्षुधा मुझको सताती है ।।३८।। इस प्रकार से वे मुनि श्रेष्ठ वसिष्ठजी राजा के द्वारा कहे गये थे तब मुनिवर ने पुनः महान् नृप श्वेत को वाक्य कहा था । विशेष रूप से भूखे आपको हे राजेन्द्र ! मैं क्या उपाय करूं। यह ऐसी ही रीति है कि किसी को भी न दिया हुआ अर्थात् दान नहीं किया हुआ कुछ भी उत्तम पदार्थ नहीं मिला करता है ।। ३९—४० ।। रत्नों और सुवर्ण के प्रदान करने से मनुष्य भोगवान् हुआ करता है । और अन्न—पान के प्रदान करने से सभी कामनाओं से तृप्त हुआ करता है ।। ४१ ।। हे नराधिप ! वही अन्न पान आपने इसके दान को छोटा समझ कर नहीं दिया था । जो नहीं दी गई है उस वस्तु की सम्प्राप्ति पूछने वाले मुझसे कहो ।।४२।।

शिरसा भक्ति युक्तेन याचितोऽसि महामुने ।
अस्त्येकं कारणं येन जायते तन्न संशयः ।।४३
तच्छृणुष्व नर व्याघ्र कथ्यमानं मयाऽनघ ।
आसीत् राजा पुराकल्पे विनीताश्वोति विश्रुतः ।।४४
स सर्व मेधमारेभे स्वयं क्रतुवरं नृपः ।
यजतानेन विप्रेभ्यो दत्ता गावो द्विपा वसु ।।४५
नान्नं तेन तदा दत्तं स्वल्पं मत्वा यथा त्वया ।
ततः कालेन महता मृतोऽसौ जाह्नवी जले ।।४६
कृत्वा पुण्यं विनीताश्वः सार्व भौमो नृपोत्तमः ।
स्वर्गं च गतवान्सोऽपि यथा राजन् भवान् प्रभो ।।४७
असावपि क्षुधाविष्ट एवमेव गतो नृपः ।
मर्त्य लोकं नदी तीरे गंगायां नील पर्वतम् ।।४८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विमानेनार्क वर्णेन भास्वता देववत् नृपः ।
ददर्श च तदा राजा क्षुधितः स्वं कलेवरम् ॥४६

हे महामुने ! भक्ति भाव से युक्त शिर से आप से याचना की गयी है। एक कारण है जिससे वह नहीं होता है—इसमें संशय नहीं है ॥४३॥ हे अनघ नर व्याघ्र ! मेरे द्वारा कहा जाने वाले का आप श्रवण कीजिये। पहिले कल्प में एक विनीताश्व—इस नाम से विश्रुत राजा था। उस नृप ने स्वयं ही परम श्रेष्ठ क्रतु सर्वमेध का आरम्भ किया था। यजन करते हुए उसने विप्रों के लिये गौऐं—हाथी और धन का दान दिया था ॥४४॥४५॥ उस राजा ने अन्न को एक बहुत छोटी वस्तु समझ कर दान में नहीं दिया था जैसा कि आपने किया है। फिर बहुत समय के पश्चात् जाह्नवी के जल में मृत हुआ था ॥४६॥ उस विनीताश्व नृप ने पुण्य कर के जो कि सार्व भौम राजा था—स्वर्ग को गया था जिस तरह से हे प्रभो ! हे राजन् ! आप प्राप्त हुये हैं। यह राजा भी वहां पर भूख से पीड़ित हुआ था जैसे आप हुये हैं। मर्त्य-लोक में गङ्गा में नदी के तट पर नील पर्वत है ॥४७॥४८॥ सर्प के समान वर्ण वाले देदीप्यमान विमान के द्वारा देवता की तरह ही उस नृप ने जो स्वयं बहुत ही भूखा था अपने कलेवर देखा था ॥४९॥

पुरोहितं ददर्शाथ होतारं जाह्नवीतरे ।
तत् दृष्ट्वाऽसावपि नृपः पप्रच्छ मुनि सत्तमम् ॥५०
क्षुधायाः कारणं कि मे स होता तमुवाच ह ।
तिल धेनु भवान् राजन् जल धेनु च सत्तम ॥५१
घृत धेनु च धेनु च रस धेनु च पार्थिव ।
देहि शीघ्रं येन भवान् क्षुधया वर्जितो भवेः ॥५२
तपते यावदादित्य स्तपते वापि चन्द्रमाः ।
एव मुक्त स्ततो राजा तं पुनः पृष्ट वा निदम् ॥५३
कथ सा दीयते ब्रह्म स्तिलधेनुर्जिगीषुभिः ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भुंक्ते स्वर्गं च विप्रेन्द्र तन्ममाचक्ष्व पृच्छतः ।।५४
विधानं तिलधेनोश्च त्वं शृणुष्व नराधिप ।
चदुर्भिः कुडवैश्चैव प्रस्थ एकः प्रकीर्तितः । ५५
सा तु षोडशभिः कार्यां चतुर्भिः वत्स को भवेत् ।
ना सा गन्धमयी तस्या जिह्वागुडमयी शुभा ।।५६

इसके अनन्तर होता पुरोहित जी की जाह्नवी के तट पर देखा था उसको देखकर इस राजा ने भी श्रेष्ठ मुनि से पूछा था ।।५०।। मेरी क्षुधा का क्या कारण है । उस होता ने उससे कहा था—हे राजन् ! हे श्रेष्ठतम ! हे पार्थिव ! आप तिल धेनु—और जलधेनु घृतधेनु—रसधेनु और धेनु का शीघ्रही दान करिये जिससे आप क्षुधा से रहित होजावेंगे । ।।५१।।५२।। जब तक यह भगवान् आदित्य तपते हैं अथवा चन्द्र तपते हैं । इस प्रकार से जब उस राजा से कहा गया था तो उस राजाने उससे पुनः यह पूछा था ।।५३।। हे ब्रह्मन् ! निजीषुओं के द्वारा वह तिल धेनु किस प्रकार से दी जाया करती है । हे विप्रेन्द्र ! स्वर्ग का भोग कर रहा हूँ—मुझे पूछते हुए को आप यही बतलाइए ।।५४।। तब इसके उत्तर में उसने कहा था—हे नराधिप ! तिल धेनु का विधान आप अब सुनिये । चार कुंटवों का एक प्रस्थ कहा गया है ।।५५।। वह सोलह की बनानीं चाहिए और चार का वत्स बनाना चाहिए । उसकी नासिका गन्धमयी और जिह्वा परम शुभ गुण मयी बनावे ।।५६।।

पुच्छे प्रकल्प नीया सा घण्टा भरणा भूषिता ।
ईदृशीं कल्पयित्वा तु स्वर्ण शृंगीं तु कारयेत् ।।५७
कांस्य दोहां रौप्य खुरां पूर्व धेनु विधानतः ।
कृत्वा तां ब्राह्मणायाशु दद्याच्चैव नराधिप ।।५८
कृष्णाजिनं धेनुवासो नन्दितां कल्पितां शुभाम् ।
सूत्रेण सूत्रितां कृत्वा सर्व रत्न समन्विताम् ।।५९
सर्वौषधि समा युक्तां मंत्र पूतां तु दापयेत् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्नं मे जायता मन्यत्पानं सर्वं रसास्तथा ।।६०
सर्वं सम्पादयास्माक तिलधेनो द्विजार्पिता ।
गृह्णामि देवि त्वां भक्त्या कुटुम्बार्थं विशेषतः ।।६१
भजस्व कामान्मां देवि तिलधेनो नमोऽस्तु ते ।
एवं विधां ततो दद्यात्तिल धेनुं नृपोत्तम ।।६२
सर्वकाम समावाप्ति कुरूते नात्र संशयः ।
यश्चेदं शृणुयाद्भक्त्या कुर्यात्कारयतेऽपिवा ।।६३
सर्वं पाप विनिर्मुक्तो विष्णु लोकं च गच्छन्ति ।
गोमये मण्डले कृत्वा गोचर्म तदनन्तरम् ।।६४

वह पुच्छ में घण्टा और आमरणों से भूषित कल्पित करनी चाहिए। ऐसी उसको बनवाकर फिर सुवर्ण के सींगों वाली करावे। ।।५७।। उसके दोहन का पात्र काँसे का देवे और चाँदी के खुर बनवावे। हे नराधिप ! पूर्व धेनु के विधान से करके उस धेनु को शीघ्र ही ब्राह्मण के लिये दान देना चाहिए ।।५८।। कृष्ण जिन धेनु का वसन होवे। इस प्रकार से परम नन्दित और कल्पित शुभा धेनु को सूत्र से वेष्टित करके सभी रत्नों से समन्वित करे ।।५९।। उसको सर्वौषधियों से समायुक्त करके फिर मन्त्रों द्वारा पूव करे और दान देवे। ओर यह कहे—हे धेनो ! मेरा अन्न होवे—अन्य पान तथा सभी रस होवें—द्विज को अर्पित की हुई सभी हमारे लिये सम्पादन करो। हे देवि ! मैं भक्ति के साथ और विशेष रूप से कुटुम्ब के लिये आपका ग्रहण करता हूँ ।।६०।। ।।६१।। हे देवि ! हे तिलधेनो ! मेरे कामनाओं का सेवन करो। आपके लिये मेरा प्रणाम है। हे नृपोत्तम ! इस प्रकार की तिलधेनु का दान करना चाहिए ।।६२।। यह तिल धेनु का दान सभी कामनाओं की प्राप्ति किया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है। जो पुरुष इसका भक्ति भाव से श्रवण किया करता है तथा स्वयं दान किया करता या कराया करता है ।।६३।। वह सभी प्रकार के पापों से विनिर्मुक्त होकर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्त में विष्णु लोक की प्राप्ति किया करता है। गोमय मण्डल में करके इसके अनन्तर गो चर्म करे ॥६४॥

१००-१०४—जलधेनु, रसधेनु, गुड़धेनु, शर्कराधेनु और मधुधेनु दान-माहात्म्य

जल धेनुं प्रवक्ष्यामि पुण्येऽह्नि विधि पूर्वकम् ।
गोचर्म मात्रं भू भाग गोमयेनो पले पयेत् ॥१
तत्र मध्ये तु राजेन्द्र पूर्ण कुम्भं च विन्यसेत् ।
जल पूर्णं सुगन्धाढ्यं कर्पू रा गुरु चन्दनैः ॥२
वासितं गन्ध तोयेन तां धनुं परि कल्पयेत् ।
वत्सं तथा परं कल्प्य जलेन परि पूरितम् ॥३
वर्द्ध नीकं महाराज यंत्र पुष्पैः समन्वितम् ।
दूर्वां कुरं रुप स्तीर्य स्रग्भिश्चैव विभूषितम् ॥४
गन्ध पुष्पैः समभ्यचर्य विप्राय विनि वेदयेत् ।
एवं धेनुं तदा दत्त्वा ब्राह्मणे वेदपारगे ॥५
साधु विप्राय राजेन्द्र श्रोत्रिया याहिताग्नये ।
तपोवृद्धाय पात्राय दातव्या च कुटुम्बिने ॥६
यो ददाति नरो राजन् यः पश्यति श्रृणोति च ।
प्रति गृह्णाति यो विप्रः सर्वे मुच्यन्ति पातकात् ॥७

अब जल धेनु के विषय में बतलाता हूँ। किसी शुभ दिन में विधि के साथ गो चर्म पात्र भूमि के भाग का गोमय से उपलेपन करना चाहिए ॥ १ ॥ हे राजेन्द्र! वहाँ पर मध्य में पूर्ण कुम्भ का विन्यास करें। उस कुम्भ को कपूर—अगुरु और चन्दन से सुगन्ध से युक्त तथा जल से पूर्ण करना चाहिए ॥ २ ॥ गन्धयुक्त जल से वासित करे और उस धेनु की परिकल्पा करनी चाहिए। तथा दूसरे वत्स की कल्पना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके जल से परिपूरित करे ।। ३ ।। हे महाराज ! वर्धनीक को यन्त्र पुष्पों से समन्वित करे । दूर्वा के अंकुरों से उपस्तरण करके मात्राओं से भूषित करना चाहिए ।।४।। गन्धाक्षत पुष्पों से भली भाँति अर्चन करके उसे विप्र के लिये निवेदित कर देवे । इस तरह से हे राजेन्द्र ! उस धेनु का दान करे । जिस ब्राह्मण के वह दान की जावे वह वेदों के पारगामी विद्वान् होना चाहिए ।। ५ ।। विप्र साधु प्रकृति का हो—श्रोत्रिय और आहिताग्नि होना चाहिए । वह तप में वृद्ध—पात्र अर्थात् दान का ठीक अधिकारी तथा कुटुम्बी होना चाहिए ।।६।। हे राजन् ! जो कोई भी ऐसा दान दिया करता है—इस दान को देखता है और श्रवण करता है और जो विप्र इस दान का प्रति ग्रहण किया करता है ये सबके सब पातक से मुक्त होजाया करते हैं ।।७।।

रसधेनु विधानं ते कथयामि समासतः ।
अनुलिप्ते महीपृष्ठे कृष्णाजिन कुशास्तरे ।।८
रसस्य तु घटं राजन् सम्पूर्णं त्वैक्ष वस्य तु ।
तद्वत्सङ्कल्पयेत् प्राज्ञः चतुर्थांशेन वत्सकम् ।।९
तुरीयांशेन वत्सं तु तत्पार्श्वे स्थापयेत्सुधीः ।
इक्षुदण्डमयाः पादा रजतस्य खुरैर्युताः ।।१०
रस धेनुः प्रदातव्या स्वर्ग कामेन नित्यदा ।
दाता स्वर्ग मवाप्नोति सर्व पाप विवर्जितः ।।११
दाता च ग्राहकश्चैव एक कालम भोजनः ।
सोम पान फलं तस्य सर्वत्र तु फलं लभेत् ।।१२
दीयमानां तु पश्यन्ति ते च यांति परां गतिम् ।
प्रापयेत् परमं स्थानं स्वर्गान्नावर्त्तते पुनः ।।१३

अब मैं बहुत ही संक्षेप में रसधेनु के दान का विधान आपको बतलाता हूँ । भूमि के पृष्ठ भाग के अनुलिप्त किये जानेपर और कृष्णाजिन तथा कुशा के आस्तरव करने पर ।। ८ ।। राजन् ! ईख के रस से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

घट को सम्पूरित करे। और उपर्युक्त की ही भाँति संकल्पित करना चाहिए तथा चतुर्थांश के द्वारा वत्स को कल्पित करे ॥८९॥ सुधी को चाहिए चौथे अंश से कल्पित्त कर वत्स कों उसी के पार्श्व भाग में स्थापित करे। ईख के दण्डों से परिपूर्ण उसके चरणों का निर्माण करे और रजत चाँदी के खुरों से युक्त करना चाहिए ॥१०॥ जो स्वर्ग लोक के निवास करने की कामना रखता हो उसे नित्य ही रसधेनु का प्रदान करना चाहिए। इसके दान करने वाला पुरुष स्वर्ग को प्राप्त किया करता है ओर सभी पापों से विनिर्मुक्त हो जाता है ॥११॥ दान देने वाले को और दान ग्रहण करने वाले को दोनों को ही एक काल में भोजन करने वाला होना चाहिए। सोमपान का जो फल होता है उसको सर्वत्र वही फल प्राप्त हुआ करता है ॥१२॥ जो इस धेनु को देती हुई देखते हैं वे भी परागति को प्राप्त हुआ करते हैं। फिर वह परम स्थान को प्राप्त करा दिया करता है और पुनः वह स्वर्ग से आवर्त्तित नहीं होता है। तात्पर्य यही है कि उसको स्वर्ग का निवास स्थायी रूप से ही प्राप्त हुआ करता है और पुण्य क्षीण होने पर मर्त्य लोक में वापिस नहीं लौटता है जैसा कि साधारणतया औरों को हुआ करता है ॥१३॥

गुडधेनुं प्रवक्ष्यामि सर्व कामार्थ साधिनोम्।
अनुलिप्ते महीपृष्ठे कृष्णाजिन कुशास्तृते ॥१४
तस्योपरि कृतं वस्त्रं गुडमानीय पुष्कलम्।
कृत्वा गुडमयीं धेनुं सवत्सां कांस्य दोहनीम् ॥१५
गन्ध पुष्पा दिभिः कृत्वा घृत नैवेद्य दीपकान्।
एवं कृत्वा द्विजेन्द्राय आहिताग्नेः विशेषतः ॥१६
छत्रिका पादु के दत्त्वा इमं मन्त्र मुदीरयेत्।
गुडधेनो महावीर्ये सर्व सम्पत्प्रदे शुभे ॥१७
दानादस्माच्च भो देवि भक्ष्य भोज्यं प्रपच्छ मे।
या श्रियादीनि मंत्राणि पूवोक्तानि स्मरेद्बुधः ॥१८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राङ्‌ मुखो वापि दाता च ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
वाचाकृतं कर्मकृतं मनसा यद्‌विचिन्तितम् ॥१९
मानकूटं तुला कूटं कन्यागोऽर्थे उदाहृतम् ।
अनृतं नाशमायातु गुड धेनो द्विजार्पिता ॥२०
दश पूर्वान् दश परानात्मानं चैक विंशतिम् ।
विष्णु लोकं नयत्याशु गुड धेनोः प्रसादतः ॥२१

अब उद्र धेनु के दान के विधान को बतलाता हूँ जो सब कामों के अर्थ को साधित करने वाली होती है। भूमि के ऊपर के भाग का अनुलेपन करके उस पर कुशा और कृष्णाजिन अर्थात् कृष्ण मृग के धर्म का आस्तरण करे ॥१४॥ उसके ऊपर वस्त्र बिछावे और फिर पुष्कल गुड़ का वहाँ पर आनयन करना चाहिए। उस गुड़ से धेनु की रचना करे और वत्स भी बनावे। काँसे की दोहनी रक्खे ॥ १५ ॥ घृत का दीपक—नैवेद्य—गन्ध और पुष्प आदि सब अर्चन के उपचार वहाँ रक्खे। ऐसा सब करके विशेष रूप से आहिताग्नि विप्र के लिये उसका दान करे ॥ १६ ॥ छत्ता और पादुकाएँ देकर इस निम्नलिखित मन्त्र को उदीरित करना चाहिए। मन्त्र यह है—हे गुड़ धेनो ! आप महान् वीर्य वाली हैं—आप परम शुभ हैं और सभी सम्पदाओं के प्रदान करने वाली हैं। हे देवि ! इस दान से आप मुझको भक्ष्य—भोज्य—प्रदान कीजिए। या श्रियादि मन्त्रों का भी बुध को स्मरण करना चाहिए ॥ १७—१८ ॥ और दानदाता पूर्व की ओर मुख वाला होकर ब्राह्मण के लिये निवेदन करे। वाणी के द्वारा—कर्म के द्वारा किया हुआ तथा जो मन के द्वारा चिन्तन किया है—मानकूट—तुलाकूट—कन्याग अर्थ में उदाहृत अनृत है वह नाश का प्राप्त होवे। हे गुड़ धेनो ! आपका द्विज के लिये अर्पण किया गया है ॥ १९—२० ॥ दश पुरुष (पीढ़ी) पूर्व की अर्थात् पूर्व में होने वाली और दश पुश्त आगे होने वाली जो भविष्य में होगी और स्वयं अपने आपको अर्थात् इस तरह से इक्कीस

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुश्तों को शीघ्र ही विष्णु भगवान् के लोक में ले जाया करता है। यह गुड़ की धेनु कीं कृपा से ही हुआ करता है ॥२१॥

तद्वच्च शर्करा धेनुं श्रृणु राजन् यथार्थतः।
अनु लिप्ते महीपृष्ठे कृष्णाजिन कुशास्तरे ॥२२
धेनुं शर्करया राजन् कृत्वा भार चतुष्टयम्।
उत्तमा कथ्यते सद्भिश्चतुर्थांशेन वत्सकम्।
स्वशक्त्या कारयेद्धेनुं तथात्मानं न पीडयेत् ॥२३
सत्पात्रं च द्विजं दृष्ट्वा स्वागतं श्रोत्रियं गृहे।
आगताय प्रदातव्या पुच्छ देशे विमृश्य च ॥२४
पूर्वा भिमुखमास्थाय अथवा स उदङ् मुखः।
गां पूर्वाभि मुखीं कृत्वा वत्समुत्तरतो न्यसेत् ॥२५
दान काले तु ये मंत्रास्तान्पठि त्वा समर्पयेत्।
सर्व काम समृद्धस्तु जायते नात्र संशयः ॥२६

हे राजन्! इसी की भांति यथार्थ रूप से शर्करा धेनु के दान के विषय में आप श्रवण कीजिए। मही के पृष्ठ को अनुलिप्त करके कृष्णाजिन और कुशाओं की आस्तरण करें ॥२२॥ हे राजन्! फिर शर्करा से एक धेनु की रचना करे जो चार भार प्रमाण की होनी चाहिए। ऐसी धेनु ही सत्पुरुषों के द्वारा कही जातीं है। उसके चौथे भाग से एक उसके वत्स की रचना करनी चाहिए। जितनी भीं अपनी शक्ति हो उतनी ही शर्करा से धेनु की रचना करे ॥२३॥ फिर सत्पात्र द्विज को देखे। और जो गृह में आगत कोई श्रोत्रिय हो तो उस समागत विप्र को ही वह धेनु दान में दे देनी चाहिए। और पुच्छ देश में विमर्श करे ॥२४॥ स्वयं पूर्व की ओर मुख करके आस्थित होवे अथवा उत्तर की ओर मुख करके स्थित होवे। उस धेनु का मुख पूर्व की ओर करे तथा वत्स को उत्तर भाग में न्यस्त करना चाहिए ॥२५॥ दान के समय में जो भी मन्त्र पढ़े जाया करते हैं उनका उच्चारण करके समर्पण करना

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चाहिए। ऐसे दान के करने वाला पुरुष सब कामनाओं से समृद्ध हो जाया करता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥२६॥

धेनुं मधुमयीं कृत्वा सम्पूर्ण घट षोडशाम ।
चतुर्थेन तथांशेन वत्सकं परिकल्पयेत् ॥२७
अपने विषुवे पुण्ये व्यतीपाते दिनक्षये ।
संक्रांत्यामुपरागे च सर्वं काले यद्दच्छया ॥२८
द्रव्य ब्राह्मण सम्पत्ति दृष्ट्वा तां प्रति पादयेत् ।
ब्राह्मण दरिद्राय श्रोतिया याहिताग्नये ।
आर्यावर्त्त समुत्पन्ने वेद वेदाङ्ग पारगे ॥२६
रसज्ञा सर्व देवानां सर्वभूत हिते रता ।
स्वशक्त्या दक्षिणां दत्त्वा वित्तशाठ्य विवर्जितः । ३०
प्रीयन्तां पितरो देवा मधु धेनो नमोऽस्तु ते ।
एवमुच्चार्य तां धेनुं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥३१
य इदं शृणुयाद्भक्त्या श्रावयेद्वापि मानवः ।
सर्व पाय विनिर्मुक्तो विष्णु लोकं स गच्छति ॥३२

अब मधुधेनु के विषय में बतलाया जाता है। सम्पूर्ण घट षोड़श मधुमयीं धेनु की रचना करके तथा चतुर्थ अश से उसके वत्स की रचना करे ॥२७॥ विषुव अयन में—पुण्य दिन में – व्यतीपात में—दिनक्षय में—संक्रान्ति में—ग्रहण में और यदृच्छा से सब काल में इसका दान करे ॥२८॥ द्रव्य ब्राह्मण —सम्पत्ति को देखकर उसका प्रतिपादन करना चाहिए। जो दरिद्र ब्राह्मण हो—श्रोत्रिय और अहिताग्नि हो—आर्यावर्त्त में जन्म ग्रहण करने वाला हो तथा वेदों और वेदाङ्गों में पारगामी विद्वान् हो उसको ही इसका दान देना चाहिये ॥२६॥ वित्तशाढ्य से रहित होकर अपनी शक्ति जो भी हो उसी के अनुसार दक्षिणा देवे। वित्त के रहते हुए भी जो अभाव कह कर दान नहीं होता है वही वित्त शाढ्य है। फिर प्रार्थना करे—हे मधु धेनो ! आप रस के ज्ञान रखने वाली हैं और आप सब भूतों के हित में रति रखने वाली हैं। मेरे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

समस्त देवगण और पितृगण प्रसन्न होवे। मेरा आपके लिये नमस्कार है। इस तरह मुख से उच्चारण करके उस मधु धेनु को ब्राह्मण की सेवा में अर्पित कर देना चाहिए ॥३०॥३१॥ जो मानव उस मधुधेनु के दान के विधान का भक्ति के भाव से श्रवण किया करता है तथा किसी को इसका श्रवण करता है वह सब पापों से छुटकारा पाकर अन्त में विष्णु लोक में गमन किया करता है ॥३२॥

१०५–११०--क्षीर धेनु, दधि धेनु, नवनीत धेनु, लवण धेनु, कपास धेनु, धान्य धेनु दान माहात्म्य।

गोचर्म मात्र मानेन कुशाना स्तीर्य सर्वतः।
तस्योपरि महाराज न्यसेत् कृष्णाजिनं बुधः ॥१
तत्र कृत्वा कुण्डलिकां गोमयेन सु विस्तृताम्।
क्षीर कुम्भं ततः स्थाप्य चतुशेन वत्सकम् ॥२
एवं लक्षण संयुक्तां क्षीर धेनुं प्रकल्पयेत्।
आच्छाद्य वस्त्र युग्मेन गन्ध पुष्पैः समचयेत् ॥३
धूपदीपादिकं कृत्वा ब्राह्मणाय निवेदयेत्।
वस्त्रादिभिरलंकृत्य मुद्रिका कर्ण कुण्डलैः ॥४
अप्याय स्वेति मन्त्रेण वेदोक्तेन विधानतः।
आश्रयः सर्व भूताना मित्यादि नर पुंगव ॥५
अप्याग स्वेति मन्त्रेण क्षीरधेनुं प्रसादयेत्।
प्रतिग्राहो पठेन्मंत्र मेष दान विधि स्मृतः ॥६
दत्वा धेनुं महाराज शृणु तस्यापि यत्फलम्।
षष्टि वर्ष सहस्रं तु इन्द्र लोके महीयते ॥७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गौ चर्ममात्र के मान के सभी ओर कुशों का आस्तरण करके हे महाराज ! वुध पुरुष को चाहिए उसके ऊपर कृष्णाजिन का न्यास करे ॥ १ ॥ वहां पर गोमय से एक सुविस्तृत कुण्डलिका की रचना करनी चाहिए। वहाँ पर फिर क्षीर के एक कुम्भ को स्थापित करे और चौथे भाग से वत्स का परिकल्पन करे । २॥ इस प्रकार से लक्षणों से समन्वित क्षीर धेनु की रचना करनी चाहिए। दो वस्त्रों के द्वारा उसका समाच्छादन करे और गन्ध—पुष्पों से उसका अभ्यर्चन भली रीति से करे ॥३॥ धूप--दीप आदि करके उसको किसी सुयोग्य धन देने के पात्र ब्राह्मण को निवेदित कर देना चाहिए। उसको वस्त्रादि के द्वारा समलंकृत करके मुद्रिका और कर्णों के कुण्डलों से भूषित करे। फिर "आप्यायस्व"—इत्यादि मन्त्र के द्वारा जो वेदोक्त है विधान से करे और 'आश्रयः सर्व भूतानां" इत्यादि के द्वारा हे नर पुङ्गव ! आप्यामित् करिए—इस मन्त्र से क्षीर धेनु को प्रसन्न करे। जो प्रति ग्रह लेने वाला है वह भी मन्त्र को पढ़े—यह ही दानकी विधि कही गयी है। ॥३॥४॥५॥६॥ हे महाराज ! धेनु का दान करके उसका भी जो पुण्य-फल होता है उसका आप श्रवण कीजिए। वह दान देने वाला पुरुष आठ सहस्र वर्षों तक इन्द्र लोक में प्रतिष्ठित हुआ करता है ॥७॥

दधिधेनोर्महाराज विधानं शृणु सांप्रतम् ।
दधि कुम्भं तु संस्थाप्य सप्त धान्य चयोपरि ।
चतुर्थांशेन वत्सं तु सौवर्ण मुख मंडितम् ॥८
आच्छाद्य वस्त्र युग्मेन पुष्पगन्धैस्तु पूजिताम् ।
ब्राह्मणाय कुलीनाय साधु वृत्ताय धीमते ॥६
क्षमादि गुण युक्तायै दद्यातां दधि धेनुकाम् ।
दधि क्राव्णेति मंत्रेण दद्याद् धेनुं सु पूजिताम् ॥१०
एवं दधिमयी धेनुं दत्त्वा राजर्षि सत्तम ।
एकाहारी दिने तिष्ठेद्दध्ना च नृप नन्दन ॥११

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यजमानो वसेद्राजंस्त्रिरात्रि च द्विजोत्तमः ।
दीयमाना प्रपश्यन्ति ते यान्ति परमं पदम् ॥१२

हे महाराज ! अब आप दधि धेनु के दान का विधान सुनिए। सात प्रकार के धान्यों के ऊपर दधि से परिपूर्ण कुम्भ की संस्थापना करना चाहिए। उस दधि के चतुर्थ अन्श से उस धेनु के वत्स की परिकल्पनी करे। फिर उसके मुख को सुवर्ण से मण्डित करना चाहिए ॥८॥ वस्त्रों के एक जोड़े से उसका समाच्छादन करें और गन्ध पुष्पादि के द्वारा उसका पूजन करना चाहिए। फिर जो अच्छे कुल में समुत्पन्न हो तथा जिसका चरित्र साधु हो और धीमान् हो उस ब्राह्मण के लिये दान करे। ॥९॥ जो ब्राह्मण क्षमा आदि सद्गुण गण से युक्त हो उसी को इस दधि धेनु को देना चाहिए। "दधिक्राव्णा" इत्यादि मन्त्र से सुपूजित धेनु को देवे ॥१०॥ हे राजर्षि सत्तम ! इसी रीति से दधिमयी धेनु का दान कर के हे नृप नन्दन ! दिन में शाक का आहार करने वाला होकर ही स्थित रहे और दही से अशन क्रिया करे ॥११॥ हे राजन् ! जो यजमान हो वह तीन रात्रि तक निवास करे। हे द्विजोत्तम ! जो इस धेनु के दान को होते हुए देखा करते दे वे परम पद को गमन करते हैं ॥१२॥

नवनीतमयी धेनुं शृणु राजन् प्रयत्नतः ।
यां श्रुत्वा सर्व पापेभ्या मुच्यते नात्र संशयः ॥१३
कुम्भं तु नवनीतस्य प्रस्थ मात्रस्य धारयेत् ।
वत्सं चतुर्थ भागस्य तस्यामुत्तरतो न्यसेत् ॥१४
आच्छाद्य वस्त्र युग्मेन गन्ध पुष्पैरलं कृताम् ।
दीपांश्च दिक्षु प्रज्वाल्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥१५
मन्त्रास्त एव जप्तव्याः सर्वधेनुषु ये स्मृताः ।
पुरा देवासुरैः सर्वैः सागरस्य तु मन्थने ॥१६
उत्पन्नं दिव्य ममृतं नवनीत मिदं शुभम् ।
आप्यायनं तु भूतानां नवनीत नमोऽस्तुते ॥१७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवमुच्चार्य तां दद्याद् ब्राह्मणाय कुटुम्गिने ।
धेनुं च दत्त्वा सुदुघां सोपधानां नयेद् गृहम् ।।१८

हे राजन् ! अब आप नवनीत मयी धेनु के दान का विधान प्रयत्न पूर्वक श्रवण कीजिए। जिसका केवल श्रवण करने ही से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।।१३।। नवनीत के कुम्भ को रक्खे जिसमें एक प्रस्थ नवनीत होना चाहिए। उसके चतुर्थ भाग का वत्स परिकल्पित करे और उसके उत्तर भाग में उसका न्यास करना चाहिए ।।१४।। दो वस्त्रों से आच्छादित करके गन्ध और पुष्पों से उसे समलङ्कृत करे। उसके समीप दिशाओं में दीपकों को प्रज्वलित करके फिर उसका ब्राह्मण के लिये निवेदन करे ।।१५।। उस समय में उन्हीं सब मन्त्रों का जप तथा उच्चारण करना चाहिए जो पहिले बता दिये गये हैं और सभी धेनुओं के दान में कहे गये हैं। प्राचीन काल में सागर के मन्थन करने के अवसर पर सभी देवों और असुरों ने निम्न भांति के मन्त्र का उच्चारण किया था ।।१६।। उत्पन्न दिव्य अमृत यह शुभ नवनीत है जो सभी भूतों का आप्यायन करने वाला है। हे नवनीत ! आपकी सेवा में हमारा नमस्कार अर्पित है ।।१७।। इस रीति मन्त्र का उच्चारण करके किसी योग्य कुटुम्बी ब्राह्मण के लिये उसका दान देना चाहिए सुन्दर दूध देने वाली धेनु को देकर सोपधाना को गृह में ले आवे ।।१८।।

लवण धेनुं प्रवक्ष्यामि तां निबोध नृपोत्तम ।
षोडश प्रस्थ संयुक्तां धेनुं कृत्वा तु मानवः ।।१९
नक्षत्र ग्रह पीडां च सर्वकालं प्रदापयेत् ।
ग्रहणे नाथ संक्रान्तौ व्यतीपाते तथायने ।।२०
द्विजाय साधु वृत्ताय वेद वेदाङ्ग वेदि ने ।
ईदृशाय प्रदातव्या तथाऽमत्सरिणे नृप ।।२१
ब्रह्माणं पूज्य विधिवत् पूर्वोक्त विधिना नृप ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सदक्षिणं च गोपुच्छं दत्त्वा ब्राह्मण हस्त के ।।२२
इमं मन्त्रं समुच्चार्य ततस्तां प्रति पादयेत् ।
इमां गृहाण भो विप्र रुद्र रूपां नमोऽस्तुते ।।२३
रसज्ञा सर्व भूताना सर्व देव नमस्कृता ।
कामं पूरय मे देवि रुद्र रूपे नमोऽस्तु ते ।।२४

हे नृपोत्तम ! अब हम लवण की धेनु के दान के विषय में वर्णन करते हैं उसको भी आप समझ लीजिए । मनुष्य १६ प्रस्थ की एक धेनु की रचना करावे ।।१९।। नक्षत्र और ग्रहों की पीड़ा का सभी कालों में प्रदापित कराती है । ग्रहण में अथवा संक्रान्ति में—व्यतीपात में तथा अपन में ।।२०।। जो द्विज साधु चरित्र वाला हो तथा वेदों और वेदों के अङ्क शास्त्रों का ज्ञाता हो ऐसे ही विप्र को यह देनी चाहिए । हे नृप ! वह ब्राह्मण मत्सरता से रहित होना चाहिए ।।२१।। हे नृप ! पहिले विधि पूर्वक पूर्व में कही हुई विधि से ब्राह्मण की यथाविधि पूजा करे । फिर दक्षिणा के साथ गौ की पूँछ ब्राह्मण के हाथ में देवे ।।२२।। "हे विप्र ! रूद्र रूपा इसका आप ग्रहण कीजिए आपको नमस्कार है"—इस मन्त्र को पढ़कर फिर उसको इस का प्रतिपादन करना चाहिए ।।२३।। यह प्रार्थना भी करे—हे देवि ! आप रस के ज्ञान रखने वाली है जो सभी भूतों का रस हैं । आपको सभी देव नमस्कार करते हैं । आप रुद्र के रूप वाली हैं । मेरे कामों को पूर्ण कीजिए । आपको मेरा नमस्कार है ।।२४।।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धेनुं कार्पासकीं नृप ।
यत् प्रदानान्नरो याति ऐन्द्र लोक मनुत्तमम् ।।२५
विषुवे त्वयने पुण्ये युगादि ग्रहणे तथा ।
ग्रहपीडासु चोग्रासु दुःस्वप्नेऽरिष्टदर्शने ।।२६
दद्याद्धेनुं चर्म पाणिः प्रयतः श्रद्धयान्वितः ।
पूर्वोक्तस्तु विधिः कार्यो दानमंत्र पुरः सरः ।।२७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यथा देवगणाः सर्वस्त्वया हीनो न वर्त्तते ।
तथा उद्धरमां देवि पाहि संसार सागरात् ॥२८

इसके अनन्तर हम कपास की धेनु के दान के विषय में वर्णन करते हैं। हे नृप ! जिसके प्रदान करने से मनुष्य अत्युत्तम इन्द्रदेव के लोक में प्रयाण किया करता है ॥२५॥ विषुव अयन में—पुष्प प्रगादि के ग्रहण में—उग्र ग्रहों की पीड़ाओं में—दुः स्वप्न दर्शन में—अरिष्ट दर्शन में चर्मपाणि हो कर श्रद्धा से समन्वित और प्रषत होकर धेनु का दान देवे । पूर्व में वर्णित ही इसमें भी विधि करनी चाहिए जो दान के मन्त्रों के समन्वित होवे ॥२६॥२७॥ जिस तरह से आपसे हीन सब देवगण नहीं रहते हैं उसी भाँति हे देवि ! आप मेरी रक्षा कीजिए और इस संसार सागर से मेरा उद्धार कीजिए ॥२८॥

श्रृणु राजन् प्रवक्ष्यामि धान्य धेनु मनुत्तमम् ।
यस्याः संकीर्तनादेव सा तुष्येत् पार्वती स्वयम् ॥२६
विषुवे चायने वापि कार्तिक्यां तु विशेषतः ।
यां दत्त्वा मुच्यते पापात् शशांक इव राहुणा ॥३०
दश धेनु प्रदानेन यत्फलं राजसत्तम ।
तत्सर्वमेव प्राप्नोति ब्रीहि धेनु प्रदानतः ॥३१
पूर्ववच्चार्च्चयित्वा तां कृत्वा दीपार्च्चनादिकम् ।
पुण्यं कालं च सम्प्राप्य स्नातः शुक्लाम्बरो गृही ॥३२
त्रिः प्रदक्षिण भावृत्त्य दंडवत् प्रणमेच्चताम् ।
त्वं हि विप्र महाभाग वेद वेदङ्ग पारग ।
मया दत्ता च गृह्णोष्व प्रसीद त्वं द्विजोत्तम ॥३३

हे राजन् ! अब मैं धान्य धेनु के दान के विषय में उसका विधान बतलाता हूँ। आप उसका श्रवण कीजिए । यह बहुत ही उत्तम होता है। जिसके केवल संकीर्त्तन करने ही से वह पार्वती देवी स्वयं ही प्रसन्न हो जाया करती हैं ॥२६॥ विषुव अयन में अथवा विशेष रूप से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कीर्त्तिकी में जिसका दान करके राहु से शशांक ही भाँति मानव पापों से मुक्त हो जाया करता है ।।३०।। हे श्रेष्ठ राजन् ! दश गौओं के प्रदाम करने से जो पुण्य फल होता है वह सम्पूर्ण फल श्रीदियों की धेनु के दान करने से हुआ करता है ।।३१।। उसका पूर्व की ही भाँति अर्चन करके और दीपादिक करके पुण्य काल की सम्प्राप्ति करके गृही स्नान करे और शुक्ल वस्त्रों को धारण करे ।।३२।। तीन वार परिक्रमा करके दण्ड के समान ही उसको प्रणाम करना चाहिए । फिर प्रार्थना करे--हे विप्र ! आप महान् भाग्य वाले हैं और वेदों तथा वेदों के अङ्ग शास्त्रों में पारङ्गत हैं । हे द्विजोत्तम ! यह मेरे द्वारा दी हुई धेन को ग्रहण कीजिए और मेरे ऊपर प्रसन्नता कीजिए ।।३३।।

१११–कपिला धेनु माहात्म्य

अथात: सम्प्रवक्ष्यामि कपिलां धेनुमुत्तमम् ।
यत् प्रदानान्नरो याति विष्णु लोकमनुत्तमम् ।।१
कपिलाया: शिरोग्रीवा सर्वं तीर्थानि भामिनि ।
पितामह नियोगाच्च निवसन्ति हि निश्चय: ।।२
प्रातरुत्थाय यो मर्त्य: कपिला गलमस्तकात् ।
च्युतं तु भक्त्या पानीयं शिरसा वन्दते शुचि: ।।३
स तेन पुण्यतोयेन तत्क्षणाद् दग्धा किल्विष: ।
त्रिशद् वर्षं कृतं पापं दहत्यग्निरिवेन्धनम् ।।४
कल्यमुत्थाय यो मर्त्य: कुर्यात्तासां प्रदक्षिणम् ।
प्रदक्षिणीकृता तेन पृथिवी स्याद्वसुन्धरे ।।५
गोसहस्रं च यो दद्यादेकां वा कपिलां नर: ।
सममेतत्पुरा प्राह ब्रह्मा लोक पितामह: ।।६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तृणादेकानि यो दद्यात्क्षुधितेन गवाह्निकम् ।
गोमेधस्य फलँ दिव्यं लभते मानवोत्तमम् ।।७

इसके उपरान्त मैं उत्तम कपिला धेनु के विषय में बतलाता हूँ जिसके प्रदान करने से मनुष्य अत्युत्तम विष्णु लोक में प्रपाण किया करता है ।।१।। हे भामिनि ! कपिला गौ के शिर और ग्रीव सब तीर्थं हैं ये समस्त तीर्थ पितामह के आदेश से ही वहां पर निवास किया करते हैं—यह निश्चत है ।।२।। जो मनुष्य प्रातः काल की वेला में उठकर कपिला गौ के गले और मस्तक से च्युत हुए जलको शिर से बन्दना किया करता हे वह शुचि हो जाता है ।।३।। वह मनुष्य उस पुण्य जल से उसी क्षण में अपने किल्विषों से दग्ध कर दिया करता है। तीस वर्षों के समय में किये हुए पापों को ईंधन को अग्नि के ही समान दहन कर दिया करता है ।।४।। प्रभात में उठकर जो मनुष्य उन कपिला गौओं की प्रदाक्षिणा किया करता है हे वसुन्धरे ! उस परिक्रमा का यही फल होता है जो सम्पूर्ण वसुन्धरा की परिक्रमा का फल होता है ।।५।। एक ओर तो सहस्र गौओं के दान का पुण्य फल है और दूसरी ओर एक ही कपिल गौ के दान का पुण्य है—ये दोनों समान ही होते हैं। यह सर्वथा सत्य है और इसको पहिले लोक पितामह ब्रह्माजी ने स्वयं ही अपने मुख से कहा था ।।६।। जो क्षुधित गौओं को नित्य हीं तृणादिक दिया करता है वह मानव परम दिव्य गो मेध यज्ञ का फल प्राप्त किया करता है। जो परम उत्तम होता है ।।७।।

सुवर्ण कपिला पूर्वं द्वितीया गौर पिंगला ।
तृतोया चैव रक्ताक्षी चतुर्थी गुड पिंगला ।।८
पंचमी वहुवर्णा स्यात्षष्ठी च श्वेतपिङ्गला ।
सप्तमी श्वेत पिंगाक्षी त्वष्टमी कृष्ण पिंगला ।।९
नवमी पाटलाज्ञया दशमी पुच्छ पिंगला ।
एकादशी खुरश्वेता त्वेतासां सर्व लक्षणाः ।।१०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कीर्त्तिकी में जिसका दान करके राहु से शशांक ही भाँति मानव पापों से मुक्त हो जाया करता है ॥३०॥ हे श्रेष्ठ राजन् ! दश गौओं के प्रदाम करने से जो पुण्य फल होता है वह सम्पूर्ण फल श्रीदियों की धेनु के दान करने से हुआ करता है ॥३१॥ उसका पूर्व की ही भाँति अर्चन करके और दीपादिक करके पुण्य काल की सम्प्राप्ति करके गृही स्नान करे और शुक्ल वस्त्रों को धारण करे ॥३२॥ तीन वार परिक्रमा करके दण्ड के समान ही उसको प्रणाम करना चाहिए । फिर प्रार्थना करे--हे विप्र ! आप महान् भाग्य वाले हैं और वेदों तथा वेदों के अङ्ग शास्त्रों में पारङ्गत हैं । हे द्विजोत्तम ! यह मेरे द्वारा दी हुई धेन को ग्रहण कीजिए और मेरे ऊपर प्रसन्नता कीजिए ॥३३॥

१११–कपिला धेनु माहात्म्य

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कपिलां धेनुमुत्तमम् ।
यत् प्रदानान्नरो याति विष्णु लोकमनुत्तमम् ॥१
कपिलायाः शिरोग्रीवा सर्व तीर्थानि भामिनि ।
पितामह नियोगाच्च निवसन्ति हि निश्चयः ॥२
प्रातरुत्थाय यो मर्त्यः कपिला गलमस्तकात् ।
च्युतं तु भक्त्या पानीयं शिरसा वन्दते शुचिः ॥३
स तेन पुण्यतोयेन तत्क्षणाद् दग्धा किल्विषः ।
त्रिशद् वर्षं कृतं पापं दहत्यग्निरिवेन्धनम् ॥४
कल्यमुत्थाय यो मर्त्यः कुर्यात्तासां प्रदक्षिणम् ।
प्रदक्षिणीकृता तेन पृथिवी स्याद्वसुन्धरे ॥५
गोसहस्रं च यो दद्यादेकां वा कपिलां नरः ।
सममेतत्पुरा प्राह ब्रह्मा लोक पितामहः ॥६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तृणादेकानि यो दद्यात्क्षुधितेन गवाह्निकम् ।
गोमेधस्य फलँ दिव्यं लभते मानवोत्तमम् ।।७

इसके उपरान्त मैं उत्तम कपिला धेनु के विषय में बतलाता हूँ जिसके प्रदान करने से मनुष्य अत्युत्तम विष्णु लोक में प्रपाण किया करता है ।।१।। हे भामिनि ! कपिला गौ के शिर और ग्रीव सब तीर्थ हैं ये समस्त तीर्थ पितामह के आदेश से ही वहां पर निवास किया करते हैं—यह निश्चत है ।।२।। जो मनुष्य प्रातः काल की वेला में उठकर कपिला गौ के गले और मस्तक से च्युत हुए जलको शिर से बन्दना किया करता हे वह शुचि हो जाता है ।।३।। वह मनुष्य उस पुण्य जल से उसी क्षण में अपने किल्विषों से दग्ध कर दिया करता है। तीस वर्षों के समय में किये हुए पापों को ईंधन को अग्नि के ही समान दहन कर दिया करता है ।।४।। प्रभात में उठकर जो मनुष्य उन कपिला गौओं की प्रदा-क्षिणा किया करता है हे वसुन्धरे ! उस परिक्रमा का यही फल होता है जो सम्पूर्ण वसुन्धरा की परिक्रमा का फल होता है ।।५।। एक ओर तो सहस्र गौओं के दान का पुण्य फल है और दूसरी ओर एक ही कपिल गौ के दान का पुण्य है—ये दोनों समान ही होते हैं। यह सर्वथा सत्य है और इसको पहिले लोक पितामह ब्रह्माजी ने स्वयं ही अपने मुख से कहा था ।।६।। जो क्षुधित गौओं को नित्य हीं तृणादिक दिया करता है वह मानव परम दिव्य गो मेध यज्ञ का फल प्राप्त किया करता है। जो परम उत्तम होता है ।।७।।

सुवर्ण कपिला पूर्वं द्वितीया गौर पिंगला ।
तृतोया चैंव रक्ताक्षो चतुर्थी गुड पिंगला ।।८
पंचमी वहुवर्णा स्यात्षष्ठी च श्वेतपिङ्गला ।
सप्तमी श्वेत पिंगाक्षी त्वष्टमी कृष्ण पिंगला ।।९
नवमी पाटलाज्ञया दशमी पुच्छ पिंगला ।
एकादशी खुरश्वेता त्वेतासां सर्व लक्षणाः ।।१०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सर्व लक्षण संयुक्ता सर्वालंकृत सुन्दरी ।
ब्राह्मणाय प्रदातव्या मुक्ति मुक्ति प्रदायिनी ॥११

सबसे पूर्व और उत्तम सुवर्ण कपिला गौ होती है । गोरे और पिङ्गला दूसरी श्रेणी की गौ हुआ करती है । तृतीय रक्ताक्षी होती है । चतुर्थ श्रेणी की गौ गुड पिङ्गला हुआ करती है ॥८॥ बहुत वर्णों वाली धेनु पाँचवी है । और श्वेत पिङ्गला छटवी होती है । श्वेत पिङ्गाक्षी गौ सातवीं श्रेणी की होती है । आठवीं श्रेणी की गौ कृष्ण पिङ्गला होती है ॥६॥ नवमी पारलाक्षी है—दशवीं प्रच्छ पिङ्गला होती है । ग्यारहवीं खुर श्वेता है—इन सबके लक्षणों वाली सर्व लक्षणों से युक्त सर्वालंकक्कृत सुन्दरी ब्राह्मण के लिये दान में देनी चाहिए जो मुक्ति और भुक्ति दोनों के प्रदान करने वाली हुआ करती हैं ॥१०॥११॥

११२–गोदान, कुम्भदान और पुराण प्रशंसा

या त्वया कपिला प्रोक्ता पूर्व मुत्पादिता प्रभो ।
होम धेनुः सदा पुण्या सा ज्ञेया कति लक्षणा ।
कियत्यः कपिला प्रोक्ताः स्वयमेव स्वयम्भुवा ॥१
प्रसूय माना दानेन किं पुण्यं स्याच्च माधव ।
एत दिच्छा म्यहं श्रोतुं विस्तरेण जगद्गुरो ॥२
कपिला ह्यग्नि होत्रार्थे यज्ञार्थे च वरानने ।
उद्धृत्य सर्व तेजोभिः ब्रह्मणा निर्मिता पुरा । ३
पवित्राणां पवित्रं च मङ्गला नां च मङ्गलम् ।
पुण्या नां परमं पुण्यं कपिला च वसुन्धरे ॥४
तपसस्तप एवाग्र्यं व्रतानां व्रत मुत्तमम् ।
दानानामुत्तमं दानं निधीनां ह्ये तद क्षयम् ॥५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पृथिव्यां यानि तीर्थानि गुह्याण्यायत नानि च ।
पवित्राणि च पुण्यानि सर्व लोकेषु सुन्दरि ॥६
होतव्यान्यग्नि होत्राणि सायं प्रातः द्विजानिभिः ।
कपिलाया घृतेनेह दध्ना क्षीरेण वा पुनः ॥७

जो आपने कपिला बतलाई है हे प्रभो ! वह पूर्व में उत्पादित हुई है। होम धेनु सदा पुण्या होती है। वह कितने लक्षणों वाली समझनी चाहिए। कपिलायें कितनी गयी हैं जो स्वयम्भू ने स्वयं ही बतलाई हैं ॥१॥ हे माधव ! उसके प्रसूर्यभान हो जाने पर दान देने से क्या पुण्य होता है। हे गुरो ! इसके श्रवण करने की मैं इच्छा रखता हूँ। आप इसका विस्तार से वर्णन कीजिये। आप तो सम्पूर्ण जगत के गुरु हैं ॥२॥ हे वरानने ! कपिला गौ अग्नि होत्र के लिये और यज्ञ के लिये होती है। पहिले समय में ब्रह्माजी ने सब तेजों से उद्वृत करके ही इसका निर्माण किया है ॥३॥ हे वसुन्धरे ! कपिला का महत्त्व बहुत अधिक होता है। यहाँ सब पवित्रों में पवित्र है—समस्त मङ्गलों की मङ्गल है—पुण्यों की परम पुण्य है—यह कपिला ऐसी ही होती है। ॥४॥ यह सम्पूर्ण तपों की उत्तम तपश्चर्या है--तथा व्रतों में उत्तम व्रत है। दानों में यह सर्वोत्तम दान है और यह विधियों में अक्षय विधि है। इस भू मन्डल में जो भी तीर्थ हैं तथा परम गुह्य जायतन हैं। हे सुन्दरि ! सब लोकों में पवित्र और पुण्य हैं और जो हवन करने के योग्य अग्नि होत्र हैं जिनको द्विजाति गण सोमङ्काल और प्रातःकाल में किया करते हैं वे सब कपिता के ही घृत से—दूध से और दधि से ही सम्पन्न हुआ करते हैं ॥६॥७॥

जुह्वते ह्यग्नि होत्राणि मन्त्रैश्च विविधैः सदा ।
पूजयन्नतिथींश्चैव परां भक्ति मुपागताः ॥८
कपिला या पिङ्गलाक्षी सर्व सौख्य प्रदायिनी ।
सिद्धि बुद्धि प्रदा धेनुः कपिलानन्त रूपिणी ॥९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पूर्वोक्ता मास्तु कपिला सर्व लक्षण लक्षिताः ।
सर्वा ह्येता महाभागास्तारयन्ति नं संशयः ।।१०
संगमेषु प्रशस्ताश्च सर्व पाप विनाशिनाः ।
अग्नि पुच्छा अग्नि मुखी अग्नि लोमानल प्रभा ।।११
एकस्य गोप्रदानस्य सहस्रांशेन पूर्यते ।
किमन्यैः वहुभिर्दानैः कोटि संख्यान विस्तरैं ।।१२
श्रोत्रियाय दरिद्राय सु वृत्ता याहिता ग्नये ।
आसन्न प्रसवां धेनु दानार्थं प्रतिपालयेत् ।।१३
कपिलार्द्ध प्रसूता वै दातव्यां च, द्विजन्मने ।
जायमानस्य वत्सस्य मुखं योन्यां प्रदृश्यते ।।१४

अनेक मन्त्रों के द्वारा सदा अग्नि होत्रों में होम किया जाता है और परा भक्ति को प्राप्त होते हुए अतिथियों का भी अर्चन किया जाया करता है ।।८।। जो पिङ्गलाक्षी, कपिला होती है वह सम्पूर्ण सुखों का प्रदान करने वाली होती है । अनन्त रूपों वाली कपिला सिद्धि और बुद्धि का प्रदान करने वाला है ।।९।। पूर्व में सभी लक्षणों से लक्षित कपिलायें कही गयी हैं । ये सब महाभागा हैं और ये तार दिया करती हैं—इसमें लेश मात्र भी संशय नहीं है ।।१०।। संयमों में वे प्रशस्त हैं और सब पापों के विनाश करने वाली हैं । ये अग्नि पुच्छ हैं—अग्नि मुखी हैं और अग्नि, सोम तथा अनल की प्रथा वाली होती है ।।११।। ऐसी एक ही गौ के प्रदान सहस्र अंश से पूर्ण की जाया करती है । और बहुत से दानों से फिर क्या प्रयोजन है जो करोड़ों की संख्या के विस्तार वाले हैं ।। १२ ।। यह दान भी जो विप्र श्रोत्रिय हो—दरिद्र हो सुन्दर चरित्र वाला हो और अहिताग्नि हो उसको ही देना चाहिए । दान के लिए जो आसन्न प्रसव वाली हो अर्थात् जो निकट समय में ही व्याने वाली हो उसी धेनु का दान देना चाहिए ।।१३।। और जो अर्द्ध प्रसूता कपिला हो उसी को ब्राह्मण के लिये दान में देना चाहिये । जिस व्याने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाली गौ की योनि में वत्स का मुख गौ की योनि में दिखलाई दिया करता है उसके दान करने का बड़ा भारी माहात्म्य होता हैं ॥१४॥

इदं रहस्यं राजेन्द्र वराहेण पुरातनम् ।
धरण्यै कथितं राजन् धेनु माहात्म्य मुत्तमम् ॥१५
मया ते कथितं सर्वं सर्व पाप प्रणाशनम् ।
द्वादश्यां माघ मासस्य शुक्लायां तिल धेनुदः ॥१६
सर्व काम समृद्धार्थो वैष्णवं पदमाप्नुयात् ।
द्वादश्यां श्रावेण मासि शुक्लायां राज सत्तम् ॥१७
प्रत्यक्ष धेनुः दातव्या सहिरण्या नृपोत्तम ।
सर्वदा सर्व धेनू ना प्रदानं राजसत्तम ॥१८
सर्व पाप प्रशमनं मुक्ति मुक्ति प्रदायकम् ।
एतत्ते सर्व माख्यातं समासाद् बहु विस्तरम् ॥१९
इयं ते कथिता देवि संहिता सर्व कामिका ।
वराहाख्या वरारोहे सर्व पातक नाशिनी ।
सर्वज्ञा दुत्थिता चेयं ततो ब्रह्मा बुबोध ह ॥२०
ब्रह्मा स्व सूनवे प्रादात् पुलस्त्याय महात्मने ।
सोऽपि रामाय च प्रादाद् भार्गवाय महात्मने ॥२१

हे राजेन्द्र ! यही रहस्य जो परम पुरातन है वराह प्रभु ने हे राजन् ! धरणी के लिये धेनु का उत्तम माहात्म्य कहा था ॥१५॥ और मैंने यह सम्पूर्ण आपके सामने कह दिया है जो समस्त पापों के विनाश कर देने वाला होता है। माघ मास की द्वादशीं तिथि में जो शुक्ल पक्ष की हो तिल की धेनु का दान करने वाला है ॥१६॥ वह समस्त काम-नाओं से समृद्ध अर्थों वाला होता है और अन्त में वैष्णव पद को प्राप्त किया करता है। हे राज सत्तम ! श्रावण मास की शुक्ल द्वादशी में हे नृपोत्तम ! प्रत्यक्ष धेनु का दान करना चाहिए जो सुवर्ण से समायुक्त होनी चाहिए। हे श्रेष्ठ राजन् ! सर्वदा ही सब धेनुओं का दान प्रदान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बहुत उत्तम होता है ।।१७—१८।। यह सभी पुराने पापों का विनाश करने वाला तथा सांसारिक समस्त सुखों का उपभोग तथा युक्ति का प्रदान करने वाला हुआ करता है । यह सभी मैंने बहुत विस्तृत विषय को भी अतीव संक्षेप से आपके सामने कह दिया है।। १६ ।। हे वराख्ये ! हे वरारोहे ! हे वि ! हित के साथ वाली और सर्व कामिका अर्थात् सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली यह आपको कह दी गयीं है । यह सब पातकों के विनाश कर देने वाली हैं । यह सर्वज्ञ से उत्थित हुई थीं । इसके अनन्तर इसका ज्ञान ब्रह्माजी ने प्राप्त किया था ।।२०।। ब्रह्माजी ने अपने पुत्र के लिए दी थी जों मैंने आपके सामने कीर्त्तित की है । ब्रह्माजी के पुत्र ने श्रीराम को दी थी । ब्रह्माजी के पुत्र का नाम पुलस्त्य था । जो महान् आत्मा वाले थे ।।२१।।

अमावपि स्वशिष्याय प्रादादुग्राय धारिणि ।
उग्रोऽपि मनवे प्रादादेष वः कीर्तितो मया ।।२२
सम्वन्ध पूर्व कल्पीयो द्वितीयं शृणु सम्प्रतम् ।
सर्वज्ञा ल्लब्धवा नास्मि त्वं च मत्तो धराधरे ।।२३
त्वत्तश्च तपसा सिद्धा वेत्स्यन्ते कपिलादयः ।
क्रमेण यावद् व्यासेण ज्ञात मेतद् भविष्यति ।।२४
तस्यापि शिष्यो भविता नाम्ना वै रोम हर्षणिः ।
असौ शुनक पुत्राय कथयिष्यति नान्यथा ।।२५
अष्टादश पुराणानि वेद द्वैपायनो गुरुः ।
ब्राह्मं पद्मं वैष्णवं च शैव भागवतं तथा ।।२६
तथान्यं नारदीयं च मार्कण्डेयं च सप्तमम् ।
आग्नेय मष्टमं प्रोक्तं भविष्यं नवमं तथा ।।२७

हे धरिणि ! इसने भी अपने शिष्य उग्र को दी थी । उग्र ने भी मनु को दी थी जिसको मैंने आपसे कहा है ।।२२।। यह पूर्व कल्प का सम्वन्ध है । अव दूसरे का आप श्रवण कीजिए । हे धराधरे । सर्वज्ञ से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मैंने प्राप्त किया है और मुझसे आपने प्राप्त किया है ।।२३।। और आपसे कपिल आदि सिद्ध जो तप द्वारा हुए हैं इसका ज्ञान प्राप्य करेगे । क्रम से व्यासदेव के द्वारा यह ज्ञात होगा ।। २४ ।। उनका भी शिष्य रोम हर्षणि नाम वाला होगा । यह शनक पुत्र के लिये कहेगा अन्यथा नहीं ।।२५।। द्वैपायन गुरु अठारह पुराणों को जानते हैं । अब पुराणों के नाम बताये जाते हैं---ब्राह्म—पद्म—वैष्णव—शैव—भागवत ।।२६।। अन्य नारदीय है और सातवां मार्कण्डेय है । आग्नेय अर्थात् अग्नि पुराण आठवां कहा गया है भविष्य नौवां पुराण है ।।२७।।

दशमं ब्रह्मवैवर्तं लैङ्गमेकादशं स्मृतम् ।
वाराहं द्वादशं प्रोक्तं स्कान्दं चापि त्रयोदशम् ।।२८
चतुर्दशं वामनकं कौर्मं पंचदशं स्मृतम् ।
मात्स्यं च गारुडं चैव ब्रह्माण्डं च ततः परम ।।२९
य एतत्पाठयेद् भक्त्या कार्तिक्यां द्वादशी दिने ।
तस्य नूनं भवेत्पुत्रो ह्यपुत्रस्यापि धारिणि ।।३०
यस्येदं तिष्ठते गेहे लिखितं पूज्यते सदा ।
तस्य नारायणो देवः स्वयं तिष्ठति धारिणि ।।३१

दशवां ब्रह्मवैवर्त्त है और लिङ्ग पुराण ग्यारहवां है । वाराह बारहवाँ है । और स्कन्द पुराण तेरहवाँ है ।।२८।। चौदहवाँ वामन पुराण है । कर्म पुराण पन्द्रहवाँ है । मत्स्य—गारुड़ और ब्रह्माण्ड पुराण है । ।।२९।। जो इसको कार्त्तिक मास मे द्वादशी तिथि में भक्तिभाव से पढ़ता है इसके यहाँ निश्चय हीं पुत्र का जन्म होता है । हे धारिणि ! चाहे वह अपुत्र भी क्यों न होवे ।।३०।। जिसके घर में यह स्थित रहा करता है जो लिखा हुआ होवे और सदा इसकी पूजा कीं जाया करती है । हे धारिणि ! उसके घर में स्वयं नारायण देव विराजमान रहा करते है ।। ३१ ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

११३–पृथ्वी द्वारा विष्णु भगवान की स्तुति

कल्पे कल्पे भवानेव मां सयुद्धरते भवान् ।
न वाहुश्चेष्टते मूर्तिर्मादृशीं गां च केशव ॥१
स तेन सन्त्विवतायां वै पृथिव्यां यः समागतः ।
सनत्कुमारस्तत्क्षेत्रे दृष्ट्वा तां संस्थितां महीम् ॥२
स्वस्ति वाच्याह पुण्याग्र प्रत्युवाच वसुन्धराम् ।
य दृष्ट्वा वर्द्ध से देवि त्वं च यस्यसि माधवि ॥३
विष्णु ना धार्य माणा च किं त्वया दृष्टमद् भुतम् ।
एतदा चक्ष्व तत्त्वेन यत्तो हरि मुखात् श्रुतम् ॥४
ब्रह्मपुत्र वचः श्रुत्वा पृथिवी वाक्यम ब्रवीत् ।
यद् गुह्यं स मया पृष्टो यच्च मे सम्प्र भाषितम् ॥५
शृणु तत्त्वेन विप्रेन्द्र गुह्य धर्मं महौजसम् ।
भयवत्प्रोक्त धर्मेषु धद् गुह्यं कथयाम्यहम् ॥६
तेन मे कथितं ह्येतत्संसारात्तु विमोक्षणम् ।
विष्णु भक्तेन यत्कार्यं पत्किया परि तिष्ठता ॥७

आप कल्प-कल्प में मेरा समुद्धार किया करते हैं । हे केशव ! बाहु चेष्टा नहीं करता है । और मूर्त्ति मुझ जैसी गौ हैं ॥१॥ वह उसके साथ इतमें होवें जो पृथिवी में समागत हुआ है । उस क्षेत्र में सनत्कुमार जी ने उस मही को संस्थित देखा था । पुष्पाग्र में स्वस्ति वाचन करके वसुन्धरा के प्रति कहा था । हे देवि ! जिनका दर्शन करके आप वर्धित होती हैं हे माधवि ? और आप गमन करेंगीं ॥ २—३ ॥ और आपको जब भगवान् विष्णु ने धारण किया था तब धार्ममाणा होती हुई आपने क्या अद्भुत बात देखी थी । इसको ही तात्त्विक रूप से आप कहिये जो भी कुछ आपने श्री हरि भगवान् के मुख से सुना है ॥ ४ ॥ ब्रह्माजी के पुत्र के इस वचन का श्रवण करके पृथिवी ने यह वाक्य कहा था । जो भी कुछ गुह्य था वह ही मैंने पूछा था और जो भी मुझे कहा था । हे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विप्रेन्द्र ! उस गुह्य धर्म को आप सुनिए जो महान् ओज वाला है। भगवन् के द्वारा कहे हुए धर्मों में जो भी गुह्य है उसको मैं कहती हूं। ॥५—६॥ उन्होंने मुझसे यही कहा था जो संसार से विभुक्ति होती है। क्रिया के करने में परिपूर्णतया स्थित विष्णु के भक्त के द्वारा जो करना चाहिए ॥७॥

उवाच परमं गुह्यं धर्माणां व्याप्त निश्चयम् ।
अयं धर्मो मया ह्येतत् श्रुते धर्मे सनातने ॥८
ततो महीवचः श्रुत्वा ब्रह्म पुत्रो महातपाः ।
कोकामुखे मम क्षेत्रं जपन्त ब्रह्मवादिनः ॥९
तान्सर्वा नानयामा यत्र देवी व्यवस्थिता ।
सनत्कुमारः पूतात्मा प्रत्युवाच महीं प्रति ॥१०
यन्यता पूर्व मुक्तासि कथंयस्व वरानने ।
अप्रमेय गतिं चैव धर्म माचक्ष्व तत्त्वतः ॥११
ततस्तस्य वचः श्रुत्वा प्रणम्य ऋषिपुंगवम् ।
उवाच परम प्रीता धात्री मधुरया गिरा ॥१२
शृण्वन्तु ऋषयः सर्वे यत्तद्विष्णु मुखात् श्रुतम् ।
वाढमित्येव तां देवि स्वस्ति ब्रूहीति सोऽब्रवीत् ॥१३
नष्ट चन्द्रानिले लोके नष्ट भास्कर तारके ।
स्तम्भिताश्च दिशः सर्वा न प्राजायत किञ्चन ॥१४

धर्मों में जो व्याप्त निश्चय वाला परम गुह्य है वही कहा था। यह धर्म मैंने सनातन धर्म में श्रुत किया है ॥८॥ इसके अनन्तर महीदेवी के इस वचन को सुनकर महान् तपस्वी ब्रह्माजी के पुत्र के कोका मुख में जो मेरा क्षेत्र है वहाँ पर जाप करते हुए ब्रह्म वादियों वहाँ पर ले आये थे जहाँ पर देवी व्यस्थित थी ॥९॥ परम पूत आत्मा वाले सनत्कुमार जी ने उस महीं के प्रति कहा था ॥१०॥ हे वरानने ! जो भी मैंने आप से पूर्व में कहा था उसको अब आप मुझसे कहिए। अप्रमेय

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गति वाले धर्म को आप तात्विक रूप से कहिए ।।११।। इसके अनन्तर उनके वचन का श्रवण करके परम श्रेष्ठ ऋषि को उसने सर्व प्रथम प्रणाम किया था और फिर परमाधिक प्रसन्न हो कर मधुर वाणी के द्वारा यह बोली थी ।।१२।। हे ऋषिगणों ! आप सभी लोग अब श्रवण कीजिए जो भी कुछ मैंने विष्णु भगवान् के मुख से सुना हैं। हे देवि ! बहुत अच्छा, उस देवी से कल्याणकहा था आपका होवे। उन्होंने यही कहा था कि आप बोलिये ।।१३।। लोक में चन्द्र—वायु—भास्कर और तारों के नष्ट हो जाने पर सभो दिशायें एकद मस्तम्भित हो गयी थीं और उस समय में कुछ भी नहीं जाना जाता था ।।१४

न वाति पवनस्तत्र नैव चाग्निर्न विद्युतः ।
न किंचित्तत्र विद्येन न तारा न च राशयः ।।१५
वेदेषु चैव नष्टेसु मत्स्यो भूत्वा रसातलम् ।
प्रविश्य तानथोत्कृष्य व्रह्मणे दत्तवानसि ।।१६
अन्यद् देवः कूर्म रूपस्त्वं समुद्रस्य मन्थने ।
धृतवानसि कौर्मेण मन्दरं मधु सूदन ।।१७
पुनर्वराह रूपेण मां गच्छन्तीं रसातले ।
उज्जहारैक दंष्ट्रेण भवानेव महार्ण वात् ।।१८
अन्यद्धिरण्यकशिपुः वरदानेन र्दपितः ।
असावपि नृसिहेण वपुरास्थाय नाशितः ।।१९
पुनर्निःक्षत्र रूपेण त्वयाऽहं विकृता पुरा ।
जामदग्न्येन रामेण त्वया दृष्टा सकृत्प्रभो ।।२०
पुनश्च रावणो रक्षः क्षपितं स्वे न तेजसा ।
वलिश्च वद्धो भगवन्त्वया वामन रूपिणा ।।२१

वहाँ पर न तो वायु ही वहन करता था और न अग्नि था और न विद्यु त ही थी। वहाँ पर कुछ भी नहीं था न तो तारागण ही थे ओर न राशियाँ ही थीं ।। १५ ।। सब वेदों के नष्ट हो जाने पर भगवान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मत्स्य होकर रसातल में प्रवेश कर गये थे और उनको उत्कर्ष करके उन्होंने ब्रह्माजी को दिया था ।।१६।। हे मधुसूदन ! आप अन्य कूर्म के रूप वाले हुए थे जो समुद्र के मन्थन के समय मैं कूर्म रूप से मन्दराचल को धारण किया था ।।१७।। फिर वराह के रूप से रसातल में जाती हुई मुझको अपनी एक दाढ़ से मेरा उद्धार किया था और आपने महासागर से मुझे ऊपर उठाया था ।। १८ ।। और यह भी है कि हिरण्य कशिपु वरदान पाकर के बहुत ही घमण्डा हो गया था । इस दैत्य का भी आपने नृसिंह स्वरूप धारण करके विनाश किया था ।। १६ ।। हे प्रभो ! फिर निःक्षत्र रूप से पहिले आपके द्वारा ही मैं विकृत हो गई थी । तब जमदग्नि के पुत्र राम के द्वारा आपके द्वारा एक वार देखी गयी थी । फिर रावण राक्षस को अपने तेज से नष्ट किया था और वामन रूप से कलि को बाँधा था । यह भी आपने ही किया था ।।१६—२१।।

न च जानाम्यहं देव तप किंचिद्धि चेष्टितम् ।
उद्धृत्य मां कथं देव सृजसे किं च कारणम् ।।२२
सृष्ट्वा किमादिशः सर्वान् प्राज्ञायत किंचन ।
न वाति पवनस्तत्र न चैवग्नि ज्वलन्त्यपि ।।२३
अंश वश्चन विद्यन्तेन नक्षत्रा ववा, ग्रहाः ।
न चैवङ्गारकस्तत्र न शुक्रो न बृहस्पतिः ।।२४
शनैश्चरो बुधो नात्र न चेन्द्रो धन दो यमः ।
वरुणोऽपि न विद्येत नान्ये केचिद दिवौकसः ।।२५
वर्जपि त्वात्र त्रीन्देवान् ब्रह्म विष्णु महेश्वरान् ।
पृथिवी भार सन्तप्ता ब्रह्माणं शरणं गता ।।२६
गत्त्वा च शरणं देवी दैन्यं वदति माधवी ।
प्रसीद मम देवेन्द्र मग्नाहं भार पीडिता ।।२७
स पर्वत वनै सार्द्धं मां तारय पितामह ।
पृथिव्या वचनं श्रुत्वा ब्रह्मा लोक पितामहः ।।२८

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे देव ! मैं आपके विचेष्ठित कुछ भी नहीं जानती हूँ । हे देव ! आप मुझ को किस प्रकार से उद्धृत किया था और कैसे सृजन किया करते हैं—इसमें क्या कारण है? ॥२२॥ आपने सृजन करके सबको क्या आदेश दिया था—यह कुछ भी नहीं जाना गया है । वहां पर वायु वहन नहीं करता है और अग्नि भी वहां नहीं जला करती है ॥२३॥ अंशु भी वहाँ नहीं हैं और न वहां नक्षत्र है और न ग्रह ही हैं । वहां पर अहङ्कार भी नहीं है और न शुक्र है तथा न वृहस्पति ही हैं ॥२४॥ शनीचर और बुध नहीं है और न इन्द्र है तथा न धनद और यम ही हैं । वरुण भी वहां नहीं है अन्य देवगण भी कोई नहीं हैं ॥२५॥ केवल ये तीन देवों को ब्रह्मा-विष्णु और महेश्वर ही हैं । इनको छोड़कर अन्य कोई भी नहीं है । सत्र पृथिवी के भार से सन्तप्त होकर ब्रह्माजी के पास शरण में गये थे ॥२६॥ देवी शरणा गति में पहुँचकर माधवी अपनी ही दीनता को कहती है । उसने प्रार्थना की थी कि हे देवेन्द्र ! आप प्रसन्न होइए । मेरे ऊपर बड़ा भार है उससे मैं पीड़ित हूं और मग्न हूँ ॥२७॥ हे पितामह ! पर्वतों और वनों के सहित मेरा उद्धार कीजिए । पृथिवी के इस वचन का श्रवण करके लोकों के पितामह ब्रह्माजी कुछ देर तक चिन्तन करते रहे थे ॥२८॥

मुहूर्तं ध्यान मास्थाय पृथिवीं तामुवाच ह ।
नाहं तारिपितुं शक्तो विषमस्यां वसुन्धरे ॥२९
लोक नाथं सुर श्रेष्ठ मादिकतोर मंजसा ।
लोकेशं धन्विनं श्रेष्ठं याहि माया करण्डकम् ॥३०
सर्वास्तार पितुं शक्तः किं पुनस्त्वां वसुन्धरे ।
कृतां जलि पुटा देवी प्रसादयति माधवम् ॥
अहं भार समायुक्ता ब्रह्माणं शरणं गता ॥३१
प्रत्याख्याता भगवता तेना प्युक्त मिदं वचः ।
नाहं तारयितुं शक्तः सुश्रोणि व्रज माधवम् ॥३२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स त्वां तारयितुं शक्तो मग्नासि यदि सागरे ।
प्रसीद मम देवेश लोक नाथ जगत्प्रभो ।।३३
भक्त्या त्वां शरणं यामि प्रसीद मम माधव ।
त्वमादित्यश्च चद्रश्च त्व ययो धनदस्तु वं ।।३४
वासवो वरुणश्चासि ह्यग्निर्मारुत एव च ।
अक्षरश्च क्षरश्चासि त्वं दिशो विदिशो भवान् ।।.५
मस्त्योः कूर्मो वराहश्च नरसिंहोऽसि वामनः ।
रामो रामश्च कृष्णाश्च बुद्धः कल्की महात्म वान् ।।३६

एक मुहूर्त्त तक ध्यान में समास्थित होकर उन्होंने उस पृथिवी से कहा था । हे वसुन्धरे ! बिषय में स्थित आपके तारण करने मे मैं समर्थ नहीं हूँ ।।२६।। लोकों के नाथ--सुरों में परमश्रेष्ठ—आदि कर्त्ताध्वन्वी —लोकों के ईश—परमश्रेष्ठ और माया के करण्डव भगवान् की शरण में शीघ्र ही चली जाओं ।।३०।। हे वसुन्धरे ! वे तो सभी का उद्धार करने में समर्थ हैं फिर तुम्हारे उद्धार करने की बात ही क्या है । वह देवी अपने करों की अग्नलि को पुरित करके माधव को प्रसन्न करतीं है । हे भगवन् ! मैं भार से युक्त होकर ब्रह्माजी की शरण में गयी थी ।।३१।। उन्होंने मेरा प्रत्याख्यान कर दिया है अर्थात् मेरी विनती की कुछ भी सुनाई नहीं की है । उन भगवान् ने यही वचन कहा है कि मैं तारण करने में समर्थ नहीं हूं अतएव हे सुश्रोणि ! माधव भगवान् की शरण म गमन करो ।।३२।। यदि आप महासागर में मान हैं तो वे ही आपका तारण करने की शक्ति रखते हैं । हे देवेश्वर ! आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइए । आप तो लोकों के नाथ हैं और आप जगत् प्रभु हैं ।।३३।। हे माधव ! मैं अत्याधिक भक्ति के भाव से आपकी शरणागति में प्राप्त हो रही हूँ आप मेरे ऊपर कृपया प्रसन्न होइये । आप ही भुवनभास्कर हैं और आप ही चन्द्र—यम और धनद हैं ।।३४।। आप ही इन्द्रदेव—वरुण —अग्नि और मारुत हैं । आप अक्षर हैं और क्षर भी हैं । आप ही नर-

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सिंह और वामन हैं । आप ही दिशाऐं और त्रिदिशाऐं हैं । मत्स्य-सूर्य वराह --बुद्ध और महान् आतमा वाले कल्की भी आप ही हैं ।।३५।।३६।।

एवं पश्यसि योगेन श्रूयते त्वं महायशाः ।
युगायुग सहस्राणि व्यतीतान्यसि सस्थितः ।।३७
सरितः सागराश्च त्वं पर्वताश्च महोरगाः ।।३८
त्वं मेरुर्मन्दरो विन्ध्यो मलयो दर्दु रो भवान् ।
हिमवान्निषधश्चासि सचक्रोऽसि वरायुधः ।।३९
धनुषां च पिनाकोऽसि सांख्ययोगोऽसि चोत्तमः ।
परम्परोऽसि-लोकानां नारायणः परायणः ।।४०
संक्षिप्तश्चैव विस्तारो गोप्ता यज्ञश्च शाश्वतः ।
यज्ञानां च महायज्ञो यूपानामसि संस्थितः ।।४१
वेदानां सामवेदोऽसि साङ्गो पाङ्गो महाव्रतः ।
गर्जनं वर्षणं चासि त्वं वेधा अनृता नृते ।।४२

इसी प्रकार से आप योग के द्वारा देखते हैं और महान् यश वाले आप सुनेजाया करते हैं । सहस्रों युगो पर युग व्यतीत हो गये हैं तथापि आप उसी रूप से संस्थित हैं ।।३७।। सभी सरिताऐं-समस्त सागर —पर्वत और महोरग सब आप ही तो हैं अर्थात् ये सभी आपके ही रूप हैं ।।३८।। आप ही मेरु—मन्दर—विन्ध्य—मलय और दर्दु र हैं । हिमवान् और निषध भी सचक्र तथा वर आयुध वाले आप ही हैं ।।३९।। धनुषों में पिनाक आपका ही स्वरूप है और आप ही उत्तम सोख्य योग हैं । आप लोकों के परम्पर-परायण साक्षात् नारायण हैं ।।४०।। आपका स्वरूप संक्षिप्त है और विस्तार भी आपका ही रूप है । आप गोप्ता और शाश्वत यज्ञ हैं । यज्ञों में आप महायज्ञ हैं और यूपों में आप संस्थित रहा करते हैं ।।४१।। आप वेदों में सामवेद हैं और आप साङ्गोपाङ्ग महाव्रत हैं । गर्जन वर्षण आप ही हैं । आप वेधा हैं तथा अनृत और अनृत भी आप ही हैं ।।४२।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अमृतं सृजसे विष्णो येन लोकान धारयत् ।
त्वं प्रीति स्त्वं परा प्रीतिः पुराणः पुरुषो भवान् ॥४३
ध्येया ध्येयं जगत्सर्वं यच्च किंचित् प्रवर्त्तते ।
सप्तानामपि लोकानां त्वं नाथस्त्वम संग्रहः ॥४४
त्वं च कालश्च मृत्युश्च त्वं भूतो भूत भावनः ।
आदि मध्यान्त रूपोऽसि मेधा बुद्धि स्मृति र्भवान् । ४५
आदित्यस्त्वं युगा वर्त्तास्त्वं तपस्वो महातपाः ।
अप्रमाणः प्रमेयोऽसि ऋषीणां च महानृषिः ॥४६
अनन्तश्चासि नागनां सर्पाणामसि तक्षकः ।
उद्वहः प्रवहश्च:सि वरुगे दारुणो भवान् ॥४७
क्रीडा विक्षेपण श्चासि गृहेषु गृह देवताः
सर्वात्मका सर्वगतो वर्द्धनो मन एव च ॥४८
गरुणोऽसि महात्मानं वहसि त्वं परायणः ।
दुन्दुभिः नेमिद्योषैश्च आकाश ममलो भवान ॥४६
मां त्वं मग्नानऽसि त्रातुं लोकनाथ इहार्हसि ।
आदि कालात्मकः कृष्णः सर्व लोकात्मको विभुः ॥५०

हे विष्णो ! आप अमृत का सृजन किया करते हैं जिससे लोकों को धारण किया करते हैं । आप प्रीति हैं तथा पर अप्रीति भी हैं । आप पुराण पुरुष हैं ॥४३॥ ध्येय और अध्येय सम्पूर्ण जगत् आप हैं तथा जो कुछ भी प्रवृत्त होता है वह सब आपका ही रूप है । सातों लोकों के आप ही नाथ हैं और आप असंग्रह हैं ॥४४॥ आप ही काल और मृत्यु हैं, आप ही भूत हैं तथा आप ही भूतों पर कृपा करने तथा पालन करने वाले हैं । आपका रूप ऐसा है जो आप आदि-मध्य और अन्त हैं । आप ही मेधा—बुद्धि—स्मृति हैं ॥४५॥ आप ही आदित्य हैं और युगावर्त्त हैं—आप तपस्वी तथा महातपा हैं । आप अप्रमाण और प्रमेय हैं और ऋषियों में महान् ऋषि हैं ॥४६॥ नागों में आप अनन्त है और सर्पों में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तक्षक हैं। आप उद्वह और प्रवह हैं तथा वरुण और वारुण आप हैं ।।४७।। आप क्रीड़ा विक्षेपण हैं तथा गृहों में गृहदेवता हैं आप सर्वात्मा से सर्वगत हैं तथा वर्द्धन और मन भी आप हैं ।।४८।। आप गरुड़ हैं जो परायणा होकर महान् आतमा वाले का वहन किया करते हैं। दुन्दुभि और नेमि घोषों के द्वारा आप आकाश में गमन करने वाले हैं ।।४९। आप महा-सागर में मग्न हुई मुझको उद्धार करने में योग्य होते हैं क्योंकि आप लोकों के नाथ हैं। आदिकालात्मक कृष्ण हैं और सर्व लोकात्मक विभु हैं ।।५०।।

११४-श्री वाराहावतार वर्णन

संस्तुयमानो भगवान्मुनिभिः मंत्र वादिभिः ।
तुष्टो नारायणो देवः केशवः परमो विभुः ।।१
ततो ध्यानं समास्थाप दिव्यं योग्यं च माधवः ।
मधुरं स्वरमास्थाय प्रत्युवाच वसुन्धराम् ।।२
तव देवि प्रियार्थाय भक्त्या यं त्वं व्तवस्थिता ।
कारयिष्यामि ते सर्वं यत्ते हृदि व्यवस्थितम् ।।३
अहं त्वां धारयिष्यामि सशैल वन काननाम् ।
स सागरां ससरितं सप्तद्वीप समन्विताम् ।।४
एवमा श्वास यित्वा तु वसुधां स च माधवः ।
रूपं संकल्पयामास वाराहं सुमहौजसम् ।।५
षट् सहस्रणि चोच्छ्रायो विस्तारेण पुनस्त्रयः ।
एवं नव सहस्राणि योजनानां विधाय च ।।६
वामया दंष्ट्रया गृह्य उज्जहार च मेदिनाम् ।
स पर्वत वनाकारां सप्तद्वीपां सपत्तनाम् ।।७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मन्त्र वादि मुनियों के द्वारा सभ्यह प्रकार से स्तुति किये हुए भगवान् नारायण देव परम प्रसन्न हुए थे जो केशव और परम विभु है ।।१।। इसके अनन्तर माधव प्रभु दिव्य—योग्य ध्यान में समास्थित होकर मधुर स्वर के द्वारा वसुन्धरा से बोले थे ।।२।। हे देवि ! आपके प्रिय करने के लिये भक्ति से व्यवस्थित कराऊँगा और उस सबको करूँगा जो भी तुम्हारे मन में व्यवस्थित है ।।३।। मैं स्वयं तुमको पर्वतो और वनों के सहित धारण करूँगा । सरिताओं-सागरों और सातों द्वीपों से समन्वित ही आपको धारण करूँगा ।।४।। उन माधव प्रभु ने इस रीति से उस वसुन्धरा समाश्वास देकर फिर अपने स्वरूप को सुमदान् ओज वाले वराहा का संकल्प न किया था ।।५।। छै सहस्र योजनों की ऊँचाई और तीन सहस्र योजनों का विस्तार से युक्त इस तरह से नौ सहस्र योजनों का किया था ।।६।। फिर बाँई दाढ़ से ग्रहण करके भूमि को ऊपर उठा लिया था जो पर्वत—वन—अकाश के साथ थी तथा सातों द्वीप और पत्तनों के सहित थीं ।।७।।

नगा विलग्ना: पतिता: केचिद्द्वज्ञान संश्रिता: ।
शोभन्ते च विचित्रांगमेघा: सन्ध्या गमे यथा ।।८
चन्द्र निर्मल सङ्काशा वराह मुख संस्थिता: ।
शोभन्ते चक्रपाणेश्च मृणालं कर्दमे यथा ।।९
एवं हि धार्य माणा सा पृथिवी सागरान्विता ।
वर्षाणां च सहस्रं हि वंज्र दंष्ट्रेण साधुना ।।१०
तस्यामेव तु कालस्य परिमाणं युगेषु च ।
एक सप्तति के कल्पे कर्दमोऽयं प्रजापति: ।।११
तत: पृथिव्या देवश्च भागवान्विष्णुर व्यय: ।
अन्योन्याभिमताश्चैव वाराहे कल्प उत्तमे ।।१२
सा गौ: स्तुति तं चैव पुराणं परम व्ययम् ।
योगेन परमेणैव शरणं चैव गच्छति ।।१३

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

आधार कीदृशो देव उपयोगश्च कीदृशः ।
काले काले च देवेश कर्मणश्चापि कीदृशः ।।१४

कुछ नग विलग्न थे तथा कुछ पतित थे और विज्ञान संश्रित थे । और वे सन्ध्या के आगम के समय में विचित्र अङ्गों वाले मेघों की ही भाँति शोभित हो रहे थे ।।८।। वे चन्द्रमा के समान निर्मल थे और वाराह भगवान के मुख में संस्थित थे । वे चक्रपाणि भगवात् के मुख में ऐसे ही शोभा पा रहे थे जैसे कीच में पड़ा हुआ भृणाल शोभित हुआ करता है ।।६।। इस प्रकार से सागरों से संयुत वह पृथिवी साधु वज्र दंष्ट्र के द्वारा धारण की गयी थी जो सहस्रों वर्षों तक रहीं थी ।।१०।। उसी में कालका परिमाण और युगों में इकहत्त वें कल्प में यह कदंम प्रजापति हैं । इसके उपरान्त अविनाशी भगवान् विष्णुदेव हैं । उत्तम वराह कल्प में अन्योन्य अभिमत हैं ।।११—१२।। वह गों उन पुराण—अव्यय परम का स्तवन करती है । और परम योग से ही शरणागति में गमन करती हैं ।। १३ ।। हे देव ! किस प्रकार का आधार है और कैसा उपयोग है । हे देवेश्वर ! और काल—काल में कर्म का कैसा है ।।१४।।

कीदृशा पश्चिमा संध्या कीदृशी ह्यर्धवाह्यतः ।
शेषाः समानास्त्वा देव ये तु कर्माणि कर्वते ।।१५
किन्तु संस्थापने देव आवाहन विसर्जने ।
अगुरुं गन्धधूपं प्रमाणं गृह्य से कथम् ।।१६
पश्चिमा पूर्व संध्यायां किं पुण्यं चापि तत्र वै ।
शरदि कीदृशं कर्म शिशिरे कर्म कीदृशम् ।।१७
वसन्ते कीदृशं कर्म ग्रीष्मे किं कर्म कारयेत् ।
प्रावृट् काले च किं कर्म वर्षान्ते किञ्च कारयेत् ।।१८
यानि तत्रोपभोग्यानि पुष्पाणि च फलानि च ।
कर्मण्यास्ते अकर्मण्या ये च शास्त्र बहिष्कृताः ।।१९
किं कर्मणा भोगवता तावद्गच्छन्ति माधवम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कथं कर्म न चान्नेषु अतिगच्छति कीदृशं ॥२०
अर्चायः किं प्रमाणं तु स्थापनं चापि कीदृशम् ।
परिमाणं कथं देव उपवासश्च कीदृशः ॥२१

पश्चिमा सन्ध्या कैसी है और अर्धव ह्य से किस प्रकार की है। हे देव ! आपको शेष समान हैं जो कर्मों को किया करते हैं ॥ १५ ॥ हे देव ! संस्थापन में--आवाहन--विसर्जन में अगुरु--गन्ध--धूप कैसे प्रमाण की ग्रहण की जाया करती ॥१६॥ वहाँ पर पश्चिमा और पूर्व सन्ध्या में क्या पुण्य है ? शरत्काल में कैसा कर्म्म होता है और शिशिर ऋतुयें में किस तरह कर्म हुआ करता है ॥१७॥ वसन्त ऋतु में कैसा कर्म होता हैं तथा ग्रीष्म में क्या कर्म कराना चाहिए। और प्रावृट् काल में अर्थात् वर्षा ऋतु में क्या कर्म्म होता है वर्षा के अन्त में क्या कराना चाहिए। ॥१८॥ वहाँ पर जो उप भोग करने के योग्य पुष्प और फल हैं। जो कर्मण्य है और जो अकर्म्मण्य है तथा शास्त्र वहिष्कृत हैं ॥१९॥ तब तक किस कर्म्म से जो भोग वाला है माधव के समीप में गमन किया करते हैं। किस प्रकार से कर्म नहीं है और अन्नों में कैसा अतिगमन किया करता है ॥२०॥ आचार्य किस प्रमाण वाले हैं और किस प्रकार का स्थापन होता है। परिमाण कैसा है तथा और उपवास किस प्रकार का होता है ॥२१॥

केन मंत्र विधानेन प्राशनं ते प्रदीयते ।
व्रतस्य चोप चारेषु अर्चामित्वा यथा विधि ॥२२
कां गतिं ते प्रपद्यन्ते तव कर्म परायणाः ।
वाय्वाहारं ततः कृत्वा कृष्णं समधि गच्छति ॥२३
तेषां तु का गतिः कृष्ण तव भक्तौ व्यवस्थिताः ।
अक्षार लवणं कृत्वा येऽभिगच्छन्ति माधवम् ॥२४
कां गतिं ते प्रपद्यन्ते तव कर्मानुसारिणः ।
कृत्वा पयो व्रतं चैव येऽभिगच्छन्ति चाच्युतम् ॥२५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का गतिं ते प्रपद्यन्ते नरा भिक्षोप जीविनः ।
गृहस्थ धर्मं कृत्वा वे येऽभि गच्छन्ति माधवम् ॥२६
का गति स्तस्य सिद्धा तु कथयस्व सुरोत्तम ।
भषितोऽसि मया ह्येवं सर्व लोक सुखा वहम् ॥२७

किस मन्त्र के विधान के द्वारा आपके लिये प्राशन किया जाया करता हैं। व्रत का और उपचारों में विधि पूर्वक अर्चन करके किया जाया करता है ॥२२॥ आपके कर्म्म में परायण पुरुष किस जाति को प्राप्त हुआ करते हैं ' फिर वायु का अवतार करके भगवान् श्री कृष्ण की प्राप्ति किया करते है ।२३॥ हे कृष्ण ! जो आप की भक्ति में व्यवस्थित हैं उनकी क्या गति होती है ? । अक्षार लवण को करके जो माधव को अभिगत हुआ करते हैं ॥२४। आपके अनुसार कर्म्प करने पुरुष किस गति को प्राप्त हुआ करते हैं। जोपयो व्रत का समाचरण किया करते हैं और अच्युत भगवान् को प्राप्त किया करते हैं ॥२५॥ भिक्षा से अपना उपजीवन करने वाले मनुष्यों की क्या गति हुआ करती है ? जो मनुष्य गृहस्थ धर्म्मं का परिपालन किया करते हैं वे भी माधव प्रभु को प्राप्त कर लिया करते हैं ॥२६॥ हे सुरोत्तम ! यह बतलाइए उसकी क्या गति सिद्ध होती है। मैंने इसी प्रकार से ही मैंने आपसे कहा है जो सभी लोगों को सुख देने वाला है ॥२७॥

गमना गमनं चैव त्वत्प्रसन्नेन माधव ।
त्वं ज्ञाता त्वं पिता चैव सर्वं धर्म विनिश्चयः ॥२८
अतस्त्वयैव वक्तव्यो योग सांख्य विनिश्चयः ।
त्वां भजश्च गते जीवे मधु पर्क समन्वितम् ॥२९
नमो नारायणे त्युक्त्वा तेषां वै का गति र्भवेत् ।
उद्यतेष्वपि शस्त्रेषु तन्यमाना रणे नराः ॥३०
रहस्यं धर्म संयुक्तं तन्ममा चक्ष्व माधव ।
एवं तत्परमं गुह्यं मम प्रीत्या जगद् गुरो ॥३१

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हे माधव ! आपके प्रसन्न होने से गमनागमन होता है । आप ही पिता हैं—यही सब धर्म्मों का विशेष निश्चय है ।।२८।। अतएव आपको ही योग सांख्य का विशेष निश्चय कहना चाहिए जीव के गत होने के समय मे मधुपर्क से समन्वित आपका भजन करता है । जो "नमो नारायणाय"—यह कहकर शरीर का त्याग किया करता है उनकी क्या गति होती है ? शस्त्रों के उद्यत होने पर रण स्थल में जो नर हन्यमान होते हैं उनकी क्या गति होती है ? ।।२९।।३०।। हे माधव ! इस धर्म्म से संयुक्त रहस्य को आप मुझे बतलाइए । हे जगत् के गुरो ! यह परम गोपनीय विषय है । तथापि मेरे ऊपर आप परम प्रीति करके ही यह मुझे बतलाइए ।।३१।।

११५–विविध धर्मोत्पत्ति

यत्त्वया पृच्छयते देवि तच्छृणुष्व वसुन्धरो ।
स्थितिं सत्ता तु मर्त्यानां भक्त्या ये च व्यवस्थितः ।।१
नाहं दानं सहस्रेण नाहं यज्ञशतैरपि ।
तुष्यामि न तु वित्तेन ये नराः स्वल्प चेतसः ।।२
एक चित्तं समाधाय यो मां जानाति माधवि ।
नित्यं तुष्यामि तस्याहं पुरुषं बहु दोषकम् ।।३
ये नमस्यंति मां नित्यं पुरुषा बहु चेतसः ।
अर्द्ध रात्रेऽन्धकारे च मध्याह्ने वपराह्न के ।।४
यस्य चित्तं न नश्येत मम भक्ति व्यवस्थितम् ।
द्वादश्या मुपवासं तु यः कुर्यान्मम तत्परः ।।५
ते मामेव प्रपश्यन्ति मयि भक्ति परायणाः ।
लब्ध चेतो गुणज्ञश्च नरो भक्ति व्यवस्थितः ।।६
अथ चौव तु द्वादश्यां पुरुषा धर्म वादकाः ।
विधिना च प्रयत्नेन ये मां कुर्वन्ति मानुषाः ।।७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भगवान् ने कहा—हे देवि ! जो आप मुझसे पूछ रही हैं। हे वसुन्धरे ! उसके विषय में अब मुझसे आप श्रवण कीजिए। जो मनुष्य भक्ति से व्यवस्थित है उनकी सत्ता और स्थिति है उसे सुनिए।१। मैं सहस्र के दान से प्रसन्न नहीं होता हूँ और न मैं सैकड़ों यज्ञों से प्रसन्न हुआ करता हूँ जो मनुष्य स्वल्प चित्त वाले होते हैं उनके वित्त से भी मैं प्रसन्न नहीं होता हूँ ॥२॥ हे माधवि ! जो अपने चित्त को एकाग्र समास्थित करके मेरा ज्ञान प्राप्त किया करता है उसी पुरुष पर मैं प्रसन्न होता हूँ चाहे वह पुरुष बहुत दोषों से भी युक्त क्यों न होवे ॥३॥ जो पुरुष भक्ति भाव से मुझको नित्य ही नमस्कार किया करते हैं चाहे वे चित्त वाले भी होवे। अर्धरात्र में—अन्धकार में—मध्याह्न में तथा अपराह्न में प्रणाम करते हैं ॥४॥ जिसका चित्त मेरी भक्तिभाव में व्यवस्थित होता है वह नष्ट नहीं होता है। जो पुरुष मुझमें तत्पर होकर द्वादशी में उपवास किया करता है ॥५॥ मुझमें भक्ति भाव में परायण हुये वे मनुष्य मुझको ही देखा करते हैं। वह नर लब्ध चित्त वाला—गुणों का ज्ञाता और भक्ति भाव में व्यवस्थित होता है ॥१६॥ जो धर्म्म के वादक पुरुष हैं वे द्वादशी में विधि के साथ प्रयत्न पूर्वक मेरा अभ्यर्चन किया करते हैं ॥७॥

पाण्डुरैश्चैव पुष्पश्च मृष्टैर्धूपैस्तु धूपयेतु ।
यो मे धारयते भूमौ तस्यापि श्रृणु या गतिः ॥८
दत्त्वा शिरसि पुष्पाणि इमं मन्त्र मुदीर यत् ।
हृदि कृत्वा तु मन्त्राश्च शुक्लाम्बर धरो धरे ॥९
सुमान्यः सुमना गृह्य प्रीयतां भगवान्हरिः ॥१०
नमोऽस्तु विष्णवे व्यक्ता व्यक्त गन्धि गन्धान्सुगन्धान्वा ।
गृह्ण गृह्ण नमो भगवते विष्णवे । अनेन मंत्रण गन्धं दद्यात् ॥
श्रुत्वा प्रत्यागत माधारसवनं पतये भवं प्रविष्टं मे धूप
धूप नं गृह्णातु मे भगवान च्युतः । अनेन मन्त्रेण धूपं दद्यात ॥११

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

श्रुत्वा चैवं च शास्त्राणि यो मा मेव तु कारयेत् ।
मम लोकं च गच्छेत जाये तैंव चतुर्भुजः ॥१२
ब्राह्मणस्य तु वक्ष्यामि श्रृणु कर्म वसुन्धरे ।
यानि कर्माणि कुर्वीत मम भक्ति परायणः ॥१३
षट् कर्म निरतो भूत्वा अहकार विवर्ज्जितः ।
लाभा लाभं परित्यज्य भिक्षाहारो जितेन्द्रियः ॥१४

पाण्डुर पुष्पों के द्वारा अर्चन करें और मृष्ट धूप से धूपित करे और जो मुझको भूमि में धारण किया करता है उसकी भी जो गति होती है उसका अब श्रवण कीजिए ॥८॥ मस्तक में पुष्पों को दकर इस मन्त्र को उदीरित करना चाहिए—मन्त्रों को हृदय मैं करके हे धरे ! शुक्ल वस्त्र धारी हांवे ॥६॥ सुसात्य होकर पुष्पों का ग्रहण करके हरि भगवान् प्रसन्न होवें ॥१०॥ मन्त्र यह है—भगवान् विष्णु के लिये मेरा नमस्कार होवे—आप व्यक्त और अव्यक्त हैं। गन्धों को और सुन्दर गन्ध वालों का ग्रहण कीजिए, भगवान् विष्णु के लिये नमस्कार हैं। इस मन्त्र के द्वारा गन्ध समर्पित करे। प्रत्यागत आधार सबन को सुनकर पति के लिये भव प्रविष्ट मेरे धूप द्वारा धूपन का ग्रहण मेरे भगवान् अत्युत करिए। इस मन्त्र से धूप का आघ्राण कराना चाहिए। इस प्रकार से शास्त्रों का श्रवण ५.रके जो मुझको ही कराता है वह मेरे ही लोक मे गमन किया करता हैं और वह फिर चतुर्भुज हो जाया करता है इसमें तनिक भी संशय नहीं है ॥११॥१२॥ हे वसुन्धरे ! अब मैं ब्राह्मण का क्या कर्म्म होना चाहये--यह बतलाऊँगा—उसका आप श्रवण कीजिये—यह बतलाऊँगा—उसका आप श्रवण कीजिए। ब्राह्मण मेरी भक्ति में परायण होकर जिन कर्म्मों को करता है। ब्राह्मण को चाहिए कि वह षट् कर्म में निरत होकर अहङ्कार से वर्जित रहना चाहिए। मैं बहुत कर्मोष्ठीं हूँ—ऐसा अहङ्कार ब्राह्मण को कभी भी नहीं होना चाहिए। ब्राह्मण लाभ और अलाभ का विचार को परित्याग

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करके भिक्षा वृत्ति से अशन क्रिया को सम्पन्न किया करे और अपमी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करके स्थित रहे ॥१३॥१४॥

मम कर्म समायुक्तः पैशुन्येन विवर्जितः ।
शास्त्रानुसारिमध्यस्थो नवृद्ध शिशु चेतनः ॥१५
एतद्धै ब्रह्मणः कर्म एक चित्तो जितेन्द्रियः ।
इष्टापूर्त च कुरुते स मामेति वसुन्धरे ॥१६
क्षत्रियाणां प्रवक्ष्यामि मम कर्मसु तिष्ठताम् ।
यानि कर्माणि कुर्वीत क्षत्रियो मध्य संस्थितः ॥१७
दान शूरश्च कर्मज्ञो यज्ञेषु कुशलः शुचिः ।
मम कर्मसु मेधावी अहङ्कार विवर्जितः ॥१८
अभ्युत्थानादि कुशलः पैशुन्येन विवर्जितः ।
एतैर्गुणैः समायुक्तो यो मां व्रजेति क्षत्रियः ॥१६
वैश्यानां तु प्रवक्ष्यामि मम कर्मसु तिष्ठताम् ।
यानि कर्माणि कुरुते मम भक्तिरथे स्थितः ॥२०
रातेर्गुणैः स्वधर्मेण लाभा लाभ विवर्जित ।
अथ शूद्रस्य वक्ष्यामि कर्माणि शृणु माधवि ॥२१

मुझसे सम्बन्धित कर्म्मों में समास्थित और पिशुनता (चुगली) से रहित तथा शास्त्रों के अनुसार जो भी कर्म हों उनमे अध्यस्थ और न वृद्ध एवं शिशु की चेतना वाला रहे ॥१५॥ यही ब्राह्मण का कर्म्म होता है । ब्राह्मण एक ही में चित्त रखने वाला और जितेन्द्रिय होना चाहिए। जो इष्टा पूर्त्ति किया करता है, हे वसुन्धरे ! वही मुझको प्राप्त हुआ करता है ॥१६॥ अब क्षत्रियों के विषय में बतलाया जाता है जो मेरे ही कर्म्मों में संस्थित रहा करते हैं। मध्य संस्थित क्षत्रिय जिन कर्मो को किया करता है या उसे जो भी कर्म करना चाहिए। ॥१७॥ क्षत्रिय दान देने में शूर हो और यज्ञ करने में कुशल हो तथा शुचि होवे। मेरे विषय में जो भी कर्म हों उनमें मेधावी होवे और

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अहङ्कार से रहित हो ।।१८।। बड़ों और पूज्यों के लिये अभ्युत्थान आदि कर्मों में कुशल होवे तथा पिशुनता से रहित होवे । इन सद्गुणों से जो समायुक्त हो वही क्षत्रिय मुझको प्राप्त किया करता है ।।१९।। अब वैश्यों के विषय में बताऊँगा जो मेरे कर्मों में स्थित रहा करते हैं । वैश्य जो भी कर्म करे वे सभी मेरी भक्ति में स्थित रहकर ही करें अर्थात् मेरे भक्ति मार्ग में ही उसे रहना चाहिए ।।२०।। वैश्य इन गुणों से ही व्यक्त होना चाहिए और अपने धर्म से लाभ-अलाभ से रहित होना चाहिए । इसके अनन्तर मूद्र के कर्मों को बताऊँगा हे माधवि ! उनका आप अब श्रवण करिए ।।२१।।

कर्माणि यानि कृत्वा ह शूद्रो मह्यं व्यवस्थितः ।
दम्पती मम भक्तौ यौ मम कर्म परायणौ ।।२२
निरहङ्कार शुद्धात्मा आतिथेयो विनीतवान् ।
श्रद्दधानोऽति पूतात्मा लोभ मोह विवर्जितः ।।२३
नमस्कार प्रियो नित्यं मम चिन्ता व्यवस्थितः ।
शूद्रः कर्माणि मे देवि य एवं सममा चरेत् ।।२४
त्यक्त्वा ऋषि सहस्राणि शूद्रमेव भजाम्यहम् ।
चातुर्वर्ण्यस्य कर्माणि यत्त्वया परि पृच्छितम् ।।२५

जो शूद्र इन कर्मों को नहीं करता है वह मेरे लिये व्यवस्थित नहीं होता है । शूद्र को स्त्री—पुरुष दोनों को ही मेरी भक्ति में व्यवस्थित रहना चाहिये और मेरे कर्मों में परायण होना आवश्यक है ।।२२।। शूद्र को अहङ्कार से रहित—शुद्ध आत्मा वाला—अतिथियों का सत्कार करने वाला और विनय सम्पन्न होना चाहिए । श्रद्धा रखने वाला—पवित्र आत्मा वाला तथा लोभ और मोह से रहित होना चाहिए ।।३२।। उसे नित्य ही झुक कर प्रणाम करने वाला और मेरी चिन्ता में व्यवस्थित रहना चाहिये । हे देवि ! ये ही शूद के कर्म होते हैं । जो इस रीति से प्रमाचरण किया करता है ।।२४।। जो इस रीति से शूद्र अपना कर्म

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

किया करता है उसके आगे मैं सहस्रों ऋषियों का भी त्याग करके उस शूद्र को ही मैं गमन किया करता हूँ। अर्थात् ऐसा शूद्र मुझे ऋषियों से भो अधिक प्यारा लगता है। आपने जो मुझसे पूछा था वे चारों वर्णों के कर्म मैंने आपको बतला दिये हैं ॥२५॥

११६—सुख दुःख निरूपण

मया प्रोक्त विधानेन यस्तु कर्माणि कारयेत् ।
तच्छृणुष्व महाभागे येन साफल्यमाप्नुगात् ॥१
एकचित्तः समास्थाय अहङ्कार विवर्ज्जितः ।
मच्चित्त संहतो नित्यं क्षान्तो दान्तो जितेन्द्रियः ॥२
फल मूलानि शाकानि द्वादश्यां वा कदाचन ।
एवं योग विधाने न कर्म कुर्यात् दृढ़ व्रतः ।
पूतात्मा धर्मसंयुक्तो विष्णु लोकं तु गच्छति ॥३
न ग्लानिर्न जरा तस्य न मोहो रोग एव च ।
भुजाष्टा दृश जायन्ते धन्वो खंगी शरी गदी ॥४
उचिते नोप चारेण दुःख मोक्ष विनाशनम् ।
अहङ्कारावृत्तो नित्यं नरो मोहेन चा वृतः ॥५
यो मां नैव प्रपद्येत ततो दुःख तरं नु किम् ॥६
प्राप्त काले वैश्व देवे दृष्ट् वा चातिथिमा गतम् ।
अदत्त्वा तस्य यो भुंक्ते ततो दुःखतरं नु किम् ॥७

मेरे द्वारा वर्णन किये हुये विधान से जो भी कर्मों को किया करता है अथवा कराया करता है। हे महा भागे! उसका आप श्रवण करिये जिसके द्वारा मानव सफलता को प्राप्त किया करता है ॥१॥ एक ही में अपने चित्त को समास्थित करके जो अहङ्कार से रहित होता है

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और मुझमे ही नित्य चित्त को लगाये रहता है तथा क्षान्त अर्थात् क्षमा से युक्त—दान्त अर्थात् दमनशील और अपनी इन्द्रियों को जीत लेने वाला होता है ।।२।। और द्वादशी मे फलों का—मूलों का तथा शाकों का आहार किया करता है और इसी योग के विधान से जो कर्म्म किया करता है अपने व्रत में दृढ़ रहता है । पवित्र आत्मा वाला और धर्म से समन्वित होता है वह विष्णु लोक को गमन किया करता है ।।३।। उसको न ग्लानि होती है और न बुढ़ापा ही होता है और उसको कोई भी रोग और मोह भी नही हुआ करता है । उसको अष्टादश भुजायें हो जाया करती हैं और वह धनुषधारी—गदा से युक्त और खड्ग तथा शरों के धारण करने वाला हुआ करता है ।।४।। समुचित उपचारों के द्वारा यजन करने से ही दुःख, मोक्ष तथा विनाश हुआ करता है । जो मनुष्य अहङ्कार से समावृत होता है वही मोह से आवृत हुआ करता है ।।५।। जो मेरी शरणागति में नहीं आता है इससे अधिक दुःख क्या हो सकता है । अर्थात् यही एक बड़ा भारी दुःख है ।।६।। प्रभात वेला में वैश्वदेव के अवसर में समागत हुए किसी भी अतिथि को देखकर उसको कुछ भी न देकर अर्थात् आतिथ्य न करके जो मनुष्य स्वयं भोजन कर लेता है इससे अधिक दुःख क्या है । अर्थात् यह बहुत ही अधिक दुःख की बात है ।।७।।

सर्वान्नानि तु सिद्धानि पाकभेदं करोति यः ।
तस्य देवा न चाश्नन्ति ततो दुःखतरं नु किम् ।।८
असन्तुष्टस्तु वैषम्ये परदाराभिमर्शकः ।
परोपतापी मन्दात्मा ततो दुःखतरं नु किम् ।।९
अकृत्वा पुष्कलं कर्म गृहे संवसते नरः ।
मृत्यु काल वशं प्राप्त स्ततो दुःखतरं नु किम् ।।१०
विद्वान् कृतो गुणज्ञश्च सर्व शास्त्र विशारदः ।
केचिन्मूकाश्च दृश्यन्ते ततो दुःख तरं नु किम् ।।११

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लब्ध्वा तु मानुषीं संज्ञां पंचभूत समन्वितताम् ।
मामेव न प्रपद्यन्ते ततो दुःखतरं नु किम् ।।१२
एतत्ते कथितं भद्रे दुःख कर्म विनिश्चयम् ।
सर्व भूताहितं पापं यत्त्वया परि पृच्छितम् ।।१३
यच्च मां पृच्छ से भद्रे शुभं कीदृश मुच्यते ।
कृत्त्वा तु विपुलं कर्म मद्भक्तेषु निवेदयेत् ।।१४

सब अन्न सिद्ध किये हुए होवें और जो कोई पाक में भेद-भाव किया करता है अर्थात् अतिथियों का भेद-भाव से स्वागत करता है उसके यहाँ देवता अशन नहीं किया करते हैं—इससे अधिक और क्या दुःख है ।। ८ ।। जो विषमता में असन्तुष्ट होवे और पराई दाराओं का अभिमर्शक होता है अर्थात् दूसरों की स्त्रियों के साथ सम्भोग करने वाला हो—दूसरों के उपताय देने वाला तथा मन्द आत्मा वाला हो—इससे अधिक क्या दुःख है ।। ९ ।। पुष्कल कर्मों का न करता हुआ जो नर गृह में ही रहा करता है और मृत्यु के काल को प्राप्त कर लेता है—इससे अधिक दुःख की क्या बात हो सकती है ।। १० ।। विद्वान्—कृती—गुणों का ज्ञाता और समस्त शास्त्रों का विशारद है ऐसा होते हुए भी कुछ पुरुष मूष जैसे ही रहा करते हैं—इससे अधिक क्या दुःख है ।।११।। मनुष्य की संज्ञा प्राप्त करके अर्थात् मनुष्य जीवन का लाभ करके भी पञ्चभूतों से समन्वित होने वाले मानव मेरी शरण में प्राप्त नहीं होते हैं इससे अधिक दुःख की क्या बात हो सकती है ।। १२ ।। हे भद्रे ! यह सम्पूर्ण दुःख कर्मों का विशेष निश्चय आपके सामने मैंने कहकर समझा दिया है । पाप सभी प्राणियों का अहित कर लेता है और जो तुमने मुझसे पूछा था ।। १३ ।। हे भद्रे ! जो तुम यह पूछ रही हो कि शुभ कैसा होता है । विपुल कर्म करके मेरे जो भक्त है उनके लिए निवेदन कर देना चाहिए ।।१४।।

मां पूजयित्वा नैवेद्यं विशिष्टं परिकल्प्य च ।
शेष मन्नं समश्नाति ततः सौख्यतरं नु किम् ।।१५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

त्रिकालं ये प्रपद्यन्ते मयोक्तेन वसुन्धरे ।
कृत्वा सायाह्निकं कर्म ततः सौख्यतरं नु किम् ॥१६
अहिंसनं तु कुर्वीत विशुद्धे नान्तरात्मना ।
अहिंसो परतः शुद्धः स सुखायोप जायते ॥१७
परभार्यां सुरूपां तु दृष्ट्वा दृष्टिर्न चाल्पते ।
यस्य चित्तं न गच्छेत्त् ततः सोख्यतरं नु किम् ॥१८
मौक्तिक दीनि रत्नानि तथैव कनकानि च ।
लोष्टवत्पश्यते यस्तु ततः सौख्य तरं नु किम् ॥१९
मुदिते वाश्व नागेन्द्रे उभे संन्ये पथि स्थिते ।
यस्तु प्राणान्प्र मुच्येत ततः सौख्यतरं नु किम् ॥२०
लब्धेन चाप्य लब्धेन कुत्सितं कर्म गर्हयन् ।
यस्तु जीवर्ति संतुष्ट स सुखायोप पद्यते ॥२१

मनुष्य मेरा अभ्यर्थन करके और विशिष्ट नैवेद्य की परिकल्पना करे और शेष जो अनत हो उससे अपनी अशन् क्रिया को किया करता है—इससे अधिक सुख क्या है। अर्थात यह बहुत ही उत्तम सुख है ॥१५॥ हे वसुन्धरे ! तीनों कालों में अर्थात् प्रातः-मध्याह्न और सायंकाल में मेरे द्वारा कहे हुए स्तोत्र के द्वारा जो मेरी शरणागति को प्राप्त होते हैं और सायाह्निक कर्म किया करते हैं—इससे अधिक सुख और क्या है ॥१६॥ मनुष्यों को अहिंसा व्रत का पालन करना चाहिए और अपनी अन्तरात्मा को विशुद्ध रखता है। जो अहिंसा मेरे परन होकर शुद्ध रहा करता है वह सदा सुख के ही लिये होता है ॥१७॥ परम सुन्दरी दूसरे की भार्या को देखकर जो अपनी दृष्टि को चलायमान नहीं किया करता है और जिसकी पराई भार्या की ओर नहीं जाया करता है—इससे अधिक सुख क्या है अर्थात् नहीं है—यही बहुत वड़ा सुख है ॥१८॥ मौलिक आदि रत्नों तथा सुवर्ण की राशियों को जो एक मिट्टी के ढेले के समान देखा करता है—इससे अधिक क्या सुख है ॥१९॥ वाश्व नागेन्द्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के मुदित होने पर और दोनों सेनाएँ मार्ग में स्थित होने पर जो युद्ध करते हुए अपने प्राणों का परित्याग कर देता है—इससे अधिक क्या सुख है ? ॥२०॥ लब्ध होने पर और अलब्ध होने पर कुत्सित कर्म की निन्दा करता है। तात्पर्य बुरा समझता है और जो सन्तुष्ट रहकर ही जीवन कायापन किया करता है—यह इस प्रकार से सन्तोष की वृत्ति सुख के ही लिये आपन्न होती है ॥२१॥

भर्तु स्तु वै व्रतं स्त्रीमामेव वसुन्धरे ।
या तोषयति भर्तारं ततः सौख्यनरं नु किम् ॥२२
विद्यते विभवेनापि पुरुषो यस्तु पंडितः ।
निगृहीतेन्द्रियः पंच ततः सौख्यतरं नु किम् ॥२३
सहते चावमानं तु व्यसने न तु दुर्मनाः ।
यस्येदं विदितं सर्वं ततः सौख्यतर नु किम् ॥२४
अकामो वा सकामो वा मम क्षेत्रे वन्सुधरे ।
यस्तु प्राणान्प्रमुच्येत ततः सौख्य तरं नु किम् ॥२५
मातरं पितरं चैव यः सदा पूजयेन्नरः ।
देवते व सदा पश्येत्ततः सौख्य तरं नु किम् ॥२६
प्रयुक्तः सर्व देवानां यो मामेवं प्रपूजयेत् ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥२७
एतत्ते कथितं भद्रे शुभ निर्देश निश्चयः ।
सर्व लोक हितार्थाय यन्मां त्वं परि पृच्छसि ॥२८

हे वसुन्धरे ! इसी प्रकार से स्त्रियों को भर्त्ता अर्थात् अपने पतिका व्रत होता है। जो नारी अपने पति को सन्तुष्ट किया करती है इससे अधिक सुख क्या है। अर्थात् यही सबसे बड़ा सुख है ॥२२॥ जो विभव से भी युक्त हो और पुरुष पण्डित हो तथा अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने वाला हो—इससे अधिक अन्य क्या सुख है ॥२३॥ जो अपमान को सहन कर लिया करता है और व्यसन से अर्थात् दुःख से उदास नहीं होता है

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तथा जिसको यह सब विदित है—इससे अधिक सुख क्या हो सकता है ।।२४।। हे वसुन्धरे ! अकाम हो अर्थात् कामना से रहित हो अथवा कामना से युक्त हो और मेरे क्षेत्र में जो अपने प्राणों को परित्याग किया करता है—इससे अधिक अन्य क्या सुख होता है अर्थात् इससे महान् अन्य कुछ भी सुख नहीं है ।।२५।। जो मनुष्य सदा अपने माता-पिता का पूजन किया करता है अर्थात् माँ—बाप की आज्ञा के अनुकूल रहकर उनका हार्दिक सम्मान करता है और सर्वदा उनको देवता की ही भाँति देखता है—इससे अधिक क्या सुख हो सकता है ।।२६।। जो सब देवों में प्रयुक्त होता हुआ मेरी ही पूजा किया करता है उस पुरुष को मैं कभी भी नष्ट नहीं किया करता हूं । और न वह कभी नष्ट हुआ करता है ।।२७।। हे भद्रे ! यह आपके सामने शुभ निर्देशों का विशेष निश्चय कहकर समझा दिया है । जो भी आपने सभी लोकों के हित के लिए पूछा है ।।२८।।

११७–बत्तीस प्रकार के अपराध

शृणु भद्रे महाश्चर्य माहार विधि निश्चपम् ।
आहारं चाप्य नाहारं तच्छृणुष्व वसुन्धरे ।।१
भुंजानो याति चाश्नाति मम योगाय माधवि ।
अशुभं कर्म कृत्वापि पुरुषो धर्म माश्रितः ।।२
आहारं चैव धर्मज्ञ उप भुंजीत नित्यशः ।
सर्वे चात्रैव कर्मण्या व्रीह्यः शालय स्तथा ।।३
अकर्मण्यानि वक्ष्यामि येन भोज्यंति मां प्रति ।
तेन वै मुक्त मार्गेण अपराधो महौजसः ।।४
प्रथमं चापराधान्नं न रोचेत मम प्रिये ।
भुक्त्वा तु परकीयान्नं तत्पर स्तन्नि वर्त्तनः ।।५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अष्टमं चापराधं च कल्पयामि वसुन्धरे ।
ममैवार्च्चं काले तु यस्त्व समं प्रभाषते ।।६
दश मश्चाप राधोऽयं मम चाप्रिय कारकः ।
क्रुद्धस्तु यानि कर्माणि कुरुते कर्म कारकः ।।७

भगवान् ने कहा—हे भद्रे वसुन्धरे ! आहार की विधि का निश्चय एक महान् आश्चर्य है । कौन सा आहार है और क्या आहार नहीं है—इसके विषय में आप मुझसे श्रवण कीजिए ।।१।। हे माधवि ! भोजन करता हुआ जो मेरे योग के लिये अशन किया करता वह अशुभ कर्म करके भी धर्म में आश्रित है ।।२।। धर्म का ज्ञान रखने वाला पुरुष नित्य ही आहार का उपभोग किया करता है । यहां पर ही सब व्रीहि और शाली कर्मण्य होते हैं ।।३।। जो अकर्मण्य हैं उनको भी मैं बतलाता हूँ जिससे मेरे प्रति भोजन किया करते हैं । उस युक्त मार्ग से महान् ओज वाले का अपराध होता है ।।४।। हे प्रिये ! प्रथम और अपराधान्न मुझको पसन्द नहीं होता है । दूसरे का अन्न खाकर उसी में परायण रहने वाला और उससे निवृत्त होने वाला है ।।५।। हे वसुन्धरे ! अष्टम अपराध की मैं कल्पना करता हूँ मेरे अर्चन करने के समय में जो असम का भाषण किया करता है वह यह दशम अपराध है और मेरे अप्रिय के करने वाला होता है । जो कर्म करने वाला क्रुद्ध होकर जिन कर्मों को किया करता है ।।६।।७।।

एकादशापराधं तु कल्पयामि वसुन्धरे ।
अकर्मण्यानि पुण्यानि यस्तु मामुप कल्पयेत् ।।८
षोडशं त्वपराधानां कल्पयामि वरानने ।
स्वयमन्नं तु यो ह्यद्या ज्ञानादीप माधवि ।।९
अपराधं सप्तदशं कल्पयामि वसुन्धरे ।
तस्तु तात्स्यानि मांसानि भक्षयित्वा प्रपद्यते ।।१०
अपराधं त्रयोविंशं कल्पयामि वरानने ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुरां पीत्वा तु यो मर्त्यः कदाचि दुपसर्पति ।।११
अपराधेषु षड्विंशं कल्पयामि वसुन्धरे ।
नवान्नं यस्तु भक्षेत न देवन्न पितृन्यजेत् ।।१२
सप्त विंशं चापराधं कल्पयामि गुणान्विते ।
उपान हौ च प्रपदे तथा वापीं च गच्छति ।।१३
एकोनत्रि शापराधो न स स्वर्गेषु गच्छति ।
अजीर्णेन समा विष्टो यस्तु मामुप गच्छति ।।१४

हे वसुन्धरे ! उसको मैं ग्यारहवाँ अपराध मानता हूँ । जो अकर्मण्य पुण्यों को मुझको उपकल्पित करता है ।।८।। हे वरान ने उसको अपराधों में मैं सोलहवाँ कल्पित किया करता हूँ । हे माधवि ! जो अज्ञान से भी स्वयं अन्न को खाता है ।।९।। हे वसुन्धरे ! उसको सत्रहवां अपराध कल्पित किया करता हूँ । जो पुरुष मत्स्य और माँसों का अशन करके मेरी शरणागति में उपस्थित होता है ।।१०।। हे वरावने ! इसको तेईसवाँ अपराध मैं कल्पित किया करता हूँ । जो पुरुष मदिरा का पान करके किसी समय में उपसर्पण किया करता है ।।११।। हे वसुन्धरे ! उसको मैं छब्बीसवाँ अपराध मानता हूँ । जो नवीन अन्न का भक्षण किया करता है और देवों का तथा पितृगण का यजन नहीं किया करता है ।।१२।। हे गुणों से युक्त ! इसको मैं सत्ताईसवाँ अपराध परिकल्पित कया करता हूँ । जो उपानहों के साथ और प्रपद वापी पर गमन किया करते हैं ।।१३।। यह उनतीसवाँ अपराध है और ऐसा अपराधी स्वर्ग में गमन नही किया करता है । अजीर्ण से समाविष्ट जो मेरे पास उपगत होता है ।।१४।।

अन्यच्च श्रृणु वक्ष्यामि दृढव्रत मनुत्तमम् ।
कृत्वा चावश्यकं कर्म मम लोकं च गच्छति ।।१५
नित्य युक्तश्च शास्त्रज्ञो मम कर्म परायणः ।
अहिंसा परमश्चैव सर्व भूत दया परः ।।१६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सामायन्श्च शुचिर्दक्षो मम नित्यं पथि स्थितः ।
निगृह्य चेन्द्रिय ग्रामम पराध विवर्जितः ।।१७
उदारो धार्किश्चैव स्वदारेषु सुनिष्ठतः ।
शास्त्रज्ञ कुशलश्चैव मम कर्म परायणः ।
चातुर्वर्ण्यस्य मे भद्रे सन्मार्गेषु व्यवस्थितः ।।१८
आचार्यं भक्ता देवेषु भक्ता भर्तरि वत्सला ।
संसारेष्वपि वर्त्तन्ती गच्छन्ती त्वग्रतो यदि ।।१९
मम लोक स्थिता सावै भर्त्तारं प्रसमीक्षते ।
पुरुषो यदि मद्भक्तः स्त्रियं त्यक्त्वा च गच्छति ।।२०
स ततोऽत्र प्रतीक्षेत भार्यां भर्त्तरि वत्सलाम् ।
अन्यच्च ते प्रवक्ष्यामि कर्मणां कर्म चोत्तमम् ।।२१

और अन्य अत्युत्तम दृढ़ व्रत को मैं बतलाता हूँ उसका श्रवण कीजिए । आवश्यक कर्म्म करके मनुष्य मेरे लोक को गमन किया करता है ।।१५।। नित्ययुक्त रहने वाला—शस्त्रों का ज्ञान रखने वाला—मेरे ही कर्मों में तत्पर रहने वाला जिसका अहिंसा ही परम धर्म्म हो वह तथा समस्त प्राणिमात्र पर दया रखने वाला—सामान्य स्वरूप से रहने वाला —शुचि और दक्ष तथा नित्य ही मेरे मार्ग से स्थित--जो इन्द्रियों का निग्रह करके अपराधों से रहित हैं ।।१६।।१७। उदार अर्थात् विशाल हृदय वाला--धार्मिक अपनी ही स्त्रियों में सुनिष्ठित--शास्त्रों का ज्ञाता-- कुशल और मेरे कर्म्म में परायण हे भद्रे ! चारों वर्णों के मेरे सन्मार्गों में व्यवस्थित आचार्य की भक्त—देवताओं की भक्त और भर्त्ता में भक्ति तथा प्रेम रखने वाली—संसार मे वरतती हुई भी अर्थात् संसारिक कार्यों में रहती हुई भी यदि आगे की ओर गमन करने वाली हैं तो वह नारी मेरे लोक में स्थित है और अपने भर्त्ता प्रसमीक्षण किया करती है । पुरुष यदि मेरा भक्त है और स्त्री का त्याग करके गमन किया करता है फिर वह यहाँ पर स्वामी में प्रेम करने वाली भार्या की प्रतीक्षा किया

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करता है। और अन्य भी कर्मों में जो उत्तम कर्म है उसका वर्णन करूँगा ॥१८॥१९॥२०॥२१॥

ऋषयो मां न पश्यन्ति मम कर्म पथे स्थिताः।
द्रष्टव्या मम लोकेषु ऋषयोऽपि वरानने ॥२२
किं पुनर्मानुषा चे च मम कर्म व्यवस्थिताः।
अन्य देवेषु ये भक्ता मूढा वै पाप चेतसः ॥२३
मम माया विमूढास्तु न प्रपद्यन्ति माधवि।
मां तु ये वै प्रपद्यन्ते मोक्ष कामा वसुन्धरे ॥२४
तानहं भाव संसिद्धान्बुद्धा संविभजामि वै।
येन त्वं पराया शक्त्या धारितासि मया धरे ॥२५
तेनेदं कथितं देवि आख्यानं धर्म संयुतम्।
पिशुनाय न दातव्य च मूर्खाय माधवि ॥२६
ततो न चोपदिष्टाय न शठाय प्रदापयेत्।
नदी क्षिताय दातव्यं नोपसद्याय यत्नतः ॥२७
एतत्ते कथिते देवि मम धर्म्मं महौजसम्।
सर्वं लोक हितार्थाय किमन्यत् परि पृच्छासि ॥२८

ऋषिगण मेरा दर्शन नहीं किया करते हैं तो मेरे कर्म्म मार्ग में स्थित हैं। हे वरानमे ! ऋषियों को भी मेरे लोकों में देखना चाहिए ॥२२॥ फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या है जो मेरे कर्मों में व्यवस्थित हैं। जो अन्य देवों की भक्ति किया करते हैं वे मूढ़ हैं और पाप युक्त चित्र वाले हैं ॥२३॥ हे माधवि ! मेरी माया से विमूढ़ होकर वे मेरी शरण में प्रपन्न नहीं हुआ करते हैं। हे वसुन्धरे ! जो मोक्ष की कामना रखने वाले हैं वे ही मेरी शरणागति में प्रपन्न हुआ करते हैं ॥२४॥ मैं उनको भाव से संसिद्ध समझकर भली भाँति विमानित किया करता हूँ। हे धरे ! जिससे मेरे द्वारा परम शक्ति से आप धारण की गई हो ॥२५॥ हे देवि ! इसी कारण से यह धर्म्म से संयुत आख्यान आपके सामने मैंने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कहा है। हे माधवि ! इस बिषय को षिशुन व्यक्ति के लिये कभी भी नहीं देना चाहिए ॥२६॥ और उपदिष्ट शठके लिये भी नहीं देना चाहिए। जो अदीक्षित है अर्थात् जिसने दीक्षा प्राप्त नहों की है उसको भी यह नहीं रखना चाहिए। जो उपसरर्य हो उसे भी कभी नहीं देवे। और यत्न पूर्वक इसका ध्यान रक्खे ॥२७॥ हे देवि ! यह धर्म सभी लोगों के हित के लिये है। अब इसके अतिरिक्त आप अन्य क्या मुझसे पूछना चाहती हो इसे मुझे अब बतलाईये ॥२८॥

११८–देवोपचार विधि

श्रृणु तत्त्वेन मे भद्रे प्रायश्चित्ते यथा विधि।
यथा वत्स च दातव्यो मम भक्तेन विद्यया ॥१
वक्ष्य माणेन मन्त्रेण उद्धृत्य दन्तकाष्ठकम्।
दीपं न ज्वालयेत्ता वद्यावन्न स्पृश्यते धरा ॥२
दीपे प्रज्वालिते तत्र हस्त शाँचं तु कारयेत्।
ततः प्रक्षाल्य हस्तौ तु पुनरे वमुपागतः ॥३
वन्द यित्वास्य चरणौ दन्तं धावन मानयेत्।
अने नैव तु मन्त्रेण दद्याद्वै दन्त काष्ठकम् ॥४
भवन भुवन रवि संहरण अनन्तो मध्यश्चेति।
गृह्णेमं भुवनं दन्त धावनम् ॥५
ययत्त्वया भाषितं सर्व मेवं धर्म विनिश्चयम्।
दन्त धावनं दन्ते दद्याद्या वत्कर्म वसुन्धरे ॥६
निर्माल्यं शिरसोत्तार्य धृत्वा चिरसि चात्मनः।
पश्चात्तु जल पूतेन ततो हस्तेन सुन्दरि ॥७

हे भद्रे ! अब प्रायश्चित में जो विधि है उसको तात्त्विक रूप से मुझसे आप श्रवण करिए। और वह मेरे भक्त के द्वारा विद्या से

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यथावत् देना चाहिए ।।१। आगे बताये जाने वाले मन्त्र के द्वारा दन्त काष्ठ को अर्थात् दाँतुन का उद्धरण करे । तब तक दीपक को न जलावे जब तक धरा का स्पर्श नहीं किया जाता है ।।२।। दीपक के प्रज्वालित करने पर वहाँ पर हाथों की शुद्धि करनी चाहिए । इसके अनन्तर हाथों का प्रक्षालन करके पुनः इसी प्रकार से उपागत होवे ।।३।। इसके चरणों की वन्दना करके दन्त धावन (दाँतुन) को लाना चाहिए । इसी मन्त्र के द्वारा दन्त काष्ठ को देना चाहिए । मन्त्र यह है —हे भवन भुवन— रवि संहरण—अनन्त और मध्य— इस भुवन दन्त धावन को ग्रहण कीजिये ।।४।।५।। जो आपने सब भाषित किया है इसी प्रकार से धर्म का विशेष निश्चय है । दन्त धावन को दाँत में अर्पित करें जितना कर्म है । हे वसुन्धरे ! निर्माल्य को शिर से उतार कर अपने शिर में धारण करना चाहिए । हे सुन्दरि ! इसके पश्चात् हाथों को जल से पवित्र करे और इसके उपरान्त अन्य कर्म करना चाहिए ।।६।।७।।

कार्याणि मुख कर्माणि स्वल्पेन सलिलेन च ।
मुख प्रक्षालने चेमं शृणु मन्त्र च सुन्दरि ।।८
इष्ट्वेम मुक्तं मन्त्रेण संसारात्तु प्रमुच्यते ।।९
तद्भगवन्त्वां गुणश्च आत्मनश्चापि ।
गृह्ण वारिणः सर्वं देवतानां मुखमेवं प्रक्षालयेत् ।।
एतेन मन्त्रेण सुगन्ध धूप दीप नैवेद्यं पुनरेवं समर्पयेत् ।।१०
ततः पुष्प ञ्जलिं दत्त्वा भगवन् भक्त वत्सला ।
नमो नारायणे त्युक्त्वा इमं मन्त्र मुदीरयेत् ।।११
भगवन् भक्त वत्सल नमो नारायणाय ।
मन्त्र ज्ञानां यज्ञयष्टारं भूतस्रष्टार मेव च ।
अन्य पुष्पाणि संग्रह्य कल्य मुत्थाय माधवि ।।१२
पूजयेद्देव देवेशं ज्ञानी भागवतः शुचिः ।
निपतेदण्डवद्भूमौ सर्व कर्म समन्वितः ।।१३
कायं निपतितं कृत्वा प्रसीदेति जनार्द्दनम् ।
शिरसा चाञ्जलिं कृत्वा इमं मंत्र मंत्रमुदाहरेत् ।।१४

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

और स्वल्प जल के द्वारा मुख के कर्मों को करना चाहिये। हे सुन्दरि ! मुख के प्रक्षालन करने में जो मन्त्र है उसका श्रवण करिए। ॥८॥ इस प्रकार से उक्त मन्त्र के द्वारा यजन करके मानव संसार से छुटकारा पा जाया करता है ॥६॥ मन्त्र यह है—हे भगवन् ! आपको यह गुण समर्पित किया जाता है और आतमा के भी वारि (जल) को आप ग्रहण कीजिए।" सभी देवों का मुख इसी प्रकार से प्रक्षालित करना चाहिए। इस मन्त्र के द्वारा सुगन्ध—धूप—दीप और नैवेद्य का भी समर्पण करना चाहिए ॥१०॥ हे भगवन् ! आप तो भक्तों पर प्यार करने वाले हैं। इसके बाद पुष्पाञ्जलि समर्पित करे। "नमो-नारायणाय"—इस मन्त्र को उदीरित करना चाहिए ॥११॥ आप मन्त्रों के ज्ञाताओं के यज्ञ स्रष्टा है तथा भूतों के भी सृजन करने वाले हैं। हे माधवि अन्य पुष्प का संग्रह करके प्रातः काल में समुत्थित होवे ॥१२॥ ज्ञानी—भागवन शुचि होकर देवों के भी देवेश्वर का पूजन करना चाहिए। समस्त कर्मो से समन्वित होकर भूमि में दण्ड की ही भाँति नियतन करे अर्थात् साष्टाङ्ग प्रणाम करना चाहिए ॥१३॥ अपने शरीर को भूमि में नियतित करके भगवान् जनार्दन से प्रार्थना करे कि हे भगवन् ! प्रसन्न होइए। शिर से अञ्जलि करके इस मन्त्र का उच्चारण करे ॥१४॥

मन्त्रैर्लब्ध्वा संज्ञां त्वयि नाथ प्रसन्ने।
त्वदिच्छातो ह्यपि योगिनां चैव मुक्ति ॥१५
यतस्त्वद्वीपः कर्म करोऽहमस्मि।
त्व योक्त्वं यत्तेन देवः प्रसीदतु ॥१६
एवं मन्त्रविधि कृत्वा मम भक्ति व्यवस्थितः।
पृष्ठतोऽनुपदं गत्वा शीघ्रं यावन्न हीयते ॥१७
एवं सर्वं समादाय मम कर्म दृढ व्रतः।
शीघ्रं मेऽभ्यञ्जनं दद्यात्तैलेनाथ घृतेन वा ॥१८
ततः स्नेहं समुद्दिश्य मंत्रज्ञः कर्मकारकः।
एवं चित्तं समाधाय इमं मंत्र मुदीरयेत् ॥१६

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

स्नेहं स्नेहेन संगृह्य लोकनाथ मयाऽऽहृतम् ।
सर्वलोकेषु सिद्धात्मा ददाम्यात्म करेण च ।।
मया प्रोक्तः क्षमस्वेति तुभ्यं चैव नमो नमः ।।२०
एवं मंत्र समाख्यातस्तेनाज्यात् प्रथमं शिरः ।।२१

हे नाथ ! मन्त्रों के द्वारा संज्ञा को प्राप्त करके आपके प्रसन्न हो जाने पर आपकी ही इच्छा से योगियों की भी मुक्ति हुआ करतीं है। क्योंकि मैं आपका ही कर्म करने वाला हूँ। यह आपने ही कहा था। इसी से देव आप प्रसन्न होइये ।। १५ ।। इस प्रकार से मन्त्र की विधि को करके मेरी भक्ति से व्यवस्थित होवे। पीछे से चरणों के पीछे गमन करे। जब तक शीघ्र ही दीयमान नहीं होता है ।। १६—१७ ।। इस प्रकार सबका समादान करके मेरे कर्म में दृढ़ व्रत वाला होवे। फिर शीघ्र ही मुझे तैल से अथवा घृत मे अभ्यञ्जन देना चाहिए ।। १८ ।। इसके उपरान्त स्नेह को समुदिष्ट करके मन्त्र का ज्ञाता कर्म करने वाला होवे। इस रीति से अपने चित्त को समादित करके इस मन्त्र को बोलना चाहिए ।। १९ ।। हे लोकों के नाथ ! बड़े ही स्नेह के साथ इस स्नेह (तैल या घृत) का संग्रह करके मैंने इसका आहरण किया है। आप सब लोकों में सिद्ध आत्मा वाले हैं। मैं इसको अपने ही हाथ के द्वारा सर्मापित कर रहा है। मैंने आपसे प्रार्थना की थी कि क्षमा करिए और आपके लिये मेरा बारम्बार नमस्कार है ।।२०।। इस प्रकार का मन्त्र कहा गया है। आज्य से सर्व प्रथम शिर पर लगावे ।।२१।।

दक्षिणाङ्गं ततोऽभ्यज्याद्वाममङ्गं ततोऽनु च ।
पश्चात् पृष्ठं समभ्यज्य ततोऽभ्यज्यात् कटिं तथा ।।२२
पश्चाल्लिम्पेत्ततो भूमिं गोमयेन दृढ व्रतः ।
तस्य दृष्ट्वा श्रुतं भद्रे गोमयेन सुनिश्चितम् ।।२३
यानि पुण्यानि वाप्नोति तानि मे गदतः शृणु ।
आज्यमानमपि तथा यावन्त स्तैल बिन्दवः ।।२४
तावद् वर्ष सहस्राणि स्वर्ग लोके महीयते ।
ततः पुण्य कृताँल्लोकान् पुरुषो योऽनुलिप्यते ।।२५

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एकैककण संख्यातः स्वर्ग लोके महीयते ।
एवं योऽभ्यञ्जयेद्गात्रं तैलेन तु घृतेन वा ।।२६
तावद्वर्ष सहस्राणि मम लोके प्रतिष्ठति ।
अथ चोद्वर्त्तनं भद्रे प्रवक्ष्यामि प्रियं मम ।।२७
येन शुध्यन्ति चाङ्गानि मम प्रीतिश्च जायते ।
भोगिना यदि वा रोध्रं यदि पिप्पलि का मधु ।।२८

फिर पहिले दाहिने अङ्ग का अभ्यङ्ग करे इसके अनन्तर बाँये अङ्ग का अभ्यङ्ग करना चाहिए । इसके पीछे पृष्ठ भाग का अभ्यङ्ग करे और इसके पश्चात् कटि भाग का अभ्यङ्ग करना चाहिए ।।२२।। इसके उपरान्त गोमय (गोबर) से भूमिका लेपनकरे और दृढ़ व्रत वाला होवे। हे भद्रे ! उसका श्रुत देखकर गोमय से जो सुनिश्चित हो ।।२३।। इसके करने से जो भी पुण्य होते हैं उनको मैं कहता हूँ । आप मुझसे उनका श्रवण कीजिए । अभ्यङ्ग किये हुए उनके अङ्ग से जितनी भी तैल बिन्दु गिरती हैं ।।२४।। उतने हीं सहस्र वर्षों तक वह अभ्यङ्ग करने वाला स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित हुआ करता है वह पुण्य से प्राप्त होने वाले लोकों में गमन किया करता है ।। २५ ।। एक-एक कण की संख्या से ही वह स्वर्गलोक में प्रतिष्ठा प्राप्त किया करता है । इस प्रकार से जो भगवान् के गात्र का अभ्यङ्ग किया करता है यह अभ्यङ्ग तैल से करे अथवा घृत से करे ।।२६।। उतने ही सहस्र वर्षों पर्यन्त वह मेरे लोक में प्रतिष्ठित हुआ करता है । हे भद्रे ! इसके अनन्तर मैं उद्वर्तन (उबटन) के विषय में बतलाता हूँ । जो उद्वर्त्तन मुझको प्रिय लगता है ।।२७।। जिस उद्वर्तन से अङ्ग शुद्ध होते हैं और मेरी प्रीति समुत्पन्न हुआ करनी है । भोगिना यदि वारोध्र—यदि पिप्पलिका—मधु ।।२८।।

मधूकमश्वपर्णं वा रोहिणं चैव कर्कटम् ।
एतेषां प्राप्य लभते शास्त्रज्ञः कर्म कारकः ।।२९
करेण यस्य चूर्णेन पिष्ट चूर्णेन वा पुनः ।
एतदुद्वर्त्तनं कुर्यान्मम गात्र सुखावहम् ।।३०

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

यदीच्छेत्परमां सिद्धि मम कर्मानुसारकः ।
एव मुद्वर्त्तनं कृत्वा स्नान कर्म तु कारयेत् ॥३१
तत आमलकं चैव वसुगन्धाणि मुत्तमम् ।
तेन मे सर्व गात्राणि मर्द्दयित्वा दृढ व्रतः ॥३२
जल कुम्भं ततो गृह्य इमं मन्त्र मुदाहरेत ।
देवानां देव देवोऽसि देवोऽनादिरभूः परः ॥३३
तव व्यक्त स्वरूपेण स्नानं गृह्णीष्व मेऽनघ ।
एवं तु स्नपनं कुर्यान्मम मार्गानुसारकः ॥३४
अथ सौवर्ण कुम्भेन रजतस्य घटेन वा ।
एतेषामप्य लाभेतु कर्मज्ञः कर्म कारयेत् ।।३५

मधूक अथवा अश्वपर्ण—रोहिण और कर्कटक—इन सबको प्राप्त करके शास्त्र का ज्ञाता कर्म करने वाला लाभ किया करता है ॥ २९ ॥ जिसके चूर्ण से अथवा पिष्ट चूर्ण से कर के द्वारा इसका उद्वर्त्तन करे । यह उद्वर्त्तन मेरे शरीर को सुख देने वाला है ॥३०॥ यदि परम सिद्धि के प्राप्त करने की इच्छा करे तो मेरे कर्मों के अनुसार ही करने वाला होवे । इस पूर्व में वर्णित उद्वर्त्तन करके फिर स्नान की क्रिया को सम्पन्न करना चाहिए ॥३१॥ इसके उपरान्त आँवला और उत्तम वसुगन्ध को लावे । उससे मेरे समस्त अङ्गों का परम दृढ़ व्रत वाला रहकर मर्दन करना चाहिए ॥३२॥ इसके उपरान्त जल का कलश ग्रहण करके इस निम्न-लिखित मन्त्र का उच्चारण करे । हे देव ! आप देवों के भी देव हैं तथा आप अनादि देव और सबसे पर हैं ॥३३॥ आप अपने व्यक्त स्वरूप के द्वारा हे अनघ ! इस समय में स्नान को ग्रहण कीजिए । इसी रीति से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करता हुआ मेरा स्नान कराना चाहिए ।३४। इसके अनन्तर सुवर्ण अथवा रजत (चाँदी) के कुम्भ से स्नपन करावे । अथवा इनके कलश के अलाभ होने पर कर्म के ज्ञाता को कर्म करना चाहिए ॥३५॥

ताम्रकुम्भ मयेनैव कुर्यात्स्नपन मुत्तमम् ।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

एवं तु स्नपनं कृत्वा विधि दृष्टेन कर्मणा ॥
पश्चाद् गन्धः प्रदातव्यः प्रकृष्टो मन्त्र संयुतः ॥३६
सर्वं गन्धाः सौमनस्याः सर्वे वर्णाश्च ते मताः ।
उत्पन्नाः सर्वं लोकेषु त्वया सत्येषु योजिताः ॥३७
मया च ते तवाङ्गेषु ताना वह शुचीन्प्रभो ।
मम भक्त्या सु सन्तुष्टः प्रतिगृह्णीष्व माधव ॥३८
एवं गन्धां स्ततो दत्त्वा उत्कृष्ट कर्म कारयेत् ॥३९
कर्म्मण्यान्यपि माल्यानि ततो मह्यं प्रदापयेत् ।
तदेवं चर्च्चनं कृत्वा कर्म्मण्यः कर्म सम्मितः ॥४०
ततः पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा इमं मन्त्र मुदीरयेत् ।
जलजं स्थलजं चैव पुष्पं कालोद्भवं शुचि ॥
मम संसार मोक्षाय गृह्ण गृह्ण ममाच्युत ॥४१
एवं विधोप चारेण अर्च्चयित्वा मम प्रियम् ॥४२

अथवा ताम्रमय कुम्भ से ही उत्तम स्नपन को कराना चाहिए। इस प्रकार से स्नपन कराकर पीछे विधि से दृष्ट कर्म के द्वारा गन्ध को अर्हित करना चाहिए। जो गन्ध प्रकृष्ट और मन्त्र से समन्वित होना चाहिए ॥३६॥ सभी गन्ध सौमनस्य हैं और सभी वर्ण आपके सम्मत हैं। सभी लोकों में समुत्पन्न हैं और आपके द्वारा सत्यों में योजित हैं। मेरे द्वारा आपके अङ्गों में लगाये जाते हैं। हे प्रभो! उन शुचि गन्धों का आप ग्रहण कीजिये ॥३७॥३८॥ मेरी भक्ति से सुसन्तुष्ट होकर हे माधव! इनको आप ग्रहण कीजिये। इस रीति से फिर गन्धों को समर्पित करके फिर उत्कृष्ट कर्म करना चाहिए ॥३९॥ इसके उपरान्त कर्म्मण्य माल्यों को मेरे लिये समर्पित करावे। वही समर्चन करके कर्म्म सम्मित कर्म्मण्य होता है ॥४०॥ इसके अनन्तर पुष्पाञ्जलि देकर इस निम्नलिखित मन्त्र को उदीरित करना चाहिए। मन्त्र—"हे अच्युत! जल में समुत्पन्न हुआ और स्थल में समुद्भूत हुआ—काल में समुत्पन्न और शुचि पुष्प मेरे संसार से क्षोक्ष के लिये ग्रहण कीजिए—

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

ग्रहण कीजिये ।।४१।। इस प्रकार के उपचार से जो समर्चन किया जाता है वह मुझे परम प्रिय हुआ करता है ।।४२।।

पश्चाद् धूपं च मे दद्यात सुगन्ध द्रव्य सम्मितम् ।
धूपं गृह्य विधानेन ममोक्तं सुख वल्लभम् ।।४३
उभयेषु कुलेष्पात्मा धूप मंत्र मुदीरयेत् ।
वनस्पति रसं दिव्यं बहुद्रव्य समन्वितम् ।।४४
मम संसार मोक्षाय धूपोऽयं प्रति गृह्यताम् ।
शान्तिर्वै सर्वदेवानां शान्तिर्मम परायणम् ।।४५
सांख्यानां शान्तियोगेन धूपं गृहण नमोऽस्तु तं ।
त्राता नान्योऽस्ति मे कश्चित्त्वां विहाय जगद् गुरो ।।४६
एवमभ्यर्च्चनं कृत्वा माल्यगन्धानुलेपनैः ।
पश्चाद्वस्त्रं च वै दद्यात् क्षौम शुक्लं सपीतकम् ।।४७
एवं चौव समादाय कृत्वा शिरसि चाञ्जलिम् ।
दिव्य योगं समादाय इमं मन्त्र मुदीरयेत् ।।४८
प्रीयतां भगवान्पुरुषोत्तमः श्रीनिवासः श्रोमानन्द रूपः ।
गोप्ता कर्ताधिकर्ता मान्यनाथ भूतनाथ आदिर व्यक्त रूपः ।।
क्षौमं वस्त्रं पीतरूपं मनोज्ञं देवाङ्गे स्वे गात्र प्रच्छाद नाप ।।४९

इसके पीछे मुझे धूप का आघ्रापण कराना चाहिए। जो धूप सुन्दर गन्ध से सम्मित होवे। गृह्य सूत्र के विधान से मुझे धूप देना सुखद और प्रिय होता है। दोनों कुलों में आत्मा धूप के मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए। वनस्पतियों का रस और बहुत से द्रव्यों से समन्वित यह धूप है। मेरे संसारिक बन्धन से मोक्ष के लिये इस धूप का प्रतिग्रहण कीजिए। मन्त्र यह है—समस्त देवों की शान्ति—और मेरी शान्ति सांख्यों के शान्ति योग से परायण इस धूप का प्रतिग्रहण कीजिए। आपकी सेवा में मेरा नमस्कार निवेदित है हे जगतों के गुरुदेव ! आपको छोड़कर अर्थात् आपके अतिरिक्त अन्य कोई भी मेरा त्राण करने वाला नहीं है ।।४३।।४४।।४५।।४६।। इस रीति से मेरा अभ्यर्चन करके पीछे

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मुझे क्षौमशुक्ल और पीतवर्ण का वस्त्र मुझे समर्पित करना चाहिए ॥४७॥ इस प्रकार से समादान करके और अपने हाथों की अञ्जलिका शिर में करके दिव्य योग का समादान करके इस अधोलिखित मन्त्र को उदीरित करना चाहिए ॥४८।. आप पुरुषोत्तम भगवान्—श्रीमान् आनन्द स्वरूप हैं—आप रोभा—कर्त्ता—अधिकर्त्ता—मान्य—नाथ—आदि—भूत नाथ और अव्यक्त रूप वाले हैं ॥४८॥४६॥

वस्त्रैः विभूषणं कृत्वा मम गात्रानुसारि यत् ।
पश्चापुष्पं गृहीत्वा तु आसनं चोप कल्पयेत् ॥५०
गृहीत्वा प्रणवाद्येन धर्म पुण्येन संवृतः ॥५१
इदं परायणं परस्पर प्रीतिकरं प्राणरक्षण प्राणिनां-
स्विष्टं तदनुकल्पं सत्यमुपयुक्त मात्मने तद्देव गृहाण ॥५२
एवं तु प्रापणं कृत्वा मम मार्गानुसारकः ।
मुख प्रक्षालनं दत्त्वा शीघ्रमेव प्रकल्पितम् ॥५३
शुचिः स्तुवति देवाना मेत देव परायणम् ।
शोचार्थं तु जलं गृह्णन् कृत्वा प्रापण मुत्तमम् ॥५४

हे देव ! यह पीतस्वरूप वाला क्षौम वस्त्र है और यह परम मनोज्ञ अर्थात् सुन्दर है । आपके अपने अङ्ग में प्रच्छादन के हीं लिये समर्पित किया जाता है इस रीति से जो मेरे मात्र (शरीर) शरीर के अनुसार हो वस्त्री के द्वारा मुझे विभूषित करे इसके उपरान्त पुष्प ग्रहण करके मेरे लिये आसन की उपकल्पना करनी चाहिए ॥५०॥ प्रणव जिसके आदि में हो ऐसे धर्म्म पुण्य से संवृत होकर ग्रहण करे । यह परायण और परस्पर में प्रीति के करने वाले—प्राणियों के प्राणों की रक्षा करने वाला—स्विष्ट—तदनुकल्प आत्मा के लिये सत्य और उपयुक्त है उसको हे देव ! आप ग्रहण कीजिए ॥५१॥५२॥ इस रीति से मेरे मार्ग के अनुसार प्रापण करके शीघ्र ही प्रकल्पित मुख का प्रक्षालन देवे ॥५३॥ परम शुचि होकर देवों का स्तवन जो किया करता है यही परायणता है । शौच के लिये जल का ग्रहण करते हुए मेरा उत्तम प्राप करना चाहिए ॥५४॥ ॥ वाराह पुराण का प्रथम खण्ड समाप्त ॥

6884

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पुराणों का वृहद् प्रकाशन

सरल हिन्दी अनुवाद सहित

१—शिव पुराण	२ खण्ड	···	१८)
२—वायु पुराण	२ खण्ड	···	१८)
३—विष्णु पुराण	२ खण्ड	···	१८)
४—मार्कण्डेय पुराण	२ खण्ड	···	१८)
५—अग्नि पुराण	२ खण्ड	···	१८)
६—गरुड़ पुराण	२ खण्ड	···	१८)
७—हरिवंश पुराण	२ खण्ड	···	१८)
८—देवी भागवत पुराण	२ खण्ड	···	१८)
९—भविष्य पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१०—लिंग पुराण	२ खण्ड	···	१८)
११—पद्म पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१२—बामन पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१३—कूर्म पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१४—ब्रह्मवैवर्त पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१५—मत्स्य पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१६—स्कन्द पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१७—ब्रह्म पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१८—नारद पुराण	२ खण्ड	···	१८)
१९—कालिका पुराण	२ खण्ड	···	१८)
२०—वाराह पुराण	२ खण्ड	···	१८)
२१—कल्कि पुराण		···	९)
२२—सूर्य पुराण		···	९)
२३—महाभारत (भाषा)		···	७)
२४—श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा		···	१२)८०

प्रकाशक—संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब, वेद नगर, बरेली
—२४३००१ (उ० प्र०)